Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
94251-01132

Supported by: Kisaan Helpline +91-7415538151

मध्य भारत कृषक भारती

READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com

ISSN-2582-5976

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

वर्ष-18 अंक-06 ग्वालियर, सितम्बर-2023 मूल्य 30 रुपए

चांद पर तिरंगा

भारत ने इतिहास रच दिया है। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO) ने अंतरिक्ष क्षेत्र में एक नया अध्याय रचते हुए चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर लैंडर 'विक्रम' और रोवर 'प्रज्ञान' से लैस एलएम की साफ्ट लैंडिग कराने में सफलता हासिल की। यह खबर पूरी दुनिया के लिए एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। इसके लिए हमारे देश के वैज्ञानिकों ने दिन रात मेहनत कर इसे सफल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारतीय समयानुसार शाम करीब छह बजकर चार मिनट पर इसने चांद की सतह को छुआ। इसके साथ ही भारत चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर साफ्ट लैंडिग कराने वाला दुनिया का पहला देश तथा चांद की सतह पर साफ्ट लैंडिग करने वाले चार देशों में शामिल हो गया है।

छत्तीसगढ़ : राजीव गांधी किसान न्याय योजना से समृद्ध होती खेती-किसानी

धान का कटोरा कहे जाने वाले छत्तीसगढ़ राज्य में कृषि क्षेत्र को समृद्ध बनाने की मंशा से छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा फसल उत्पादकता एवं फसल विविधीकरण को प्रोत्साहित करने के लिए संचालित राजीव गांधी किसान न्याय योजना से राज्य में खेती-किसानी को बढ़ावा मिला है। इससे किसानों स्थिति में बदलाव आया है और वह समृद्ध हुए हैं।

मध्यप्रदेश : अल्पवर्षा से उत्पन्न चुनौतियों से निपटने पूरी ताकत से काम करेंगे

मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने कहा है कि अल्पवर्षा के कारण प्रदेश में खरीफ फसलों के बचाने, बिजली की बढ़ती मांग, ग्रामीण युवाओं को रोजगार देने और पेयजल की व्यवस्थाओं को सुचारू रूप से जारी रखने की संभावित चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए राज्य सरकार पूरी ताकत से काम करेगी।

श्री गणेशाय नमः

श्री सॉवलिया सेठ

किसान कृषि सेवा केन्द्र

Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com

7692967419 9109726855

हमारी सेवाएँ:-

सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौंप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल बोडर,कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।

कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।

उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।

स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company

कृषि दर्शन®

खेत-खलिहान का राजा

1988 से भारतीय किसानों की सेवा में

सुदर्शन इण्डस्ट्रीज

विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882

वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

UPCOMING THREE MONTHS AGRICULTURE-EVENTS

iicp expo by RAY Consulting

https://iicp-expo.com

दिनांक : 05-06 सितंबर 2023

स्थान : HITEX प्रदर्शनी केंद्र, HITEX रोड, इज्जतनगर, कोठागुडा, हैदराबाद, तेलंगाना

इंडिया इंटरनेशनल क्रॉप प्रोटेक्शन एक्सपो - आईआईसीपी-एक्सपो इंडिया इंटरनेशनल क्रॉप प्रोटेक्शन एक्सपो - आईआईसीपी-एक्सपो ने कंसल्टिंग की ओर से कृषि इनपुट प्रदर्शनी का पहला संस्करण है।

SGPC'S MILLETS MIRACLE — Millets, Organics & Dairy - FPO'S Expo

बाजरा चमत्कार - बाजरा, ऑर्गेनिक्स और डेयरी एक्सपो

दिनांक: 15 - 17 सितंबर 2023

स्थान: सूरत अंतर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी और कन्वेंशन सेंटर, सूरत

दक्षिण गुजरात उत्पादकता परिषद सूरत (एसजीपीसी) को दक्षिणी गुजरात चैंबर ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री के समर्थन से 1992 में भारत सरकार के वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय के तहत राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद (एनपीसी) द्वारा मान्यता प्राप्त है।

Uttar Pradesh AgroTech 2023 — Expo | Business Meets | Seminars | Farmers' Events

दिनांक : 05-07 अक्टूबर 2023

स्थान : भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, तेलीबाग, लखनऊ (उ.प्र.)

https://globalagrotech.in/

एग्रोटेक 2023 का उद्देश्य प्रतिभागियों को संभावित उपयोगकर्ताओं और किसानों को केस उत्पादों, सेवाओं, योजनाओं और तकनीकों को दिखाने का अवसर प्रदान करना है।

AGRO WORLD 2023

दिनांक : 05-07 अक्टूबर 2023

स्थान : भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा नई दिल्ली

https://www.agroworldindia.com

आईसीएफए आपको आगामी तेमांक कार्यक्रम- एग्रोवर्ल्ड 2023 के दौरान एक उत्साही प्रदर्शक या प्रायोजक के रूप में एक सक्रिय भाग लेने के लिए इस अद्भुत अवसर का लाभ उठाने के लिए आमंत्रित करता है और उत्पादों, प्रौद्योगिकियों, कार्यक्रमों और सेवाओं को एक विशाल लक्षित दर्शकों के लिए एक एकल, स्पंदित मंच में प्रदर्शित करता है।

IFX India Food Expo

इंडिया फूड एक्सपो 2023

दिनांक : 20-22 नवम्बर 2023

स्थान : आईआईए भवन परिसर, विभूति खंड, गोमती नगर, लखनऊ (उ.प्र.)

http://indiafoodexpo.in

इंडियन इंडस्ट्रीज एसोसिएशन (IIA) द्वारा आयोजित की जा रही सबसे बड़ी खाद्य और कृषि क्षेत्र प्रदर्शनी 'इंडिया फूड एक्सपो' का 9वां संस्करण 20 से 22 नवंबर 2023 तक IIA भवन परिसर, विभूति खंड, गोमती नगर, लखनऊ, यूपी में आयोजित किया जाएगा।

15th EDITION POULTRY INDIA

OUR INDUSTRY SHOW

22 23 24 NOVEMBER - 2023

www.poultryindia.co.in

स्थान : हाइटेक्स प्रदर्शनी केंद्र, हैदराबाद

पोल्ट्री इंडिया प्रदर्शनी, पोल्ट्री उद्योग के लिए एक अंतरराष्ट्रीय प्रदर्शनी प्रस्तुत करती है। यह आयोजन पोल्ट्री उद्योग, चारा उपकरण, प्रौद्योगिकी, प्रजनकों, अंडे की खेती, पोल्ट्री पोषण, पशु स्वास्थ्य और अंतर्राष्ट्रीय पोल्ट्री उत्पादन के बारे में बहुमूल्य जानकारी वाला एक विस्तृत मंच है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

मिलेट्स फसलों की उपयोगिता....

मिलेट्स में पोटेशियम-कैल्शियम, प्रोटीन, हल्की वसा, फाइबर, विटामिन-बी, नाइसिन, फोलिक एसिड, कैल्शियम, आयरन, पोटेशियम मैगनीशियम, जिंक आदि पोषक तत्व पाए जाते हैं। यह कई बीमारियों को दूर करने में उपयोगी होते हैं। मोटे अनाज का उपयोग प्राचीनकाल से देशभर में होता रहा है। विडंबना रही कि आधुनिक खान पान में मोटे अनाज पिछड़ गए थे। अब जबकि इनकी पौष्टिकता, स्वाद व औषधीय गुण प्रमाणित हो चुके हैं इनके उपयोग को बढ़ावा देने के लिए समुचित व ठोस कदम उठाए जाने चाहिए।

पौष्टिक तत्वों से भरपूर और विशिष्ट स्वाद वाले मिलेट्स यानी मोटे अनाज की चर्चा इन दिनों देश में खूब हो रही है। यह राज्य का सौभाग्य है कि यहां परंपरागत रूप से कोदो, कुटकी व रागी का उत्पादन होता रहा है। मिलेट फसलों के महत्व को रेखांकित करते हुए राज्य की कांग्रेस सरकार ने मिलेट्स की समर्थन मूल्य पर सरकारी खरीदी की व्यवस्था कर रखी है।

यहां मिलेट से बने व्यंजनों के कैफे संचालित किए जा रहे हैं और इस व्यवसाय से महिलाएं समृद्धि के मार्ग पर चल पड़ी हैं। ऐसे समय में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के मन की बात में मिलेट्स की अनुगूंज प्रतिध्वनित हुई तो छत्तीसगढ़ में हर्ष का वातावरण निर्मित हुआ। ज्वार, बाजरा, रागी, कोदो और कुटकी के उत्पादन, भंडारण और विपणन को बढ़ावा देने के लिए केंद्र सरकार देशभर में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन केतहत मिलेट मिशन संचालित कर रही है। छत्तीसगढ़ सरकार ने भी राष्ट्रीय मिलेट शोध संस्थान, हैदराबाद केसाथ समझौता कर इस मिशन को प्रोत्साहित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाया है। सरकार की योजना राज्य को मिलेट हब केरूप में विकसित करने की है। इसी कड़ी में गत दिनों मुख्यमंत्री भूपेश बघेल ने राजधानी रायपुर में मिलेट कैफेका भी उद्घाटन किया। छत्तीसगढ़ के साथ–साथ राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, हरियाणा, गुजरात, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, झारखंड, तमिलनाडु, और तेलगांना आदि मिलेट्स के उत्पादक राज्य हैं, जबकि असम और बिहार में मिलेट्स की सर्वाधिक खपत होती है। राज्य के इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय में मिलेट फसलों पर शोध किए जा रहे हैं। इनकी बढ़ती मांग को देखते हुए अब उत्पादन में वृद्धि की चुनौती के लिए तैयार रहना होगा। मुख्य मिलेट फसलों में ज्वार, बाजरा और रागी सम्मिलित हैं, जबकि लघु मिलेट फसलों में कोदो, कुटकी और सवां की गिनती होती है। जलवायु परिवर्तन की दृष्टि से भी ये फसलें काफी उपयोगी हैं। इनका उत्पादन पथरीली जमीन पर संभव है। इसे अधिक तापमान, कम पानी और कम उपजाऊ जमीन में भी आसानी से पैदा किया जा सकता है। इनको कीटनाशकों की उतनी जरूरत नहीं होती है। ये फसलें किसानों केलिए भी अच्छी हैं, क्योंकि इनकी खेती दूसरी फसलों की तुलना में आसान है। यही कारण है कि इनको भविष्य की फसलें और सुपर फूड तक कहा जा रहा है। राज्य केआदिवासी क्षेत्रों में कोदो, कुटकी और रागी प्रमुख फसलें हैं।

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 22 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 23 से 28 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है।

–संपादक

सूचना

हिन्दी भाषी प्रदेशों में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक पत्रिका मध्यभारत कृषक भारती में कृषक हितैषी विषयों से संबंधित लेखों, समाचारों, फोटो फीचर, सफलता की कहानियाँ, रिसर्च पेपर का हम स्वागत करते हैं। लिखी हुई सामग्री आपकी स्वयं की हो जिसे आप हमारे डाक पते पर या फिर ई–मेल पर भेज सकते हैं।

Mob. 94251-01132
editorkrb@gmail.com

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976

गौरवपूर्ण प्रकाशन का निरंतर 17वां वर्ष

मध्य भारत कृषक भारती

• मध्यप्रदेश • छत्तीसगढ़ • उत्तर प्रदेश • राजस्थान

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
▪ 94251–01132
▪ 94245–22090
▪ 0751–4070802

▪ वार्षिक ₹400 ▪ द्विवार्षिक ₹750 ▪ पंचवार्षिक ₹1500

▪ वर्ष 18 ▪ अंक 06 ग्वालियर, सितंबर 2023 मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक
राजू गुर्जर (MJC)
94251-01132, 94245-22090

❖

प्रसार/मार्केटिंग टीम
योगेन्द्र सिंह
94259-16038, 70492-14731

डी.के. बरार
91791-85002, 70247-93010

ब्रजपाल सिंह : 90583-31074

महेश अहिरवार : 94259-62043

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय
***

डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***

डॉ. आर.के.एस. तोमर
केविके दतिया, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि. ग्वालियर (म.प्र.)
***

डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण), डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***

डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय (नालन्दा), बिहार कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***

डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***

डॉ. योगेन्द्र कौशिक (प्रगतिशील कृषक)
ग्राम अजडावदा जिला उज्जैन (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प.)
***

तपस्या तिवारी
पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***

बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***

श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- पौष्टिक आहार कुटकी और सांवा 06
- कम बारिश में अच्छी कमाई के लिए करें ड्रैगन फ्रूट की खेती 07
- अरहर खेती : रोग एवं कीट नियंत्रण 08
- लेमन ग्रास की खेती और उपयोग 09
- सोयाबीन की फसल में खरपतवार प्रबंधन 10
- प्रधानमंत्री सूक्ष्म खाद्य उद्योग उन्नयन योजना 11
- जैव उर्वरक : मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की वृद्धि 12
- कृषि उत्पादन में प्राकृतिक खेती का महत्व और प्रभाव 13
- जौ : खाद्य प्रयोजनों के लिए अनुसंधान का एक नया युग 14
- जैविक खेती द्वारा किसानों की दोगुनी आय 15
- किसान मिट्टी में उपस्थित पोषक तत्वों का परीक्षण... 16
- बैंगन की फसल में प्ररोह एवं फल बेधक 17
- भारतीय पशुपालन का व्यवसायीकरण 18
- फालसा फल की व्यवसायिक खेती 19
- नीली जिह्वा रोग के लक्षण एवं एन्थ्रोवेट रोकथाम 20
- तिल फसल के महत्वपूर्ण कीट एवं बीमारियां तथा उनके निदान 21
- पशुओं में टिटनेस रोग एवं रोकथाम 22
- क्वालिटी प्रोटीन मक्का की उत्पादन प्रौद्योगिकी... 23
- धनिया की फसल में प्रमुख कीट एवं बीमारियों के प्रबंधन 24
- जैव उर्वरक (बायोफर्टिलाइजर) महत्व एवं उपयोगिता 25
- मिलेट्स में अग्रणी बने भारत 26
- सब्जियों में समन्वित कीट प्रबंधन 27

उत्तर प्रदेश

- जैविक अपशिष्ट प्रबंधन 28
- ग्रामीण विकास में संचार एवं प्रोद्यौगिकी की भूमिका 29
- एवोकैडो की खेती और इसका महत्व 30
- चना फसल में लगने प्रमुख रोग व कीट एवं रोकथाम 31
- 'कृषि पर्यटन'-स्वरोजगार का एक नया माध्यम 32
- ककोड़ा की खेती कर समृद्ध बनें किसान 33
- कवक क्या है तथा इसकी उपयोगिता 34
- बासमती धान का बकानी रोग धान की एक उभरती समस्या 35
- कृषि और किसानों की सुरक्षा फसल बीमा के माध्यम से सशक्तिकरण 36
- बेल की खेती 37
- सहजन (मोरिंगा) एक बहु-उपयोगी पोषक तत्व... 38
- मूली की वैज्ञानिक खेती 39
- मिट्टी में सूक्ष्मजीव विविधता सतत खेती के लिए वरदान 40
- खरीफ की फसलों में जैविक कीट नियंत्रण एक सफल उपाय 41
- किसान भाई मक्का फसल की खेती कैसे करें 42
- मेगा फूड पार्क : एक परिदृश्य 43
- भारतीय कृषि एवं कृषकों की समस्या और समाधान 44
- खेजड़ी की बागवानी 45
- पोटैटो डिगर आलू की खुदाई के लिए आधुनिक कृषि यंत्र 46
- धान की फसल में नील-हरित शैवाल का उपयोग 47
- सहजन के चमत्कारिक लाभ 48
- सब्जियों की संरक्षित खेती 49
- जीनोमिक्स और फसल सुधार में इसका अनुप्रयोग 50
- उड़द की जायद मौसम में उन्नतशील खेती 51
- भारत में हाइड्रोपोनिक्स खेती का भविष्य 52
- उत्तर प्रदेश के किसानों के लिए धान के प्रमुख रोग 53
- सीओ-238 गन्ने में कैंसर की तरह बढ़ता लालसड़न रोग... 54
- अमरूद का प्रसंस्करण 55
- वर्मीकम्पोस्ट बनाने की विधि 56
- फूलों का भारत में अतिरिक्त आय स्रोत :... 57
- टमाटर की फसल में समन्वित कीट रोग प्रबन्धन 58
- प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियां :... 59
- आम में लगने वाले मुख्य रोग एवं उनका रोकथाम 60
- राई-सरसों की आधुनिक खेती 61
- किसान द्वारा फसलों के खरपतवारों का उचित प्रबंधन 62
- आधुनिक तरीके से करें सब्जियों की खेती 63
- शाकीय फसलों में सिंचाई एवं जल प्रबंधन 64
- मृदा स्वास्थ्य सुधार क्यों जरूरी? 65
- केला के प्रमुख रोग एवं निदान 66
- फसल सुधार में जीनेटिक इंजीनियरिंग का अनुप्रयोग 67
- सब्जी फसलों में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन 68
- दैनिक आहार में सब्जियों का महत्व 69
- ज्वार के पौष्टिक उत्पाद 70
- सब्जियों की फसलों में ग्राफ्टिंग 71
- औषधीय और सुगंधित पौधों का महत्वपूर्ण उपयोग व लाभ 72
- भिण्डी की वैज्ञानिक खेती 73
- धान फसल में लगने वाले प्रमुख रोग और उनका प्रबंधन 74
- बासमती धान का बकानी रोग धान की एक उभरती समस्या 75
- खेत की मेड़ पर सागौन का वृक्षारोपण 76
- मिर्च की वैज्ञानिक खेती, रोग तथा कीट प्रबंधन 77
- अदरक की खेती 78
- गेहूँ तथा जौ की फसल में लगने वाले रोग एवं प्रबंधन 79
- तकनीकी की कृषि की ओर बढ़ते कदम 80
- उत्पाद की मूल्य श्रृंखला के माध्यम से किसानों का आर्थिक विकास 81
- फसल स्वास्थ्य : सुरक्षित कीटनाशकों का उपयोग... 82
- आधुनिक खाद्य प्रसंस्करण उद्योग के विकास में रोबोटों का योगदान 83
- आम के शारीरिक विकार : कारण और उसका प्रबंधन 84
- चौलाई की खेती 85
- कुट्टू (Buckwheat) के महत्व मानव आहार में 86
- ई-फसल आधारित स्मार्ट खेती, (ई-सीबीएसएफ) :... 87
- लौकी : उपयोग और प्रसंस्करण के साथ मूल्यवर्धित उत्पादों की महत्वपूर्ण सम्प्रेषणा 88
- भारत में दलहनी फसलों की मूल्य श्रृंखला : चुनौतियां एवं संभावनाएं 89

राजस्थान

- फलों और सब्जियों में कटाई उपरांत रोग प्रबंधन 90
- कृषि के एकरूपता में समान वाणिज्यिक कोड 91
- कृषि क्षेत्र में ड्रोन तकनीक 92
- प्राकृतिक रंग : ग्रामीण परिक्षेत्र में आय स्त्रोत के नए आयाम 93
- वैज्ञानिक विधि से पशु पोषण प्रबन्धन 94
- गुलाब प्रसंस्करण 95
- कॉर्डिसेप्स मिलिटेरिस : मशरूम की खेती की संपूर्ण जानकारी 96
- नर्सरी उगाने के लिए संरक्षित संरचनाओं... 97

कर्नाटक

- मानव जीवन में फलों का महत्व 98

हिमाचल प्रदेश

- पशुपालन के बेहतर उपाय 99

हरियाणा

- कीटनाशकों और प्राथमिक चिकित्सा के कारण होने वाले खतरे 100
- हरियाणा की पारंपरिक वेशभूषा 101
- बच्चों व महिलाओं में कुपोषण की समस्या... 102
- ढींगरी मशरूम पोषण व औषधीय गुणों से परिपूर्ण 103
- दलहनी फसलों में विभिन्न जीवाणुजन्य रोगों की पहचान 104

बिहार

- महिला सम्मान बचत पत्र योजना 105
- स्व-चालित रीपर कम बाइंडर गेहूँ, धान और अन्य तिलहन... 106

उड़ीसा

- स्वस्थ धरा खेत हरा : खेती में मृदा परीक्षण का महत्व 107

उत्तराखण्ड

- टमाटर का प्रमाणिक बीज उत्पादन 108
- किलमोड़ा या भारतीय बारबेरी, पर्वतीय क्षेत्रों का एक बहुउपयोगी फल 109
- करोंदा : एक अनमोल और स्वास्थ्यवर्धक फल 110

मेघालय

- स्मार्ट खेती : कृषि का भविष्य 111

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

मध्यप्रदेश में लगेंगी 1772 सूक्ष्म खाद्य उद्यम इकाईयां

भोपाल। मध्यप्रदेश में सूक्ष्म खादय उद्यम की 1772 इकाइयां लगने जा रही हैं। इन इकाइयों के लिये प्रधानमंत्री सूक्ष्म खादय उद्यम उन्नयन योजना में ऋण स्वीकृत हो चुका है। इनमें

सबसे ज्यादा 116 इकाइयां ग्वालियर में लगेंगी। दूसरे नम्बर पर 100 इकाइयां खरगौन में, रीवा में 47, बालाघाट में 23, टीकमगढ़ में 27 और होशंगाबाद में 22 इकाइयां लगेंगी। उल्लेखनीय है कि योजना में उदयमियों ने रूचि दिखाते हुए 10664 उदयमियों ने ऋण के लिए आवेदन किया था। परीक्षण के बाद 1772 को ऋण देने योग्य पाया गया। बाकी आवेदनों पर विभिन्न स्तरों पर विचार किया जा रहा है। मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने युवा उदयमियों से आगे बढ़कर इस का लाभ उठाने का आग्रह किया है। खाद्य प्र-संस्करण उद्योग मंत्रालय ने राज्य सरकार की भागीदारी के साथ सूक्ष्म खाद्य उद्यमों के उन्नयन के लिए वित्तीय, तकनीकी एवं कारोबार में सहायता देने के लिए प्रधान मंत्री सूक्ष्म खाद्य उद्योग उन्नयन योजना शुरू की है। इसमें कौशल प्रशिक्षण, खाद्य सुरक्षा मानकों एवं स्वच्छता के संबंध में तकनीकी जानकारी देने एवं गुणवत्ता सुधार के माध्यम से क्षमता निर्माण किया जा रहा है। इच्छुक लोगों को बैंक ऋण एवं डीपीआर तैयार करने के लिए मदद दी जाती है। पूंजी निवेश, इंफ्रास्ट्रक्चर तथा ब्रांडिंग एवं विपणन सहायता के लिए कृषक उत्पादक संगठनों, स्वयं सहायता समूहों को सहायता दी जा रही है। व्यक्तिगत रूप से स्थापित होने वाले उदयम 35% पर क्रेडिट लिंक्ड कैपिटल सब्सिडी का लाभ ले सकते हैं। अधिकतम सब्सिडी 10 लाख रु. तक की हो सकती है। लाभार्थी का योगदान 10% होना चाहिए। बाकी राशि बैंक ऋण होगी। स्व-सहायता समूहों को वर्किंग कैपिटल उपलब्ध कराने का भी प्रावधान है। एक जिला-एक उत्पाद में चुने जाने वाले उत्पादों पर आधारित इकाइयों को प्राथमिकता मिलेगी।

सबसे ज्यादा ग्वालियर और खरगौन में लगेंगी

मुर्गीपालन हेतु संतुलित आहार प्रबंधन पर प्रशिक्षण संपन्न

दतिया। कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया में मुर्गीपालन हेतु उन्नत पोषण तकनीकियां विषय पर एक दिवसीय पशुचिकित्सा अधिकारियों का अंतः सेवाकालीन प्रशिक्षण केन्द्र प्रमुख डॉ.

आर.के.एस. तोमर के मार्गदर्शन एवं विषय विशेषज्ञ डॉ. रूपेश जैन के तकनीकी निर्देशन में संपन्न हुआ। प्रशिक्षण में पशुपालन विभाग के 30 पशु चिकित्सा अधिकारियों ने भाग लिया। प्रशिक्षण के उद्घाटन अवसर पर उपसंचालक पशुचिकित्सा डॉ. दास द्वारा पशुपालकों को बैकयार्ड मुर्गीपालन में संतुलित आहार हेतु प्रेरित करने की सलाह दी गई। केन्द्र के प्रभारी वरिष्ठ अधिकारी डॉ. एस.के. सिंह द्वारा देशी मुर्गीपालन को समन्वित कृषि पद्धति से किसानों को जोड़ने के लिये प्रेरित किया गया। तकनीकी सत्र में डॉ. जैन द्वारा देशी मुर्गियों एवं लेयर मुर्गियों हेतु संतुलित दाना बनाने की विधि समझाई गई। डॉ. जैन ने मुर्गियों को अलग-अलग उम्र पर अलग-अलग संतुलित दाना बनाने हेतु नवीनतम तकनीकियों से अधिकारियों को रूबरू कराया।

नैनो तकनीक का कृषकों के प्रक्षेत्र पर प्रदर्शन

नरसिंहपुर। जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर के अंतर्गत कार्यरत कृषि विज्ञान केन्द्र, नरसिंहपुर में वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख, डॉ विशाल मेश्राम के मार्गदर्शन में ग्राम बधुवार में नेनो यूरिया एवं नेनो डी.ए.पी. का प्रक्षेत्रीय परीक्षण 1 एकड़ में धान (जेआर-206) फसल में किया गया। कार्यक्रम में किसानों को सबोधित करते

हुए डॉ. निधि वर्मा, वैज्ञानिक ने बताया कि नैनो यूरिया किसानों के लिए स्मार्ट कृषि और जलवायु परिवर्तन से मुकाबला करने का एक स्थायी विकल्प है। ये उर्वरक के रूप में पौधों की नाइट्रोजन की आवश्यकता को पूरा करता है। क्योंकि नैनो यूरिया के कण का आकार लगभग 20-50 नैनो मीटर होता है। इफको नैनो यूरिया तरल की 500 मि.ली. की एक बोतल सामान्य यूरिया के कम से कम एक बैग के बराबर है। नैनो यूरिया प्रभावी रूप से फसल की नाइट्रोजन आवश्यकता को पूरा करता है जिससे फसल अच्छी होती है। फसल उत्पादकता में वृद्धि और लागत में कमी करके किसानों की आय में वृद्धि करता है। धान में नैनो यूरिया का पहला छिड़काव अंकुरण से 35 से 40 दिन बाद एवं दूसरा छिड़काव अंकुरण से 55 से 60 दिन बाद किया जाता है। साथ ही डॉ. विजय सिंह सूर्यवशी द्वारा नैनो डी.ए.पी. का प्रयोग मुख्य रूप से अनाज, दालें, सब्जियां, फल, फूल, औषधीय सहित अन्य सभी फसलों पर नैनो डीएपी का छिड़काव किया जा सकता है।

कृषक भारती में सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)
रामप्रकाश रघुवंशी
98272-78063

* * *

नरसिंहपुर (म.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330

मुंगावली (म.प्र.)
भगवानदास चौबे- 96854-88453

बलिया (उ.प्र.)
आर.एन. चौबे-94535-77732

पश्चिम बंगाल
राजेश नायक-98831-57482

उड़ीसा
समीर रंजन नायक
70422-31678

* * *

हापुड़ (उ.प्र.)
मयंक गौड़: 83848-66823

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना
वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी (कृषि प्रसार)

डॉ. आर.के.एस. तोमर
प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रमुख, कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया (म.प्र.)

वर्ष 2023 को मिलेट ईयर (श्रीअन्न) के रूप में मनाया जा रहा है। श्रीअन्न के उत्पादन के प्रति किसानों की रूचि बढ़े, हमारा यह पहला प्रयास होना चाहिए। सरकारी स्तर पर इसको लेकर काफी प्रयास किए जा रहे हैं। मिलेट ईयर के उपलक्ष्य में हमारी पत्रिका में हर माह श्रीअन्न कॉलम में मिलेट फसलों के बारे में जानकारी देने का प्रयास किया जा रहा है।

पौष्टिक आहार कुटकी और सांवा

कुटकी (LITTLE MILLET)

वानस्पतिक नामः पनिकम अंती टोटेले, **अन्य नामः** घिरी, घूमर, कुर्री, कुरू, **बोनी का समयः** 20 जुलाई तक

बीज दरः लाईन में बोनी करने पर 8 कि.ग्रा./हे. एवं छिटक विधि से 12 कि.ग्रा./हे, **उत्पादनः** 7-10 क्विं./हे.

परिचयः कोदो-कुटकी अनुसंधान संस्थान डिण्डोरी एवं उप अनुसंधान केन्द्र कृषि महाविद्यालय रीवा में है। कुटकी के ज्यादातर गुण वर्रा से मिलते हैं। इसकी खेती करना किसानों हेतु जितना आसान है इसके सेवन से भी उतने ही फायदे होते हैं। कुटकी की फसल 65-75 दिनों में पक जाती है। कैंसर जैसी गंभीर बीमारियों से लेकर शुगर को भी नियंत्रित करने में कुटकी को असरदार माना जाता है। इसमें कार्बोहाइड्रट एवं प्रोटीन की मात्रा अधिक पाई जाती है। कुटकी को हिन्दी में मोरैयो, कुटकी, शावन कहते हैं। भारत के अलग-अलग राज्यों में इसके अलग-अलग नाम हैं जैसे कि तमिल में समाई, ओडिया में सुआन, तेलगू में समालू, बंगाली में सामा, गुजराती में गाजरो और कुरी, मराठी में सवा या हलवी या वरी, कन्नड़ में सआमे, मलयालम में चामा आदि हैं। आजकल के दौर में इन प्रकार के अनाजों का महत्व काफी बढ़ चुका है क्योंकि ये अनाज शरीर को पोषण देने के साथ-साथ कई रोगों को भी मिटाते हैं। कुटकी की खेती कई एशियाई देशों में भारत, चीन, मलेशिया, नेपाल, म्यांमार तथा श्रीलंका में की जाती है।

भारत में उड़ीसा, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र तथा बिहार के कुछ क्षेत्रों में कुटकी की खेती की जाती है। लिटिल मिलेट में कई प्रकार के मिनरल्स और विटामिन पाये जाते हैं जैसे कि कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, फैट, फाइबर, आयरन, कैल्शियम, फॉस्फोरस, थायमिन/विटामिन ई-1, नियासिन/विटामिन ई-3, राइबोफ्लेविन/विटामिन ई-2, फोलिक एसिड/विटामिन ई-9, जिंक, मैग्नीशियम, पोटाशियम, कॉपर। इसके अतिरिक्त कई एसेंशियल एमीनो एसिड्स भी होते हैं जैसे कि आर्जिनिन, लाइसिन, ट्रिप्टोफैन, फिनाइल, एलनिन, मेथिओनिन, सिस्टीन, थ्रेओनिन, लिउसिन इत्यादि। मांस और मांसपेशियों की वृद्धि, इम्युनिटी सिस्टम की मजबूती, हड्डियों का विकास व पोषण, सही दिमागी कार्य क्षमता, पचापचय प्रक्रिया की मजबूती, तनाव से बचाव, गहरी नींद, सही पाचन इत्यादि लगभग शरीर के सभी कार्यों के लिये एसेंशियल एमिनो एसिड्स की जरूरत होती है जो इस अनाज में प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। न्यूट्रिशन यानी पोषण तत्व से भरपूर होता है।

श्री धान्य अर्थात मिलेट्स पर पिछले दो दशकों से काम कर रहे जाने-माने वैज्ञानिक डॉ. खाद वली के अनुसार कुटकी खाने के अनुक फायदे हैं। कुटकी अंडाशय, शुक्राणु, पीसीओडी और बांझपन की समस्याओं पर काबू पाने में मदद करता है। कुटकी पुरुषों और महिलाओं दोंनो में प्रजनन प्रणाली के रोगों को ठीक करने में मददगार है। कुटकी में फाइबर की मात्रा अधिक होने के कारण यह उन लोगों के लिये भी अच्छा है जो कब्ज से पीड़ित हैं। कुटकी के सेवन से उन लोगों को भी राज मिलती है जो माइग्रेन से पीड़ित हैं। कुटकी का सेवन उन लोगों के लिए पौष्टिक भोजन है जो दिल की समस्याओं, मोटापे और जोड़ों के दर्द से पीड़ित है। कुटकी लिम्फ नोडल प्रणाली को साफ करता है। मस्तिष्क, गले, रक्त, थायरॉयड और अग्नाशय के कैंसर के नियंत्रण में भी सहायता करता है।

सांवा (BARNYARD MILLET)

वानस्पतिक नामः जैपनीज वान है

अन्य नामः सामां, संवा, जैपनीज वार्नयार्ड मिलेट्स, भंगोरा, **बोनी का समयः** 15 जुलाई (प्रथम वर्षा के बाद)

बीज दरः लाईन में बोनी करने पर 8-10 किग्रा/हे. एवं छिटक विधि से 12-15 कि.ग्रा./हे.

परिचयः सांवा को देश के अलग-अलग क्षेत्रों में उड़ालू या झंगोरा के नाम से भी जानते हैं। यह इतिहार के बाकी मोटे अनाजों की तरह हजारों वर्ष पुराना है। इसमें मौजूद पोषक तत्व फाइबर, प्रोटीन, आयरन, कैल्शियम और विटामिन बी आदि शरीर में ऊर्जा देते हैं। इसको नियमित सेवन से सूजन, हार्ट अटैक, शुगर का खतरा भी कम होता है। किसान सांवा उगाना बेहद पसंद करते है क्योंकि इसमें कीट या बीमरियों लगने का खतरा नहीं रहता है।

सांवा पौष्टिकता से भरपूर एक छोटा मिलेट है। हिंदी में इससे समा के चावल, वरई, कोदरी, समवत, सामक चावल के नाम से भी जाना जाता है। हालांकि हिन्दू धर्म में व्रत में किसी भी प्रकार के अनाज का उपयोग वर्जित है पर सांवा के चावल को व्रत में उपयोग किया जा सकता है क्योंकि यह व्रत के दिनों में शरीर को उर्जा देने में मदद करता है। इसमें पर्याप्त प्रोटीन, उच्च फाइबर, बी-विटामिन एवं उपयोग मिनरल्स पाये जाते हैं। इसे स्वास्थ्य लाभ पाने हेतु आहार में आसानी से सम्मिलित किया जा सकता है। भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश में यह खूब पैदा होता है। अनुपजाउ भूमि पर भी इसकी खेती की जा सकती है जहां धान की फसल नहीं होती। इसका बीज स्लेटी रंग का चमकदार होता है। चावल, हलवा आदि के रूप में भोजन में प्रयोग किया जाता है। यह वर्षा ऋतु में उत्पन्न होने वाला अनाज है। फसल तैयार होने पर पीटकर बीज को अलग कर लेते हैं और हरे पौधों को चारा मशीन से काटकर उसमें भूसा मिलाकर पशुओं को खिलाने के काम आता है। सांवा का नियमित सेवन लिवर को स्वस्थ बनाये रखता है और लिवर सिरोसिस जैसी खतरनाक बीमारियों से बचाव भी करता है। सांवा को आहार में शामिल करने के अनेक फायदे हैं। सांवा का

नियमित सेवक करने से गर्भवती महिलाओं में एनीमिया की समस्या कम हो जाती है। प्रसव के बाद मां के स्तनों का दूध बढ़ता है। नियमित रूप से इसे आहार में लेने से इम्युनिटी सिस्टम मजबूत होता है जिससे शरीर की रोग प्रतिरोध क्षमता में वृद्धि होती है। नियमित रूप से सवां का सेवन करने से डायबिटीज को कम करने में मदद मिलती है। अग्नाशय के लिये भी काफी अच्छा होता है। सांवा उन लोगों के लिये बहुत ही फायदेमंद है जिनको थकान, कमजोरी व हर वक्त नींद आती है। सांवा से बने आहार का नियमित सेवन करने से लीवर को मजबूती मिलती है। यह यकृत, गुर्दे और पित्ताशय की थैली की सफाई करता है। सांवा का सेवन करने से पीलिया रोग में काफी फायदा होता है। सांवा से बने आहार लेने से अल्सर गठन और बड़ी आंत, यकृत व प्लीहा के कैंसर से बचाव होता है। सांवा में प्रचुर मात्रा में घुलनशील व अघुलनशील पाचक रेशे होते हैं। रेशे कब्ज को कम करते है एवं अच्छे कोलेस्ट्रोल का अनुपात बढ़ाते हैं जिससे वजन नियंत्रित होता है। इसमें कार्बोहाइड्रेट की मात्रा काफी कम होती है व धीमी पाचकता होती है जिसकी वजह से सांवा कम क्रियाशील जीवन शैली वाले एवं मोटापे से ग्रसित लोगों के लिए अत्यंत उपयोग है। सांवा में ग्लूटेन प्रोटीन द्वारा होले वाली सेलिएक नामक रोग से ग्रसित रोगियों के लिये प्रकृति का वरदान है। इसका उपयोग गेहूं, बाजरा एवं सूजी की जगह किया जा सकता है।

पोषक तत्वः सांवा में प्रचुर मात्रा में नियासिन, रिबोफ्लेविन, थयामिन, केरोटिन, आयरन, कैल्शियम, फास्फोरस, प्रोटीन, मिनरल, कार्बोहाइड्रेट और फाइबर पाये जाते हैं।

निरंतर...

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

कम बारिश में अच्छी कमाई के लिए करें ड्रैगन फ्रूट की खेती

डॉ. प्रियंवदा सोनकर (सहायक प्राध्यापक)
उद्यानकी महाविद्यालय मंदसौर (म.प्र.)

डॉ. रश्मि बाजपेई (वरिष्ठ वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र ग्वालियर (म.प्र.)

हिरदेश कुमार (पीएचडी स्कॉलर) राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.)

यह एक ऐसी फसल है जो पारंपरिक खेती की तुलना में करीब 25 साल तक आमदनी देती है ड्रैगन फ्रूट एक प्रकार की कैक्टस बिल है ड्रैगन फ्रूट का वैज्ञानिक नाम (हिलोसेरियस सुंडाटस) है जो मुख्य रूप से मलेशिया ,थाईलैंड ,फिलिपींस संयुक्त राज्य अमेरिका और वियतनाम जैसे देशों में उगाया जाता है और साथ ही ड्रैगन फ्रूट की खेती इजराइल और श्रीलंका में भी बड़े पैमाने पर की जाती है ड्रैगन फ्रूट को मेक्सिको में पिटाया या पपीता के नाम से भी जाना जाता है मध्य अमेरिका और उत्तरी दक्षिणी अमेरिका में यह विद्या रोज के रूप में लोकप्रिय है भारत में ड्रैगन फ्रूट की खेती ज्यादातर कर्नाटक केरल तमिलनाडु महाराष्ट्र गुजरात उड़ीसा पश्चिम बंगाल आंध्र प्रदेश और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में की जाती है बता दें कि इस फल में कमल के समान कांटे और पंखुड़ियां होती हैं इसीलिए इसे कमलम फल भी कहा जाता है।

कम वर्षा वाले क्षेत्रों में ड्रैगन फ्रूट की खेती किसानों के लिए एक बेहतर विकल्प है सूखाग्रस्त व कम वर्षा वाले क्षेत्र ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए सबसे बढ़िया होते हैं वर्तमान समय में भारत के विभिन्न राज्यों के किसानों के बीच ड्रैगन फ्रूट की खेती की लोकप्रियता तेजी से बढ़ रही है। बाजार में ड्रैगन फ्रूट के एक फ्रूट की कीमत 200 से 250 रुपए तक होती है अच्छा दाम मिलने की वजह से भारत में भी इसकी खेती का प्रचलन बड़ा है सूखाग्रस्त व कम वर्षा वाले क्षेत्र ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए सबसे बढ़िया माने जाते हैं ड्रैगन फ्रूट को ताजा फल के तौर पर खा सकते हैं साथ ही इस फल से जाम आइसक्रीम जेली जूस और वाइन भी बना सकते हैं सौंदर्य प्रसाधन के तौर पर भी इसे फेस पैक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है ड्रैगन फ्रूट के पौधे का उपयोग सजावटी पौधे के लिए भी होता है ड्रैगन फ्रूट के प्रत्येक पौधे को अच्छी तरह से विकसित होने के लिए 10 से 15 किलोग्राम जैविक खाद की आवश्यकता होती है ड्रैगन फ्रूट की खेती में पौधे के बेहतर विस्तार और विकास के लिए जैविक खाद या उर्वरक मुख्य भूमिका निभा सकते हैं।

ड्रैगन फ्रूट के गुण: इस फल में अच्छी मात्रा में फाइबर ,विटामिन ,खनिज और एंटीऑक्सीडेंट पाए जाते हैं इसकी खास बात यह है कि यह कोशिकाओं, शरीर की सूजन और पाचन तंत्र के लिए फायदेमंद है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए आवश्यक जलवायु: ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए उष्णकटिबंधीय मौसम की स्थिति बेहतर होती है ड्रैगन फ्रूट की खेती उन क्षेत्रों में बेहतर पैदावार के लिए छायादार जगह पर की जा सकती है ड्रैगन फ्रूट की खेती 50 सेंटीमीटर की वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में भी हो सकती है। इसके लिए 20 डिग्री सेल्सियस से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त माना जाता है ड्रैगन फ्रूट की फसल के लिए तेज धूप की जरूरत नहीं होती है ड्रैगन फ्रूट के पौधे लगाने के 1 साल बाद फल लगने शुरू हो जाते हैं फूल आने के 1 माह बाद ड्रैगन फ्रूट कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं आप परिपक्व ड्रैगन फ्रूट में चमकीले हरे रंग की त्वचा होती है कुछ दिनों बाद फलों का छिलका गहरे हरे से लाल रंग का हो जाता है ड्रैगन फ्रूट की कटाई का बेहतर समय फल के त्वचा का रंग बदलने के तीन से चार दिन बाद होता है स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय बाजार में इन ड्रैगन फलों की बहुत मांग है तो आप इस ड्रैगन फ्रूट की खेती से अच्छा रिटर्न प्राप्त कर सकते हैं।

ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए चाहिए ऐसी मिट्टी: इसकी खेती के लिए सभी प्रकार की मिट्टी उपयुक्त होती है इसकी खेती के लिए 7 से 8 पीएच मान वाली मिट्टी उपयुक्त होती है ड्रैगन फ्रूट की खेती में अधिकतर बलुई दोमट या दोमट मिट्टी की आवश्यकता हो सकती है ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए रेतीली मिट्टी बेहतर होती है इसकी खेती करने के लिए खेत की अच्छे से जुताए करनी चाहिए और खरपतवार से मुक्त होनी चाहिए इसके साथ ही खेत तैयार करते वक्त ही खेत में क्षेत्रफल के हिसाब से जैविक खाद डालना चाहिए हालांकि जीवाश्म और जैविक खाद से भरपूर अच्छी जल निकास वाली रेतीली मिट्टी इसके उत्पादन के लिए सर्वोत्तम है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती कब की जाती है: मार्च से जुलाई के बीच में इसके पौधे और बीज लगाने के लिए बेहतर समय होता है ।

ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए खेत की तैयारी: मिट्टी के कानों में वायु संचार अच्छा होता है तथा हानिकारक कीट नष्ट हो जाते हैं इसके लिए खेत की अच्छे से जुताए करनी चाहिए इससे मिट्टी में मौजूद खरपतवार भी नष्ट हो जाते हैं जुताई के बाद किसी भी जैविक खाद को अनुपात के अनुसार मिट्टी में मिला देना चाहिए। ड्रैगन फ्रूट की बुवाई की विधि ड्रैगन फ्रूट की खेती में इसे केवल पौधों को काटकर बोया जाता है और दोनों तरह से लगाया जाता है ड्रैगन फ्रूट की खेती में यह बुवाई सबसे आम तरीका है इसे बी द्वारा भी बोया जा सकता है लेकिन इसके अंकुरण में काफी समय लगता है फलों के नमूने तैयार किए जाने चाहिए खेत में रोपण के लिए लगभग 20 सेंटीमीटर लंबे नमूनों का उपयोग करना चाहिए इन्हें रोपने से पहले मूल वृक्ष से काटकर ढेर लगा देना चाहिए।

ड्रैगन फ्रूट की कैसे करें रोपाई: ड्रैगन फ्रूट की खेती के लिए मूल रूप से दो तरीके हैं पहले ड्रैगन फ्रूट को सीधे चाकू से काटकर दो भागों में बांटकर उसके अंदर से काले बीज निकालकर खेती के लिए उसका उपयोग कर सकते हैं । पर इसे पौधे उगाने में समय लगता है इसलिए कमर्शियल खेती के लिए यह उचित नहीं है।दूसरा तरीका है इसकी कटिंग को खेत में लगाना। ड्रैगन फ्रूट की रोपाई से दो दिन पहले मदर ड्रैगन पौधों को 20 सेमी की लंबाई में काट लें और लगाने से पहले इस कटिंग पीस को सूखे गोबर , ऊपरी मिट्टी और रेत के मिश्रण के साथ 1:1:2 के अनुपात में एक बर्तन में रखें इन कटे हुए टुकड़ों को धूप से बचाए । प्रत्येक पौधे को उनके बीच 2 मी× 2 मीटर की जगह रखें और 60 सेंटीमीटर ×60 सेंटीमीटर× 60 सेंटीमीटर आकर के गड्ढे में लगे साथ ही इस गड्ढे को कंपोस्ट खाद एवं 100 ग्राम सुपर फास्फेट खाद से भर दें 1 एकड़ भूमि में लगभग 1700 ड्रैगन फ्रूट के पौधे लगाते हैं पौधे के समुचित विकास और विकास के लिए कंक्रीट या लकड़ी के स्तंभों का सहारा लें।

बीज द्वारा पौध तैयार करना: बीज द्वारा तैयार किए गए पौधे के उगने से लेकर फल आने तक 6 से 7 वर्ष का समय लग जाता है इसलिए किसान भाई बीज द्वारा पौध तैयार नहीं करें। नर्सरी ग्राफ्टिंग सीडलिंग इस विधि में नर्सरी द्वारा बहुत तैयार की जाती है जिसमें 2 साल में फल आने शुरू हो जाते हैं।

ड्रैगन फ्रूट का पौधा कैसे लगाएं?: ड्रैगन फ्रूट के पौधे बिना किसी सहारे के आगे नहीं बढ़ पाए इसलिए किसानों को खेतों में डंडे लगाने पड़ते हैं पौधे से पौधे की बीच की दूरी 8 फिट रखती है कटार से कतर की दूरी 12 से 12 फिट रखती है पल की लंबाई 6 से 7 फिट होना चाहिए इन्हें जमीन में 1.5 से 2 फीट तक दबाना पड़ता है एक खंभे के चारों ओर कर पौधे लगाए और उन्हें ऊपर की दिशा में बांध दें ध्यान दें की लकड़ी के दो भाई दो वर्ग के टुकड़े का उपयोग खंबे पर पौधे की बेल के उभार को पकड़ने के लिए किया जाता है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती के उर्वरक: ड्रैगन फ्रूट के प्रत्येक पौधे को अच्छी तरह से विकसित होने के लिए 10 से 15 किलोग्राम जैविक भोजन या जैविक खाद की आवश्यकता होती है पौधे की बेहतर वृद्धि और विकास के लिए जैविक खाद या उर्वरक मुख्य भूमिका निभा सकते हैं प्रत्येक पौधे की अच्छी वृद्धि के लिए 10 से 15 किलोग्राम जैविक खाद या जैविक उर्वरक देना चाहिए इसकी जरूरत है वनस्पति अवस्था में डाले जाने वाले रासायनिक उर्वरकों का अनुपात पोटाशः सुपर फास्फेटः यूरिया= 40 : 90 :70 ग्राम प्रति पौधा है। ड्रैगन फ्रूट की अधिक उपज प्राप्त करने के लिए पौधे पर फल लगने की अवस्था में पोटाश की अधिक मात्रा तथा नाइट्रोजन की कम मात्रा का प्रयोग करना चाहिए जब पौधों में फल लगने का समय हो तो थोड़ी मात्रा में नाइट्रोजन और अधिक मात्रा में पोटाश देना चाहिए ताकि पैदावार अच्छी हो रासायनिक उर्वरकों को फूल आने से लेकर फल लगने तक यानी फूल आने से ठीक पहले (अप्रैल) फूल लगने (जुलाई अगस्त) और फल लगने (दिसंबर) में निम्नलिखित अनुपात में दिया जाना चाहिए यूरिया :सुपर फास्फेटःपोटाश= 50 :50: 100 ग्राम प्रति पौधा रासायनिक उर्वरकों को प्रतिवर्ष 220 ग्राम तक बढ़ाया जाना चाहिए जिसे 1.5 किग्रा. तक बढ़ाया जा सकता है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती में सिंचाई: इस फल की खेती करने में ज्यादा पानी की आवश्यकता नहीं होती है कम पानी में भी ड्रैगन फ्रूट की खेती आसानी से कर सकते हैं सर्दियों के मौसम में इसके पौधे को महीने में दो बार सिंचाई की जरूरत होती है जबकि गर्मियों में 8 से 12 दिन में सिंचाई की जरूरत होती है ड्रिप इरीगेशन, स्प्रिंकलर इरिगेशन माइक्रोजेट और बेसिन इरिगेशन जैसी नवीनतम तकनीक में कई सिंचाई प्रणालियां उपलब्ध हैं लेकिन ड्रैगन फ्रूट प्लांट को अन्य फलों की खेती की तुलना में कम पानी की आवश्यकता होती है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती में कीट एवं रोग की रोकथाम: ड्रैगन फ्रूट की खेती की खासियत यह है कि इसके पौधों में अब तक किसी भी प्रकार के कीट या बीमारी का कोई मामला सामने नहीं आया है ड्रैगन फ्रूट के पौधे 1 साल में ही फल देना शुरू कर देते हैं पौधों में से जून माह में फूल आते हैं और अगस्त से दिसंबर तक फल आते हैं सामान्यत फिर भी इसमें एंथ्रेक्नोज रोग और थिप्स कीट का प्रकोप देखा गया है। इमिडाकलोरपिड 17.8 एस एल 40 से 50 मिली प्रति एकड़ का एफिड, सफेद मक्खी, थिप्स, जैसिड, दीमक ,हरा फुदका, भूरा फुदका, सफेद पीठ वाला पौधों का फुदका ,माहू, चिप्स आदि कीटों को नियंत्रित करने के लिए उपयोग कर सकते हैं। रोग के नियंत्रण के लिए मैंकोजेब दवा के घोल का 0.25 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें थिप्स के लिए ऐसीफेट दवा का 0.1% की दर से छिड़काव करना चाहिए।

फलों की तुड़ाई /फलों की कटाई: फूल आने के 1 महीने बाद ड्रैगन फ्रूट अपना गौरवपूर्ण स्थान ले सकता है । गुच्छन उपयुक्त है लेकिन यदि फलों का निर्यात किया जाना है तो रंग खराब होने के 1 दिन के भीतर गुच्छन किया जाना चाहिए एक पौधे से 8 से 10 फल लगते हैं।

ड्रैगन फ्रूट फल की कीमत

- सफेद पिताया/पपीता 150 से 250 रुपए प्रति किलोग्राम
- लाल पिताया 150 रुपए प्रति किलोग्राम
- पीला पिताया 400 से 800 रुपए प्रति किलोग्राम।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

अरहर खेती : रोग एवं कीट नियंत्रण

आदित्य तिवारी ग्रामीण कृषि विस्तार अधिकारी
किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग, जिला-सतना (म.प्र.)

अरहर भारत की प्रमुख दलहनी फसल है। दालें प्रोटीन के रूप में भोजन का एक महत्वपूर्ण अंग हैं। अरहर की बुवाई जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह में करना उपयुक्त माना गया है। अरहर की फसल में अनेक प्रकार के कीट एवं रोगों का प्रकोप फैलता है, जो फसल में अत्यधिक नुकसान करते हैं तथा अधिकांश फसल को नष्ट कर देते हैं। फसल उत्पादन में वृद्धि हेतु कीट एवं रोगों का नियंत्रण अत्यावश्यक है। निम्नलिखित सुझाव को अपनाकर अरहर की उत्पादकता को दोगुना किया जा सकता है।

अ. रोग नियंत्रण

1. **उकटा रोग**-यह रोग फ्यूजेरिम कवक के द्वारा फैलता है। सामान्तः फूल लगने के समय यह फैलता है। इस प्रभाव सितंबर से जनवरी के महीनों में दिखाई देता है। रोगी पौधा पीला पड़ जाता है एवं जड़ सड़ जाती है, इस प्रकार पौधा सूख जाता है। इस बीमारी से बचाव के लिये जेकेएम-7, जेकेएम-189, 736 आशा, सी-11 एवं बीएसएमआर-853 रोगरोधी उन्नत किस्मों की बुवाई बीज उपचार पश्चात करना चाहिए।
2. **बांझपन विषाणु रोग**-यह बीमारी माई, मकड़ी से अधिक फैलता है। इस रोग का फैलाव वायरस द्वारा होता है। इस रोग के प्रभावित पौधों के ऊपरी भाग की पत्तियां छोटी रहती हैं तथा अधिक मात्रा में लगती हैं। जबकि फूल एवं फली नहीं लगने पाती है। इसकी रोकथाम हेतु रोगरोधक जातियां आईसीपीएल-87119 (आशा) बीएसएमआर-853, 736 को प्रयोग में लाना चाहिए।
3. **फायटोपथोरा झुलसा रोग**-इस बीमारी से प्रभावित पौधा पीला पड़कर सूख जाता है। पौधे में जमीन के ऊपर बड़ी गठान हो जाती है एवं पौधा कमजोर हो जाता है। इस रोग से बचाव के लिये 3 ग्राम मेटेलाक्सील फफूंदनाशक दवा प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। रोग रोधी किस्म जेए-4, जेकेएम-189 की बुवाई करना चाहिए।

ब. कीट नियंत्रण

1. **फली मक्खी**-यह कीट फली में छेद बना देती है तथा फली के अंदर रहकर अंडा देती है एवं दाना खाती है। अंडों से मेगट का फैलाव होता है जो फसल को हानि पहुंचाते हैं। दाने पर तिरछी सुरंग बना देते है और दाना छोटा रह जाता है।
2. **फली छेदक इल्ली**-इन इल्लियों के शरीर में हल्की गहरी पत्तियां होती हैं एवं पीली, हरी, काली रंग की दिखाई देती हैं। ये इल्लियां फली में छेद बनाती हैं एवं फलियों के उतकों, कलियों, फूलों एवं फलियों के दाना को हानि पहुंचाती हैं। प्रौढ़ इल्लियां रात्रि के समय फसल को नुकसान पहुंचाती हैं क्यों ये रात्रिचर होती है।
3. **प्लू माथ**- ये इल्लियां हरी दिखाई देती है एवं इनका शरीर छोट-छोटे कॉटों से ढ़का दिखाई देता है। मादा इल्ली फलियों पर अंडे देती है। यह इल्ली फली पर छोटा छेद कर देती है। कुछ समय बाद प्रभावित दाने के चारों तरफ लाल रंग की फफूंद आ जाती है।

ब्रिस्टल ब्रिटल-ये भृंग फूलों, कलियों एवं फलियों को खाते हैं। यह कीट फसल को काफी नुकसान पहुंचाते हैं।

संरक्षण के उपाय

गमी के समय गहरी जुताई करना चाहिये तथा क्षेत्र में एक साथ बुवाई करना चाहिये। शुद्ध/सतत अरहर की बुवाई नही करना चाहिये। फसल चक्र अपनाना चाहिये। रासायनिक खाद की निश्चित अनुसंशित मात्रा का प्रयोग करना चाहिये। अरहर के साथ ज्वार, मक्का, सोयाबीन या मूंगफली की फसल भी लेना चाहिए। पौधों को हिला कर इल्लियों को गिराकर एकत्र करके नष्ट कर देना चाहिये। खेत में चिड़ियों के बैठने का प्रबन्ध भी लाभकारी होता है जो कीटों को खा जाती है। निंबोली सत 5 प्रतिशत का छिड़काव लाभकारी होता है। नीम तेल या करंज तेल 10-15 मिली प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिडकाव करना चाहिये। कीट एवं रोग नियंत्रण के रूप में अंतिम रूप में रासायनिक कीटनाशक का छिड़काव करें।

फली मक्खी के रोकथाम हेतु डायमिथेएट 30 ईसी या प्रोपेनोफास 50 के 1000 मिली मात्रा 500 लीटर पानी के साथ छिडकाव करना चाहिए। फली छेदक इल्लियों के प्रकोप से बचाव हेतु इण्डोक्सीकार्व 14.5 ईसी 500 मिली या क्वीनालफास 25 ईसी को पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। यह छिड़काव फूल बनते समय पहला एवं जब 50 प्रतिशत फल बन जाए एवं अंतिम तीसरा फली बनते समय करने से कीट एवं रोग नियंत्रण कर पौध संरक्षण किया जा सकता है। इस प्रकार पौध संरक्षण की उन्नत तकनीक के माध्यम से सिंचित क्षेत्र में 25 से 30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर एवं असिंचित अवस्था में 15 से 20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की दर से उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं तथा अपनी आय को दोगुना कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976

लेमन ग्रास की खेती और उपयोग

आनंद चौधरी बी.एससी.(छात्र), विन्ध्या इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट एंड साइंस कॉलेज, सतना (म.प्र.)

ज्योति पाण्डेय, प्रवीण गर्ग, सुलेखा त्रिपाठी
सहायक प्राध्यापक, विन्ध्या इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट एंड साइंस कॉलेज, सतना (म.प्र.)

लेमन ग्रास एक औषधीय पौधा है जो कि खासकर दक्षिण-पूर्वी-एशिया में पाया जाता है। लेमन ग्रास की बात करें तो यह भी घास जैसा ही दिखता है। बस इसमें बात यह है कि इसकी जो लम्बाई होती है वे आम घास की तुलना में अधिक होती है तथा हम इसकी महक नींबू जैसी होती है। लेमन ग्रास का उपयोग आमतौर पर लोग अदरक के रूप में इस्तेमाल करते हैं। इसके अलावा दवाई के रूप में भी उपयोग किया जाता है। भारत में लेमन ग्रास की खेती उत्तरप्रदेश, केरल, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, असम, महाराष्ट्र, आदि जगहों में की जाती है। किसान इसकी खेती कर अच्छी कमाई कर सकते हैं। इसकी खेती किसी भी उपजाऊ मिट्टी में की जा सकती है परन्तु जलभराव वाली भूमि में खेती नहीं की जा सकती है। लेमन ग्रास सिम्बोपोगोन प्रजाति से संबंधित एक सुगंधित औषधी घास है। लेमन ग्रास में लगभग 70 से 75% सिटल पाया जाता है जिसके कारण ही नींबू जैसी होती है।

भारत में लेमन ग्रास के स्थानीय नाम: निम्मा गद्दी (तेलुगु), एलुमिचाई-एन्नाई पुल्लू (तमिल), निम्बे हुल्लू (कन्नड़), कोचीन घास या मालाबार ग्रासर या वासनापुल्लू (मलयालम), गवती चाहा (मराठी), गंधात्रिना (हिंदी)।

लेमन ग्रास की व्यावसायिक किस्में

सुगंधी, प्रमाण, पीआरएल-16, सीकेपी-25, ओडी-408, आरआरएल-39, प्रगति और कावेरी।

लेमन ग्रास उगाने के लिए आवश्यक जलवायु: लेमन ग्रास को गर्म आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है, जिसमें भरपूर धूप हो और साल भर में 200 से 250 सेमी तक अच्छी तरह से वितरित वर्षा हो। लेमन ग्रास को ऐसे स्थान पर उगाया जा सकता है जहां वर्षा कम होती हो, बशर्ते वैकल्पिक सिंचाई व्यवस्था हो।

लेमन ग्रास रोपण के लिए मिट्टी की आवश्यकता: लेमन ग्रास समृद्ध दोमट से लेकर खराब लैटेराइट तक विभिन्न प्रकार की मिट्टी में अच्छी तरह से पनपती है लेकिन अच्छी जल निकासी और अच्छे कार्बनिक पदार्थ वाली बलुई दोमट मिट्टी और लाल मिट्टी इसकी खेती के लिए सबसे उपयुक्त होती है। इसकी खेती के लिए जल जमाव वाली मिट्टी पर विचार नहीं किया जाना चाहिए।

लेमन ग्रास की बीज दर: लेमन ग्रास की खेती में बीज दर 2.5 किलोग्राम प्रति एक हेक्टेयर है।

लेमन ग्रास के पोषक तत्व: लेमन ग्रास में अनेक प्रकार के पोषक तत्व मौजूद होते हैं, जो मानव शरीर के लिए काफी लाभकारी होते हैं। इसमें प्रोटीन, राइबोफ्लेविन, नियासिन पैंटोथैनिक एसिड, विटामिन ए, विटामिन सी और थायमिन की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है। इसके अलावा इसमें सेलेनियम, सोडियम, आयरन, मैंगनीज, कैल्शियम,

पोटेशियम, मैग्नीशियम, कॉपर, फास्फोरस और जिंक जैसे अनेक प्रकार के खनिज पदार्थ भी मौजूद होते हैं, जिस वजह से यह एक बहुत ही लाभकारी औषधी भी है।

लेमन ग्रास के पौधों की रोपाई: लेमन ग्रास के पौधों की रोपाई कलम और बीज दोनों ही तरीके से की जाती है। यदि आप बीज के माध्यम से रोपाई करना चाहते है, तो उसके लिए आपको एक हेक्टेयर के खेत में तक़रीबन 2 से 3 KG बीजो की आवश्यकता होती है, तथा पौध के रूप में रोपाई के लिए कलम को खेत में तैयार क्यारियों में लगाया जाता है। इन क्यारियों को पंक्तियों में तैयार कर लिया जाता है, जिसमे प्रत्येक पंक्ति के मध्य एक से डेढ़ फीट की दूरी रखी जाती है। इसके बाद पंक्ति में की गयी पौध रोपाई एक से डेढ़ फ़ीट की दूरी पर की जाती है, तथा पौधों को 3 से 4 CM की गहराई में लगाना होता है।

इसके अलावा पौधों की रोपाई पुरानी जड़ों के रूप में भी कर सकते है। यह विधि स्लिप विधि कहलाती है। इसमें कलम को तैयार करने के लिए लगाए गए पुराने पौधों को जड़ से 8 से 10 CM की ऊंचाई से काटा जाता है। इसके बाद उन जड़ों को उखाड़कर उनसे स्लिप (छोटी जड़े) अलग कर ली जाती है। इन अलग की हुई जड़ों को 3 से 4 CM की गहराई में खेत में लगाते है। यह विधि सबसे अच्छी मानी जाती है।

लेमन ग्रास का उपयोग: लेमनग्रास (Lemongrass) के पौधे का सबसे ज्यादा इस्तेमाल परफ्यूम, साबुन, निरमा, डिटर्जेंट,तेल, हेयर ऑयल, मच्छर लोशन, सिरदर्द की दवा व कास्मेटिक बनाने में किया जाता है।

औषधि गुण: लेमन ग्रास में बेक्टीरिया से बचाव के लिए एंटी बेक्टीरिया सुजन को दूर करने के लिए एंटी इम्पलेमेंटरी व फंगस से राहत दिलाने के लिए एंटी फंगल प्रभाव होते है लेमन ग्रास में पाए जाने वाले ये गुण कई प्रकार की बीमारियो और संक्रमण से सुरक्षा प्रदान करते है ढ्ढ

किडनी के लिए: लेमन ग्रास का उपयोग करने से बार बार पेशाब जाने कि जरूरत हो सकती है जो कि किडनी के लिए अच्छा है इससे शारीर में उपस्थित विषक्त पदार्थ जो शरीर को नुकसान पंहुचा सकते है वो पेशाब के दौरान निकल जाते है जिससे किडनी स्वस्थ रहती है इसलिए हमे लेमन ग्रास का उपयोग करना चाहिए।

कैंसर से बचाव: लेमन ग्रास और लेमन ग्रास तेल में एंटी कैंसर गुण पाए जाते है जो कि कैंसर सेल्स को ख़तम करते है तथा कैंसर के खतरे को कम करने में मदद कर सकते है जहा तक की कैंसर एक लाइलाज बीमारी है इसलिए कैंसर की समस्या होने पर लेमन ग्रास उपयोग करने की सलाह दी जाती है लेमन ग्रास का उपयोग कर हम कैंसर से बच सकते हैं।

- लेमन ग्रास टी के फायदे के लिए ग्रीन टी की तरह इसकी चाय बना सकते है इसे इलायची तथा अदरक के रूप में चाय में उपयोग कर सकते हैं।
- लेमन ग्रास का हम सूप बना कर पीते हैं।
- इसका पेस्ट बनाकर सब्जियां बनाने में उपयोग करते हैं
- खाने में नींबू के छिलके की जगह लेमन ग्रास का उपयोग कर सकते है।

नुकसान

वैसे तो इसका उपयोग सेहत के लिए लाभकारी है पर अधिक मात्रा में सेवन करना भी नुकसानदायक है –

- लेमन ग्रास का अधिक सेवन से डुपेरेटिक बीमारी हो जाती है।
- संवेदनशील लोगों को एलर्जी की समस्या

ISSN-2582-5976

सोयाबीन की फसल में खरपतवार प्रबंधन

लाखन सिंह मोहनिया (पी.एच.डी. स्कॉलर सस्य विज्ञान)
डॉ. जनमेजय शर्मा (वैज्ञानिक सस्य विज्ञान)
डॉ. अमिता शर्मा (वैज्ञानिक कृषि वानिकी)
उमा शंकर बागरी (पी.एच.डी. स्कॉलर सस्य विज्ञान) राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.)

परिचय

सोयाबीन विश्व की एक प्रमुख फसल है। हमारे देश में यह विगत वर्षो में न केवल उच्च प्रोटीन वरन खाद्य तेल युक्त महत्वपूर्ण फसल के रूप में उभरी है। सोयाबीन उगाने वाले राज्यों में मध्यप्रदेश क्षेत्रफल (5.2 मिलियन हेक्टेयर) एवं उत्पादन (5.1 मिलियन टन) की दृष्टि से अग्रणी है तथा देश के सोयाबीन उत्पादन में 80 प्रतिशत का भागीदार है। इसके बीजों में तेल (20 प्रतिशत) तथा प्रोटीन (40-45 प्रतिशत) प्रचुर मात्रा में पाए जाते है। इसकी बहुआयामी घरेलू एवं प्रायोगिक उपयोगिता के कारण यह अत्यधिक लोकप्रिय हो रही है। इसकी उत्पादन क्षमता अन्य दलहनी फसलों की अपेक्षा अधिक है तथा साथ ही साथ भूमि की उर्वरा शक्ति को भी बढ़ाती है। इससे विभिन्न प्रकार के व्यंजन जैसे सोयादूध, दही, पनीर, बिस्किट आदि बनाए जाते है। हमारे देश में शाकाहारी एवं निर्धन लोगों के लिए या प्रोटीन का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। तिलहनी फसलों में मूंगफली, तोरिया एवं सरसों के बाद क्षेत्रफल तथा उत्पादन के आधार पर हमारे देश में इसका तीसरा स्थान है। पिछले दशक में सोयाबीन के क्षेत्रफल में असाधारण रूप से वृद्धि हुई है, किन्तु इसकी उत्पादकता में कमी बनी हुई है। जिसका एक प्रमुख कारण खरपतवारों का सही समय पर समुचित नियंत्रण न कर पाना है।

वे किसान जो किसी कारण से सोयाबीन की फसल की बुवाई देरी से की है। वे अभी भी अपनी फसल में खरपतवार का नियंत्रण कर सकते है। इनकी रोकथाम के लिये बुवाई के समय ही खरपतवारनाशी दवा को खेत में डाला जाता है. जो किसान खरपतवारनाशी का प्रयोग नहीं कर पाये, वे कीटनाशक दवा में इसे घोलकर छिड़काव कर सकते हैं. सोयाबीन की जैविक खेती करने वाले किसान खेत में नीम और गौमूत्र से बने कीटनाशकों का छिड़काव करें.

सोयाबीन की फसल के प्रमुख खरपतवार

सोयाबीन की फसल में उगने वाले खरपतवारों को मुख्यतः तीन श्रेणी में विभाजित किया जा सकता है-

(क) चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार-इस प्रकार के खरपतवारों की पत्तियाँ प्रायः चौड़ी होती हैं तथा यह मुख्यतः दो बीजपत्रीय पौधे होते हैं जैसे महकुंआ (अजेरेटम कोनीजाइडस), जंगली चौलाई (अमरेन्थस बिरिडिस), सफेद मुर्ग (सिलोसिया अजरेन्सिया), जंगली जूट (कोरकोरस एकुटैंन्गुलस), बन मकोय (फाइ जेलिस मिनिगा), हजारदाना (फाइलेन्थस निरुरी) तथा कालादाना (आइपोमिया स्पीसीज) इत्यादि।

(ख) सकरी पत्ती वाले खरपतवार-घास कुल के खरपतवारों की पत्तियाँ पतली एवं लम्बी होती हैं तथा इन पत्तियों

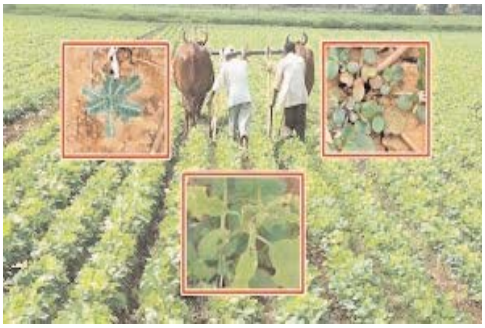

के अंदर समांतर धारियां पाई जाती हैं। यह एक बीज पत्री पौधे होते हैं जैसे सांवक (इकाईनोक्लोआ कोलोना) तथा कोदों (इल्यूसिन इंडिका) इत्यादि।

(ग) मोथा परिवार के खरपतवार-इस परिवार के खरपतवारों की पत्तियाँ लंबी तथा तना तीन किनारे वाला ठोस होता है। जड़ों में गांठे (ट्यूबर) पाए जाते हैं जो भोजन इकट्ठा करके नए पौधों को जन्म देने में सहायक होते हैं जैसे मोथा (साइपेरस रोटन्ड्स, साइपेरस) इत्यादि।

खरपतवार से हानि

सोयाबीन खरीफ मौसम में उगाई जाती है। वर्षा ऋतु में उच्च तापमान एवं अधिक नमी खरपतवार की बढ़ोतरी में सहायक है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि उनकी बढ़ोतरी रोकी जाए जिससे फसल को बढ़ने के लिए अधिक से अधिक जगह, नमी, प्रकाश एवं उपलब्ध पोषक तत्व मिल सके। प्रयोगों से यह सिद्ध हो चुका है कि सोयाबीन के खरपतवारों को नष्ट न करने से उत्पादन में लगभग 25 से 70 प्रतिशत तक की कमी हो सकती है। इसके अलावा खरपतवार फसल के लिए भूमि में निहित खाद एवं उर्वरक द्वारा दिए गए पोषक तत्वों में से 30-60 किग्रा. नाइट्रोजन, 8-10 किग्रा. फास्फोरस एवं 40-100 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से शोषित कर लेते हैं। इसके फलस्वरूप पौधे की विकास गति धीमी पड जाती है और उत्पादन स्तर गिर जाता है। इसके अतिरिक्त खरपतवार फसल को नुकसान पहुँचाने वाले अनेक प्रकार के कीड़े मकोड़े एवं बीमारियों के रोगाणुओं को भी आश्रय देते हैं।

खरपतवार नियंत्रण कब करें ?

प्रायः यह देखा गया है कि कीड़े मकोड़े, रोग व्याधि लगने पर उसके निदान की ओर तुरंत ध्यान दिया जाता है लेकिन किसान खरपतवारों को तब तक बढ़ने देते है जब तक कि हाथ से पकड़कर उखाड़ने योग्य न हो जाए। उस समय तक खरपतवार फसल को ढंककर काफी नुकसान कर चुके होते हैं। सोयाबीन के पौधे प्रारंभिक अवस्था में खरपतवारों से मुकाबला नहीं कर सकते। अतः खेत को उस वक्त खरपतवार रहित रखना आवश्यक होता है। यहाँ पर यह भी बात ध्यान देने योग्य है कि फसल को हमेशा न तो खरपतवार मुक्त रखा जा सकता है और न ही ऐसा करना आर्थिक दृष्टि से लाभकारी है। अतः क्रांन्तिक (नाजुक) अवस्था विशेष पर निदाई करके खरपतवार मुक्त रखा जाए तो फसल का उत्पादन अधिक प्रभावित नहीं होता है। सोयाबीन में यह नाजुक अवस्था प्रारंभिक बढ़वार के 20-45 दिनों तक रहती है।

खरपतवार नियंत्रण की विधियां

खरपतवारों की रोकथाम में ध्यान देने योग्य बात यह है कि खरपतवारों का सही समय पर नियंत्रण करें चाहे किसी भी प्रकार से करें। सोयाबीन की फसल में खरपतवारों की रोकथाम निम्नलिखित तरीकों से की जा सकती है।

1.निवारक विधि-इस विधि में वे क्रियाएं शामिल हैं जिनके द्वारा सोयाबीन के खेत में खरपतवारों को फैलने से रोका जा सकता है जैसे प्रमाणित बीजों का प्रयोग, अच्छी सड़ी कम्पोस्ट एवं गोबर की खाद का प्रयोग, खेत की तैयारी में प्रयोग किए जाने वाले यंत्रों की प्रयोग से पूर्व अच्छी तरह से सफाई इत्यादि।

2.यांत्रिक विधि-यह खरपतवारों पर काबू पाने की सरल एवं प्रभावी विधि है। सोयाबीन की फसल में बुवाई के 20-45 दिन के मध्य का समय खरपतवारों से प्रतियोगिता की दृष्टि से क्रांन्तिक समय है। दो निराई गुदाईयों से खरपतवारों की बढ़वार पर नियंत्रण पाया जा सकता है। पहली निराई बुवाई के 20-25 दिन बाद तथा दूसरी 40-45 दिन बाद करनी चाहिए। निराई-गुराई कार्य हेतु व्हील हो या ट्विन व्हील हो का प्रयोग कारगर एवं आर्थिक दृष्टि से सस्ता पड़ता है।

3.रासायनिक विधि-खरपतवार नियंत्रण के लिए जिन रसायनों का प्रयोग किया जाता है उन्हें खरपतवारनाशी कहते हैं। रसायनिक विधि अपनाने से प्रति हेक्टेयर लागत कम आती है तथा समय की भारी बचत होती है लेकिन इन रसायनों का प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि इनका प्रयोग उचित मात्रा में उचित ढंग से तथा उपयुक्त समय पर हो अन्यथा लाभ की बजाय हानि की संभावना रहती है। सोयाबीन की फसल में प्रयोग किए जाने वाले विभिन्न खरपतवारनाशी रसायनों का विस्तृत विवरण सारणी में दिया गया है।

बोवनी के 20- 30 दिन बाद उपयोगी

इमेजाथापर 10 एस. एल.	1 ली./हेक्टे.
क्विझालोफोप इथाइल 5 ई . सी .	1 ली./हेक्टे.
क्विझालोफोप-पी- इथाइल 10 ई . सी .	375-450 मि.ली./हेक्टे.
फेनाक्सिप्रोप -पी- इथाइल 9 ई . सी .	1 ली./हेक्टे.
क्विझालोफोप-पी- तेफ्युरिल 4.41 ई . सी	1 ली./हेक्टे.

खरपतवारनाशी रसायनों के प्रयोग में सावधानियां

1. प्रत्येक खरपतवारनाशी रसायनों के डिब्बों पर लिखे निर्देशों तथा उसके साथ दिए गए पर्चे को ध्यान पूर्वक पढ़ें तथा उसमें दिए गए तरीकों का विधिवत पालन करें।
2. खरपतवारनाशी रसायन को उचित समय पर छिड़के। अगर छिड़काव समय से पहले या बाद में किया जाता है तो लाभ के बजाय हानि की संभावना रहती है।
3. खरपतवारनाशी का पूरे खेत में समान रूप से छिड़काव होना चाहिए।
4. खरपतवारनाशी का छिड़काव जब तेज हवा चल रही हो तब नहीं करना चाहिए तथा जब छिड़काव करें, मौसम साफ़ होना चाहिए।
5. छिड़काव करते समय इसके लिए विशेष पोशाक, दस्ताने तथा चश्में इत्यादि का प्रयोग करना चाहिए ताकि रसायन शरीर पर न पड़े।
6. छिड़काव कार्य समाप्त होने के बाद हाथ, मुंह साबुन से अच्छी तरह धो लेना चाहिए तथा अच्छा हो यदि स्नान भी कर लें।
7. खरपतवारनाशी प्रमाणित जगह से रसीद के साथ खरीदे ताकि मिलावटी दवा की सम्भावना न रहे।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

भारत सरकार द्वारा सूक्ष्म खाद्य प्रसंस्करण व्यवसायों के लिए एक योजना

प्रधानमंत्री सूक्ष्म खाद्य उद्योग उन्नयन योजना (PMFME)

सीए पंकज माहेश्वरी
पुरानी गल्ला मंडी, रेलवे स्टेशन के पास, पिपरिया
जिला-होशंगाबाद (म.प्र.)

आत्मनिर्भर भारत अभियान के तहत एक ऐतिहासिक पहल, सूक्ष्म खाद्य उद्यमियों, एफपीओ/ एसएचजी/ सहकारिताओं को सूक्ष्म खाद्य प्रसंस्करण उद्यमों के औपचारिककरण की योजना से लाभान्वित होने का सुनहरा अवसर प्रदान करती है।

पृष्ठभूमि: असंगठित खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र में ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार का प्रमुख स्रोत है। उनमें से अधिकांश परिवार आधारित उद्यम हैं जो ग्रामीण परिवारों में आजीविका का समर्थन करते हैं और शहरी क्षेत्रों में उनके प्रवास को कम करते हैं। ये इकाइयां काफी हद तक सूक्ष्म उद्यमों की श्रेणी में आती हैं। इन इकाइयों को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जो उनके प्रदर्शन और विकास को सीमित करती हैं। इन चुनौतियों में आधुनिक तकनीक और उपकरणों तक पहुंच की कमी, प्रशिक्षण, संस्थागत ऋण तक पहुंच, उत्पादों की गुणवत्ता नियंत्रण पर बुनियादी जागरूकता की कमी और ब्रांडिंग और विपणन कौशल की कमी आदि शामिल हैं। इसलिए, इसकी विशाल क्षमता के बावजूद मूल्यवर्धन और उत्पादन के संदर्भ में असंगठित खाद्य प्रसंस्करण का बहुत कम योगदान है।

उद्देश्य: असंगठित खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र के सामने आने वाली चुनौतियों से निपटने के लिए खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय **(MoFPI)** ने पैकेज समर्थन और सेवाओं के माध्यम से "पीएम फॉर्मलाइजेशन ऑफ माइक्रो फूड प्रोसेसिंग एंटरप्राइजेज स्कीम (PM FME स्कीम)" शुरू की है। योजना के तहत उद्देश्यों में शामिल हैं:

- तकनीकी ज्ञान, कौशल प्रशिक्षण और सहायता सेवाओं के माध्यम से उद्यमियों की क्षमता निर्माण। ■ प्रौद्योगिकी उन्नयन के लिए मौजूदा सूक्ष्म खाद्य प्रसंस्करण उद्यमियों को ऋण की पहुंच में वृद्धि। ■ असंगठित खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र का समर्थन करने के लिए सूक्ष्म उद्यमों को सामान्य सेवाओं का लाभ उठाने में सक्षम बनाना। ■ नियामक ढांचे और अनुपालन के तहत पंजीकरण के लिए मौजूदा उद्यमों के औपचारिक ढांचे में संक्रमण के लिए समर्थन।

यह एक अखिल भारतीय केंद्र प्रायोजित योजना है, इसलिए पूरे भारत में प्रोत्साहन समान हैं।

प्रारंभ में जब योजना वर्ष 2020-21 में शुरू की गई थी, तब एक जिला एक उत्पाद **(ODOP)** की अवधारणा थी, कच्चे माल की उपलब्धता बैकवर्ड और फॉरवर्ड लिंकेज को ध्यान में रखते हुए, सभी जिलों को अलग-अलग **ODOP** दिए गए थे। इसलिए यदि आप कोई नया व्यवसाय शुरू करना चाहते हैं तो वह उस जिले का **ODOP** होना चाहिए। या यदि आप किसी मौजूदा खाद्य प्रसंस्करण व्यवसाय का विस्तार करना चाहते हैं तो यह कोई भी खाद्य प्रसंस्करण व्यवसाय हो सकता है, लेकिन अब **ODOP** की अवधारणा में ढील दी गई है, जिले के **ODOP** के बावजूद कोई भी खाद्य प्रसंस्करण व्यवसाय स्थापित कर सकता है, लेकिन **ODOP** को प्राथमिकता दी जाएगी।

योजना के तहत खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों को सहायता

1.परियोजना लागत का 35% अनुदान Subsidy के रूप में दिया जाता है

- नए व्यवसाय के साथ-साथ मौजूदा सूक्ष्म खाद्य प्रसंस्करण व्यवसाय के उन्नयन के लिए परियोजना लागत का 35% अधिकतम 10 लाख क्रेडिट लिंक्ड अनुदान। ■ पूंजीगत व्यय के लिए स्वयं सहायता समूहों/ एफपीओ/सहकारिताओं को परियोजना लागत का 35% अधिकतम 10 लाख का क्रेडिट लिंक्ड अनुदान। ■ सामान्य बुनियादी सुविधाओं की सुविधा के विकास के लिए परियोजना लागत का 35त्न अधिकतम तीन करोड़ तक का क्रेडिट लिंक्ड अनुदान।
- योजनान्तर्गत आवेदन हेतु बैंक ऋण अनिवार्य है। ■ सब्सिडी पूर्ण संवितरण के बाद आती है, इसलिए सब्सिडी घटाकर बकाया राशि पर ब्याज लगाया जाता है। ■ नियमित पुनर्भुगतान के 3 साल बाद सब्सिडी ऋण में समायोजित हो जाती है।

2. एआईएफ योजना के तहत 3% ब्याज सबवेंशन

- साथ-साथ पात्र व्यवसाय कृषि अवसंरचना कोष के तहत आवेदन कर सकते हैं और दोनों योजनाओं का एक साथ लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

3. कागज रहित आवेदन प्रक्रिया

- पूरी तरह से डिजिटल एप्लिकेशन, सरकारी कार्यालयों में जाने की आवश्यकता नहीं है। ■ आवेदन के लिए बहुत कम दस्तावेजों की आवश्यकता है।

4. डीआरपी द्वारा हैंडहोल्डिंग सपोर्ट

- डीआरपी आवेदन जमा करने और अन्य सरकारी और बैंक अनुमोदन प्रक्रियाओं में मदद करेगा।

5.सरकार द्वारा बिक्री और विपणन समर्थन

- आप उत्पाद के लिए बाजार बनाने के लिए सरकार द्वारा आयोजित विभिन्न व्यापार मेलों में भाग ले सकते हैं।

पात्रता मापदंड: व्यक्तिगत लाभार्थी, समूह लाभार्थी (बचत गत/एफपीओ/ सहकारी समिति), कॉर्पोरेट लाभार्थी (साझेदारी फर्म), प्राइवेट लिमिटेड कंपनी

- आवेदक की आयु 18 वर्ष से अधिक होनी चाहिए और कम से कम आठवीं कक्षा उत्तीर्ण शैक्षणिक योग्यता होनी चाहिए। ■ एक परिवार से केवल एक व्यक्ति वित्तीय सहायता प्राप्त करने के लिए पात्र है। इस उद्देश्य के लिए "परिवार" में स्वयं, पति/पत्नी और बच्चे शामिल होंगे।

योजना के तहत आवेदन करने की प्रक्रिया: कोई भी पोर्टल पर पंजीकरण कर सकता है, डीआरपी से संपर्क कर सकता है और आवश्यक दस्तावेजों के साथ आवेदन जमा कर सकता है, पात्रता मानदंड और अन्य बातों पर विचार करते हुए डीआरपी आवेदन जमा करने में मदद करेगा।

पीएमएफएमई के अंतर्गत आने वाले विभिन्न खाद्य प्रसंस्करण व्यवसाय/उद्योग

- लघु चावल मिलिंग और संबंधित व्यवसाय (पोहा, मुरमुरा, पापड़ और अन्य) ■ लघु आटा पिसाई और संबंधित व्यवसाय (आटा, मैदा, रवा, बेसन, दलिया और अन्य) ■ छोटी दाल मिलिंग और संबंधित व्यवसाय ■ मवेशी चारा संबंधित व्यवसाय (ढेप, चुन्नी और अन्य) ■ बेकरी से संबंधित व्यवसाय (चिप्स, बिस्कुट, ब्रेड, टोस्ट, केक, चॉकलेट, नमकीन, और अन्य) ■ डेयरी से संबंधित व्यवसाय (पनीर, मक्खन, घी, स्वाद वाला दूध, और अन्य) ■ फल और सब्जियों से संबंधित व्यवसाय (फ्रूट जूस, एनर्जी ड्रिंक, मसाले, खाद्य तेल और अन्य) ■ गृह आधारित व्यवसाय (नूडल्स / शेवई, अचार, पापड़ और अन्य)

(यह केवल उदाहरणात्मक सूची है संपूर्ण नहीं)

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

जैव उर्वरक: मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की वृद्धि

डॉ. पंकज कुमार बागरी वैज्ञानिक, ए.के.एस., विश्वविद्यालय सतना (म.प्र.)

डॉ. एस.एस. तोमर डीन, एवं वरिष्ठ वैज्ञानिक कृषि विज्ञान विभाग, ए.के.एस., विश्वविद्यालय सतना (म.प्र.)

डॉ. टी. सिंह विभाग अध्यक्ष (सस्य विज्ञान), एवं वरिष्ठ वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान विभाग, ए.के.एस., विश्वविद्यालय सतना

जैव उर्वरक क्या है: जैव उर्वरक ऐसे सूक्ष्मजीव होते हैं, जिन्हें जब बीज, पौधों या मिट्टी में लगाया जाता है, तो वे मेजबान पौधे को प्राकृतिक तरीके से पोषक तत्व प्रदान करते हैं। इन सूक्ष्मजीवों में बैक्टीरिया, कवक और सायनोबैक्टीरिया शामिल हैं, और पौधों को नाइट्रोजन, फास्फोरस और सल्फर जैसे आवश्यक पोषक तत्व प्रदान कर सकते हैं। वे लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या में वृद्धि करके, कार्बनिक पदार्थों को तोड़कर और पौधों के रोगजनकों को दबाकर मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करने में भी मदद कर सकते हैं। जैव उर्वरकों को रासायनिक उर्वरकों का टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल विकल्प माना जाता है।

जैव उर्वरक के उपयोग

मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि: जैव उर्वरक मिट्टी की पोषक सामग्री में सुधार करने का एक प्राकृतिक तरीका है, जिससे यह पौधों के विकास के लिए अधिक उपजाऊ हो जाता है।

रासायनिक उर्वरकों के उपयोग को कम करना: जैव उर्वरक रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता को कम कर सकते हैं, जिससे कृषि के पर्यावरणीय प्रभाव को कम किया जा सकता है।

फसल की पैदावार में सुधार: जैव उर्वरक पौधों को नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम जैसे आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करके फसल की पैदावार में सुधार कर सकते हैं।

रोग के प्रति पौधों की प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि: जैव उर्वरक लाभकारी सूक्ष्मजीव प्रदान करके रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार कर सकते हैं जो संसाधनों के लिए रोगजनकों के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं।

लागत कम करना: जैव उर्वरक अक्सर रासायनिक उर्वरकों की तुलना में सस्ते होते हैं, जिससे वे किसानों के लिए लागत प्रभावी विकल्प बन जाते हैं।

मिट्टी की संरचना में सुधार: जैव उर्वरक माइक्रोबियल गतिविधि को बढ़ाकर मिट्टी की संरचना में सुधार कर सकते हैं, जो कार्बनिक पदार्थों को तोड़ने और मिट्टी की सरंध्रता में सुधार करने में मदद कर सकते हैं।

जैव-विविधता को बढ़ाना: जैव-उर्वरकों लाभकारी सूक्ष्मजीवों हेतु आवास प्रदान करके जैव-विविधता को बढ़ा सकते हैं जो एक स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखने में मदद कर सकते हैं।

जैव उर्वरक के उदाहरण

एज़ोटोबैक्टर: यह बैक्टीरिया मिट्टी में पाया जाता है और मिट्टी में नाइट्रोजन को ठीक करने की क्षमता हेतु जाना जाता है, जिससे यह चावल, गेहूं और मक्का जैसी फसलों हेतु एक प्रभावी जैव उर्वरक बन जाता है।

राइजोबिया: जीवाणुओं के इस समूह को मिट्टी में नाइट्रोजन को ठीक करके फलीदार पौधों, जैसे बीन्स और मटर के साथ सहजीवी संबंध बनाने की क्षमता के लिए जाना जाता है।

माइकोराइजल कवक: ये कवक पौधों की जड़ों के साथ सहजीवी संबंध बनाते हैं, जिससे उन्हें मिट्टी से पोषक तत्वों और पानी को अवशोषित करने में मदद मिलती है। वे आमतौर पर टमाटर, आलू और मकई जैसी फसलों हेतु जैव उर्वरक के रूप में उपयोग किए जाते हैं।

बैसिलस सबटिलिस: यह बैक्टीरिया मिट्टी की संरचना में सुधार, रोग को कम करने और पौधों के विकास को बढ़ावा देने की क्षमता के लिए जाना जाता है। यह आमतौर पर चावल, गेहूं और मक्का जैसी फसलों के लिए जैव उर्वरक के रूप में उपयोग किया जाता है।

अजोस्पिरीलम: यह बैक्टीरिया मिट्टी में नाइट्रोजन को ठीक करने की क्षमता के साथ-साथ पौधों की वृद्धि और रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार करने की क्षमता हेतु जाना जाता है। यह आमतौर पर चावल, गेहूं और मक्का जैसी फसलों हेतु जैव उर्वरक के रूप में उपयोग किया जाता है।

ट्राइकोडर्मा: यह कवक मिट्टी की संरचना में सुधार, रोग को कम करने और पौधे के विकास को बढ़ावा देने की क्षमता के लिए जाना जाता है। यह आमतौर पर टमाटर, आलू और मकई जैसी फसलों के लिए जैव उर्वरक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

जैव उर्वरक का महत्व

सतत कृषि: जैव उर्वरक रासायनिक उर्वरकों का एक स्थायी विकल्प हैं, क्योंकि वे प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होते हैं और पर्यावरण को नुकसान नहीं पहुंचाते हैं।

मृदा स्वास्थ्य: जैव उर्वरक मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या में वृद्धि करके मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करने में मदद करते हैं। यह मिट्टी की संरचना में सुधार करता है, जल प्रतिधारण बढ़ाता है और मिट्टी की उर्वरता में सुधार करता है।

कम लागत: जैव उर्वरक उत्पादन और उपयोग के लिए अपेक्षाकृत सस्ते हैं, जो किसानों को उनकी लागत कम करने और उनके मुनाफे को बढ़ाने में मदद कर सकते हैं।

फसल की पैदावार में वृद्धि: जैवउर्वरक पौधों की वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करके फसल की पैदावार बढ़ाने में मदद कर सकते हैं। इससे फसलों की अधिक पैदावार और किसानों के लिए बढ़ा हुआ मुनाफा हो सकता है।

कम रासायनिक निर्भरता: जैव उर्वरकों का उपयोग करने से किसानों को रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करने में मदद मिल सकती है, जो पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य हेतु हानिकारक हो सकता है।

जलवायु अनुकूलन: जैवउर्वरक मौसम की बदलती परिस्थितियों के प्रति फसलों की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाकर किसानों को जलवायु परिवर्तन के अनुकूल बनाने में भी मदद कर सकते हैं।

जैव विविधता: जैवउर्वरक विभिन्न प्रकार के पौधों की प्रजातियों के विकास को बढ़ावा देकर जैव विविधता को बढ़ावा देने में भी मदद कर सकते हैं। यह पारिस्थितिकी तंत्र के समग्र स्वास्थ्य और उत्पादकता में सुधार करने में मदद कर सकता है।

जैव उर्वरकों के लाभ

लागत प्रभावी: जैव उर्वरक रासायनिक उर्वरकों की तुलना में अपेक्षाकृत सस्ते होते हैं, जिससे वे किसानों के लिए लागत प्रभावी विकल्प बन जाते हैं।

सतत: जैव उर्वरक रासायनिक उर्वरकों के लिए एक स्थायी विकल्प हैं क्योंकि वे प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट नहीं करते हैं या पर्यावरण को प्रदूषित नहीं करते हैं।

मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार: जैव उर्वरक मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की मात्रा बढ़ाकर मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करने में मदद करते हैं। इससे पौधों द्वारा बेहतर जल प्रतिधारण और बेहतर पोषक तत्व ग्रहण किया जा सकता है।

फसल की उपज बढ़ाएं: जैव उर्वरक पौधों को बढ़ने और फलने-फूलने के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करके फसल की उपज बढ़ा सकते हैं।

रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करें: जैव उर्वरकों का उपयोग करके किसान रासायनिक उर्वरकों पर अपनी निर्भरता कम कर सकते हैं, जो पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य हेतु हानिकारक हो सकता है।

कीटों और रोगों के प्रति फसल प्रतिरोध में सुधार: जैव उर्वरक पौधों की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करके कीटों और रोगों के प्रति फसल प्रतिरोध में सुधार करने में मदद कर सकते हैं।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र

बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)

99267-31867, 83055-69923

खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।

पता: पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

कृषि उत्पादन में प्राकृतिक खेती का महत्व और प्रभाव

उमेश पटले (अतिथि व्याख्याता)
डॉ. बीना सिंह (अतिथि व्याख्याता)
एकता पन्द्रे पीएच.डी. (सस्य विज्ञान)
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय
चित्रकूट सतना (म.प्र.)

प्राकृतिक खेती का दर्शन उत्पादन के लिए प्रकृति के साथ काम कर रहा है स्वस्थ भोजन, खुद को स्वस्थ रखने के लिए और भूमि को स्वस्थ रखने के लिए। प्राकृतिक खेती एक समग्र पारिस्थितिक कृषि दृष्टिकोण है जो किसान और प्रकृति के बीच पारस्परिक रूप से लाभकारी संबंध बनाने के क्रम में प्राकृतिक परिस्थितियों का बारीकी से अवलोकन कर रहा है। प्राकृतिक खेती एक टिकाऊ खेती है। प्राकृतिक खेती प्राकृतिक सामग्रियों से सभी इनपुट बनाती है, प्रकृति के नियमों का पालन करती है और फसलों और पशुओं के अधिकारों का सम्मान करती है।

प्राकृतिक खेती का सिद्धांत

देशी बीजों का उपयोग: इन बीजों को कम पानी की आवश्यकता होती है, मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में मदद मिलती है और कीटनाशकों में कम निवेश की आवश्यकता होती है।

मिश्रित खेती: मिश्रित खेती एक प्रकार की खेती है जिसमें फसलों को उगाना, पशुओं को पालना और साथ ही साथ कोई उधम चलाना।

मृदा का न्यूनतम विक्षोभ: न्यूनतम मृदा विक्षोभ सीए का मूल सिद्धांत है जिसका उद्देश्य मृदा के भौतिक और रासायनिक गुणों में सुधार करना है, मृदा संघनन, जल हानि और कटाव को कम करना और संतोषजनक पौध संख्या स्थापित करना है।

पशुधन का एकीकरण: विशेष रूप से गाय के गोबर और गोमूत्र हेतु देशी नस्लों का, प्राकृतिक खेती हेतु एक आवश्यक है।

365 दिन का फसल कवर: बायोमास मल्चिंग और बायोमास निगमन के लिए फसल कवर यह अधिकतम लाभकारी माइक्रोबियल गतिविधि के लिए एक उपयुक्त सूक्ष्म जलवायु बनाता है।

कोई बाहरी आदान नहीं: बिना किसी उर्वरक और कीटनाशक या किसी अन्य बाहरी सामग्री का उपयोग किए फसल उगाना।

प्राकृतिक खेती क्रिया-1.कोई कीटनाशक नहीं 2.कोई शाकनाशी नहीं 3.कोई रासायनिक उर्वरक नहीं 4.कोई प्रदूषण नहीं

कोई कीटनाशक नहीं: प्राकृतिक खेती कीटनाशकों का उपयोग नहीं करती है क्योंकि वे न केवल कीड़ों को मारते हैं बल्कि वे मिट्टी और फलों में रहते हैं। अवशोषित होने पर, यह हमारे शरीर और यहां तक कि हमारी अगली पीढ़ी को भी गंभीर नुकसान पहुंचा सकता है।

कोई शाकनाशी नहीं: प्राकृतिक खेती खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए शाकनाशी का उपयोग नहीं करती है। खरपतवारों को रसायन से मारना ही एकमात्र उपाय नहीं है और न ही यह बुद्धिमानी है क्योंकि ये रसायन मनुष्य के लिए घातक होने के साथ-साथ मिट्टी और पानी को भी प्रदूषित करते हैं।

कोई रासायनिक उर्वरक नहीं: प्राकृतिक खेती रासायनिक उर्वरक का उपयोग नहीं करती है और न ही यह उर्वरक के आधे से अधिक को आधार खाद के रूप में लगाने की सामान्य प्रथा का पालन करती है। प्रारंभिक अवस्था में बहुत अधिक भोजन देने पर फसल कमजोर हो जाएगी।

कोई प्रदूषण नहीं: प्राकृतिक खेती वाले पशु गृह कोई अपशिष्ट जल नहीं छोड़ते हैं और इसलिए उपचार मशीन की स्थापना की आवश्यकता नहीं होती है। सभी का इलाज ठीक पशुशाला के फर्श पर ही किया जाता है।

प्राकृतिक खेती के घटक

बीजामृत: बीजामृत एक अद्भुत जैविक घोल है जिसका उपयोग बीज उपचार किसी रोपण सामग्री के लिए किया जा सकता है।

बीजामृत के लिए सामग्री: किलोग्राम बीज के उपचार के लिए आपको निम्नलिखित सामग्री की आवश्यकता होगी।

अवयव	मात्रा
गाँय का गोबर	5 किग्रा.
गाय का मूत्र	5 लीटर
चूना पत्थर या चूना	250 ग्रा.
पानी	20 लीटर
बीज	100 किग्रा.
मिट्टी (बरगद के पेड़ की जड़ों के आसपास की मिट्टी को प्राथमिकता दें)	50 ग्राम

जीवामृत: जीवामृत किण्वित माइक्रोबियल कल्चर है जो पोषक तत्व प्रदान करता है और मिट्टी में सूक्ष्म जीवों की गतिविधियों को बढ़ावा देने वाले उत्प्रेरक एजेंट के रूप में कार्य करता है।

जीवामृत के लिए सामग्री

क्रं.	अवयव	मात्रा
1.	पानी	200 लीटर
2.	गोमूत्र	8-10 लीटर
3.	गाय का गोबर	10 किलोग्राम
4.	गुड़	2 किलोग्राम
5.	उर्वर मिट्टी	2 किलोग्राम
6.	दलहन का आटा या बेसन	2 किलो

वापासा: इस प्रक्रिया में जहां मिट्टी में हवा के अणु और पानी के अणु दोनों मौजूद होते हैं।

मल्चिंग : पौधे के चारों ओर मिट्टी की सतह को ढकने की प्रक्रिया फसल वृद्धि के लिए एक अनुकूल स्थिति बनाने हेतु है मल्चिंग कहते हैं

पौध संरक्षण: इस प्रक्रिया में जैविक का छिड़काव शामिल है, ऐसी स्थितियाँ जो कीट, रोग और को रोकती है खरपतवार की समस्या और पौधे की रक्षा और उनकी मिट्टी की उर्वरता में सुधार।

कीट प्रबंधन हेतु उपाय

अग्निस्त्रा: अग्निस्ट्रा मिट्टी और पौधों के लिए एक खाद के रूप में कार्य करता है और यह सभी प्रकार के कीट, कीड़ों को दूर कर सकता है और मिट्टी की समृद्धि को बढा सकता है।

क्रमांक	अवयव	मात्रा
1.	गाय का मूत्र	20 लीटर
2.	नीम की पत्तियां	5 किलोग्राम
3.	तम्बाकू	1 किलोग्राम
4.	हरी मिर्च	500 ग्राम
5.	लहसुन	500 ग्राम

* 20 लीटर गौमूत्र को एक बर्तन में लेलें तथा अन्य सामग्रियों को पीसकर गौमूत्र से मिलाकर मिश्रण बना लें। * मिश्रण को उबाले तथा चार उबाल आने के बाद 48 घंटे के लिए ठंडा होने के लिए रख दे। * कीट लीफ रोलर, तना छेदक, फल छेदक, फली छेदक पर छिड़काव के लिए तैयार।

ब्रम्हास्त्र :- (चूसने वाले कीट, फली छेदक, फल छेदक)

क्रमांक	अवयव	मात्रा
1.	गोमूत्र	20 लीटर
2.	धतूरे की पत्ती	2 किलोग्राम
3.	सीताफल की पत्तियां	2 किलोग्राम
4.	करंज की पत्तियां	2 किलोग्राम
5.	अरंडी की पत्तियां	2 किलोग्राम
6.	नीम की पत्तियां	5 किलोग्राम

एक बर्तन लो 20 लीटर डालें, 5 किलो नीम के पत्ते पीस लें और इस नीम के गूदे को इस पानी में मिला दें , घोल को 5 बार उबालें 48 घंटे के लिए किण्वित कपड़े का उपयोग करके छान लें। चूसने वाले कीट, फली छेदक, फल छेदक आदि को नियंत्रित करने के लिए तनाव पर छिड़काव के लिए तैयार।

नीमस्त्र: नीमात्र एक नीम आधारित कीटनाशक दवा है, जिसका प्रयोग चूसने वाले कीट एवं छोटी इल्लियों के नियंत्रण हेतु किया जाता है।

क्रमांक	अवयव	मात्रा
1.	गोमूत्र	5 लीटर
2.	पानी	100 लीटर
3.	गोबर	1 किलोग्राम
4.	नीम की पत्तियां	5 किलोग्राम

100 लीटर पानी लें + 5 लीटर गोमूत्र डालें + 1 किलो गाय का गोबर डालें, 5 किलो नीम की पत्तियों को पीसकर उसका गूदा मिला लें, 48 घंटे के लिए किण्वित करें, किसी भी छड़ी से दिन में दो बार घोल को हिलाएं कपड़े से छान लें

प्राकृतिक खेती का प्रभाव

उपज में सुधार: प्राकृतिक खेती करने वाले किसानों ने समान उपज की सूचना दी पारंपरिक खेती के बाद। कई मामलों में, उच्च पैदावार प्रति फसल की भी सूचना मिली थी।

बेहतर स्वास्थ्य सुनिश्चित करता है: चूंकि प्राकृतिक खेती में किसी भी सिंथेटिक रसायन का उपयोग नहीं होता है, स्वास्थ्य जोखिम और खतरे समाप्त हो जाते हैं। खाना हो ग उच्च पोषण घनत्व और इसलिए बेहतर स्वास्थ्य प्रदान करता है फ़ायदे।

पर्यावरण संरक्षण: प्राकृतिक खेती बेहतर मिट्टी जीव विज्ञान, बेहतर कृषि-जैव विविधता और बहुत कम कार्बन और नाइट्रोजन फुटप्रिंट के साथ पानी का अधिक विवेकपूर्ण उपयोग सुनिश्चित करती है।

किसानों की आय में वृद्धि: प्राकृतिक खेती का उद्देश्य लागत में कमी, कम जोखिम, समान उपज, अंतर-फसल से आय के कारण किसानों की शुद्ध आय में वृद्धि करके खेती को व्यवहार्य और आकांक्षी बनाना है।

रोजगार सृजन: प्राकृतिक खेती से रोजगार सृजित होता है प्राकृतिक खेती इनपुट उद्यम, मूल्यवर्धन, स्थानीय क्षेत्रों में विपणन आदि। प्राकृतिक खेती से अधिशेष गांव में ही निवेश किया जाता है।

उत्पादन की न्यूनतम लागत : प्राकृतिक खेती का उद्देश्य भारी कटौती करना है, किसानों को आवश्यक जैविक आदान तैयार करने के लिए प्रोत्साहित करके उत्पादन लागत कृषि, प्राकृतिक और घरेलू संसाधनों का उपयोग करना।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

जौ: खाद्य प्रयोजनों के लिए अनुसंधान का एक नया युग

दीपा तोमर सहायक प्रोफेसर, सेज यूनिवर्सिटी इंदौर (म.प्र.)
सुविधा मिश्रा सहायक प्रोफेसर, सेज यूनिवर्सिटी इंदौर (म.प्र.)
नेहा पचलासिया सहायक प्रोफेसर, सेज यूनिवर्सिटी इंदौर (म.प्र.)

जौ एक बहुमुखी अनाज है जो होर्डियम गारे शास से प्राप्त किया जाता है। यह व्हीट बेरी की तरह दिखता है, लेकिन इसका रंग हल्का होता है और इसमें अखरोट जैसा स्वाद और ब्यूई बनावट होती है। जौ में विटामिन और खनिजों की अच्छी मात्रा होती है, जो आपके शरीर के लिए बहुत फायदेमंद होते हैं। जौ के बहुत से फायदे हैं, जैसे कि यह आपके शरीर के लिए उत्तम भोजन होता है। इसके अलावा, जौ में मौजूद विटामिन सी आपके इम्यून सिस्टम को मजबूत बनाने में मदद करता है और आपको स्वस्थ रखता है। जौ में मौजूद फाइबर आपको पेट संबंधी समस्याओं से बचाता है और आपके चर्बी को कम करने में मदद करता है। जौ में मौजूद अन्य अनुपस्थितियों से बचाने वाले खनिज शामिल होते हैं, जैसे कि आयरन, कैल्शियम, मैग्नीजियम, फॉस्फोरस और बोरॉन। जौ का उपयोग आहार में कई तरीकों से किया जा सकता है। जौ की रोटी, जौ की खिचड़ी और जौ की दलिया जैसी विभिन्न व्यंजन तैयार किए जा सकते हैं। जौ के फायदों में शामिल हैं सेलियक रोग, मधुमेह, मोटापा, जोड़ों के दर्द, दिल की बीमारी और कैंसर जैसी समस्याओं में राहत पहुंचाना हालांकि, किसी भी समस्या का पूर्ण इलाज डॉक्टरी परामर्श पर ही निर्भर करता है।

जौ के बीज

जौ के बीज **(Barley seeds)** का उपयोग अनाज के तौर पर किया जाता हैं यह जौ पौधे के उत्पादन के लिए उपयोग किए जाते हैं ये ब्राउन या ब्लैक कलर के होते हैं और एक छोटे चटके के समान दिखते हैं जौ एक सब्जी नहीं है, बल्कि इसके बीज अधिकतर शराब, ब्राउन्स ब्रेड, सूप, सलाद और अन्य खाद्य पदार्थों के उत्पादन में उपयोग किए जाते हैं जौ के बीज विटामिन, खनिज और एंटीऑक्सीडेंट्स का अच्छा स्रोत होते हैं और ये भी एक सम्पूर्ण पोषण स्रोत के रूप में जाने जाते हैं जौ के बीज को पीस कर ही जौ का आटा तैयार किया जाता है जिससे रोटी व अन्य खाद-पदार्थ बनाये जाते है ।

जौ का उपयोग

जौ एक आहार सामग्री है जो दैनिक आहार में शामिल किया जा सकता है। इसे निम्नलिखित तरीकों से उपयोग किया जा सकता है-

- जौ के बीजों से बनाया गया सूप खाया जा सकता है।
- जौ को चावल या आलू के विकल्प के रूप में उबालकर खाया जा सकता है।
- जौ के आटे से बनी रोटियां या ब्रेड खाई जा सकती हैं।
- सब्जियों की सलाद में पके हुए जौ के बीज डालकर खाए जा सकते हैं।
- जौ का उपयोग रिसोट्टो (चावल से बना एक व्यंजन) बनाने के लिए किया जा सकता है।
- जौ का पानी पीने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। इसमें नींबू या शहद मिलाकर स्वाद बढ़ाया जा सकता है।
- जौ के बीज का पाउडर बनाकर स्मूदी या मिल्क शेक में मिलाया जा सकता है।
- जौ की पत्तियों से जूस निकालकर पीने के लिए उपयोग किया जा सकता है।

जौ में पोषक तत्व

जौ एक पौष्टिक अनाज है जो विभिन्न पोषक तत्वों से भरपूर होता है। नीचे दिए गए टेबल में जौ के पोषक तत्वों की जानकारी है। 100 ग्राम जौ में प्रोटीन की मात्रा करीब 12.5 ग्राम होती है।

पोषक तत्व	प्रति 100 ग्राम
कैलोरी	342
प्रोटीन	12.5 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट्स	72 ग्राम
वसा	2.5 ग्राम
फाइबर	15 ग्राम
सोडियम	5 मिलीग्राम
आयरन	4.72 मिलीग्राम
कैल्शियम	27 मिलीग्राम
मैग्नीशियम	112 मिलीग्राम
विटामिन C	0 मिलीग्राम
विटामिन A	0 I
विटामिन E	0.5 मिलीग्राम
विटामिन K	0.2 मिलीग्राम
थायमिन	0.41 मिलीग्राम
रिबोफ्लेविन	0.12 मिलीग्राम
नियासिन	2.48 मिलीग्राम
विटामिन B6	0.3 मिलीग्राम
फोलेट	39 मिक्रोग्राम
पैन्थोथेनिक एसिड	0.8 मिलीग्राम

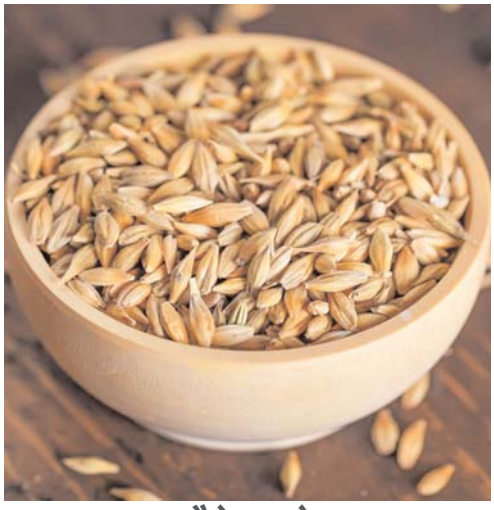

जौ के फायदे

जौ के सेवन से हमारे स्वास्थ्य को कई लाभ प्राप्त होते हैं जिससे यह एक लोकप्रिय आहार विकल्प बन गया है। **जौ को स्वस्थ धान्यों में गिना जाता है जो इसके सेवन से आपको निम्नलिखित लाभ प्राप्त हो सकते हैं-**

हृदय रोग की संभावना कम करना

- पाचन को सुधारना
- वजन घटाने में मदद करना
- टाइप 2 डायबिटीज को नियंत्रित करना
- कैंसर जैसी बीमारियों से लड़ने की ताकत प्रदान करना
- एक्जीमा और त्वचा संबंधी समस्याओं को ठीक करना
- अल्सर जैसी पेट संबंधी समस्याओं को दूर करना
- गुर्दे की पथरी से बचाव करना
- आंत में संक्रमण से बचाव करना
- ब्लड प्रेशर को कम करना
- थायराइड संबंधी समस्याओं को दूर करना

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

जैविक खेती द्वारा किसानों की दोगुनी आय

अंकित सोनी शोधार्थी (कृषि अर्थशास्त्र)
एम.जी.सी.जी. वि. वि. चित्रकूट सतना (म.प्र.)

डॉ. डीपी. राय डीन कृषि संकाय
एम.जी.सी.जी. वि वि.चित्रकूट सतना (म.प्र.)

अंकित आर्य एमएससी (कृषि विस्तार)
एम.जी.सी.जी. वि.वि. चित्रकूट सतना (म.प्र.)

मुस्कान श्री एमएससी (कृषि विस्तार)
एम.जी.सी.जी. वि. वि.चित्रकूट सतना (म.प्र.)

रासायनिक खाद के कारण आज खेती की मिट्टी की उत्पादकता कम होते जा रही है ऐसे में बहुत से देशों ने फिर से खेती किए पारंपरिक तौर तरीकों का उपयोग करना शुरू कर दिया है ऐसे में हमें भी खेती की प्राचीन पद्धतियों को अपनाने की जरूरत है। बहुत से वैज्ञानिकों ने अपने शोध में पाया कि हमने रासायनिक खेती कर करके मृदा को बहुत नुकसान पहुंचा है साथ ही रासायनिक खेती ने भूचाल को प्रदूषित कर दिया है, जिन फसलों में कीट पतंग के माध्यम से परगना होता था उनके उत्पादन में गिरावट आई है, एक समय ऐसा था हमारे देश में कैंसर जैसी गंभीर बीमारियों का इतना प्रकोप नहीं था लेकिन पिछले कुछ सालों मैं कैंसर के मामलों में काफी तेजी से बढ़ोतरी हुई है जिनका एक मुख्य कारण रासायनिक खादो वह कीटों का अधिक प्रयोग है, आज हर कोई चाहता है कि उसे शुद्ध जैविक सब्जियां फल और अनाज प्राप्त हो जिनके सेवन से वह इन घातक बीमारियों से दूर रहे इसके लिए हमें जैविक खेती करनी होगी।

जैविक खेती क्या होती है: जैविक खेती एक प्राचीन पद्धति है जिसमें फसलों के उत्पादन में गोबर की खाद कंपोस्ट खाद जीवाणु खाद फसलों के अवशेष और प्रकृति में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के खनिज पदार्थों के माध्यम से खेती करना होता है, सरल शब्दों में कहे तो बिना किसी रसायन का प्रयोग करें बिना खेती करना जैविक खेती कहलाता है।

जैविक खेती के तरीके

फसल चक्र: फसल चक्र का अर्थ है एक ही खेत में मौसम के अनुसार प्रजाति बदलकर खेती करना, इस तकनीक में एक निश्चित समय अंतराल के भीतर परती अवधि भी शामिल होती है।

★ फसल चक्र से खेत की उर्वरा शक्ति बनी रहती है। ★ फसलों की पैदावार बढ़ जाती है। ★ फसल उत्पादों की गुणवत्ता में भी वृद्धि होती है। ★ खरपतवार कीटो और रोगों के नियंत्रण में सहायता मिलती है। एक ही फसल लगातार उगने से उसे पर कीटों तथा रोगों की लगने की संभावना बढ़ जाती है और फसलों को हेर - फेर कर बन से यह संभावना कम हो जाती है।

कवर क्रॉपिंग: खेती के इस दृष्टिकोण का तात्पर्य किसी भी पौधे की प्रजाति के साथ खेत को कवर करना है , या तो एक निश्चित मौसम के लिए या 12 माही फसल पंक्तियों के बीच आंशिक रूप से या पूरी तरह से कवर फसले मिट्टी के कटाव से निपट्टी है अपनी जड़ों से जल निस्पंदन और वातन में सुधार करती है, वे अवांछित वनस्पति को सूरज की रोशनी से छुपा कर ऊपरी हिस्से से निराई-गुड़ाई को भी खत्म कर देती है।

हरी खाद : हरे पौधों को मिट्टी में मिलाने से यह कार्बनिक पदार्थों और विशेष रूप से नाइट्रोजन से समृद्ध हो जाती है यह नमी के स्तर को भी बढ़ाता है और सूक्ष्म जीवों के लिए पोषक तत्व को जोड़ता है जिससे मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार होते हैं।

केंचुआ खाद : केंचुआ खाद या वर्मी कंपोस्ट पोषण पदार्थ से भरपूर एक उत्तम जैविक उर्वरक है। यह केंचुआ द्वारा वनस्पतियों एवं भोजन के कचरे आदि को विघटित करके बनाई जाती है। यह भूमि की उर्वरकता को बढ़ाता है, साथ ही भूमि की जल सूखने की क्षमता में भी वृद्धि करता है, वर्मी कंपोस्ट देने से अधिक पैदावार होती है यह मिट्टी में पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ा देता है ग्रामीण क्षेत्रों में इसके उपयोग से रोजगार की संभावना उपलब्ध हो जाती है।

जैविक खाद कैसे तैयार करने की विधि

नापेड विधि : नाडेप कंपोस्ट विधि, कम से कम गोबर का उपयोग कर अधिक से अधिक मात्रा में खाद बनाने की उत्तम व लोकप्रिय पद्धति इस पद्धति द्वारा मात्र एक गाय/ भैंस के वार्षिक गोबर से 80 से 100 टन खाद प्राप्त की जा सकती है। नाडेप कंपोस्ट में नाइट्रोजन 0.5 से 1.5%, फास्फोरस 0.5 से 0.9% तथा पोटाश 1.2 से 1.4% उपलब्ध होती है।

नाडेप कंपोस्ट बनाने के लिए सामग्री

वानस्पतिक व्यर्थ पदार्थ : सूखे पत्ते, छिलके, डंठल, टहनियां, जड़ें आदि 14 से 15 क्विंटल।

गोबर/गोबर गैस स्लरी: 90 से 100 किग्रा. (8 से 10 टोकरे)।

सूखी छनी मिट्टी : खेत या नाले बगैरह की 18 से 20 क्विंटल (120 टोकरे) छनी मिट्टी। गोमूत्र से सनी मिट्टी लाभदायक होती है।

पानी : पानी का प्रयोग वर्षा ऋतु में कम व ग्रीष्म ऋतु में अधिक होगा। साधारणतया सूखे वानस्पतिक पदार्थ के वजन के बराबर पानी की मात्रा 1500 से 2000 लीटर पर्याप्त होती है।

नाडेप कंपोस्ट बनाने का तरीका : इस विधि से कंपोस्ट तैयार करने के लिए ईटों की सहायता से जमीन के ऊपर एक आयताकार गड्ढा/हौदी बनाया जाता है जिसकी दीवारें 9 इंच चौड़ी होती हैं। हौदी के अंदर की लंबाई 12 फुट, चौड़ाई 5 फुट तथा ऊंचाई 3 फुट होनी चाहिए। ईंट की जुड़ाई मिट्टी से की जाती है सिर्फ आखिरी रद्दा सीमेंट से जोड़ा जाता है जिससे गड्ढा गिरने का डर नहीं रहता। गड्ढे का फर्श ईंट-पत्थर के टुकड़े डालकर, धुम्मस कर सीमेंट से पक्का करें। यह गड्ढा/हौदी हवादार होनी चाहिए क्योंकि खाद सामग्री के पकने के लिए कुछ मात्रा में हवा की आवश्यकता होती है। इसके लिए चिनाई के समय चारों दीवारों में छेद रखे जाते हैं। ईंट के हर दो रद्दों की जुड़ाई के बाद 7 इंच का छेद छोड़कर जुड़ाई करें। इस प्रकार चारों दीवारों में छेद बनेंगे। छेद इस प्रकार रखें कि पहली लाइन के दो छेदों के मध्य तीसरी लाइन के छेद आएं। छेदों की संख्या बढ़ाने से खाद जल्दी पकती है। गड्ढे के अंदर और बाहर की दीवारें और फर्श को गोबर से लीप दें व लिपाई सूखने के बाद ही इसे प्रयोग करें। बरसात या अत्यधिक गर्मी में नाडेप गड्ढे के ऊपर अस्थाई छाया का प्रबंध कर दें।

नाडेप गड्ढा भरने की विधि: एकत्रित खाद सामग्री से ऊपर बताए गए क्रम में गड्ढे/हौदी को भरें। जिस तरह अचार डाला जाता है उसी तरह से खाद सामग्री एक ही दिन में ज्यादा से ज्यादा 48 घंटों में पूरी तरह गड्ढे में भरकर सील कर दी जाती है।

प्रथम भराई : गड्ढा भरने का काम शुरू करने से पहले इसके अंदर की दीवारों एवं फर्श पर गोबर व पानी का घोल छिड़क कर अच्छी तरह से गीला कर दें।

पहली परत : पहले 6 इंच तक वानस्पतिक पदार्थ से भर दें। इस 30 घन फीट में 100 से 110 किलोग्राम सामग्री आएगी।

दूसरी परत : 125 से 150 लीटर पानी में 4 किलोग्राम गोबर घोलकर पहली परत पर इस प्रकार छिड़कें कि पूरी वनस्पति अच्छी तरह भीग जाए।

तीसरी परत : भीगी हुई वनस्पति की परत पर वनस्पति के वजन की 50% यानी 50 से 60 किलोग्राम मिट्टी समतल बिछा दें। उस पर थोड़ा पानी छिड़क दें। गड्ढे को इस प्रकार तीन परतों के क्रम में मुंह के ऊपर 1.5 फुट ऊंचाई तक झोंपड़ीनुमा आकार में भरते जाएं। साधारणतया 11 से 12 तहों में गड्ढा भर जाएगा। भरे गड्ढे को सील कर दें। भरी सामग्री के ऊपर 3 इंच मिट्टी (400 से 500 किलोग्राम) की तह जमा दें और गोबर के मिश्रण से लीप दें। इस पर दरारें पड़ें तो उन्हें भी लीप दें।

द्वितीय भराई: 15 से 20 दिन में खाद सामग्री सिकुड़कर गड्ढे के मुंह से 8 से 9 इंच नीचे अंदर की ओर चली जाएगी। तब पहले की तरह क्रमशः वानस्पतिक पदार्थ, गोबर घोल, छनी मिट्टी की परतों से पुनःगड्ढे की सतह से मुंह के ऊपर5 फुट ऊंचाई तक भर कर ऊपर 3 इंच मिट्टी की परत देकर पहले जैसा ही लीप कर सील कर दें।

नाडेप कंपोस्ट की परिपक्वता: तीन-चार महीने (प्रथम भराई की तारीख से लेकर 90-120 दिन तक) में खाद परिपक्व होकर गहरे भूरे रंग की बन जाती है और सब दुर्गंध समाप्त होकर एक अच्छी खुशबू आती है। इस गड्ढे से साधारणतया 160 से 175 घन फुट छनी खाद और 40 से 50 घन फुट कच्चा माल मिलेगा। कच्चे पदार्थ को दोबारा इसी विधि से पकाया जा सकता है।

रसोई के कचरे द्वारा तैयार खाद: एक फूट गया गड्ढा खोद ले फिर उसमें कैंटीन, होटल, रसोई से एकत्रित हुए कचरे को डाल दें। अब अपशिष्ट युक्त गड्ढे में लगभग 250 ग्राम जीवाणुओं को डाले। इसके बाद पानी और मिट्टी की एक मोती पर्वत को साथ में मिलाकर उसे पर बिछा दे ताकि नमी बरकरार रहे । 25 से 30 दिनों के पैसा दिया खाद के रूप में परिवर्तित हो जाएगा।

पंचगाव्यम : इसमें "पंच" का अर्थ पांच और गाव्यम का अर्थ 5 गाय से उत्पन्न होने वाला तत्व से है। प्राचीन काल से ही इस उर्वरक का उपयोग होता आ रहा है।

★ सबसे पहले एक मटका ले। ★ उसमें गाय का दूध दही मक्खन घी मूत्र गोबर और निविदा नारियल डालें। ★ फिर लकड़ी की छड़ी की मदद से अच्छी तरह से मिलाएं। ★ 3 दिन के लिए मिश्रण युक्त बर्तन को बंद रखें। ★ तीन दिन बाद उसमें गुड और केले को डालें। ★ इस मिश्रण को हर रोज (21 दिनों के लिए) मिलाते रहे और मिलाने के बाद बर्तन को बंद कर दें। ★ 21 दिनों के पश्चात जब मिश्रण में गंध आने लगे तो फिर पानी के 10 लीटर के मिश्रण को 200 मिलीलीटर तैयार मिश्रण मिला दे और पौधे पर स्प्रे करें।

निष्कर्ष : अच्छी पैदावार के लिए किसान रासायनिक खादों का प्रयोग करते हैं जिसके कारण दिन पर दिन हमारे खेतों की मिट्टी की उपजाऊ क्षमता कम होते जा रही हो और भूमि बंजर होते जा रही है जिससे बचने के लिए हमें जैविक खादो का इस्तेमाल करना चाहिए जो भूमि की उर्वरक क्षमता को भी बढ़ता है और फसल की पैदावार भी अच्छी होती है जिससे किसानों को अच्छा मुनाफा प्राप्त होता है अतः सभी किसानों को रासायनिक खादों की जगह जैविक खादों का उपयोग करना चाहिए जिससे उनकी मृदा की गुणवत्ता बनी रहे और ज्यादा से ज्यादा उत्पादन उन्हें प्राप्त हो।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

किसान मिट्टी में उपस्थित पोषक तत्वों का परीक्षण कैसे एवं क्यों कराएं

शैलू यादव (प्रयोगशाला तकनीशियन, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन शास्त्र विभाग ज.ने.कृ.वि.वि., जबलपुर (म.प्र.)

बबलू यदुवंशी (यंग प्रोफेशनल, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन शास्त्र विभाग ज.ने.कृ.वि.वि.,जबलपुर)

राकेश कुमार साहू (सहायक प्राध्यापक मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन शास्त्र विभाग ज.ने.कृ.वि.वि.,जबलपुर)

मृदा की उत्पादन क्षमता उसकी उर्वरा शक्ति पर निर्भर करती है, मृदा पोषक तत्वो का भंडार है, तथा पौधो को अपना जीवन काल पूर्ण करने के लिए 17 विभिन्न प्रकार के पोषक तत्वों की जरूरत होती है। पौधे अपने विकास और वृद्धि के लिए अधिकाशतः आवश्यक पोषक तत्व मृदा से ही प्राप्त करते हैं।

मुख्य तत्व

कार्बन, हाईड्रोजन, ऑक्सीजन, नत्रजन, फास्फोरस, पोटास कैल्षियम, मैग्नीशियम एवं सल्फर।

सूक्ष्म तत्व

जिंक, मैग्नीज, ताँबा, लोहा, बोरान, मोलिगब्डेनम एवं क्लोरीन। मृदा में इन सभी पोषक तत्वो की मात्रा सही अनुपात में होने पर ही अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। यदि किसी भंण्डार से केवल निष्कासन ही होता रहे और उसमें निष्कासित मात्रा की पूर्ति न की जाये तो कुछ समय बाद वह भंण्डार खाली हो जाता है। ठीक उसी प्रकार हमारे मृदा में लगातार फसल उत्पादन में वृद्धि एवं बडती सघन खेती के परिणाम स्वरूप मृदा से पोषक तत्वो का ह्रास बडता जा रहा है। परंतु उर्वरको एवं रसायनिक खादो द्वारा उनकी पूर्ति पूरी तरह से नही हो पा रही है। जिससे हमारी मृदा की उर्वरा शक्ति कम होती जा रही है।

क्या है मृदा परीक्षण का उद्देश्य

मृदा की उर्वरा शक्ति की जांच करने का मुख्य उद्देश्य फसल व किस्म विशेष के लिए पोषक तत्वो की संतुलित मात्रा की सिफारिश करना तथा यह मार्गदर्शन करना है कि उर्वरक व खाद का प्रयोग कब, कितना एवं कैसे करे।

- मृदा में पोषक तत्वों की सही मात्रा ज्ञात कराना, तथा जांच के आधार पर संतुलित उर्वरको का उपयोग करना।
- मृदा में लवणता, क्षारीयता तथा अम्लीयता की समस्या की पहचान व जांच के आधार पर भूमि सुधारको की मात्रा व प्रकार की सिफारिश कर भूमि को फिर से कृषि योग्य बनाने में योगदान करना।
- मृदा की जांच के आधार पर क्षेत्रो का मूल्यांकन करना तथा उनकी उर्वरा शक्ति के आधार पर मानचित्र तैयार करना।
- समस्याग्रस्त भूमियो के लिए मृदा सुधारको की सही मात्रा का निर्धारण करना।

क्यों है मृदा का परीक्षण जरूरी

जिस प्रकार मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए चिकित्सक से जांच करवाना जरूरी रहता है, उसी प्रकार मृदा का स्वास्थ्य जानने के लिए

उसका मृदा वैज्ञानिकों के द्वारा मृदा का परीक्षण किया जाता है। मृदा में पोषक तत्वों की कमी होने पर फसलों की उत्पादन क्षमता एवं गुणवत्ता में अधिकतर कमी देखी गई है। इसलिए मृदा का परीक्षण कर ना केवल हम उर्वरको एवं खादो की उचित मात्रा की आवश्यकता को ज्ञात कर सकते हैं। अपितु सही उर्वरको का चुनाव एवं सही समय पर प्रयोग आदि के बारे में जान सकते है, जिससे प्रति इकाई पोषक तत्व की मात्रा से ज्यादा से ज्यादा लाभ किसान प्राप्त कर सकते है।

मृदा परीक्षण हेतु नमूना लेने का सही समय

मृदा परीक्षण कराने के लिए मई एवं जून का समय उपयुक्त होता है, ध्यान रहे कि भूमि में नमी की मात्रा कम से कम हो और यदि सघन खेती की जा रही हो तो नमूने एक फसल चक्र पूरा होने के उपरान्त प्रतिवर्ष लेना चाहिए। अन्यथा तीन वर्ष में एक बार मृदा की जॉच करवाना पर्याप्त रहता है।

नमूना लेने हेतु आवश्यक सामग्री

नमूना लेने के लिए निम्न सामग्री की आवश्यकता होती है जो कि किसी भी किसान के पास आसानी से उपलब्ध होती है जैसे- खुरपी, आगार, लकड़ी या प्लास्टिक की खुरचनी, प्लास्टिक की थैली, सूचना पत्रक, धागा, पेन, स्केल एवं छलनी (2 मि.मि.)

मृदा परीक्षण हेतु नमूना लेने की विधि

मृदा परीक्षण हेतु सबसे पहले मृदा का नमूना लिया जाता है इसके लिए यह जरूरी है कि लिया जाने वाला नमूना पूरे क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता हो। यदि नमूना क्षेत्र का सही प्रतिनिधित्व ना कर सका तो भले ही मृदा परीक्षण में कितनी ही सावधानी क्यो ना बरती जाए उसकी सिफारिश सही नही हो सकती ।

- नमूना एकत्रित करने के लिए 15-20 यादृच्छिक जगह का चुनाव करना चाहिए।
- सर्वप्रथम जिस स्थान से नमूना लेना है वहॉ कि ऊपरी सतह से घास आदि को हटा दे।
- 15 सेमी. V आकार में खुरपी या फावडे की सहायता से इसकी दिवार से सटाकर पूरी गहराई तक की मिट्टी की एक समान परत काटकर साफ वर्तन में इकट्ठा कर लेना चाहिए।
- इसके बाद पूरी मृदा को अच्छी तरह हाथ से मिला ले तथा साफ कपडे या टब मे डालकर ढेर बना ले। अगुली से इस ढेर को चार बराबर भागो में बाट दे। आमने सामने के दो बराबर भागो को वापिस अच्छी तरहे से मिला ले। यह प्रकिया तब तक दोहराए जब तक लगभग आधा किलो मृदा न रह जाए। फिर उस मृदा नमूनो को 2 मि.मि. की छलनी से छान ले, इस प्रकार से एकत्र किया गया नमूना पूरे क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करेगा।
- नमूने को साफ प्लास्टिक की थैली मे डाल दे। अगर मृदा गीली हो तो इसे छाया में सुखा ले। इस नमूने के साथ नमूना सूचना पत्रक जिसमे किसान का पूरा नाम व पता, खेत की पहचान, नमूना लेने कि तिथि, जमीन का ढलान सिचाई के उपलब्ध स्त्रोत, पानी निकास, अगली ली जाने वाली फसल का नाम, पिछले तीन साल की फसलो का व्यौरा व कोई अन्य समस्या आदि का विवरण, कपडे की थैली मे रखकर इसका मुह बाधकर मृदा परीक्षण प्रयोगशाला मे परीक्षण हेतु भेज देवे।

सावधानियां

- मृदा नमूनो को छाया में सुखाना चाहिए, धूप में सुखाने से नमूनो मे उपस्थित पोषक तत्वो में अवांछनीय बदलाव हो जाता हैं
- मृदा का नमूना खाद के ढेर, पेडो, मेडो, ढलानो व रास्तो के पास से तथा ऐसी जगहो से ना ले जो खेत का प्रतिनिधित्व न करती हो।
- मृदा नमूनो लेते समय ध्यान रखे कि नमूना दूषित न होने पाये, इसके लिए साफ स्वच्छ औजारो से नमूना एकत्र करे तथा साफ थैली मे डाले। साथ ही याद रखे कि ऐसी थैली काम न लाए जो खाद एवं अन्य रसायनो के लिए प्रयोग में लाई गई हो।
- मृदा का नमूना बुआई से लगभग एक माह पूर्व मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला मे भेज दे जिससे समय पर मृदा की जॉच रिपोर्ट मिल जाए एवं उसके अनुसार उर्वरक एवं सुधारको का प्रयोग किया जा सके।
- यदि खडी फसल में पोषक तत्वो की कमी के लक्षण दिखाई दें और मृदा का नमूना लेना हो तो फसल की कतारो के बीच से नमूना लेना चाहिए।
- जिस खेत में तत्काल ही कम्पोस्ट, खाद चूना जिप्सम तथा अन्य कोई भूमि सुधारक डाला गया हो तो उस खेत से नमूना नही लेना चाहिए।
- मृदा नमूना को खुला न छोडे।
- नमूना जिस गहराई से लिया गया है उसे नमूना थैली मे अवश्य अंकित करे।
- जहां की मिट्टी गीली हो वहॉ से नमूना नही लेना चाहिए।
- मृदा नमूने के साथ सूचना पत्रक अवश्य डाले जिस पर साफ अक्षरो पर नमूना संबंधित सूचना एवं किसान का पूरा पता अंकित होना चाहिए।

सूक्ष्म तत्वो की जॉच हेतु नमूना लेते समय कुछ अतिरिक्त सावधानियां: धातु से बने बर्तनो या औजारो को उपयोग में नही लाना चाहिए। जहां तक सम्भव हो लकडी या प्लास्टिक के औजारो का उपयोग करें।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

बैंगन की फसल में प्ररोह एवं फल बेधक (ल्यूसीनॉड्स ऑरवोनेलिस) कीट का समेकित प्रबंधन

द्वारका, सीरीन परवीन पी.एच.डी. शोधार्थी, कीटशास्त्र विभाग, आई.सी.आर.पी. तिल एवं रामतिल परियोजना, जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

डॉ. आनंद कुमार पाण्डेय वैज्ञानिक

परिचय

बैंगन सब्जी वर्ग की एक प्रमुख फसल है। बैंगन की खेती वर्ष में तीन बार वर्षा, शरद और ग्रीष्म ऋतु की फसल के रूप में की जाती है। बैंगन की फसल से अच्छी पैदावार लेने के लिए आज अनेकों उन्नतशील किस्में उपलब्ध हैं, लेकिन फसल में प्ररोह व फल बेधक का प्रकोप फलों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता को प्रभावित करता है। जिससे किसानों को बाजार में अच्छी कीमत नहीं मिलती है। बैंगन की फसल में प्ररोह व फल बेधक की सफलतापूर्वक रोकथाम कर बेहतर पैदावार ली जा सकती है।

1. प्ररोह व फल बेधक

1. यह बैंगन की फसल का सर्वाधिक विध्वंसकारी नाशीजीव है।
2. इसके शलभ के शरीर पर विशेष प्रकार के काले भूरे धब्बे होते हैं, जबकि अग्र पंखों पर सफेद बिन्दियां होती हैं।
3. इल्लियां हल्के गुलाबी रंग के होते हैं, आरंभिक अवस्थाओं में लार्वा प्ररोहों में प्रवेश कर जाते हैं, जिससे प्ररोहों के बढ़वार स्थल नष्ट हो जाते हैं।
4. प्ररोहों का मुरझा कर झुक जाना इस नाशीजीव के प्रकोप का विशिष्ट लक्षण है।
5. इल्लियां फलों में उनकी अंखुड़ी के माध्यम से प्रवेश करते हैं।
6. इस प्रकार फलों पर कीट के आक्रमण का कोई बाहरी लक्षण नहीं दिखाई देता है।
7. बाद में ये इल्लीयां फलों में छेद कर देते हैं, जो निकास छिद्र के रूप में दिखाई देते हैं।
7. ऐसे फल खाने योग्य नहीं रह जाते हैं और उनका बाजार में कोई मूल्य नहीं मिलता है।

कीट द्वारा होने वाली क्षति के लक्षण

जीवन चक्र

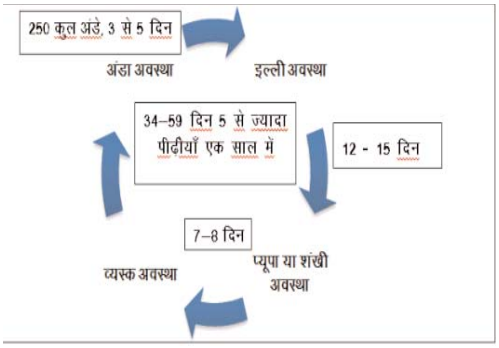

समेकित नाशीजीव प्रबंधन

1. जुलाई से अगस्त के दौरान ढेंचा का हरी खाद के रूप में प्रयोग करें।
2. जून के महीने में मिटटी सौर्गीकरण के लिए 3 सप्ताह तक 0.45 मिलीमीटर मोटी पालीथीन की चादर बिछाएं, लेकिन ध्यान रखना चाहिए कि सौर्गीकरण हेतु मिट्टी में पर्याप्त नमी मौजूद हो।
3. बैंगन की फल बेधक प्रतिरोधी किस्मों का चुनाव करें।
4. बेधक शलभों को बड़े पैमाने पर पाश में फंसाने के लिए 100 प्रति हेक्टेयर की दर से गंधपाश लगाए जाने चाहिए, प्रत्येक 15 से 20 दिन के अन्तराल पर पुराने लासे के स्थान पर ताजा लासा लगाए।
5. बैंगन की फसल में आरंभिक अवस्थाओं में समय-समय पर क्षतिग्रस्त प्ररोहों को काट देना चाहिए।
6. बैंगन की फसल में 10 प्रति एकड़ की दर से पक्षियों को आकर्षित करने के लिए पक्षी ठिकाने बना देने चाहिए।
7. नस्के (एन.एस.के.ई.) के छिड़कावों से भी बेधक कीटों का प्रकोप बहुत कम हो जाता है। नीम के तेल (1.0 प्रतिशत) का प्रयोग करना भी वेधकों के संक्रमण को कम करने में सहायक सिद्ध होता है, यद्यपि यह बहुत कम प्रभावी पाया गया है।
8. प्ररोह और फल बेधक के लिए एक-एक सप्ताह के अन्तराल पर 4 से 5 बार 1से 1.5 लाख प्रति हेक्टेयर की दर से टी. ब्रेसीलियेन्सिस के अण्ड परजीव्याभ को छोड़ें।
9. बेधकों से होने वाली क्षति को कम करने के लिए रोपाई के 25 तथा 60 दिन बाद पौधों की कतारों के साथ-साथ मिट्टी में 250 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से नीम की खली का उपयोग करें। यदि हवा की गति तेज हो और तापमान 30 डिग्री सेल्सियस से अधिक हो तो नीम की खली का उपयोग न करे।
10. प्ररोह और फल बेधक के प्रभावी नियंत्रण के लिए 15 दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार क्लोरएंट्रानीलीप्रोल 18.5 एस. सी. का 200 मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर या इमामेकटिन बेन्जोएट 5 एस. सी. का 200 ग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से 500 से 600 लीटर पानी में 15 दिन के नियमित अंतराल पर छिड़काव करें।

मित्र कीटों का संरक्षण

बैंगन में फसल प्रणाली में सामान्य रूप से दिखाई देने वाले प्राकृतिक शत्रुओं की रक्षा की जानी चाहिए और इसके लिए रासायनिक दवाइयों का अवांछित और अतिरिक्त छिड़काव नहीं किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

उचित तरीके से प्रबंधन करने पर किसान भाइयों को इस कीट से निजात मिल सकती है और अधिक मुनाफा ले सकते है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

भारतीय पशुपालन का व्यवसायीकरण

डॉ. कमल बंसोड़ (सहायक प्राध्यापक)
सेज विश्वविद्यालय इंदौर (म.प्र.)

परिचय

पिछली कुछ सदियों में गाय का धार्मिक महत्व ज्यादा था, लेकिन आज के दौर में किसानों के लिए आय सबसे बड़ी चिंता का विषय है। अब गौपालन करके लोग लाखों की आमदनी ले रहे हैं. इसे हर वर्ग किसान कर सकते हैं चाहे वो छोटे हो या भूमिहीन कृषक। गाय पालन का व्यवसाय सिर्फ एक आय का स्रोत ही नहीं बल्कि लोगों के लिए रोजगार, गरीबी और कुपोषण पर काबू पाने पर भी मदद करता है। पशुपालन और डेयरी फार्मिंग के लिये भी ऐसी तकनीक विकसित हो गई है, जिनके इस्तेमाल से अब गाय, भैंस, बकरी पालन में मेहनत कम और मुनाफा बढ़ गया है जो किसानों के लिए बेहतरीन ऑप्शन है जिससे साल भर उन्हें आमदनी मिल सकती है।

व्यावसायिक परिवर्तन

भारत में पशुपालन का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। देश की लगभग 70 प्रतिशत आबादी कृषि एवं पशुपालन पर निर्भर है। प्राकृतिक खेती और जैविक खेती की लोकप्रियता बढ़ने से अब गायों की डिमांड भी बढ़ती जा रही है. बता दें कि देसी गौवशों से रोजाना 30 से 35 लीटर तक बेहतर क्वालिटी वाला दूध का उत्पादन मिलता है, जो 50 से 70 रुपये लीटर के भाव बिकता है. वहीं अब गाय के गोबर और गौमूत्र की डिमांड भी बढ़ती जा रही है, जो गाय के दूध से भी महंगे बिकते हैं.

दूध उत्पादन व्यवसाय

दूध उत्पादन भारत में सबसे सामान्य व्यवसाय है, जिसमें दूध का उत्पादन अधिकतम करने के लिए किसान दूध के उत्पादन के लिए गाय और भैंसों का प्रबंध करते हैं, चाहे वह उत्पादन छोटे स्तर पर हो या बड़े स्तर पर। पशुओं से हमें दूध एक महत्वपूर्ण उत्पाद के रूप में प्राप्त होता है। व्यावसायिक स्तर पर दूध गाय-भैंसों से प्राप्त किया जाता है। तरल दूध सबसे अधिक खपत, प्रसंस्कृत और विपणन किया जाने वाला डेयरी उत्पाद है। तरल दूध में पाश्चुरीकृत दूध, स्किम्ड दूध, मानकीकृत दूध, पुनर्गठित दूध, उत्पाद शामिल हैं। दुनिया भर में, कच्चे रूप में कम तरल दूध का सेवन किया जाता है।

दूध डेयरी का बिजनेस में कई कंपनियां निकल कर सामने आई है, जो कि इन दूध के व्यापारियों से दूध को इकट्ठा कर उनकी पैकिंग कर के बेचते हैं और इसके बदले में वह अच्छा पैसा कमाते हैं।आप चाहें तो खुद की मिल्क प्रोसेसिंग यूनिट लगाकर दूध से बहुत सारी चीज़ें बना सकते है जैसे दही,पनीर,घी, लस्सी, खोया, इत्यादि। दूध को जमाकर दही बनाया जा सकता है दही को बिलौकर मक्खन बनाया जा सकता है और लस्सी बनायी जा सकती है। मक्खन से फिर घी बनाता जा सकता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि दूध प्रसंस्करण व्यवसाय से उत्पादित उत्पादों की न केवल घरेलू बाजार में बल्कि विदेशी बाजारों में भी काफी मांग है।

पशु अपशिष्ट-

गाय के गोबर से बयोगैस उत्पन्न कर सकते है। डेयरी व्यवसाय से प्राप्त होने वाली कार्बनिक खाद मिट्टी की उर्वरा शक्ति को और फसल की उपज बढ़ाने के लिए उत्तम जैविक स्रोत है। पशुधन खाद नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम से भरपूर है। खाद कार्बनिक पदार्थ और ह्यूमस से भरपूर होती है और इस प्रकार मिट्टी की उर्वरता में सुधार करती है। ये लंबे समय तक बेहतर होते हैं और इनसे कोई प्रदूषण नहीं होता है। यह एक मूल्यवान और नवीकरणीय संसाधन है। ठोस खाद, जिसमें खेत की खाद भी शामिल है, घरेलू पशुओं के कूड़े के साथ या उसके बिना मलमूत्र है, जिसमें संभवतः थोड़ी मात्रा में मूत्र भी शामिल है। ठोस खाद में कम से कम 20% शुष्क पदार्थ होता है तरल खाद घरेलू पशुओं का मूत्र है जिसमें संभवतः थोड़ी मात्रा में मल और/या पानी भी शामिल है। तरल खाद में 4% तक शुष्क पदार्थ होता है और इसे सामान्य सिंचाई उपकरणों के साथ तरल के रूप में संभाला जा सकता है। 1% से कम ठोस तरल खाद इसके अतिरिक्त गोबर गैस से घरेलू इंधन बिजली अथवा हरा चारा काटने की मशीन भी चलाई जा सकती है। डेयरी गतिविधियों से पूरे वर्ष रोजगार मुहैया कराया जा सकता है अतः इस प्रकार यह वर्ष पर्यंत रोजगार उपलब्ध कराने का एक उत्तम साधन है जिससे कि हमारे बेरोजगार युवा एवं सेवानिवृत्त कर्मी लाभान्वित हो सकते हैं।

योजना

केंद्र और राज्य सरकारें मिलकर गाय पालन पर सब्सिडी योजनाओं का लाभ भी देती हैं. किसान चाहे तो शुरुआत में पशु किसान क्रेडिट कार्ड पर कम ब्याज पर ऋण लेकर 4 से 5 गायों के साथ गाय डेयरी फार्म शुरू कर सकता है और गाय से दुग्ध उत्पाद के साथ-साथ गैस, खाद बनाकर अच्छा मुनाफा कमा सकता है।

डेयरी बिजनेस शुरू करने के लिए आपको नाबार्ड से डेयरी एन्ट्रेप्रोन्योरशिप डेवलपमेंट स्कीम के तहत लोन पर सब्सिडी मिल जाएघी. खाताबुक नामक वेबसाइट के अनुसार, आप 7 लाख रूपये तक के लोन पर करीब 33.33 फीसदी की सब्सिडी ले सकते हैं. सरकार की इन्वेस्ट इंडिया वेबसाइट के मुताबिक, डिपार्टमेंट ऑफ एनिमल हस्बेंड्री एंड डेयरिंग (DAHD) के तहत एनिमल हस्बेंड्री, इंफ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट फंड (AHIDF) तैयार किया गया है. इसके तहत नई डेयरी यूनिट्स की आर्थिक मदद के लिए इ 15,000 करोड़ रुपये का फंड सेटअप किया गया है. इसके तहत लोन लेने पर नए डेयरी संचालकों को ब्याज पर 3 फीसदी तक की छूट मिलेगी.

निष्कर्ष

पशु पालन एक ऐसा बिजनेस है, जो भविष्य के लिए बहुत ही ज्यादा लाभ पहुंचाने वाला है। मतलब ऐसा कह सकते हैं कि भविष्य में लोगों को पशु पालन करने में रुचि रहेगी और यदि आप भी पशुपालन का व्यवसाय शुरू करना चाहते हैं तो आपको भविष्य में दूध के व्यवसाय में बहुत अधिक लाभ होने वाला है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

फालसा फल की व्यवसायिक खेती

माया बिसेन (सहायक प्रोफेसर) उद्यानिकी विभाग, डॉ.ए.पी.जे.अब्दुल कलाम विश्वविद्यालय इंदौर (म.प्र.)

फालसा को शरबत बेरी या छरबेरी भी कहते हैं ।इसका वानस्पतिक नाम **Grewia asiatica** हैं। फालसा के फल बाजार में काफी महंगे बिकते हैं । इसे तिलासिया परिवार पेड़ माना जाता है.तिलासिया प्रजाति में कुल 150 पौधे हैं, लेकिन फल केवल फालसा के पौधे का खाया जाता है. विशेषज्ञों के अनुसार, फालसा की व्यवसायिक खेती किसानों के लिए काफी फायदेमंद साबित हो सकती है। फालसा की खेती बहुत शुष्क या सूखा पीड़ित या अनुपजाऊ क्षेत्रों के लिए बेहद उपयोगी है, क्योंकि इसके फल खासे महँगे बिकते हैं। फालसा का फल करीब एक सेंटीमीटर व्यास वाला गोलाकार होता है। कच्चे फालसा का रंग मटमैला लाल और जामुनी होता है। मई-जून में पूरी तरह पकने पर फालसा का रंग काला हो जाता है। इसका स्वाद खट्टा-मीठा या चटपटा होता है। फल में बीज पर गूदे की पतली परत होती है। फालसे की झाड़ी में काँटे नहीं होते। इन्हें हाथों से तोड़ते हैं। उपज के लिहाज़ से देखें तो फालसा के फल थोड़ी-थोड़ी मात्रा में ही पकते हैं। कुछ अध्ययन बताते हैं कि गोबर और खाद के उपयोग से इसकी उपज बढ़ाई जा सकती है। भारत में उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र और गुजरात में कई किसान फालसा की व्यावसायिक खेती भी करते हैं। फालसा हिमालयी क्षेत्रों में भी उगता है। वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद (CSIR) के तहत इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ इंटीग्रेटिव मेडिसिन ने हाल ही में जम्मू क्षेत्र में फालसे की खेती को प्रोत्साहित करने के काम को हाथ में लिया है। ताकि इस स्वादिष्ट फल को उस क्षेत्र से विलुप्त होने से बचाया जा सके। संस्थान ने फालसा से बने एक हेल्थ ड्रिंक बनाने की तकनीक भी विकसित की है। इसे वैष्णो देवी के श्रद्धालुओं को बेचा भी जा रहा है।

फालसा की खेती के लिए उपयुक्त मिट्टी व जलवायु : फालसा की खेती किसी भी तरह की मिट्टी में की जा सकती है, किन्तु अच्छी वृद्धि और उपज पाने के लिए जीवांशयुक्त दोमट मिट्टी को अच्छा माना गया है । फालसा के पौधे अधिक गर्म और शुष्क मैदानी भागो तथा अधिक वर्षा वाले नम क्षेत्रों की जलवायु में भी सफलतापूर्वक वृद्धि कर लेते है ।सर्दियों में फालसा का पौधा सुषुप्तावस्था में होता है, जिस वजह से यह पाले को आसानी से सहन कर लेता है ।इसका पौधा न्यूनतम 3 डिग्री और अधिकतम 45 डिग्री तापमान पर भी बढ़ सकता है ।फालसा के फलो को पकने तथा अच्छी गुणवत्ता और रंग पाने के लिए पर्याप्त धूप व गर्म तापमान की जरूरत होती है ।

फालसा की उन्नत किस्में : इन दो किस्मो में थार प्रगति और सी.आई.ए.एच.-1 शामिल है, यह उन्नत किस्में काफी अच्छी गुणवत्ता वाली है, जो कम पानी में भी अधिक उत्पादन देने में सक्षम है । इसमें थार क़िस्म अर्ध-शुष्क और सी.आई.ए.एच.-1 शुष्क क्षेत्रों के लिए काफी उपयुक्त साबित हुई है । इन्ही क़िस्मों द्वारा व्यसायिक खेती को बढ़ाने की कोशिश की जा रही है ।

फालसा में बीज प्रवर्धन : फालसा का व्यावसायिक प्रसार बीज द्वारा किया जाता है। चूंकि फालसा में परिवर्तनशीलता मौजूद नहीं है, इसलिए बीज गुणन काफी सुविधाजनक और सस्ता है। इसके अलावा, फालसा के अंकुर पौधे प्रकार के मामले में काफी हद तक सही होते हैं यानी मातृ पौधे के समान होते हैं। ताजे निकाले गए बीजों का उपयोग पौध उगाने के लिए किया जाना चाहिए। इसके बीजों को अंकुरण के लिए 15-20 दिनों की आवश्यकता होती है और खेत में रोपाई के लिए पौध 3-4 महीने में तैयार हो जाती है।

वनस्पति प्रवर्धन : सिंह एट अल. (1961) ने बताया कि लकड़ी का प्रकार और रोपण तिथि दोनों ही फालसा की जड़ को प्रभावित करते हैं। ऑक्सिन (आईएए, आईबीए, एनएए) के साथ उपचार से फालसा (यादव और राजपूत, 1969), जमीन और हवा की परतों (मोहम्मद और चौहान, 1970) की कठिन लकड़ी की कटाई को जड़ से उखाड़ने में सुधार होता है। इसके पौधे को दृढ़ लकड़ी की कटिंग के साथ-साथ लेयरिंग (सैमसन, 1986) द्वारा आसानी से प्रचारित किया जाता है। स्टूल लेयरिंग के माध्यम से प्रसार के लिए सबसे अच्छा उपचार 10,000 पीपीएम आईबीए और 5,000 पीपीएम आईबीए + 5,000 पीपीएम कैटेचोल (प्रसाद एट अल., 1989) था। फालसा की व्यावसायिक खेती कटिंग और ग्राफ्टिंग विधि से की जाती है ।

सूक्ष्म प्रवर्धन : वर्मा एट अल. (1972) में देखा गया कि 5त्न चीनी + 100 पीपीएम आईबीए के साथ उपचारित फालसा कटिंग से जड़ें बेहतर बनती हैं। 0.5त्न एगैलोल + 3500 पीपीएम आईबीए या 0.5त्न मरकुलिन + आईबीए (1000, 2500 या 3500 पीपीएम) से उपचारित तने की कलमों ने शत-प्रतिशत सफलता दिखाई (सिंह और कुमार, 1974)

फालसा का पौधारोपण : 60 सेमी × 60 सेमी × 60 सेमी आकार के गड्ढों को ऊपरी मिट्टी और गोबर की खाद (10 किग्रा/गड्ढा) से भर दिया जाता है। फालसा के पौधे फरवरी-मार्च या जुलाई-अगस्त के दौरान लगाए जा सकते हैं जब पौधे अपने पत्ते गिरा देते हैं। इसके पौधों को खेत में तैयार पंक्तियों में लगाया जाता है । जिसमे पंक्ति को 3x2 मीटर या 3x1.5 मीटर की दूरी पर तैयार करते है। पौध रोपण से एक-दो माह पूर्व 60x60x60 CM आकार वाले गड्ढो को गर्मियों (मई-जून) के महीने में खोदकर उसमे अच्छी तरह से मिट्टी के साथ सड़ी हुई गोबर की खाद को मिलाकर गड्ढो में भर देते है। एक वर्ष पुराने पौधों को 2.5 से 3.0 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है। हालाँकि, यह उच्च घनत्व वाले रोपण के लिए उपयुक्त है , क्योंकि इसमें 4-5 महीनों के भीतर फूल और फल लग जाते हैं। फालसा के पौधों की संख्या बढ़ाकर इसकी पैदावार बढ़ाई जा सकती है। पौधों की संख्या बढ़ाने के लिए, दोहरी पंक्ति रोपण प्रणाली का उपयोग किया जा सकता है क्योंकि इस प्रणाली में, दो पौधों को एक स्थान पर 0.6 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है, जबकि पौधों की दूसरी जोड़ी को पहले जोड़े से 3 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है। इस विधि को अपनाने से प्रति इकाई क्षेत्र में पौधों की संख्या दोगुनी हो जाती है तथा कुल उपज में 20-30% की वृद्धि हो जाती है।

फालसा के पौधों की सिंचाई : फालसा के पौधों को अधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है, क्योंकि इसके पौधों के लिए शुष्क और अर्धशुष्क जलवायु उपयुक्त होती है ।किन्तु अच्छी उपज लेने के लिए सिंचाई करना जरूरी होता है । इसके पौधों के लिए गर्मियों के मौसम में केवल एक से दो सिंचाई पर्याप्त होती है ।ताकि पौधों को गर्मी सहन करने में सहायता मिल सके । इसके बाद दिसंबर और जनवरी के पश्चात् दो सिंचाई 15 दिन के अंतराल पर करे, इससे पौधों का फुटान जल्दी और अच्छा होता है।मार्च और अप्रैल के महीने में पुष्प और फलन के समय एक-एक सिंचाई करे, ताकि फल की गुणवत्ता और वृद्धि अच्छी हो ।

फालसा की फसल में खाद एवं उर्वरक: फालसा के पौधों को अधिक खाद व उर्वरक की भी जरूरत नहीं होती है ।किन्तु मरुस्थलीय-रेतीली भूमि से अच्छी गुणवत्ता वाले फलो की उपज लेने के लिए उचित मात्रा में खाद एवं उर्वरक देने की आवश्यकता पड़ती है ।फालसा के खेत में उर्वरक शक्ति को बनाए रखने के लिए प्रति वर्ष गोबर की सड़ी हुई खाद देना जरूरी होता है । इसके बाद जब पौधा 3 वर्ष का हो जाए तो 10 KG सड़ी गोबर की खाद के साथ 50 GM डाई अमोनियम फ़ॉस्फेट, 100 GM यूरिया एवं 100 GM म्यूरेट ऑफ़ पोटाश की मात्रा को प्रति पौधे के हिसाब से हर साल देना चाहिए । इस मात्रा को दो भागो में बांटकर एक महीने के अंतराल पर दिया जाना चाहिए ।

फालसा में पुष्पन एवं फलन: फालसा के पौधों की कटाई-छंटाई के उपरांत लगभग दो माह बाद इसमें फूल लगने लगते है ,तथा 15 से 20 दिन में पूरी तरह से फूल खिल जाते है. इसके फूल पीले होते है. और गुच्छों में आते है. पौधों की कटाई-छटाई के 90 से 100 दिनों के उपरांत अप्रैल महीने में इसमें फल पकना आरम्भ हो जाते है. जो पूरे मई महीने तक पकते रहते है?।

फालसा के खेतों में निराई-गुड़ाई : फालसा के खेतों को ज़्यादा देख-रेख की ज़रूरत नहीं पड़ती, लेकिन पेड की गुणवत्ता के लिए उसकी सालाना कटाई-छटाई ज़रूर करनी चाहिए. पौधों की रोपाई के क़रीब सवा साल बाद, यानी अगले साल मई-जून के बाद से सालाना उपज मिलने लगती है. फालसा में फरवरी-मार्च में नई शाखाओं पर फूल आते हैं, जोकि मधुमक्खियों द्वारा परपरागित होकर फल बनाते हैं. फल अप्रैल-मई में पकते हैं. फलों का रंग पकने के समय लाल-गुलाबी, आकार 2.0-2.5 सें.मी. और स्वाद खट्टा-मीठा होता है ।

फालसा के पौधों की कटाई-छटाई: फालसा की फसल में पौधों की कटाई-छटाई करना बहुत जरूरी होता है ।ताकि पौधा झाड़ीनुमा आकार ले सके । क्योंकि फालसा का पौधा जितना झाड़ीनुमा होगा, उसमे उतने ही कल्ले निकलेंगे, और उपज भी उतनी ही ज्यादा मिलेगी।उत्तर भारत में फालसा के पौधों की एक कटाई-छटाई और दक्षिण भारत में दो कटाई-छटाई की जाती है ।इसके लिए पौधों को मध्य जनवरी के महीने में भूमि की सतह से 15 से 20 छ्रूकी ऊंचाई से फ्रूनिंग करना चाहिए ।

फालसा के फलो की तुड़ाई : फालसा के पौधों की छटाई होने के लगभग दो माह पश्चात् पौधों पर फूल आना आरंभ कर देते है, और 15 से 20 दिनों में ही फूल पूरी तरह से खिल जाते है ।इसके फूल गुच्छो में निकलते है, जो पीले रंग के होते है । कटाई-छटाई के तक़रीबन 90 से 100 दिन पश्चात् अप्रैल के महीने में फालसा के पौधों पर फल पकना आरंभ कर देते है, जो मई माह के अंत तक पकते रहते है । अप्रैल के अंतिम सप्ताह से फालसा के फलो की तुड़ाई शुरू हो जाती है, जो मई माह के अंत तक चलती रहती है ।जब इसके छोटे आकार वाले लाल रंग के फल बैंगनी रंग में बदल जाए तो उनकी तुड़ाई कर लेनी चाहिए । इसका फल स्वाद में थोड़ी खटास लिए हुए मीठा होता है ।फालसा के फलो को तोड़कर तुरंत ही टोकरी में रख ले, क्योंकि फल जल्द ही ख़राब होने लगते है । इसलिए इसके तोड़े हुए फलो को 24 घंटे के अंदर बाजार में बेच दिया जाता।

फालसा फल के उत्पाद एवं उपयोग : फालसा का फल बहुत ही मुलायम और नाजुक होता है ।जिस वजह से इन्हे लंबी दूरी तक ले जाना आसान नहीं होता है यही वजह है, कि इसकी उपज को बड़े शहरो तक पहुंचने में दिक्कत होती है ।

• फालसा के बीजो से तेल निकाला जाता है • दवाइयों को बनाने के लिए भी बीजो को इस्तेमाल में लाते हैं। • इसके फलों का उपयोग मूल्य संवर्धित उत्पाद जैसे-जूस, शर्बत, स्क्वैश , नेक्टर फालसा के फल से चटनी, अचार, स्क्वैश, जेम और मिठाईया बनाई जाती है । • इसके पौधे की पतली टहनियों का उपयोग टोकरी बनाने और अंगूर की बेल चढ़ाने वाले जाल को बनाने के लिए करते है । • इसके जड़े मिट्टी के कटाव को रोकने में भी सहायक होती है। • इसके पौधे सूखा रोधी होते हैं और अधिक तापमान पर भी जीवित रह सकते हैं। • यह मिट्टी के कटाव को रोकने के साथ ही इसका उपयोग हवा के बहाव को बाधित करने के लिए भी किया जाता है। ज़फालसा के पौधे की पतली शाखाओं का इस्तेमाल टोकरी बनाने में किया जा सकता है। • इसकी छाल में एक चिपचिपा पदार्थ पाया जाता है, जिसका उपयोग गन्ने के रस को साफ करने के लिए किया जा सकता है, जिससे इस काम के लिए प्रयुक्त रसायनों के इस्तेमाल से बचा जा सकते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

नीली जिह्वा रोग के लक्षण एवं एथ्नोवेट रोकथाम

डॉ.ज्योति डागर, डॉ. पंकज कुमार उमर,
डॉ. आर के शर्मा, डॉ. सचिन जैन
डॉ. विधि गौतम
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

ब्लूटंग, एक बीमारी जो मिडज द्वारा फैलती है, घरेलू और जंगली जुगाली करने वालों और ऊंटों को भी संक्रमित करती है, हालांकि भेड़ें विशेष रूप से बुरी तरह प्रभावित होती हैं। मवेशी, हालांकि भेड़ों की तुलना में अधिक बार संक्रमित होते हैं, हमेशा बीमारी के लक्षण नहीं दिखाते हैं। वायरस जानवरों के बीच फैलता है जो कलिकोइड्स प्रजाति के मध्य के माध्यम से होता है।

अस्वास्थ्यकर प्रथाओं (दूषित सर्जिकल उपकरण या हाइपोडर्मिक सुइयों का उपयोग) द्वारा झुंड और झुंड के बीच या वास्तव में एक झुंड या झुंड के भीतर यांत्रिक संचरण की संभावना हो सकती है।

नैदानिक संकेतों में शामिल हैं

भेड़ आंख और नाक से स्राव, लार आना, शरीर का उच्च तापमान, मुंह, सिर और गर्दन में सूजन, लंगड़ापन और पिछले पैरों में मांसपेशियों की बर्बादी, त्वचा में या नीचे रक्तस्राव, कोरोनरी बैंड की सूजन, सांस की समस्याएं, बुखार, सुस्ती।

मवेशियों में

नाक से स्राव, सिर और गर्दन में सूजन,

नेत्रश्लेष्मलाशोथ, अंदर सूजन और मुंह के छाले, सूजे हुए निप्पल, थकान, लार टपकना, बुखार।

ध्यान दें

नीली जीभ शायद ही कभी संक्रमण का नैदानिक संकेत है

नियंत्रण

स्टॉक का बारीकी से निरीक्षण करें, विशेष रूप से मुंह और नाक की परत और कोरोनरी बैंड (जहां खुर बंद हो जाता है और त्वचा शुरू होती है) पर ध्यान केंद्रित करना। यदि किसी जानवर के नीली जीभ होने का संदेह है, तो जितनी जल्दी हो सके इसकी सूचना दी जानी चाहिए। अपने स्थानीय पशु स्वास्थ्य कार्यालय को तुरंत फोन करें।

निवारक उपाय और उपचार

(Ethovet)

चूंकि पशु कोई चारा नहीं ले रहा है इसलिए भूख से मौत हो सकती है। इसलिए जानवर को निम्नलिखित भोजन मौखिक रूप से दिया जाना चाहिए। केले के फल (एक) को तिल के तेल (50 मिली) से 2 से 3 बार लपेटा जाता है। इससे जानवर थोड़ा ठीक हो जाएगा। हालांकि, यह बीमारी को पूरी तरह से नियंत्रित नहीं करेगा। इसके बाद "सोथुकथलाइ" (एलोवेरा) की पत्ती का गूदा रोजाना देना होता है। जब तक पशु पूरी तरह से इस बीमारी से ठीक नहीं हो जाता तब तक एलोवेरा का प्रयोग अधिक दिनों तक जारी रखना होता है। इस उपचार से संक्रमित पशु रोग से ठीक हो जाएगा। रोग अन्य पशुओं में नहीं फैलेगा यदि सभी पशुओं को निवारक उपचार के रूप में एलोवेरा दिया जाता है। एलोवेरा देने से पशुओं के शरीर का वजन भी बढ़ता है क्योंकि यह सभी आंतों के परजीवी के खिलाफ है।

केन्द्र व राज्य सरकार के समन्वय से प्रदेशवासियों को मिल रहा दोगुना फायदा: केन्द्रीय कृषि मंत्री तोमर

ग्वालियर। केन्द्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री नरेन्द्र सिंह तोमर ने कहा कि केन्द्र एवं राज्य सरकार के बेहतर समन्वय और साझा प्रयासों से मध्यप्रदेश के निवासियों को दुगुना फायदा मिल रहा है। उन्होंने केन्द्र सरकार द्वारा शुरू की गई किसान सम्मान निधि का उदाहरण देते हुए कहा कि इस योजना के तहत हर किसान को साल में 6 हजार रूपए की आर्थिक मदद मिल रही है। मध्यप्रदेश सरकार द्वारा भी मुख्यमंत्री किसान कल्याण योजना के तहत इतनी ही धनराशि किसानों को दी जा रही है। इस प्रकार मध्यप्रदेश के किसान को एक साल

में 12 हजार रूपए मिल रहे हैं। केन्द्रीय मंत्री तोमर ग्वालियर ग्रामीण विधानसभा क्षेत्र के अंतर्गत ग्राम बेरजा में आयोजित हुए "हितग्राही सहभागिता सम्मेलन" में बड़ी संख्या में मौजूद जन समूह को बतौर मुख्य अतिथि संबोधित कर रहे थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रदेश के उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण राज्य मंत्री भारत सिंह कुशवाह ने की। प्रधानमंत्री सूक्ष्म खाद्य उद्यम उन्नयन योजना (पीएमएफएमई) के तहत उद्यानिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण विभाग द्वारा इस हितग्राही सहभागिता सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस अवसर पर केन्द्रीय मंत्री तोमर सहित अन्य अतिथियों ने राज्य ग्रामीण आजीविका मिशन के स्व-सहायता समूहों से जुड़ी 473 दीदियों को लगभग एक करोड़ 24 लाख रूपए की आर्थिक सहायता वितरित की। साथ ही उद्यानिकी विभाग द्वारा भी चार स्व-सहायता समूहों से जुड़ीं लगभग 40 दीदियों को 28 लाख 30 हजार रूपए से अधिक अनुदान राशि वितरित की गई। केन्द्रीय मंत्री तोमर एवं राज्य मंत्री कुशवाह सहित अन्य अतिथियों ने मंच से प्रतीक स्वरूप हितग्राहियों को सहायता राशि के चैक एवं प्रशस्ति पत्र सौंपे। इस अवसर पर उन्होंने तीन करोड़ सात लाख रूपए लागत के छ- बिस्तरीय प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र बेरजा की आधारशिला रखी। साथ ही बेरजा रोड़ से छेंकुर होते हुए सुपावली तक 2.60 किलोमीटर लम्बी डामरीकृत सड़क सहित लगभग 6 करोड़ 44 लाख रूपए लागत के विकास कार्यों का भूमिपूजन व लोकार्पण किया। केन्द्रीय मंत्री तोमर ने बेरजा क्षेत्र में स्टेडियम का निर्माण कराने का पुख्ता भरोसा भी कार्यक्रम में मौजूद युवाओं को दिलाया। क्षेत्रीय विधायक एवं राज्य मंत्री कुशवाह ने युवाओं की ओर से यह मांग रखी थी।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

तिल फसल के महत्ववपूर्ण कीट एवं बीमारियां तथा उनके निदान

प्रमोद कुमार प्रजापति प्रयोगशाला प्राविधिक, कृषि महाविद्यालय टीकमगढ़ (म.प्र.)

राकेश कुमार अनुसंधान विद्वान, पादप प्रजनन विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

शिवरतन वरिष्ठ वैज्ञानिक, अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना- तिलहन, टीकमगढ़

मौसम के निरंतर बदलाव जैसे भारी वर्षा ,ज्यादा तापमान, शीतलहर,सामान्य से अधिक आद्राता, उचित जल निकास ना होना, कोहरा वा मिट्टी मे रोगजनक तथा कीट का सुसुप्त अवस्था मे उपस्थित होना इत्यादि कारणों के कारण रोग वा बीमारियों की संभावना फसल बोने से लेकर फसल काटने तक बनी रहती है जिस हेतु हमे फसल संक्रमण पूर्व उचित उपाह अपनाना चाहिये जिससे कम से कम नुकसान की संभावना हो

तिल की फसल पौध अवस्था से लेकर परिपक्वता अवस्था तक अनेकों कीट एवं व्याधियों से प्रभावित होती है। पिछले तीस वर्षों के आंकड़ों से यह प्रदर्शित होता है कि मध्यप्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र में तिल का पत्ती मोड़क एवं फली छेदक कीट एंटीगैस्ट्रा कैटालुनालिस एक प्रमुख एवं नियमित कीट है जो कि फसल की दो पत्ती वाली पौध अवस्था से फूलावस्था एवं फली अवस्था पर प्रभावित करता है। फली मक्खी (डेसिनेयूरा सिसेमी) जो कि कभी-कभी दिखने वाला गौण कीट है, समय के साथ तिल में एक नियमित एवं संभावित रूप से संकट पैदा करने वाले कीट का दर्जा प्राप्त कर चुका है। रसचूसक कीट अन्य नियमित कीट है जिसमें जैसिड (ओरोसियस अल्बीसिन्कटस), सफेद मक्खी (बेमिसिया टेबैसी) तथा मिरिड बग (नेसिडिओकोरिया टेनुइस) प्रमुख है। जैसिड तिल के पर्णताभ रोग का वाहक भी है। तिल हॉकमाथ एक अनियमित कीट है तथा सफेद मक्खी तिल में लीफ कर्ल नामक बीमारी के वाहक का कार्य करती है। मध्यप्रदेश में कहीं-कहीं क्षेत्रों मे गाल मक्खी का भी प्रकोप देखा गया है ।

तिल मोड़क एवं फली छेदक कीट प्रकोप का पुर्वानुमान

ज.ने.कृ.वि.वि., कृषि महाविद्यालय टीकमगढ़ द्वारा तिल मोड़क एवं फली छेदक कीट प्रकोप की पूर्व अनुमान विधि का विकास किया गया है। इसके अनुसार फसल की प्रारंभिक अवस्था में (30-40°C)तापमान मौसम सप्ताह के दौरान) औसत अधिकतम तापमान 30°C से. अधिक,वा न्यूनतम तापमान 25°C के आसपास तथा शुष्क मौसम (वर्षा लगभग 50 मिमी. प्रति सप्ताह) होने पर फूल एवं फली निर्माण अवस्थाओं में तिल पत्ती मोड़क एवं फली छेदक कीट का प्रकोप अत्यधिक होगा। इस स्थिति में कीट नियंत्रण के आवश्यक उपाय अपनाने चाहिए ।

तिल फसल की महत्वपूर्ण कीट

पत्ती मोडक कीट/ फली भेदक / लीफ बेबर-युवा इल्ली पौधे की ऊपरी पत्तियों को मोडकर सिलेंडरनुमा संरचना बना लेती है जिसके अंदर इल्ली उपस्थित होती है जो पत्तियों के ऊतक को खाती है इसके अलावा यह पुष्प वा फली मे छेद करके शुष्क पदार्थ का भक्षण करती है जिसके परिणाम स्वरूप बीज का निर्माण नहीं हो

पाता है तथा पौध की प्रारम्भिक अवस्था मे संक्रमण होने पर पौधे की किशोर अवस्था मे ही मृत्यु हो जाती है ।

नियंत्रण के उपाय

फली छेदक कीट के नियंत्रण हेतु नीम तेल 5 एम.एल प्रति लीटर या फ्लुबेंडियामाइड 480 एस.सी का 0.3 एम.एल प्रति लीटर या क्लोरेंट्रानिलिप्रोल 18.5 एस.सी 0.4 एम.एल प्रति लीटर एस्सपीनोसेड 45 एस.सी का 0.2 एम . एल प्रति लीटर का उपयोग करना चाहिए ।

पीटिका मक्खी (गाल फ्लाई)

यह कीट फूल के आवश्यक अंगों को खाकर नष्ट कर देती है जिसके कारण बीज नहीं बन पता है बीज की जगह एक गांठ नुमा संरचना बन जाती है ।

नियंत्रण के उपाय

सक्रमित पुष्पों को तोड़कर नष्ट कर दे तथा कलिका बनते समय डाईमेथोएट 0.01 प्रतिशत या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस . एल का 0.25 मिली लीटर का घोल बना कर छिड़काव करे ।

तिल पत्ती हॉपर

यह पौधों की पत्तियों के रस को चूस कर नुकसान पहुचता है जिससे कारण पौधों मे पत्तियाँ अत्यंत छोटी रह जाती है और पौधा फली विहीन हो जाता है तथा यह तिल मे होने वाले फायलोडी नामक रोग के वाहक का भी कार्य करता है ।

नियंत्रण के उपाय

संक्रमित पौधे को उखाड़कर नष्ट कर दे तथा इमिडाक्लोप्रिड 600 एफ.एस के 7.5 एम.एल से या थियामेथोक्साम 25 डब्लू.जी के 5 ग्राम प्रति किलो बीज को उपचारित कर बोना चाहिए तथा फसल मे कीट के नियंत्रण हेतु नीम तेल 5 एम.एल प्रति लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल के 0.25 प्रतिशत का घोल बना कर छिड़काव उपयोगी होता है ।

तिल हॉक शलभ

तिल का यह अनियमित तथा फसल की सभी अवस्थाओ पर आक्रमण करने वाला कीट है यह पत्तियों को काट कर खाता है जिससे पौधा नग्न निखाई देने लगता है ।

नियंत्रण के उपाय

ग्रीस्म कालीन गहरी जुताई करना चाहिए जिससे प्यूपा जमीन की ऊपरी सतह मे आ जाते है जिन्हे चिड़ियां अपना शिकार बना लेती है तथा ट्राइकोग्रामा अंडा परजीवी का प्रयोग करे साथ ही नीम तेल 5 एम.एल प्रति लीटर का घोल बना कर छिड़काव करे ।

तिल फसल की महत्तवपूर्ण बीमारियां

फाइलोंडी-यह रोग फाइटोप्लाज्मा नामक रोगजनक से होता है संक्रमित पौधों की पत्तियाँ छोटी एवं गुच्छेनुमा हो जाती है जिससे पौधा झाड़ीनुमा प्रतीत होता है ग्रसित पौधों मे फलियाँ नहीं बनती है अगर फलियाँ बन जाती है तो उनमे बीज निम्न गुणवत्ता का होता है।

नियंत्रण के उपाय

संक्रमित पौधे को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए तथा तिल + अरहर की अंतर्वर्ती फसल (6:1) के अनुपात मे लगाए चूंकी यह बीमारी एक वाहक द्वारा प्रसारित होती जिसके नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 600 एफ.एस के 7.5 एम.एल से या थियामेथोक्साम 25 डब्लू.जी के 5 ग्राम प्रति किलो बीज को उपचारित कर बोना चाहिए।

तना वा जड़ सड़न

इस रोग के लक्षण तना एवं जड़ दोनों मे दिखाई देते है रोगी पौधे का तना जमीन की सतह से ऊपर कला हो जाता है तथा पौधे को उखाड़ने पर जड़ भो काली दिखाई देती है तने का छिलका हटाने पर स्कलोरेसिया दिखाई देता है तने वा जड़ के अलावा इसके लक्षण पत्तियों एवं फलीओ मे काले दाने के रूप मे दिखाई देते है ।

नियंत्रण के उपाय

ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करना चाहिए तथा फसल चक्र अपनाना चाहिए इसके अलावा ट्राइकोडर्मा विरडी से 4 ग्राम प्रति किलो बीज या थाइराम (1.5 ग्राम)+ बावस्टीन (1.3 ग्राम) की दर से उपचारित कर बोना चाहिए ।

अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा

इस रोग मे पौधे मे भूरे रंग के चकत्ते बनते है जो बाद मे बढ़ते जाते है रोग की आव्रति बढ़ने पर पौधे की पूरी पत्तियां झड़ जाती है।

नियंत्रण के उपाय

ग्रीस्म कालीन गहरी जुताई करना चाहिए तथा फसल चक्र अपनाना चाहिए इसके अलावा कवकनाशी डायथेन एम-45 का 2.5 ग्राम मात्रा प्रति लीटर या साफ पाउडर 2 ग्राम प्रति लीटर मे घोलकर छिड़काव करे ।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

पशुओं में टिटनेस रोग एवं रोकथाम

रवि सिकरोडिया
जोयसी जोगी, राखी गंगिल
दलजीत छाबरा, राकेश शारदा
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, महू (म.प्र.)

टिटेनस पशुओं में होने वाली एक जीवाणु जनित बीमारी है जो की गोवंश, बकरी, भेड़, श्वान एवं घोड़ों को प्रभावित करती है। घोड़ों में यह बीमारी अधिक तीव्रता से देखने को मिलती है। इस बीमारी में प्रभावित पशु के मोटर तंत्रिका केन्द्रों पर प्रभाव पड़ता है जिससे की शरीर की मांसपेशियां स्टीफ़ हो जाती है। साथ ही शरीर की मूवमेंट भी ख़त्म हो जाती है।

रोग का कारण

- यह बीमारी क्लोस्ट्रीडियम टिटेनी नामक ग्राम पॉजिटिव जीवाणु के द्वारा उत्पन्न होने वाले टोक्सिन के कारण होती है जो की तंत्रिका तंत्र पर प्रभाव डालता है यह एक स्पोर बनाने वाला बैक्टीरिया है जो की वातावरण में बहुत लम्बे समय तक जीवित बना रह सकता है सामान्यतः यह स्पोर के रूप में निष्क्रीय पड़े रहते है यह जीवाणु पशुओं के आंत एवं मिटटी में पाए जाते है मुख्य रूप से जंग लगी हुई लोहे की कील, नीडल अथवा कोई चीज पर यह स्पोर कई बर्षो तक रह सकते है परन्तु जब भी यह किसी भी तरीके से होस्ट या फिर किसी भी जीवित पशु या मनुष्य में प्रवेश करते है तो यह स्पोर से एक वेजिटेटिव सेल में बदल जाते है साथ ही अपनी संख्या बढाने के साथ टोक्सिन भी उत्पन्न करते है यह मुख्य रूप से हीमोलाइसिन एवं न्यूरोटोक्सिन नामक डो प्रकार के विष उत्पन्न करते है जो इस बीमारी के लक्षण उत्पन्न करने के लिए जिम्मेदार है।

रोग की व्यापकता

- यह बिमारी विश्वभर में देखने को मिलती है परन्तु ठन्डे देशों की तुलना में जिन देशों में तापमान थोडा अधिक रहता है वहां पर यह बीमारी अधिक देखने को मिलती है पशुओं में अश्वों में अन्य पशु की तुलना में यह बिमारी अधिक देखने को मिलती है मुर्गियों में पक्रतिक रूप से यह बीमारी नहीं होती है कम उम्र के पशु बीमारी के लिए अधिक संवेदनशील होते है इस बीमारी के जीवाणु मुख्या रूप से किसी चोट अथवा घाव से शरीर में प्रवेश करते है जीवाणु को ऑक्सीजन रहित स्थान मिलने पर यह गुणन कर टोक्सिन उत्पन्न करने लगता है मुह में छाले, पशुओं में केसट्रेसन, पूँछ काटना, नवल में संक्रमण अथवा भेड़ों में उन निकलते समय बने घावों से जीवाणु शरीर में प्रवेश कर सकते है

रोग के लक्षण

- इस बिमारी का इन्क्यूबेशन समय 7 से 20 दिन तक का होता है पशुओं खाना कम कर देता है मुह से लार आने लगती है कई पशुओं में आँख की निक्टीटेटिंग जिल्ली भी बाहर की ओर्र आती दिखने लगती है चेहरे की मसल्स में खिंचाव सा देखने को मिलता है नथुने फूल जाते है एवं पशु का शरीर अकड जाता है पैर भी स्टिफ हो जाते है जो की मुड़ते नहीं है इस समय पशु के शरीर में कोई मूवमेंट देखने को नहीं मिलती है कभी कभी पशु की गर्दन एक तरफ मुड जाती है पशु के शरीर में कोई हलचल समझ नहीं आती है पेट की मासपेशियों में भी अकडन हो जाती है अंत में श्वासरोध के कारण पशु की मृत्यु हो जाती है

रोग का निदान

- पशु में रोग की पहचान लक्षणों के आधार पर की जाती है कही कोई चोट लगने की जानकारी हो या फिर पहले कभी आसपास में किसी पशु को यही बीमारी हुई हो

उपचार

- सामान्यतः एक बार लक्षण आ जाने के बाद में पशु को बचाना थोडा मुश्किल होता है इसीलिए किसी भी प्रकार की शल्य चिकित्सा के समय टिटनेस के बारे में ध्यान रखते हुवे उपचार करना चाहिए साथ अगर पता चलता है की पशु के चोट के स्थान पर कोई जंग लगी हुई लोहे की बस्तु या कील या नीडल के संपर्क हुवा है तो टिटनेस टॉक्साइड का इंजेक्शन लगवाना चाहिए साथ ही पशु को साफ स्थान पर रखना चाहिए पशु को पेशियों के संकुचन को कम करने की दवा देना चाहिए पशु को उत्तेजित होने से रोकना चाहिए अगर अन्तितोक्सिन उपलब्ध है तो वो भी दिया जाना चाहिए

रोग से बचाव एवं रोकथाम

- पशु के रहने के स्थान को साफ़ सुथरा रखना चाहिए
- पशु शेड के आस पास लोहे का कोई सामना, कील, फेंसिंग के तार आदि नहीं रखना चाहिए
- उपचार के बाद नीडल को पशु शेड के आसपास नहीं फेंकना चाहिए
- शल्य चिकित्सा के बाद घावों को अच्छे से साफ़ करके ड्रेसिंग करना चाहिए
- लोहे की वास्तु से घाव होने पर हाइड्रोजन परओक्सैड से साफ़ करना चाहिए

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

क्वालिटी प्रोटीन मक्का की उत्पादन प्रौद्योगिकी मध्यभारत के परीप्रेक्ष्य में

रविन्द्र पंवार (वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता)
दिलीप कुमार वर्मा (प्रधान वैज्ञानिक) भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षे.के. इन्दौर (म.प्र.)

क्वालिटी प्रोटीन मक्का को बिना किसी कठिनाई के खरीफ, रबी और जायद मौसमों में तथा गैर-पारंपरिक क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। रबी के दौरान अधिकतम खाद्यान्न उपज प्राप्त करने हेतु बीज बोने का समय 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर है। गर्मी के मौसम में सिंचाई को सुनिश्चित करते हुए फरवरी-अप्रैल के दौरान उपयुक्त बीज बोने चाहिए। क्वालिटी प्रोटीन मक्का संकरों की सस्य-विज्ञानी आवश्यकताएं पादप संरक्षण और खरपतवार नियंत्रण उपाय वहीं है जो सामान्य संकरों की है। कटाई और छिलका उतारने का काम भी वैसे ही किया जाता है, जैसा कि सामान्य संकरों मे किया जाता है।

खेती का क्षेत्र: क्वालिटी प्रोटिन मक्का को सामान्य मक्का की ही तरह देश के लगभग सभीं भागों में, मैदानी क्षेत्रों से पर्वतीय क्षेत्रों तक(2,700 मीटर की ऊंचाई) सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। यह रेतीली से भारी मृदा तक, सभी प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है। जल धारण करने क्षमता के कारण गहरी भारी मृदाएं बेहतर समझी जाती है। लवणीय और अम्लीय मृदाओ से बचना चाहिए क्योंकि इसमें फसल के अंकुरण के तुरंत बाद प्रतिकूल असर होने लगता है। नए क्षेत्र में मक्का उगाने से पुर्व मृदाओ की पीएच और विद्युतीय चालकता की जांच की जानी चाहिए। निचले क्षेत्रों और खराब निकासी वाले क्षेत्रों से बचना चाहिए। जहां भी आवश्यक हो, बुआई से पहले खेत की ढलान के साथ-साथ उथली और गहरी नालियां बनाकर सतही निकासी की व्यवस्था उपलब्ध करानी चाहिए।

किस्मों का चयन: मक्का अनुंसधान निदेशालय ने अपने केन्द्रो की मदद से एक मिश्रित किस्म, शक्ति और दो उच्च उपजशील संकर-शक्तिमान-1 और शक्तिमान-2 विकसित किए हैं। अनुशंसित संकरों और कम्पोजिट के सत्सापित बीजों को खरीदना ही वांछनीय है। हर साल संकरो के नए बीज लाए जाने चाहिए। पिछले साल की फसल से बचाए हुए अनाज का बीज के रूप में प्रयोग करने से खाद्यान्न की उपज में पर्याप्त रूप से कमी होने की संभावना होती है। कम्पोजिट के मामले में, किसान अपनी फसल से बीज बना सकते है, यदि (1) पुष्पन के समय, मक्का के खेत की अन्य मक्का के खेतों से 300 मीटर की दूरी हो (2) खेत में पर्याप्त पादपों की संख्या हो (प्रति एकड़ 10,000 या अधिक पादप) (3) अवांछित किस्मों को कम से कम चुना जाए। यदि किसान अपनी कम्पोजिट किस्म के बीज को ही रख रहा है तो बीज को पीड़क-नाशियों और कवक-नाशियों के साथ उपयुक्त रूप से उपचारित करना चाहिए। ऐसे कम्पोजिट बीजों को अगले साल में प्रयोग के लिए संग्रहित करने से पहले साफ करना, सुखाना और उपचारित करना आवश्यक है।

बुआई का समय: प्राकृतिक वर्षा का सर्वोत्तम उपयोग करने के लिए बुआई के समय को उपयुक्त रूप से समायोजित करना चाहिए। सिंचित क्षेत्रों में, वर्षा आने से 10-15 दिन पहले ही बुआई पूरी कर लेनी चाहिए इससे उन खेतों से 15 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त हुई है जहां वर्षा के आने पर या उसके बाद बुआई की गई। वर्षा प्रधान क्षेत्रों के लिए, जहां सिंचाई सुविधाओं की पूरी कमी है, वहां जैसे ही मृदा में पुरी नमी आती है फसलों को उसी समय बोना चाहिए। इससे अच्छा अंकुरण होगा और पौधो की उचित संख्या विकसित की जा सकेगी। उन किसानों के पास सिंचाई की सीमीत सुविधाएं होती है, वे उथले खुंडो (करों), जहां कि बीज बोए जाने है, सिंचाई को सीमित करते हुए जल्दी बुआई कर सकते हैं। अगेती बोई गई फसल के लिए मानसून आने से पहले ही 1-2 सिंचाई करनी आवश्यक होती है। रबी मौसम के दौरान, अक्टूबर मध्य से लेकर नवम्बर का प्रथम सप्ताह बुआई करने का सबसे उपयुक्त समय है।

क्यारी तैयार करना: एक साफ, समतल, गहरी जुती हुई लेकिन मजबुत क्यारी सबसे अच्छी होती है। फसलों कों रूके हुए जल के कारण होने वाली क्षति से बचाने और जड़ तक पर्याप्त नमी उपलब्ध कराने के लिए फसल को मेड़ पर बोना चाहिए। दूसरा सबसे अच्छा विकल्प फसल को समतल सतह पर बोना और जैसे ही मौसम अनुकूल हो तो फसल पर मिटटी चढ़ानी चाहिए। यह पद्धति रबी मौसम में भी उपयोगी होती है। 'खरीफ' मौसम के दौरान रूके हुए जल के कारण होने वाले नुकसान को रोकने के लिए ढलान के साथ-साथ उपयुक्त अंतरालों पर निकासी नालियां उपलब्ध होनी चाहिए।

उर्वरक प्रबन्धन: उच्च पैदावार प्राप्त करने के अलावा, मृदा की उर्वरता को भी बनाना आवश्यक होता है। निवेश किए गए रूपए के लिए इच्छित लाभ करने हेतु उर्वरकों का विवेकपूर्ण प्रयोग आवश्यक है। खेत में बुवाई से पहले पर्याप्त मात्रा में गोबर की खाद डालनी चाहिए। केवल उर्वरकों का प्रयोग करने की अपेक्षा यदि जैविक खाद और रासायनिक उर्वरकों को मिलाकर इस्तेमाल किया जाये तो बेहतर उपज प्राप्त होगी और मृदा की उर्वरता में भी सुधार होगा।

उर्वरकों की मात्रा: विभिन्न खेतों के लिए आवश्यक उर्वरकों की मात्रा मृदा की उर्वरकता स्थिति (सस्यन के पिछली स्थिति और किस्म की अवधि पर निर्भर करती है। किस्म की पकने की अवधि के आधार पर प्रति हैक्टर 60-120 कि.ग्रा. नत्रजन (एन) 40-60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस ( ) और 40 कि.ग्रा. पोटाश के संतुलित प्रयोग की सिफारिश की जाती है। बहुत ही बलुई मिटटी और हाल ही में समतल किए गए खेतों में 200 कि.ग्रा. प्रति है. की दर से जिंक सल्फेट के प्रयोग से अच्छे परिणाम प्राप्त हुए है।

उर्वरकों का प्रयोग: 'खरीफ' मौसम के दौरान, बुवाई से पहले नत्रजन की कुल मात्रा का एक चैथाई और फॉस्फोरस, पोटाश और जिंक (यदि आवश्यक हो) पूरी मात्रा 5 से 7 सेंटीमीटर गहराई तक डाली जानी चाहिए। बची हुई नत्रजन की दों असमान खुराकें बगली खाद (टापड्रेसिज) के रूप में डाली जानी चाहिए; कुल नत्रजन का आधा (60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति है जब कुल खुराक 120 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हैक्टर हो) तब डाला जाना चाहिए जबकि फसल घुटनों तक ऊँची हो गई हो (अंकुरण के बाद 20-30 कि.ग्रा.) बची हुई नत्रजन को (30 कि.ग्रा.नत्रजान प्रति है) झंडा पत्ता दिखाई देने के बाद लेकिन नरमंजरी आने से पहले डाला जाना चाहिए। पौधे को किसी प्रकार की क्षति से बचाने के लिए उर्वरकों को पौधे के आधार से 10-12 सें.मी दूर डालाना चाहिए। उर्वरक डालने के तुरंत बाद मृदा की सतह को ढक देना चाहिए जिससे कि नुकसान कम ये कम हो, तथापि रबी और जायद के मौसम के दौरान नत्रजन का प्रयोग दो बराबर खुराकों में बाटा जा सकता है अर्थात बुवाई के समय और फसल जब घुटने तक ऊँची हो जाए।

उर्वरकों का छिड़काव: देर से हुई निराई अपर्याप्त निकासी के कारण हुए नुकसान को दूर करने हेतु उसमें पुनः वर्द्धनशीलता प्राप्त करने के लिए 3-5 सप्ताह पुरानी फसल पर 2 प्रतिशत युरिया (निम्न जैव दर अंश के साथ छिड़काव ग्रेड) के एक या दो छिड़काव और सुक्ष्म पोषक तत्व मिश्रण का प्रयोग किया जा सकता है। उच्च सांद्रण युरिया का छिड़काव नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि इससे पर्णीय क्षति हो सकती है।

पौधों की संख्या: खरीफ के दौरान खाद्यान्न की उच्च उपज प्राप्त करने के लिए कटाई के समय प्रति है. 65-70 हजार पौधे होने आवश्यक है जबकि रबी में पौधो की संख्या 90 हजार पौधे प्रति है. तक बढ़ाई जा सकती है। अंकुरण के समय 10% अधिक पौद प्राप्त करना आवश्यक होगा। अपेक्षित स्तर तक पौधों की सघनता प्राप्त करने हेतु पंक्ति से पंक्ति और पौधे से पौधे के बीज 75 सें.मी. × 18 से.मी. और 60×22 से.मी. की दूरी का प्रयोग करना आवश्यक है। अंतः सस्यकर्षण (निराई-गुड़ाई) हेतु पंक्तियों के बीच पर्याप्त अंतराल होना चाहिए।

बीज दर: एक हैक्टर पर बुवाई करने के लिए लगभग 20 कि.ग्रा. बीजों की आवश्यकता होती है। अच्छी पौध बढ़वार और वर्द्धनशीलता को सुनिश्चित करने के लिए बीजों को लगभग 5 से.मी. गहराई तक बोना चाहिए। यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि बीजों में कम से कम 95 प्रतिशत अंकुरण हो। 80% से कम अंकुरण वालें बीजों के बुवाई के स्वरूप पौध अंकुरण एवं वर्द्धनशीलता पर प्रतिकुल असर पड़ता है। प्रतिरोपण से बचना चाहिए क्योंकि अंतराल को भरने वाले पौधे मुख्य फसल का मुकाबला नहीं कर सकते।

सिंचाई: क्वालिटी प्रोटिन मक्का को ऐसे फसल के जीवन चक्र के दौरान वर्षा प्रधान क्षेत्रों में भी उगाया जा सकता है जहां वर्षा का वितरण पर्याप्त हो, जिससे मिट्टी में पर्याप्त नमी को सुनिश्चित किया जा सकता है।ऊँची और स्थाई उपज को सुनिश्चित करने के लिए फसल बढ़वार के महत्वपूर्ण चरणों में एक या दो सिंचाइयां करने के लिए सिंचाई के उपलब्ध स्रोतों कों काम में लाना चाहिए। इस्तेमाल किया जाने वाला पानी सिंचाई के लिए उपयुक्त होना चाहिए। मक्का को जल क्रांति के साथ ही साथ मृदा आर्दता प्रतिबल के प्रतिबल के प्रति ग्रहणशील माना जाता है। मेड़ो पर बुवाई करने से जहां पर सतही निकासी की भी व्यवस्था हो उच्च भूमि पर जल क्रांति की बाधाओं को दूर किया जा सकता है। मक्का अपने पुरे जीवन चक्र के दौरान आर्दता प्रतिबल के प्रति ग्रहणशील होता है। चूंकि पुष्पन और दाना भरने की स्थितियां सबसे अधिक महत्वपूर्ण होती है, सर्दी के मौसम के दौरान फसल बढ़वार की विभिन्न स्थितियों में 5-8 सिंचाइयां आवश्यक होती है। बेहतर अंकुरण और पौद आधार प्राप्त करने के लिए बुवाई उन्हीं खेतों में करनी चाहिए जहां मिट्टी में पूरी नमी हो।

खरपतवार नियंत्रण: ऐसी घास-पात जिनके पत्ते चौड़े होते है और अधिकांश घास होती है, उन्हे 1.5 कि.ग्रा प्रति है. की दर से एट्राजाइन के प्रयोग से सुविधाजनक रूप से नियंत्रित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त घास पतवार को नियंत्रण में रखने के लिए एक या दो अंतःसस्याकर्षनों की आवश्यकता होती है। रबी की कुछ दालों के साथ अंतरासस्यन से भी घास पतवार की समस्या कम होगी।

फसल सुरक्षा

हानिकारक कीट: पुरे देश खरीफ मौसम के दौरान मक्के का डंठल छेदक 'कारलारे पारटेलस' मुख्य कीट है जबकि रबी मौसम क दौरान प्रायद्वीपीय भारत के कुछ क्षेत्रों में सेसेमिया इन्फेरेन्स दिखाई देने लगता है 10 से 15 पुरानी फसल पर 0.1% एन्डोसल्फेन (35 ईसी) की दर से 0.05% लिन्डेन (20 ईसी) का पहला पर्णीय छिड़काव किया जाना चाहिए और उसके बाद यदि आवश्यक हो तो 15 दिन बाद पौधों के घेरों में 15 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से 4% एन्डोसल्फेन दाने या 1% लिन्डेन दानों का दूसरा छिड़काव करना चाहिए।

रोग: देश के विभिन्न भागों में खरीफ और रबी के मौसमों के दौरान अनेक रोग हो जाते है। खेत के वे हिस्से जो कि फूल आने से पहले की स्थिति के दौरान जलक्रांत थे, उनमें समय-समय पर मेडिस और टरक्युकिम पर्णब्लाइट उभर आते है इसी प्रकार फसल बढ़वार की पुष्पन स्थिति के बाद आर्दता प्रतिबल स्थितियों में कम से अधिक डण्ठल विकलन होता है इन रोगों से बचने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि प्रतिरोधी किस्में उगाई जाएं और समय से बुवाई की जाए। टरक्यूकिम और मेडिस पर्णब्लाइटों को 10-15 दिन के अन्तराल पर 2.5 कि.ग्रा/1000 ली. पानी की दर से पर्ण पदमइ के 2 या 3 छिड़कावों से नियंत्रित किया जा सकता है।

धनिया की फसल में प्रमुख कीट एवं बीमारियों के प्रबंधन

सुमन पाण्डेय, डॉ. निशा जांगड़े
(सहायक प्राध्यापक सब्जी विज्ञान विभाग)
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छत्तीसगढ़)

माहू/चेपा

धनिया फसल में फूल आते वक्त या उसके बाद एफिड का प्रकोप होता है। ये कीट पौधों के कोमल भागों का रस चूसते हैं जिससे पैदावार में भारी कमी आ जाती है।

रोकथाम

नियंत्रण के लिए धनिया फसल पर मोनोक्रोटोफॉस 36 एस एल या मैलाथियान 50 ईसी का एक मिलीलीटर या क्यूनालफॉस 25 ईसी का दो मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर सांयकाल के समय छिड़काव करना चाहिए।

कटवर्म एवं वायर वर्म

इस कीट की सूण्डी भूरे रंग की होती है। शाम के समय यह सूंडी पौधों को जमीन की सतह के पास से काटकर गिरा देती है। इसका प्रकोप फसल की प्राथमिक अवस्था में होता है, जिससे फसल को अधिक नुकसान होता है।

रोकथाम

इस कीट के नियंत्रण के लिए मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत या मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण को 20 से 25 किलोग्राम प्रति हेक्टर की दर से जुताई के समय भूमि में मिलावें।

छाछ्या (पाउडरी मिल्ड्यू)

पौधों की पत्तियों और टहनियों पर सफेद चूर्ण दिखाई देता है। रोग का प्रकोप अधिक होने पर या तो बीज नहीं बनते या बहुत ही कम छोटे बीज बनते हैं, जिससे इनकी गुणवत्ता कम हो जाती है।

रोकथाम

उपचार के लिए गंधक का चूर्ण 25 किलोग्राम प्रति हेक्टर के हिसाब से भुरकाव करें या घुलनशील गंधक 0.2 प्रतिशत घोल, केराथेन 0.1 प्रतिशत, केलेक्सिन 0.05 प्रतिशत में से कोई एक दवा को 500 से 700 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टर के हिसाब से छिड़काव करें तथा आवश्यकता होने पर 15 से 20 दिन बाद छिड़काव दोहराएं।

उखटा रोग (विल्ट)

इस रोग से धनिया फसल के पौधे हरे मुरझा जाते हैं। यह पौधे की छोटी अवस्था में ज्यादा होता है। परन्तु रोग का प्रकोप किसी भी अवस्था में हो सकता है।

रोकथाम

उखटा के बचाव के लिए गर्मियों में गहरी जुताई करें. बीज को कार्बेण्डजीम 50% WP 2 ग्राम या ट्राइकोडर्मा विरिडी 10 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचरित करना चाहिए।

इसके रासायनिक उपचार हेतु कासुगामायसिन 5% + कॉपर आक्सीक्लोराइड 45% WP दवा की 300 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ या कासुगामायसिन 3% SL की 400 मिली मात्रा प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

झुलसा (ब्लाईट)

धनिया की फसल में इस रोग का प्रकोप होने पर पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं एवं पत्तियां झुलसी हुई दिखाई देती है। वर्षा होने पर रोग की सम्भावना बढ़ जाती है।

रोकथाम

धनिया फसल के इस रोग के उपचार हेतु बाविस्टीन 0.1 प्रतिशत या इन्डोफिल एम- 45, 0.2 प्रतिशत या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें। वर्षा होने के साथ रोग की संभावना बढ़ जाती है.इन रोगों के निवारण के लिए क्लोरोथालोनिल 70% WP @ 300 ग्राम/एकड़ या कार्बेन्डाजिम 12% + मैनकोज़ब 63% WP @ 500ग्राम/एकड़ या मेटिराम 55% + पायरोक्लोरेस्ट्रोबिन 5% WG @ 600 ग्राम/एकड़ या टेबूकोनाज़ोल 50% + ट्रायफ्लोक्सीस्ट्रोबिन 25% WG @ 100 ग्राम/एकड़ या ऐजोस्ट्रोबिन 11% + टेबूकोनाज़ोल 18.3% SC@ 250 मिली/एकड़ की दर से 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें.जैविक उपचार के रूप में ट्राइकोडर्मा विरिडी @ 500 ग्राम/एकड़ या स्यूडोमोनास फ्लोरोसेंस @ 250 ग्राम/एकड़ के हिसाब से छिड़कें.

तनाव्रण/तना सूजन/ तना पिटिका (स्टेमगाल)

यह रोग प्रोटामाइसेस मेक्रोस्पोरस कवक के द्वारा फैलता है। रोग के कारण फसल को अत्यधिक क्षति होती है। पौधो के तनों पर सूजन हो जाती है। तनों, फूल वाली टहनियों एवं अन्य भागों पर गांठें बन जाती है। बीजों में भी विकृतिया आ जाती है इस रोग का प्रबंधन के निम्न उपाय है। ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें एवं उचित फसल चक्र अपनाएं। बीज की बुवाई नवम्बर के प्रथम से द्वितीय सप्ताह में करें।

रोकथाम

नियंत्रण के रोगरोधी किस्म आर सी आर-41 जैसी किस्म बोयें एवं नियंत्रण के लिए बीजों को बुवाई पूर्व थाइरम 1.5 ग्राम और बाविस्टीन 1.5 ग्राम (1:1) प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें। खड़ी फसल में रोग के लक्षण दिखने पर बाविस्टीन 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

जैव उर्वरक (बायोफर्टिलाइजर) महत्व एवं उपयोगिता

केशव श्रीवास, डॉ. तापस चौधरी
डॉ. अनुप कुमार सिंह, डॉ. रविन्द्र सोनी
कृषि सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

जैव उर्वरक (बायोफर्टिलाइजर)

जैव उर्वरक (बायोफर्टिलाइजर) प्रकृति में उपस्थित लाभदायक सूक्ष्म जीवों का वह कल्चर है जो फसलों को पोषक तत्व प्रदाय करने के साथ ही साथ पर्यावरण हेतु सुरक्षित एवं न्यूनतम लागत वाली जैविक पदार्थ है।

लाभ

1. पौधों हेतु विभिन्न आवश्यक पोषक पदार्थों की प्राप्ती के स्त्रोत।
2. पौधों के वृद्धिकारक विटामिनों एवं हार्मोन्स प्रदायकर्ता।
3. पौधों को रोग से बचाने में सक्षम ।
4. भूमि की उर्वरा शक्ति लम्बे समय तक बनाये रखता है।
5. यह आदर्श स्थिति में 20-200 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर स्थिरीकृत एवं 10-15 कि.ग्रा. स्फुर प्रति हेक्टेयर घुलनशील अवस्था में बदल सकता है।
6. फसल के उपज को 10-50 प्रतिशत तक बढ़ा सकता है।
7. सस्ता, प्रदुषणरहित जैविक पदार्थ है।
8. भूमि की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशा सुधरता है अतः भूमि की स्वास्थ्य की रक्षा करता है।

जैव उर्वरक निम्न प्रकार के होते हैं- (1) राइजोबियम (2) एजोटोबैक्टर (3) एजोस्पाइरिलम (4) पी.एस.बी. (फॉस्फोरस घोलक जीवाणु) (5) जेड.एस.बी. (जिंक घोलक जीवाणु) (6) के. एस. बी. (पोटाश घोलक जीवाणु)

राइजोबियम कल्चर

इस कल्चर का उपयोग मुख्य रूप से दलहनी फसलों में किया जाता है। इसके अतिरिक्त अन्य अदलहनी लैग्युमिनस फसलों (सोयाबिन, मूँगफली, मेथी आदि) में भी इसके प्रयोग आवश्यक रूप से करना चाहिए। इन फसलों के जड़ो में ग्रंथियों (गठान) पाई जाती है। जिसका निर्माण मिट्टी में उपस्थित सुक्ष्म जीवाणु राइजोबियम द्वारा किया जाता है। इन जीवाणुओं द्वारा इन जड़ ग्रन्थियों में वायुमण्डल से प्रचुर मात्रा में नत्रजन स्थिरीकृत किया जाता हैं जो फसल की नत्रजन आवश्यकता का 75-80 प्रतिशत की पूर्ति करता है। राइजोबियम कल्चर 7 फसलों के अनुसार अलग-अलग होता है।

एजोटोबैक्टर कल्चर

इस कल्चर मे उपस्थित जीवाणु स्वतंत्र जीवीय सूक्ष्म जीवाणु है जो हवा की उपस्थिति में जीवित रहता है एवं बिना सहजीवन के नाइट्रोजन को मुक्त रूप से हवा से मिट्टी में स्थिरीकृत करता है। इसके द्वारा अमीनों अम्ल, शर्करा, विटामिन्स एवं कार्बनिक अम्लो का स्त्रावण किया जाता है। यह नाइट्रोजन स्थिरीकरण के साथ-साथ पौधों के विकास में काम आने वाले पादप वृद्धिकारक हार्मोन (इण्डोल एसिटिक अम्ल, जिब्रेलिक अम्ल) और कुछ 7 एण्टीबायोटिक का भी स्त्राव करता है जिसका बीजों के अंकुरण पर अच्छा प्रभाव पड़ता है एवं पौधो जड़ों में होने वाली बहुत सारी बीमारियों की रोकथाम होती है। इस कल्चर को ऐसे फसलों में उपयोग किया जाता है जो जल भराव रहित खेतों में उगाई जाती है, विशेषकर सब्जीवर्गीय फसलो के लिए यह एक आदर्श जैव उर्वरक है।

एजोस्पाईरिलम कल्चर

यह कल्चर का निर्माण एक ऐसा जीवाणु से किया जाता है जो अल्प हवा की उपस्थिति में जीवित रह सकता है एवं स्वतंत्र रूप से नत्रजन हवा से मिट्टी में स्थिरीकृत कर सकता है। यह जीवाणु मिट्टी में पौधों के जड़ क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से पाये जाते हैं एवं 7 वायुमण्डल का नाइट्रोजन को स्थिरीकृत कर पौधों को उपलब्ध कराता है। यह गैर दलहनी पौधों के लिए लाभकारी होता हैं। यह सुक्ष्मजीव जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण के साथ-साथ पादप वृद्धिकारक हार्मोन का स्त्रावन भी करता है, जो अंकुरण से लेकर पौधों की वृद्धि में लाभकारी होतें है। यह जैव उर्वरक धान, मक्का, जई, जौ, ज्वार, लघु धान्य फसलें जैसे कोदो कुटकी, रागी आदि एवं चारा वाली फसलों के लिए बहुत ही लाभदायक है।

स्फुर घोलक जीवाणु (पी.एस.बी. कल्चर)

इस कल्चर मे उपस्थित सुक्ष्मजीव मृदा की अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील बनाता है। इस कल्चर के निर्माण मे सामान्यतया स्युडोमोनॉस स्ट्रीयाटा, बेसिलस पॉलीमिक्सा, बेसिलस मेगेटेरियम आदि जीवाणुओं को उपयोग में लाया जाता है। ये जीवाणु अघुलनशील ट्राइकैल्शियम फास्फेट को घुलनशील बनाने में सक्षम होते है। यह कल्चर छत्तीसगढ़ के डोरसा एवं कन्हार जैसे भारी मिट्टियों में स्फुर की उपलब्धता बढ़ाने में उपयोगी है। धान जिसे जल भराव वाले खेतों में उगाया जाता है. ऐसे खेतो के लिए पी.एस.बी. का बेसिलस पॉलीमिक्सा, बेसिलस मेगेटेरियम प्रजातियों अन्य के अपेक्षा ज्यादा प्रभावी पाए गए है जबकि जल भराव रहित एरोबिक खेतों मे पी. एस. बी. की स्युडोमोनास स्ट्रीयाटा प्रजाति उपयुक्त पाई गई है।

पीएसबी से सम्बन्धित अन्य महत्वपूर्ण बातें इस प्रकार है-

(1) अम्लीय मृदाओं में पी.एस.बी. उपयोग करने की प्रायः सिफारिश नहीं की जाती है ।
(2) डोरसा एवं कन्हार मृदाओं में यह अघुलनशील स्फुर (फास्फेट) को घोलकर फसल के लिये स्फुर की उपलब्धता बढ़ता हैं ।
(3) मृदा में जैविक पदार्थों की पर्याप्त उपलब्धता से पी.एस.बी. द्वारा फॉस्फेट घुलन क्रिया अधिक होती है तथा राइजोबियम युक्त चा आदि हरी खाद के उपयोग से भी पी.एस.बी. की फास्फेट घोलक किया की गति बढ़ती है ।
(4) वायुमंडलीय नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु जैसे राइजोबियम, एजोस्पाइरिलम आदि की क्रियाशीलता को पी.एस.बी. बढ़ा देता है।

धान हेतु उपयुक्त जैव उर्वरक

धान की जैविक खेती में जैव उर्वरकों का उपयोग: भूमि की उर्वरा शक्ति एवं उपजाऊपन बरकरार रखने (टिकाऊपन) तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु जैविक उर्वरकों का विशेष महत्व है। जैव उर्वरकों का जैविक खादों के साथ-साथ प्रयोग जैविक खेती में किया जा सकता है जिससे मिट्टी की जैविक, भौतिक एवं रासायनिक स्थिति सुधरती है। जैविक उर्वरकों की क्षमता बढ़ाने के लिए इनके साथ जैविक खादों का प्रयोग जरूरी है। जैविक खाद जैसे-कम्पोस्ट, गोबर खाद, हरी खाद वर्मी कम्पोस्ट, मुर्गी खाद आदि का उपयोग करने से खेत का उपजाऊपन लम्बे 7 समय तक बनाये रखा जा सकता है। साथ ही साथ खेत के मिट्टी में पाये 7 जाने वाले फसल लाभदायी सूक्ष्मजीवों का भरण-पोषण की व्यवस्था भी 7 बनाये रखी जा सकती है। छत्तीसगढ़ की मिट्टयों में नत्रजन एवं स्फुर की कमी को ध्यान में रखते हुए फसल लाभदायी सूक्ष्मजीवों से बने जैविक 7 उर्वरक जैसे-नीलहरित काई, एजोस्पाइरिलम एवं पी.एस.बी. कल्चर आदि का उपयोग धान के लिए अत्यधिक लाभप्रद है । धान छत्तीसगढ़ की प्रमुख फसल है। इसके उत्पादन हेतु नत्रजन स्फूर एवं पोटाश तत्वों की भरपुर आवश्यकता होती है। नत्रजन एवं स्फुर तत्वों की भूमि में कमी के कारण धान की उत्पादकता बुरी तरह प्रभावित होती है। जैविक धान उत्पादन हेतु पोषक तत्वों का सही प्रबंधन आवश्यक है। इस हेतु जैविक खाद के साथ-साथ विभिन्न जैव उर्वरको का उपयोग करें। जैविक उर्वरको की खेतो में उत्तम क्रियाशीलता हेतु जैविक खाद लाभप्रद है। जैविक खाद का मिट्टी में उपस्थिति से जैव उर्वरको में उपस्थित लाभदायक सूक्ष्मजीव गुणन कर अपनी संख्या मिट्टी में कई गुणा बढा लेते है। इससे मिट्टी की स्वास्थ्य भी उत्तम हो जाती है।

पोटाश घोलक जीवाणु (के.एस.बी.)

मिट्टी में पाये जाने वाले पोटाश के स्त्रोत जैसे माइका आदि में उपस्थित अघुलनशील पोटाश को घोलकर पौधों को उपलब्ध कराने वाले जीवाणुओं के कल्चर को पोटाश घोलक जीवाणु उर्वरक के रूप में जाना जाता है। पोटाश घोलक जीवाणु जैव उर्वरक जैसे स्युडोमोनास स्पीसीज, बुरखोल्डेरिया स्पीसीज, बेसिलस म्युसीलेजिनस, एसिडोथायोबेसिलस फैरोआक्सीडेंस आदि प्रमुख पोटाश घोलक जीवाणुओं के रूप में चिन्हित किए गए है। ये जीवाणु मृदाओं में विशेषकर हल्की मृदाओं जैसे मटासी (इनसेप्टीसाल) आदि में पोटाश की उपलब्धता बढ़ाने के लिए विशेष उपयोगी पाए गए है। फसल उत्पादन के दौरान पोटाश घोलक जीवाणु 7 जैविक उर्वरक के प्रयोग से फसल उत्पादन मे लगभग 10 प्रतिशत तक वृद्धि प्राप्त की जा सकती है।

जिंक घोलक जीवाणु (जेड.एस. बी.)

मिट्टी में पाये जाने वाले जिंक के स्त्रोत जैसे जिंक आक्साइड, जिंक कार्बोनेट, जिंक सिलिकेट आदि में उपस्थित अघुलनशील जिंक को घोलकर पौधों को उपलब्ध कराने वाले जीवाणुओं के कल्चर को जिंक 7 घोलक जीवाणु उर्वरक के रूप में जाना जाता है। जिंक घोलक जीवाणु स्युडोमोनास स्पीसीज, बेसिलस स्पीसीज आदि प्रमुख जिंक घोलक जीवाणु समूहों के रूप में चिन्हित किए गए है। ये जीवाणु मृदाओं में विशेषकर घुलनशीन जिंक की कमी वाली मृदाओं में जिंक की उपलब्धता 7 बढ़ाने के लिए विशेष उपयोगी पाए गए है। फसल उत्पादन के दौरान जिंक 7 घोलक जीवाणु जैविक उर्वरक के प्रयोग से 2-10 पी.पी.एम. तक मृदा में जिंक की उपलब्धता प्राप्त की जा सकती है जिससे फसल उत्पादन में 7 लगभग 10 पतिशत तक वृद्धि हो सकती है ।

मिलेट्स में अग्रणी बने भारत

रश्मि उपाध्याय पीएचडी, पादप आणविक जीव विज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

एफएओ द्वारा भारत के प्रस्ताव को स्वीकार करने के बाद दुनिया वर्ष 2023 को 'अंतर्राष्ट्रीय बाजरा वर्ष के रूप में मनाने के लिए तैयार है। भारत के प्रस्ताव को दिसंबर 2018 में एफएओ परिषद में अनुमोदित किया गया था। हरित क्रांति जिसने हमें खाद्यान्न में आत्मनिर्भर बनाया था उसका विकास कुछ फसलों की तरफ़ हो गया और इसका खामियाज़ा कई देसी फ़सलों को भुगतना पड़ा। हालांकि भारत की कुछ जनजातियों और समाजों के साथ सांस्कृतिक जुड़ाव के कारण बाजरा जीवित रहने में सक्षम रहा है। दूसरे लघु मिलेट्स के मुकाबले ओडिशा, कर्नाटक और मध्य प्रदेश जैसे राज्यों द्वारा रागी, ज्वार, कोदो, और कुटकी जैसे कुछ मोटे अनाजों को प्रमोट करने में अहम भूमिका रही है। यह मिलेट्स स्टोरी में हरित क्रांति की गलती जैसा ही है। यहां एकमात्र अंतर यह है कि बाजरा लहर के माध्यम से जीवित रहने में सक्षम था, विडंबना यह है कि कठोर बीज कोट के कारण इसे मोटे अनाज के रूप में नामित किया गया था और यहां तक कि इसे अनाथ फ़सल भी कहा गया।

भारत और मिलेट्स

भारत, विश्व स्तर पर बाजरा का 5वां सबसे बड़ा निर्यातक है, बाजरा से जुड़े ज्ञान और इसके लाभ को बढ़ावा देने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं। इनमें सेंटर फॉर एक्सीलेंस की स्थापना, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम में पोषक - अनाजों का एकीकरण और कई राज्यों में मिलेट मिशन की स्थापना आदि शामिल है। बाजरा में उच्च पोषण संबंधी विशेषताएं और स्वास्थ्यवर्धक गुण होते हैं और कम से कम पानी और निवेश के साथ इसकी खेती की जा सकती है। यह शुष्क क्षेत्रों में या कम उर्वरता वाली भूमि पर भी अच्छी तरह से बढ़ सकता है। इसके अलावा, बाजरा लगभग 65 दिनों में कटाई के लिए तैयार फसल के रूप में विकसित हो जाता है । यह बाजरा की एक महत्वपूर्ण विशेषता है क्योंकि यह खाद्य सुरक्षा के मुद्दों को हल करने में मदद कर सकता है, विशेष रूप से दुनिया के घनी आबादी वाले क्षेत्रों में. वैश्विक स्तर पर पोषक अनाज की मांग लगातार बढ़ने के साथ, वाणिज्य विभाग को उम्मीद है कि आने वाले वर्षों में बाजरा निर्यात में तेजी से वृद्धि होगी क्योंकि भारतीय निर्यातकों को विदेशों में नए बाजार मिलने की संभावना हैं। 2020 के आंकड़ों के अनुसार, वर्तमान में भारत दुनिया में बाजरा का पांचवां सबसे बड़ा निर्यातक है, 2020 तक समाप्त होने वाले पिछले पांच वर्षों में निर्यात लगातार लगभग 3 सीएजीआर से बढ़ रहा है। 2020-21 में, भारत ने 2019-20 में 28.5 मिलियन अमरीकी डालर के मुकाबले 26.97 मिलियन अमरीकी डालर के बाजरा का निर्यात किया। बाजरा का विश्व निर्यात 2019 में 380 मिलियन अमरीकी डालर से बढ़कर 2020 में 402.7 मिलियन अमरीकी डालर हो गया है। बाजरा के प्रमुख निर्यातक देश संयुक्त राज्य अमेरिका, रूसी संघ, यूक्रेन, भारत, चीन, नीदरलैंड, फ्रांस, पोलैंड और अर्जेंटीना हैं। एक साथ इनका बाजरा निर्यात 2020 में 221.68 मिलियन अमरीकी डालर रहा । 2020 में बाजरा का वैश्विक निर्यात 466. 284 मिलियन अमरीकी डालर रहा। 2020-21 में भारत से बाजरा के शीर्ष तीन आयातक देशों में नेपाल (6.09 मिलियन अमेरिकी डॉलर), संयुक्त अरब अमीरात (4.84 मिलियन अमेरिकी डॉलर) और सऊदी अरब (3.84 मिलियन अमेरिकी डॉलर) थे। भारत के बाजरा निर्यात की शीर्ष दस सूची में अन्य सात गंतव्य देश लीबिया, ट्यूनीशिया, मोरक्को, यूके, यमन, ओमान और अल्जीरिया हैं। कुल मिलाकर, इन दस देशों ने भारत से 22.03 मिलियन अमेरीकी डालर मूल्य के बाजरा का आयात किया था। डीजीसीआईएस के आंकड़ों के अनुसार, अन्य देशों ने भारत से 5.13 मिलियन अमरीकी डालर के बाजरा आयात का हिसाब लगाया, जो 2020-21 में भारत से आयात का कुल योग 27.43 मिलियन अमेरीकी डालर था। विभिन्न प्रकार के बाजरा में ज्वार, बाजरा, फिंगर मिलेट (रागी), माइनर मिलेट (कुटकी), माइनर मिलेट (समाई), फॉक्सटेल मिलेट (कंगनी), प्रोसो मिलेट (बर्री), बार्नयार्ड मिलेट (झंगोरा), कोदो मिलेट (कोडरा), दो लघु बाजरा (बकवीट और कुट्टू), अमरंथस (चौलाई) और अन्य बाजरा शामिल हैं। विश्व आयात में अपने हिस्से (2020) के साथ बाजरा के शीर्ष आयातक इंडोनेशिया (8%), बेल्जियम (7.36%) जर्मनी (4.65), मैक्सिको (4.1%), इटली (4.02%), संयुक्त राज्य अमेरिका (3.35%) यूनाइटेड किंगडम (3.25%) ब्राजील (3.24%) और नीदरलैंड (3.14%) हैं। साल 2020 में दुनिया के 466.3 मिलियन अमरीकी डालर के आयात में से शीर्ष दस आयातकों ने 221.7 मिलियन अमरीकी डालर का आयात किया। यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि भारत सालाना 12 मिलियन मीट्रिक टन बाजरा का उत्पादन करने वाले 41 फीसदी के विश्व उत्पादन हिस्से का दावा करने के बावजूद इनमें से केवल एक देश को ही निर्यात करता है। इसके विस्तार के लिए, कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (APEDA) भारतीय निर्यातकों द्वारा बाजरा के शिपमेंट को सुविधाजनक बनाने और उन्हें नए बाजारों में प्रवेश करने में मदद करने की दिशा में आक्रामक रूप से काम कर रहा है। चूंकि कोविड-19 के प्रकोप के कारण भौतिक प्रदर्शनियों और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेलों का आयोजन संभव नहीं हुआ, इसलिए एपीडा ने निर्यातकों, उत्पादक संगठनों और अंतरराष्ट्रीय खरीदारों के बीच बातचीत की सुविधा के लिए अपना वर्चुअल ट्रेड फेयर (वीटीएफ) एप्लिकेशन विकसित किया है। बाजरा जैसे पोषक अनाज के उत्पादन और निर्यात को बढ़ावा देने के लिए वित्त मंत्री श्रीमती निर्मला सीतारमण ने अपने केंद्रीय बजट (2022-23) के भाषण में, घरेलू और साथ ही वैश्विक बाजारों में बाजरा उत्पादों की कटाई के बाद के मूल्यवर्धन और ब्रांडिंग के लिए सहायता की घोषणा की। आने वाले वर्षों में इन पहलों के प्रभाव अभी देखे जाने हैं जब भारत दुनिया में बाजरा व्यापार का प्रमुख हिस्सा प्राप्त करेगा।

नीतियां और मिशन: सरकार ने बाजरा को बढ़ावा देने के लिए कई कदम उठाए हैं। घरेलू और वैश्विक मांग पैदा करने और लोगों को पोषण आहार उपलब्ध कराने के लिए 2018 में बाजरा का राष्ट्रीय वर्ष मनाया गया। बाजरा के पोषण मूल्य को देखते हुए सरकार ने बाजरा को अप्रैल, 2018 में पोषक अनाज के रूप में बाजरा को भी अधिसूचित किया। बाजरा को पोषण मिशन अभियान के तहत शामिल किया गया है। बाजरा मूल्य श्रृंखला को विकसित करने के लिए 500 से अधिक स्टार्टअप काम कर रहे हैं, साथ ही भारतीय बाजरा अनुसंधान संस्थान ने **RKVY-RAFTAAR** के तहत 250 स्टार्टअप को इनक्यूबेट किया है। 66 से अधिक स्टार्टअप्स को 6.2 करोड़ रुपये से अधिक का वितरण किया गया है जबकि लगभग 25 स्टार्टअप्स को और फंडिंग के लिए मंजूरी दी गई है। बाजरा और इसके मूल्य वर्धित उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देने के लिए वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार ने अपने शीर्ष कृषि निर्यात प्रोत्साहन निकाय, कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण **(APEDA)** के माध्यम से एक व्यापक रणनीति तैयार की है। दिसंबर 2022 से दुनिया भर में भारतीय बाजरा के निर्यात को बढ़ावा देने के लिए APEDA ने बाजरा और इसके मूल्यवर्धित उत्पादों को विभिन्न वैश्विक प्लेटफार्मों जैसे कि गल्फफूड 2023, फूडेक्स, सियोल फूड एंड होटल शो, सऊदी एग्रो फूड, सिडनी में फाइन फूड शो, बेल्जियम का फूड एंड बेवरेजेज शो, जर्मनी का बायोफैक और अनुगा फूड फेयर, सैन फ्रांसिस्को का विंटर फैन्सी फूड शो में प्रदर्शित करने की योजना बनाई है ताकि विदेशी मार्केट तक पहुँच बनाई जा सके।

अब तक क्या हासिल हुआ है: भारत के शीर्ष पांच बाजरा उत्पादक राज्य राजस्थान, महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात और मध्य प्रदेश हैं। बाजरा के निर्यात का हिस्सा कुल बाजरा उत्पादन का लगभग 1 प्रतिशत मात्र है। भारत से बाजरा के निर्यात में मुख्य रूप से साबुत अनाज शामिल है और भारत से बाजरा के मूल्यवर्धित उत्पादों का निर्यात नगण्य है। भारत दुनिया में बाजरा के प्रमुख उत्पादक देशों में से एक है। एफएओ के अनुसार, वर्ष 2020 में बाजरा का विश्व उत्पादन 30.464 मिलियन मीट्रिक टन (एमएमटी) था और भारत की हिस्सेदारी 12.49 एमएमटी थी, जो कुल बाजरा उत्पादन का 41 प्रतिशत है। भारत ने 2021-22 में बाजरा उत्पादन में 27% की वृद्धि दर्ज की, जबकि पिछले वर्ष बाजरा उत्पादन 15.92 एमएमटी था।

हमें कहाँ जाने की आवश्यकता: कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय के अनुसार, 2016-2017 में बाजरा की खेती के तहत क्षेत्र में 60त्न कम कवरेज क्षेत्र (14.72 मिलियन हे.) के साथ खपत पैटर्न में बदलाव, गेहूँ और चावल के लिए सिंचित क्षेत्र के रूपांतरण, खेती, बाजरा की अनुपलब्धता, कम उपज, आहार संबंधी आदतें, कम मांग के कारण गिरावट आई है। इससे महिलाओं और बच्चों में विटामिन-ए, प्रोटीन, आयरन और आयोडीन जैसे पोषक तत्वों के स्तर में गिरावट आई, जिससे कुपोषण की स्थिति पैदा हो गई।

कई शिक्षाविदों ने उपभोक्ता मूल्य में निर्माता की हिस्सेदारी लगभग 75% बताई है जबकि शुद्ध मार्जिन उपभोक्ता मूल्य के 19% के क़रीब है। बाजरा के लिए उपभोक्ता मूल्य में उच्च मार्जिन और हिस्सेदारी बहुत अच्छी लगती है लेकिन यह भी इंगित करता है कि मूल्यवर्धन के लिए कई हितधारक मौजूद नहीं हैं। अगर हम उन्हें दुनिया भर के समुदायों की खाने की आदतों में बाजरा को शामिल करना चाहते हैं तो इस पर सबसे ज्यादा ध्यान देने की ज़रूरत है। भोजन की आदतों की बात करें तो, हमें महाद्वीपों में बाजरा के भूले हुए व्यंजनों की तलाश करनी चाहिए और उन्हें फिर से शुरू करना चाहिए क्योंकि एक बार प्रासंगिक भोजन हमेशा प्रासंगिक रहेगा। बाजरा मूल्य श्रृंखला में विभिन्न बिंदुओं पर समर्थन देने के लिए भारत ने पहले ही बहुत आवश्यक बुनियादी ढांचा स्थापित कर लिया है। भारत में बाजरा निर्यात का समर्थन करने वाले बहुप्रतिष्ठित संगठन हैं। वैश्विक स्तर पर बाजरा में निरंतर नेतृत्व का दावा करने के लिए इसका और अधिक दोहन करने की आवश्यकता है। मध्य प्रदेश में मंडला, डिंडोरी, ओडिशा में मल्कानगिरी, गढ़वाल और कुमाऊं हिमालयास और तमिलनाडु में कोल्ली पहाड़ियों जैसे बाजरा हॉटस्पॉट को विविध-केंद्रित कृषि के लिए बढ़ावा दिया जाना चाहिए। ओडिशा में रागी, कर्नाटक में रागी और ज्वार और मध्य प्रदेश में कोदो और कुटकी का प्रचार अन्य बाजरा की क़ीमत पर नहीं होना चाहिए, बल्कि घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में बड़े बाजरा के साथ-साथ माइनर मिलेट्स को बढ़ावा देने की नीति भारत के बाजरा व्यापार को बढ़ावा देने के समानांतर होनी चाहिए।

सब्जियों में समन्वित कीट प्रबंधन

डॉ. फूल सिंह मरकाम सह प्राध्यापक (उद्यानिकी)
डॉ. पीयूषकांत नेताम सहा. प्राध्यापक (कीट विज्ञान)
रामप्रसाद पोटाई कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र, कांकेर (छ.ग.)

समन्वित कीट प्रबंधन के अंतर्गत कीट नियंत्रण के सरल और प्रभावी तरीको का इस प्रकार समावेश करते हैं कि कीट नियंत्रण प्रभावी हो, सब्जी उत्पादक किसान और उपभोक्ता दोनों लाभान्वित हों और वातावरण भी सुरक्षित रहे। इसके अंन्तर्गत सस्य, भौतिक, यांत्रिक क्रियाओं, जैविक नियंत्रण एवं रासायनिक दवाओं के समुचित चुनाव एवं उनके समावेश द्वारा एकीकृत कीट प्रबधन किया जाता है जिससे मित्र कीटों की संख्या एवं वातावरण की स्वच्छता पर बुरा प्रभाव नहीं पड़ता। रासायनिक कीटनाशियों के अत्यधिक प्रयोग से सब्जियों में हानिकारक दवाओं के अवशेष अधिक मात्रा में पाए जाने के कारण मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है जिससे सब्जियों में समन्वित कीट प्रबंधन के तरीकों को अपनाने की आवश्यकता है।

समन्वित कीट प्रबंधन के तरीकों की सफलता मुख्यतः हानिकारक कीट एवं मित्र कीटों की निगरानी के आधार पर कीट प्रबंधन के तरीकों को उचित समय पर प्रयोग करने के ऊपर निर्भर है। ***समन्वित कीट प्रबंधन के तरीकों का संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है:-***

समन्वित कीट प्रबंधन में सस्य क्रियाओं का महत्व: कीट प्रबंधन में इस घटक के उत्पाद प्रयोग से कोई अतिरिक्त व्यय नहीं होता है एवं यह पर्यावरण को सुरक्षित व अधिक टिकाऊ बनाता है। इसमें सस्य क्रियाओं का चयन ऐसा हो जिससे मित्र कीटों पर अनुकुल प्रभाव पड़े। इसके अंतर्गत फसल-चक्र व अंतः फसलों का सही चुनाव, सहीं किस्मों का चुनाव, बुवाई एवं रोपाई के समय में परिवर्तन आदि शामिल है, जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है:

अवरोधी एवं सहनशील किस्मों का चयन: किसी क्षेत्र के नाशीकीट एवं मित्र कीटों की विविधता एवं संघनता के आधार पर अवरोधी अथवा सहनशील किस्मों का चुनाव एकीकृत कीट प्रबंधन की महत्वपूर्ण कड़ी हैं। इस आधार पर चयनित किस्मों में अपेक्षाकृत कम कीट लगते हैं एवं रासायनिक दवाओं की खपत में भी कमी आ जाती है। यह विधि सबसे सरल, सस्ती और दुष्प्रभाव रहित है।

फसल चक्र: खेत में सब्जियों को लगाते समय उचित फसल-चक्र अपनाना चाहिए अर्थात् एक ही कुल के सब्जी को उसी खेत में दोबारा न लगाएं। इस विधि से कीटों के सतत् जीवन चक्र को अपेक्षाकृत अवरूद्ध किया जा सकता है।

बुवाई व पौध रोपण का समय: कीड़ों के प्रति फसल की नाजुक अवस्था को ध्यान में रखकर फसल की बुवाई तथा रोपाई के समय में परिवर्तन करके अत्यधिक नुकसान से बचा जा सकता है। सब्जियों की बुवाई/रोपाई के समय में परिवर्तन कर लाल भृंग कीट, फल मक्खी, तना एवं फल छेदक कीट के प्रकोप को कम किया जा सकता है। कद्दूवर्गीय सब्जियों की बुवाई नवम्बर में करने से लाल भृंग कीट के आक्रमण से बचा जा सकता है। जबकि करेला में अक्टूबर से पहले फूलने वाली प्रजातियों का चयन करने सें फलबेधक कीट की प्रकोप को कम किया जा सकता है। अतः पौधों की बुवाई/रोपाई ऐसे समय में करे, जब पौधें की नाजुक अवस्थएं एवं नाशीकीट की निष्क्रिय अवस्था समानान्तर हो।

गर्मी की जुताई: ग्रीष्मकाल में गहरी जुताई करके कीड़ों को नष्ट करना कीट नियंत्रण की एक प्रभावी विधि है। कटाई के उपरान्त खेत

की गहरी जुताई करके फल मक्खी, कद्दू का लाल भृंग और कटुआ कीट के जीवन चक्र को नष्ट कर उनकी सक्रियता को समाप्त किया जा सकता है।

कीड़ों को आकर्षित करने वाली दूसरी फसलें: कुछ फसल को कीट मुख्य फसल की अपेक्षा अधिक पसंद करते है। इन फसलों को मुख्य फसल के साथ फसल-जाल के तौर पर लगाया जाता है, जिसमें कीड़े अपेक्षाकृत ज्यादा लगते हैं और उन्हीं पर उनका नियंत्रण कर दिया जाता है ताकि मुख्य फसल हानिकारक कीटों से बच जाए। आकर्षित करने वाली फसलों को मुख्य में लगाकर बिना किसी रसायन का छिड़काव किए प्रमुख फसल को आसानी से कम लागत में उगाया जा सकता है। पत्तागोभी और फूलगोभी में हरी सूंडी (हीरक पृष्ठ कीट) एवं पर्ण जालक कीट के नियंत्रण हेतु सरसों को फसल-जाल के रूप में प्रयोग करके, गोभीवर्गीय फसल को उपरोक्त कीटों के प्रकोप से बचाया जा सकता है। इसी प्रकार से टमाटर में लगने वाली फल छेदक कीट की रोकथाम हेतु टमाटर की फसल के किनारे-किनारे या प्रत्येक 14 लाइन टमाटर के बाद दो लाइन गेंदा को लगाने से फल छेदक कीट तथा पर्ण सुरंगक कीट द्वारा फसल को होने वाली नुकसान से बचाया जा सकता है।

यांत्रिकी नियंत्रण: कुछ कीट जो खुली आंख से साफ दिखाई दें और आसानी से पकड़े जा सकते हो उनको पकड़कर खत्म कर देना चाहिए। कद्दूवर्गीय सब्जियों में लाल भृंग कीट को इस विधि द्वारा आसानी से नष्ट किया जा सकता है। प्रकाश प्रपंच का उपयोग भी कर सकते हैं।

व्यवहारिक नियंत्रण: इस विधि द्वारा प्रौढ़ कीट को भ्रमित किया जाता है। सब्जियों में मुख्य रूप से बैगन का तना एवं फल बेधक, तम्बाकू की सूंडी, टमाटर का फल बेधक,एवं फल मक्खी को फेरोमेन ट्रैप द्वारा फंसाकर प्रौढ़ कीट की अत्यधिक संख्या को कम किया जाता है।

सब्जियों में जैविक नियंत्रण: एकीकृत कीट प्रबंधन के समस्त घटकों में जैविक नियंत्रण सबसे महत्वपूर्ण हैं। किसी भी परिस्थिति में मित्र कीट एवं अन्य सूक्ष्मजीव हानिकाकर कीट की संख्या को प्राकृतिक रूप से सीमित रखते हैं। जैविक नियंत्रण से इन्ही कारकों का प्रभावी ढ़ग से एकीकृत कीट प्रबंधन में प्रयोग होता है एवं मित्र कीटों को सुरक्षित रखने का प्रयास किया जाता है। बहुत सारे मित्र कीट जैसे-परभक्षी/परजीवी कीट प्राकृतिक रूप में पाए जाते है, जो हानिकारक नाशीकीट के विभिन्न अवस्थओं को क्षति पहुचाते है। एक हेक्टेयर टमाटर की फसल को फल छेदक कीट से रोकथाम हेतु 2,50,000 ट्राइकोग्रामा परजीवी कीट का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार क्राइसोपरला कारनिया नामक परभक्षी कीट जो सफेद मक्खी, हरा फुदका माहू आदि का भक्षण करते है, को 50,000 प्रति हेक्टेयर की दर से 10 दिन के अंतराल पर तीन बार खेत में छोड़ने पर उपरोक्त कीटों से फसल को सुरक्षित रखा जा सकता है। मित्र कीटों को प्रयोगशालाओं में अधिक से अधिक उत्पादन करके आवश्यकता अनुसार फसलों पर छोड़कर विषैले रसायनों के उपयोग में कमी लायी जा सकती है।

सूक्ष्म जीव द्वारा फसलों की सुरक्षा: सूक्ष्म जीव कीटनाशियों के अंन्तर्गत जीवाणु, कवक और विषाणु का प्रयोग करके हानिकारक कीड़ों में रोग उत्पन्न कर दिया जाता हैं यह रोग हानिकारक कीड़ों में महामारी की तरह फैलता है और कीड़े मर जाते है। यह कारक रासायनिक दवाओं से सस्ता होता है। इनके प्रयोग करने की विधि आसान है। इस विधि द्वारा कुछ कीटों की रोकथाम की जा सकती है। गोभी का हीरक पृष्ठ कीट, भिण्डी का तना एवं फल छेदक कीट, टमाटर का फलबेधक कीट का नियंत्रण के लिए एच.एन.पी.वी और एस.एन.पी.वी का 250 LE सूंडी समतुल्य घोल का दोपहर के बाद छिड़काव करना विशेष लाभप्रद होता है।

रसायनों का सुरक्षित चयन: रसायनों का अननियमित और अत्यधिक प्रयोग करने से कीटों में प्रतिरोधी क्षमता का विकास होता है और वातावण में हानिकारक रासायनिक अवशेषों की वृद्धि होती है जिससे मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। एकीकृत कीट प्रबंधन में अगर दूसरे कारकों के साथ सही संतुलन बनाकर सुरक्षित रसायनों की सही मात्रा एवं अंतराल में छिड़काव हो तो कीटनाषी रसायन बहुत प्रभावी होते है। विभिन्न कीटनाशियों का अलग-अलग प्रतीक्षाकाल होता हैं दवा छिडकने के बाद प्रतीक्षाकाल के बाद तुडाई करने से रासायनिक अवयवों के अवशेष नहीं रहते है। नीम से निर्मित वानस्पतिक रसायन का प्रयोग करके हरा फुदका, माहों और पर्ण सुरंगक कीटों का नियत्रंण आसानी से किया जा सकता है।

सब्जियों में कीटनाशकों का उपयोग: सब्जियों में कीट नियंत्रण के लिए कीटनाशकों का उपयोग सावधानीपूर्वक तथा कम से कम करना चाहिए। अधिकतर कृषिगत उपायों का अपनाना चाहिए। जैसे-कीटों को हाथ/जाल से पकड़कर नष्ट करना, पौधों के कीटग्रसित भागों तथा फलों को तोड़कर नष्ट करना, अवशेषों को जलाना, सब्जियों की बोने की तिथि में बदलाव, फसल-चक्र का उपयोग, कीट प्रतिरोधी जातियों का चुनाव आदि। सबसे अन्त में जरूरत पड़ने पर कीटनाशकों का उपयोग करें। **सब्जियों में कीटनाशकों का उपयोग करते समय निम्नलिखित सावधनियाँ रखनी चाहिए-**

1. सब्जियों की तुड़ाई करने के बाद ही कीटनाशकों का छिड़काव/भुरकाव करें तथा खेतों में बोर्ड लगा दें 'सावधन कीटनाशक का उपयोग किया गया है'।
2. कीटनाशकों के छिड़काव एवं भुरकाव के बाद लगभग एक सप्ताह तक सब्जियों की उपयोग खाने के लिए न करें।
3. सिर्फ अच्छे निर्माताओं के पैकबंद कीटनाशक ही खरीदे।
4. कीटनाशक के पैकेट/बोतल में लिखे हुये निर्देशों का पालन करें।
5. सब्जियों को हमेशा अच्छी तरह धोकर, छीलकर तथा उबालकर खाना चाहिए।
6. हमेशा सिफारिश किये गये कीटनाशकों की अनुशंसित मात्रा का ही प्रयोग करें।
7. सब्जियों में कीटनियंत्रण के लिए ऐसे कीटनाशकों का चुनाव करना चाहिए जिनका प्रभाव कम समय तक रहता है जैसेः- कार्बेरिल, क्लोरपायरीफास, डायक्लोरवास, डायमिथोएट आदि।
8. एक हेक्टेयर क्षेत्र में कीटनाशक के छिडकाव के लिये कम से कम 600 लीटर पानी का उपयोग करें।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

जैविक अपशिष्ट प्रबंधन

अंकित राय (एम.एससी. कृषि कीट विज्ञान)
कुशल चतुर्वेदी (पीएचडी स्कालर, कृषि कीट विज्ञान)
मो. सलमान (एम.एससी. कृषि कीट विज्ञान), सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मोदीपुरम, मेरठ (उ.प्र.)

नवीन कुमार (सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान)
नेशनल पोस्ट ग्रैजुएट कॉलेज बड़हलगंज, गोरखपुर

आजकल हमारे किसानों को मिट्टी की उर्वरता कम होने, खराब स्वास्थ्य, फसल कीट और असंतोषजनक उत्पाद की गुणवत्ता जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। ये किसान की आर्थिक समृद्धि में बाधाएं पैदा करते हैं। विभिन्न प्रकार के विघटित खाद, अत्यधिक रासायनिक उर्वरक और कीटनाशकों के अंधाधुंध उपयोग से मिट्टी की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इसलिए, खेत में मिट्टी की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए उपलब्ध जैविक अपशिष्ट जैसे फसलों से प्राप्त जैविक कचरे, पशु गोबर खाद को मिलाना बहुत आवश्यक है। खेतों में उपलब्ध जैविक कचरे और फसल अवशेषों के उचित प्रबंधन के कई आधुनिक तरीके हैं। इन के माध्यम से, गुणवत्ता युक्त खाद कम समय में आसानी से तैयार किया जा सकता है। इसका उपयोग करके, रासायनिक उर्वरकों पर किसानों के खर्च को कम करके बेहतर गुणवत्ता की उपज प्राप्त कर सकते हैं।

केंचुआ खाद अपशिष्ट प्रबंधन

कार्बनिक पदार्थ को भोजन के रूप में खा कर पचाने के बाद केंचुए द्वारा प्राप्त अपशिष्ट पदार्थ को वर्मी काम्पोस्ट या केंचुआ खाद कहते हैं। यह ह्यूमस और पोषक तत्वों से भरा होता है। केंचुओं को किसान और मित्र और प्राकृतिक हलूवाई भी कहा जाता है। गाय के गोबर और मिट्टी के मिश्रण के साथ एक कृत्रिम संरचना में भोजन के रूप में केंचुओं को फसल के अवशेष, कूड़े, कचरा, खरपतवार, सड़े हुए पत्ते, फलों और सब्जियों एवं रसोई अपशिष्ट और अन्य शहरी/ग्रामीण अवशेषों को भोजन के रूप में प्रदान करके। केंचुआ खाद प्राप्त होती है।

केंचुआ खाद अपशिष्ट प्रबंधन की संरचना

स्थायी और अस्थायी ढांचों का उपयोग केंचुआ खाद को एक साथ रखने के लिए किया जा सकता है। अस्थायी ढांचों 2.5 फीट ऊंची और 3 फीट चौड़ी होती हैं, जिनकी लंबाई आवश्यकता और स्थान की उपलब्धता के अनुसार बनाई जा सकती है। इमारतों का निचला भाग ढलानदार होना चाहिए और नीचे एक कोने में एक छेद छोड़ना चाहिए ताकि अतिरिक्त पानी इसके माध्यम से निकल सके।

केंचुआ खाद अपशिष्ट प्रबंधन

सभी एकत्रित केंचुओं के निश्चित गणना संख्याओं को अर्धविघटन के लिए लगभग 20 दिनों के लिए अपशिष्टों के ढेर में छोड़ दें। इस समय ढेर पर सूखे पशुओं के गोबर या बायोगैस घोल का छिड़काव करने से अपघटन तेज हो जाता है। इस्तेमाल किया जाने वाला गोबर ताजा होना जरूरी नहीं है, बल्कि सूखा या कुछ दिन पुराना भी हो सकता है। केंचुओं के प्रक्षेपण के लिए अर्ध-विघटित संसाधनों का तापमान 12-21 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त है।

संरचना कार्बनिक अपशिष्ट प्रबंधन की पूर्ति

संरचना के तल पर 3-5 सेमी. मिट्टी की परत बिछाने के बाद, गड्ढे उसके ऊपर अर्ध-विघटित सामग्री से भरा जाता है। केंचुआ अपनी त्वचा के माध्यम से श्वसन करते हैं, इसलिए संरचना में 50-60 प्रतिशत नमी होनी चाहिए. इसके लिए समय-समय पर पानी छिड़कना चाहिए।

केंचुओं का चयन

सतह पर रहने वाले केवल केंचुओं का चयन करना चाहिए। इसके लिए मुख्य रूप से तीन प्रकार के केंचुए उपयोग करते हैं। इनमें अफ्रीकी केंचुआ, लाल केंचुए और एशियाई केंचुए शामिल हैं। इनमें से, अफ्रीकी केंचुआ सबसे उपयुक्त हैं, क्योंकि वे कम समय में अधिक खाद बनाते हैं। वे खाद की अवधि के दौरान बड़ी मात्रा में नए केंचुओं को भी जन्म देते हैं।

धान के पुआल और गेहूं के अवशेष का उपयोग

जैविक अपशिष्ट प्रबंधन- पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों में, जहाँ धान और गेहूं की कटाई संयुक्त हार्वेस्टर से की जाती है, खेतों में बड़ी मात्रा में फसल अवशेष बचे रहते हैं। इसके कारण, किसानों को अगली फसल के लिए खेत की तैयारी और बुवाई के दौरान बहुत सारी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस समस्या को दूर करने के लिए, किसान आमतौर पर खेतों में आग लगाकर फसल के अवशेषों को जलाते हैं, जो कि गेहूं की मात्रा के मामले में लगभग 5.5-6.0 टन प्रति हेक्टेयर है। इस तरह, खेतों में फसल के अवशेषों को जलाने से भूमि की उर्वरता नष्ट हो जाती है और पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचता है। इन सभी समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए, फसल के अवशेषों को डी-कंपोजर का छिड़काव करके छायादार स्थान पर खेत के बाहर एकत्रित कर ढेर लगाना चाहिए। इस तरह, लगभग 45-60 दिनों में, यह ढेर अच्छी खाद बन जाता है, और फसल अवशेषों का प्रबंधन आसान हो जाता है।

केंचुओं को ढेर में छोड़ना

केंचुओं को ढेर के सतह पर छोड़ दिया जाना चाहिए। वे स्वचालित रूप से नीचे जाते हैं, कार्बनिक पदार्थ खाते हैं। केंचुओं को छोड़ने के बाद, उन्हें गीले बोरी के साथ कवर करना चाहिए। लगभग 1000 केंचुओं को एक मीटर लंबाई, एक मीटर चौड़ाई और आधा मीटर ऊंचाई की आवश्यकता होती है।

सावधानियां

संरचनाओं को छायादार स्थान पर ढूंढना चाहिए या कृत्रिम छाया प्रदान करनी चाहिए। केंचुओं को चूहों, कुत्तों, बिल्लियों, मोरों, पक्षियों, मुर्गियों आदि से बचाएं। कार्बनिक पदार्थ, चींटियों, दीमक और मक्खियों से मुक्त होना चाहिए। ऑर्गेनिक वेस्ट मैनेजमेंट मिट्टी की संरचना, बनावट, वायु परिसंचरण और जल धारण क्षमता को बढ़ाता है, इसके भंडारण, रखरखाव और उपयोग गोबर खाद की तुलना में आसान है, यह रोगजनकों से मुक्त है, विषाक्त तत्व, और खरपतवार के बीज, और केंचुआ खाद पोषक तत्वों के नुकसान को कम करते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

ग्रामीण विकास में संचार एवं प्रोद्यौगिकी की भूमिका

नवनीत मौर्य शोध छात्र, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

हिमांशु पाण्डेय यंग प्रोफेशनल, द्वितीय भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उ.प्र.)

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान हैं 80 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण जनसंख्या कृषि और इससे सम्बंधित क्षेत्रों पर निर्भर है। कृषि में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) का व्यापक प्रयोग से ना केवल किसानों को सही समय पर सूचनाएं मिल रही हैं बल्कि उन्हें निर्णय लेने में भी मदद कर रही हैं सूचना एवं संचार प्रोधोगिकी से कृषि और ग्रामीण विकास को बढ़ावा, जीवन के सभी क्षेत्रो, प्रौद्योगिकियों में प्रगति के कारण, उच्च गति वाले विश्वसनीय कंप्यूटर बन गए हैं द्य सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग से बड़ी मात्रा में जानकारी को संग्रहित करके किसानों तक जानकारी पहुंचाने के लिए मोबाइल और इंटरनेट प्रौद्योगिकियों को साथ मिलाकर प्रयोग किया जा रहा है आई सी टी के प्रयोग से छोटे और सीमांत किसानों के जीवन स्तर में सुधार हो रहा है इससे किसानो के बीच आधुनिक ज्ञान का हस्तांतरण से उनकी फसल उत्पादकता में बढ़ोतरी होने से उनके जीवन स्तर में सुधार हो रहा है।

किसानों को आधुनिक जानकारी पहुंचाने में अनुसंधान प्रयोगशालाओं में काम करने वाले वैज्ञानिकों से लेकर विस्तार अधिकारी मुख्य भूमिका निभाते है इसमें मुख्य चरण निम्न हैं- **ज्ञान सृजनकर्ता:** इसमें नवाचार ज्ञान वैज्ञानिक समुदाय द्वारा उत्पन्न किया जाता है जो राज्य कृषि विश्वविद्यालयों, राष्ट्रीय स्तर के वैज्ञानिक, शोधकर्ता और कृषक समुदाय द्वारा जानकारी को किसानों के अनुरूप एकीकृत किया जाता है।

ज्ञान भण्डारण: इसमें जानकारीयो को संग्रहित किया जाता है जैसे शोध प्रकाशन, इंटरनेट आधारित डिजिटल रिपॉजिटरी, कंप्यूटर आधारित कियोस्क, ऑडियो वीडियो सीडी, डीवीडी आदि। खुली शिक्षा और जानकारी साझा करने हेतु मेटा-मॉडल और स्थानीय स्तर पर सामग्री विकसित की गई है कृषि से संबंधित एग्रोपेडिया एक ऐसा इंटरनेट आधारित कृषि ज्ञान भंडार है जिसमें विभिन्न प्रकार के उपयोगकर्ताओं हेतु स्थानीय स्तर पर सामग्री हेतु आधार विकसित किया गया हैं इसमें कृषि संस्थानों जैसे- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, केंद्रीय समुद्री मत्स्य अनुसंधान संस्थान, भारतीय चारागाह अनुसंधान संस्थान जैसे संस्थानों से कृषि की आधुनिक जानकारी को प्राप्त करके किसानो के बीच पहुंच को आसान बना रहा हैं।

ज्ञान का वितरण और उपयोग: इसमें कृषि संस्थानों से प्राप्त आधुनिक जानकारी को कृषि प्रतिकाओ, विस्तार कार्यकर्ताओ के माध्यम से, रेडियो और टीवी कार्यक्रम के माध्यम से किसानों तक पहुंचाया जाता हैं आधुनिक समय में किसान बंधु मोबाइल ऐप्स के माध्यम से भी कम समय में सम्पूर्ण फसल की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

कृषि और ग्रामीण विकास में सूचना एवं संचार प्रोधोगिकी का योगदान: आईसीटी ग्रामीण विकास के साथ ही कृषि के संपूर्ण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा हैं ये कृषि के विभिन्न आयामों जैसे अनुसंधान, शिक्षा और विस्तार, कृषि व्यवसाय, कृषि विपणन और महिला सशक्तिकरण शामिल हैं।

कृषि अनुसंधान और विस्तार में सूचना एवं संचार प्रोधोगिकी की भूमिका: कृषि अनुसंधान में किसानों तक सूचनाओं को मोबाइल संदेशो, रेडियो वेब आधारित माध्यमो से ना केवल पहुँच आसान होने के साथ ही कम समय में किसानों तक पहुंच जाती हैं जिससे वो सही समय पर सही निर्दय लेकर नुकसान से बचाव कर सकता हैं।

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का ग्रामीण और कृषि शिक्षा में योगदान: ग्रामीण और शिक्षा क्षेत्र के विकास में सूचना एवं संचार प्रोधोगिकी का महत्वपूर्ण योगदान है इसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में शैक्षिक कार्य को बढ़ावा देने के साथ ही वंचित ग्रामीण जनसंख्या को शिक्षा के अवसर प्रदान करना हैं।

विपणन और मूल्य श्रृंखला प्रबंधन में सूचना एवं संचार प्रोधोगिकी का योगदान: किसानों को उपज का मंडी भाव आसानी से मोबाइल के माध्यम से ही संपूर्ण जानकारी बिना समय गवाये आसानी से प्राप्त हो जाती हैं इसमें ई-चौपाल के माध्यम से किसान बंधु अपनी उपज को आसानी से दूसरे राज्य में स्थित खरीददार को बेचने के साथ ही ऑनलाइन भुगतान भी प्राप्त हो जाता हैं।

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार की योजनाएं

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केंद्र: इसका योजना का उद्देश्य एकल खिड़की की सहायता से किसानों को कृषि की समस्याओं और अनुसंधान संस्थान के बीच माध्यम का कार्य करना जिससे किसान की समस्या का समाधान और निर्णय लेने में मदद हो सके।

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केंद्र के कार्य: • मिट्टी और जल परीक्षण, पौधे और पशुधन स्वास्थ्य के लिए सेवाएँ प्रदान करना। • किसानों को कृषि संस्थानों में उपलब्ध बीज, रोपण सामग्री, मुर्गी पालन, पशुधन नस्ल, मछली बीज, प्रसंस्कृत उत्पाद की आपूर्ति करना हैं।

कृषि विज्ञान केन्द्र: इसका उद्देश्य किसानो को जिले स्तर पर कृषि उपयोगी सभी कार्यो की जानकारी उपलब्ध कराना हैं आमतौर पर एक स्थानीय कृषि विश्वविद्यालय के साथ जुड़े होते हैं ये कृषि अनुसंधान परिषद और किसान के बीच अंतिम कड़ी के रूप में कार्य करते हैं द्य इसमें गृह विज्ञान कृषि प्रसार कीट विज्ञान, रोग विज्ञान, मृदा विज्ञान के विषय वस्तु विशेषज्ञो द्वारा कृषि समस्याओं का समाधान किया जाता हैं।

कृषि विज्ञान केन्द्र के उद्देश्य: नवीनतम कृषि प्रौद्योगिकी के विकास एवं उसके तुरंत विस्तार हेतु और समय अंतराल को कम करने की नजर से किसानों के साथ सरकारी विभागों जैसे-कृषि, बागवानी, मत्स्य, पशु विज्ञान और गैर-सरकारी संगठनों के कार्यकर्ताओं के समक्ष प्रदर्शन का आयोजन करना • किसानों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति के अनुसार प्रौद्योगिकियों का परीक्षण और सत्यापन करना • फसल उत्पादन में कमी और प्रौद्योगिकियों की कार्यछमता संशोधन के लिए शोध करना • किसानों, कृषक महिलाओं, ग्रामीण युवकों और प्रक्षेत्र स्तर पर कार्यरत प्रसारकर्ताओं को आधुनिक प्रोधोगिकी का प्रशिक्षण प्रदान करना। • जिला स्तरीय विकास विभागों जैसे-कृषि, बागवानी, मत्स्य, पशु विज्ञान और गैर-सरकारी संगठनों और उनके प्रसार कार्यक्रम को प्रशिक्षण देना और संचार को बढ़ावा देना।

ई- चौपाल: इसकी शुरुआत आईटीसी लिमिटेड के द्वारा अंतरराष्ट्रीय व्यापार प्रभाग द्वारा जून 2000 में छह राज्यों में की गई इसका उद्देश्य किसानो को कृषि से सम्भंदित सभी जानकारी मौसम की जानकारी, फसल भाव की जानकारी चौपाल कार्यकर्ता के माध्यम से देना है

ई- चौपाल के उद्देश्य: • किसानों को कृषि के आधुनिक तरीको को सिखाना • प्रत्येक गांव में इंटरनेट की सुविधा प्रदान करना • किसानों की आय को बढ़ाना • कृषि से सम्भंदित दस्तावेजो को इंटरनेट पर उपलब्ध करवाना। • किसानों को अन्य राज्यों से जोड़ना, ग्रामीण परिवेश को बदलना।

कृषि विपणन सूचना नेटवर्क: ये विपणन और निरीक्षण निदेशालय, राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केंद्र का एक संयुक्त उद्यम है इसका उद्देश्य राष्ट्रव्यापी सूचना नेटवर्क स्थापित करके विपणन गतिविधियों की सूचना जैसे बाजार से बेचे गए और उपलब्ध मात्रा की जानकारी प्रदान करना है।

कृषि विपणन सूचना नेटवर्क के कार्य • जानकारी को संग्रह करने के लिए एक राष्ट्रव्यापी बाजार सूचना नेटवर्क स्थापित करना • कुशल और समय बेहतर उपयोग के लिए बाजार की जानकारी और मूल्य प्रसार से संबंधित जानकारी के संग्रह और प्रसार की सुविधा प्रदान करना • किसानों की बाजार तक पहुंच को आसान बनाना।

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी भारत में चुनौतियां: भारत में वैज्ञानिक अनुसंधानों को किसान के खेतों तक पहुंचाने में सार्वजनिक और निजी क्षेत्र की पहल की जा रही हैं जिसका उद्देश्य आधुनिक अनुसंधानों को समान रूप से सभी किसानों तक पहुँचाना हैं पर आजादी के 75 साल बाद भी सभी गांव तक संचार के साधन उपलब्ध नहीं पाये हैं इसलिए ग्रामीण जनसंख्या को इंटरनेट से जोड़ना एक चुनौती है इसके मुख्य कारण निम्न हैं- • बिजली की कमी और कम आपूर्ति होने के कारण और वैकल्पिक बिजली स्रोतो की उच्च लागत होना भी मुख्य कारण हैं। • ग्रामीण भारत के लोगो की मध्यम आय होने के कारण आधुनिक डिजिटल उपकरणो तक पहुँच ना होना हैं • कृषि की उन्नत तकनीकों को साझा करने में खराब तंत्र मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं। • वैज्ञानिक अनुसंधान और जमीनी स्तर पर स्थित विस्तार कार्यकर्ताओं के बीच इंटरनेट की साक्षरता का अभाव

भारत में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने के अवसर: सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी से प्रसार कार्यकर्ताओं और किसानो के बीच अन्तर कम हो रहा हैं जिससे कृषि को बढ़ावा मिल रहा हैं कृषि विस्तार सूचना वितरण प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इससे कृषि अनुसंधान और विकास की प्रक्रिया अधिक समावेशी बन गई है इसके अलावा डिजिटल कृषि को बढ़ावा मिलने से कृषि अनुसंधान एवं विस्तार के कार्यो को बढ़ावा मिल रहा हैं।

• डिजिटल कृषि का उद्देश्य किसानों को मोबाइल के माध्यम से कृषि के विभिन्न पहलुओं पर मौसम, बाजार और कृषि कार्यों की जानकारी, बागवानी और पशुपालन, मौसम पूर्वानुमान के अलावा कीट और रोग नियंत्रण की सूचनाये, फसल की जानकारी कम समय में पहुचाना हैं। • किसानों को दिया गया (डीएआरई रिपोर्ट, जमीनी स्तर पर किसानों के लिये हितकारी निजी क्षेत्र की सूचना एवं संचार प्रोधोगिकी आधारित कार्य किये जा रहे है जैसे ई-चौपाल इस प्रकिया में जमीनी स्तर पर कृषि ज्ञान के प्रसार का कार्य कर रहा हैं • डिजिटल कृषि की प्रकिया में कृषि मंत्रालय और इससे संभंदित विभाग सूचना एवं संचार प्रोधोगिकी को बढ़ावा देने के लिये निरंतर प्रयास किये जा रहे है जिससे कम लागत पर ग्रामीण आबादी को प्रोधोगिकी का लाभ दिया जा सके।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

एवोकैडो की खेती और इसका महत्व

मोहम्मद फैजान हुसैन, सुहेल इराकी
सैम हिग्गिनबाटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय प्रयागराज (उ.प्र.)

अतुल यादव आचार्य नरेन्द्र देव कृषि, प्रोद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या

आयशा नसीम इंदरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छत्तीसगढ़)

परिचय

एवोकाडो (पर्सिया अमेरिकाना) लॉरेल परिवार (लॉरेसी) का एक मध्यम आकार का सदाबहार पेड़ है। इसकी उत्पत्ति मेक्सिको और मध्य अमेरिका में हुई। फलों में एवोकाडो सबसे अधिक पौष्टिक होता है। इसमें गूदा प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जिसमे प्रोटीन (4 प्रतिशत तक) और वसा (30 प्रतिशत तक), लेकिन कार्बोहाइड्रेट कम पाया जाता है। इसमें पाए जाने वाला वसा जैतून तेल की संरचना के समान होता है जो सौंदर्य प्रसाधनों की तैयारी में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। एवोकैडो कई विटामिनों का भंडार होने के अलावा यह ऊर्जा (245 कैलोरी/100 ग्राम), खनिज पाए जाते है । एवोकाडो दो खनिज घटकों तांबा और आयरन से भरपूर होता है तथा इसमें एंटीऑक्सीडेंट एंजाइम भी अच्छी खासी मात्रा में पाए जाते हैं ।

क्षेत्र

भारत में एवोकैडो तमिलनाडु, केरल जैसे दक्षिणी उष्णकटिबंधीय राज्यों में बिखरे हुए क्षेत्र में उगाए जाते हैं। कर्नाटक, और महाराष्ट्र। पहाड़ी पर पूर्वोत्तर हिमालयी राज्य सिक्किम में भी लोकप्रिय है तथा समुद्र तल से 800-1,600 मीटर की ऊँचाई पर आसानी से उगा सकते हैं।

मिट्टी एवं जलवायु

एवोकैडो उत्तरी भारत की गर्म शुष्क हवाओं और ठंढ को सहन नहीं कर सकता है। आमतौर पर उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में उगाया जाता है। इसके लिए मृदा का पी एच 5-7 के मध्य होना चाहिए तथा यह फसल खरी मृदाओं में वृद्धी नही कर पता है।

प्रजातियां

सभी तीन बागवानी प्रजातियाँ उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय परिस्थितियों के अनुकूल हैं यानी पश्चिम भारतीय, ग्वाटेमाला और मैक्सिकन को भारत में आज़माया गया है। अवोकेडो के प्रमुख प्रजातियाँ निम्नलिखित हैं-हैस, फुएरेट, ग्वेन, बेकन, जुतानो, रीड, पिन्केर्तन आदि प्रमुख हैं।

प्रसारण

भारत में, एवोकैडो को आमतौर पर बीजों के माध्यम से प्रचारित किया जाता है।

खेत की तैयारी एवं रोपण

अवोकेडो को 6-12 मीटर के दूरी पर पौधे के आकार एवं उसकी विविधता को देखते हुए रोपण किया जाता है इसके रोपण के लिए 1 घन मीटर आकर के गड्ढे 1 माह पूर्व खोद कर उसमे सड़ी हुए गोबर की खाद दे देनी चाहिए तथा मानसून में समय रोपण करर देना चाहिए।

खाद एवं रासायन

एक वयस्क पौधे को नत्रजन, फॉस्फोरस व पोटाश 500 :180:360 ग्राम/पौधे की दर से देना चाहिए तथा 500 ग्राम गोबर की खाद देनी चाहिए।

सिंचाई

थाला विधि से 3-4 सप्ताह के अंतराल में सिंचाई कर देनी चाहिए यही बारिश का पानी उपलब्ध नहीं हो।

फल तुड़ाई तथा उपज

बीज से तैयार किये गए पौधे में 5-6 वर्ष में फलन आने लगता है जबकि वानस्पतिक विधि से तैयार किये गए पौधे में फलन 3-4 वर्ष में आता है। परिपक्व फल तुडाई के 8-10 दिन बाद पक जाता है। एक पेड़ से 400 -500 फलों की तुड़ाई प्राप्त की जाती है।

एवोकैडो फल की रासायनिक संरचना (प्रति 100 ग्राम खाद्य भाग)

पोषक तत्व	गुण	पोषक तत्व	गुण
प्रोटीन	1.7 ग्राम	कैल्शियम	10 मिलीग्राम
वसा	26.4 ग्राम	क्लोरीन	11 मिलीग्राम
कार्बोहाइड्रेट	5.1 ग्राम	कापर	0 .45 मिलीग्राम
क्रूड फाइबर	1.8 ग्राम	आयरन	0 .60 मिलीग्राम
विटामिन A (कैरोटीन)	0.17 मिलीग्राम	मैगनेसियम 35	मिलीग्राम
एस्कॉर्बिक अम्ल	16.00 मिलीग्राम	मेगनीज	4.21 मिलीग्राम

स्रोत: माधव राव और अब्दुल खादर, 1977

कुंज एजेंसीज

अपने भाई चप्पा सेठ की दुकान
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है
प्रो. कार्तिक गुप्ता 9589545404
प्रो. हार्दिक गुप्ता 9644689094
भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

चना फसल में लगने प्रमुख रोग व कीट एवं रोकथाम

श्याम नारायण पटेल शोध छात्र (पादप रोग विज्ञान), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ.प्र.)

विश्व विजय रघुवंशी शोध छात्र (पादप रोग विज्ञान), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ.प्र.)

अमन प्रताप सिंह शोध छात्र (कीट विज्ञान), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ.प्र.)

चना, जिसे वनस्पति शास्त्र में **"Cicer arietinum"** के नाम से जाना जाता है, एक प्रमुख फसल है जो कि धान्यों के स्तर पर विकसित होता है। यह फसल भारत, पाकिस्तान, मेक्सिको, तुर्की, अफ्रीका, और अमेरिका के कुछ हिस्सों में उगाई जाती है।

चने के उपयोग: चने के बीज खाद्य स्रोत के रूप में उपयोग होते हैं। इन्हें ताजे रूप में खाया जा सकता है या फिर इन्हें भिगोकर, सुकाकर, या पकाकर विभिन्न व्यंजनों में शामिल किया जाता है। चने के बीज प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, विटामिन, और मिनरल्स का अच्छा स्रोत होते हैं।

आहार में उपयोग: चने के बीज से बने विभिन्न आहार व्यंजन जैसे कि छोले भटूरे, छोले पूरी, छोले की सब्जी, हुम्मस, और सलाद आदि पूरे विश्व में पसंद किए जाते हैं।

आरोग्यकर लाभ: चने के बीज में अनेक प्रकार के पोषक तत्व होते हैं, जैसे कि विटामिन, मिनरल्स, और एंटीऑक्सीडेंट्स। ये हड्डियों हेतु भी फायदेमंद होते हैं और मदुमेह के प्रबंधन में भी सहायक हो सकते हैं।

मुख्य प्रकार

1. **काबुली चना:** इस प्रकार का चना बड़े और सफेद दानों वाला होता है और यह आमतौर पर बिरयानी और सलाद में उपयोग होता है।
2. **डाल चना:** इस प्रकार का चना छोटे और गहरे गुलाबी-काले दानों वाला होता है और यह आमतौर पर डाल (लेंटिल) के रूप में खाया जाता है।

विशेषताएं

आहार मानविकता: चने में उच्च प्रोटीन, पोषण, विटामिन, और खनिज होते हैं जो आहार की गुणवत्ता को बढ़ाते हैं।

पोषक तत्व: चने में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, विटामिन (विटामिन सी, विटामिन बी6), खनिज (आयरन, कैल्शियम, मैग्नीशियम), और एंटिऑक्सिडेंट्स पाए जाते हैं।

आर्थिक महत्व: चने की खेती अनेक किसानों के लिए आर्थिक महत्वपूर्ण है और यह उन्हें आय की स्त्रोत प्रदान करती है।

स्वास्थ्य लाभ: चने के नियमित सेवन से हृदय स्वास्थ्य, डायबिटीज़ का प्रबंधन, और वजन नियंत्रण में मदद मिलती है।

कीटाणु और बीमारियां: चने की फसल को कई प्रकार के कीटाणु और बीमारियाँ प्रभावित कर सकती हैं, जैसे कि फसली पत्तियों का समर्थनम, अफिड्स, रूट नॉड्यूल्स नेमैटोड्स, और फूलों की बुद्धिजीविका ब्लाइट।

चने की फसल में लगने वाले प्रमुख रोग: चने की फसल में लगने वाले प्रमुख रोगों के लक्षण और उनके रोकथाम के उपाय निम्नलिखित हैं-

1. आस्कोकाइट मौसेजिक

लक्षण: पत्तियों पर सफेद, छोटे दाग दिख सकते हैं जिनका केंद्र में काला दाग होता है। इसके परिणाम स्वरूप, पत्तियाँ कुरकुरी और असामान्य दिखती हैं।

रोकथाम के उपाय: अच्छे बीजों का प्रयोग करना, प्रतितिप्पत्तिकरण का प्रयोग करना, और खेती की स्वाच्छता का ध्यान देना।

2. फुसारियम विल्ट

लक्षण: पौधों की पत्तियाँ पीली हो जाती हैं और पौधों की विकास में कमी हो सकती है।

रोकथाम के उपाय: स्वस्थ बीजों का प्रयोग करना, खेती की स्वाच्छता बनाए रखना, और खेती के समय विशेष सावधानी बरतना।

3. फुसारियम ओक्सिस्पोरम

लक्षण: पौधों की पत्तियाँ पीली हो जाती हैं और पौधों का विकास ठप हो जाता है।

रोकथाम के उपाय: स्वस्थ बीजों का प्रयोग करना, खेती की स्वाच्छता बनाए रखना, और फसल की सुरक्षा के लिए उपयुक्त फसल समर्थनम बनाना।

4. अस्कोकाइट ब्लाइट:

लक्षण: पत्तियों पर सफेद दाग दिख सकते हैं और पत्तियाँ कुरकुरी और भूरे दिख सकती हैं।

रोकथाम के उपाय: स्वस्थ बीजों का प्रयोग करना, खेती की स्वाच्छता बनाए रखना, और पेस्टिसाइड का प्रयोग करना।

5. रूट नॉड्यूल्स नेमैटोड्स

लक्षण: पौधों के जड़ों पर सफेद दाग दिख सकते हैं और पौधों की विकास में कमी हो सकती है।

रोकथाम के उपाय: स्वस्थ बीजों का प्रयोग करना, खेती की स्वाच्छता बनाए रखना, और पौधों की जड़ों के समर्थनम को हटा देना।

6. अन्य बीमारियां

आफ़ीस ब्लाइट, एंथ्रैक्नोजन स्कुआमोसा, और रोजेलिया ब्लाइट जैसी अन्य बीमारियाँ भी चने की फसल को प्रभावित कर सकती हैं। इनके खिलाफ उपायों के लिए कृषि विज्ञानी की सलाह लें। चने की फसल के रोगों की पहचान और उपाय के लिए स्थानीय कृषि विज्ञानी से सलाह प्राप्त करना सर्वोत्तम होगा।

चने की फसल में लगने वाले प्रमुख कीटों के लक्षण और रोकथाम के उपाय निम्नलिखित हैं:

1. पोड बोरर

लक्षण: पोड बोरर की लार्वे पॉड्स में गुस जाती हैं और बीजों को खाती हैं, जिसके कारण पॉड्स के बाहर दाग दिख सकते हैं।

रोकथाम के उपाय: अच्छे बीजों का प्रयोग करना, प्रतितिप्पत्तिकरण का प्रयोग करना, और पॉड्स की सुरक्षा के लिए उपयुक्त प्रोडक्ट्स का प्रयोग करना।

2. पौधों की बुद्धिजीविका ब्लाइट

लक्षण: पोड बोरर की लार्वे पौधों के अंदर गुस जाती हैं और फूलों और पॉड्स को खाती हैं। इसके परिणामस्वरूप, फूल और पॉड्स में खोखलापन दिख सकता है।

रोकथाम के उपाय: प्राकृतिक दुश्मनों का प्रयोग करना, पौधों के पॉड्स की सुरक्षा के लिए उपयुक्त प्रोडक्ट्स का प्रयोग करना, और संवेदनशील क्षेत्रों में पेस्टिसाइड का प्रयोग करना।

3. हेलिकोनिया फुलरोसा वायरस (HMV)

लक्षण: पत्तियों पर पीले या हलके हरे दाग दिख सकते हैं, जो फसल के विकास को प्रभावित करते हैं।

रोकथाम के उपाय: समय पर पौधों की समर्थनम की पत्तियाँ हटा देना, पौधों की स्वाच्छता बनाए रखना, और बीमार पौधों को नष्ट करना।

4. चने की अफिड्स (Chickpea Aphids)

लक्षण: पौधों के ऊपर सफेद, हरे, या काले रंग के कीट दिख सकते हैं, जो पत्तियों पर बस जाते हैं। ये कीट पत्तियों को सुखा सकते हैं और पत्तियों के माध्यम से रोगों को प्रसारित कर सकते हैं।

रोकथाम के उपाय: प्राकृतिक दुश्मनों का प्रयोग करना, नीम और नीम आधारित प्रोडक्ट्स का प्रयोग करना, पेस्टिसाइड का प्रयोग करना, और प्राकृतिक उपायों का प्रयोग करना।

चने की फसल के उपायों हेतु स्थानीय कृषि विज्ञानी से सलाह प्राप्त करना सर्वोत्तम होगा, क्योंकि उन्हें आपकी स्थानीय परिस्थितियों और फसल की स्थिति का अध्ययन करके उचित सलाह दी जा सकती है।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार

खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

'कृषि पर्यटन' -स्वरोजगार का एक नया माध्यम

अतुल कुमार यादव (परियोजना सहायक)
वै.औ.अ.प.-केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान (सीमैप), लखनऊ

अभिषेक गोविंद राव (तकनीकी सहायक)
(राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान पलझर, बौध, उड़ीसा)

डॉ. संजय कुमार (वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक)
वै.औ.अ.प.-केन्द्रीय औषधीय एंव सगंध पौधा संस्थान (सीमैप), लखनऊ,

भौगोलिक और सांस्कृतिक विविधता से संपन्न अपने भारत देश का कृषि क्षेत्र का इतिहास कई हजारों साल पुराना है। विविध जलवायु प्रदेशों में किसान अपनी-अपनी आवश्यकताओं के अनुसार खेती कर अपने परिवार के साथ-साथ देश के जनआबादी को अनाज देने का कार्य करता आ रहा है। पिछले कुछ वर्षों में वातावरणीय बदलाव तथा बढती जनआबादी कृषि क्षेत्र के सामने चुनौतियाँ पेश कर रहे हैं। इन जैसी चुनौतियों का सामना करने हेतु विविध योजनाएं सरकार द्वारा किसानों को देने का प्रयोजन होता रहता है। और 'कृषि पर्यटन' स्वरोजगार का एक नया माध्यम इन में से ही एक पारम्परिक खेती के साथ-साथ नवाचार के मिलाप का आविष्कार कहा जा सकता है। कृषि पर्यटन की कोई सर्वमान्य परिभाषा तो नहीं है लेकिन विश्व पर्यटन संगठन के अनुसार फार्महाउस में आवास की पेशकश, भोजन उपलब्ध कराना और विभिन्न कृषि कार्यों में पर्यटन की भागीदारी का आयोजन और सहायता करना कृषि पर्यटन में शामिल है। हमारे देश में कृषि पर्यटन में भी अपार संभावना है। भारत अपनी भौगोलिक और सांस्कृतिक विविधता के साथ हमेशा से पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र रहा है और '' अतिथि देवो भवः'' की परंपरा रही है। यहाँ के गाँव में हरियाली, रोमांच और स्थानीय स्वाद भरा पड़ा है।

कृषि पर्यटन में आमदनी के लिए पूरे दिन या कई दिनों का पैकेज बनाया जाता है जिसमें निम्न सामूहिक कार्यों को रखा जा सकता है -

■ ट्रैक्टर/ट्राली की सवारी। ■ ऊट, घोड़ा, बैलगाड़ी की सवारी। ■ बच्चों के खेलने की जगह। ■ संगीत एंव नृत्य कार्यक्रम। ■ कृत्रिम बारिश नृत्य कार्यक्रम। ■ सांस्कृतिक कार्यक्रम। ■ रहने के लिए आधुनिक झोपड़ियाँ। ■ शुद्ध पारम्परिक पेय एंव भोजन। ■ कृषि कार्य में भाग लेने का अवसर। ■ विशेष मौसमी फल एंव भोजन का आयोजन।

कृषि पर्यटन मुख्य रूप से 3 सिद्धांतों पर काम करती हैं-

1.अनोखापन अर्थात आंगतुकों के देखने के लिए कुछ खास होना चाहिए। जैसे - पशु, पक्षी, खेत और प्राकृतिक सुंदरता। इसके अलावा फुलों क्रॉस ब्रीड वैरायटी, फल एंव सब्जियों की मॉडिफाइड किस्में, नई उन्नत कृषि तकनीक, स्थानीय संस्कृति, पोशाक, तीज-त्योहार और ग्रामिण खेल कृषि पर्यटकों में पर्याप्त रूचि पैदा कर सकते हैं।

2.अतिथि अर्थात पर्यटकों की सेवा के लिए उचित व्यवस्था। जैसे - कृषि कार्यों और तैराकी में भाग लेना, बैलगाड़ी की सवारी, पतंग उड़ाना, ऊंट-घोड़े या ट्रैक्टर की सवारी, मिलकर खाना बनाना, मछली पकड़ना और लोक गीतों-नृत्यों का आंनद तथा विभिन्न गतिविधियाँ करना जिससे आनंद का भाव महसूस हो।

3.उत्पाद बिक्री अर्थात अतिथियों के खरिदने के लिए कुछ खास हो। जैसे - ग्रामिण शिल्प, ताजा कृषि उत्पाद, प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ और स्थानीय विशेषताओं से भरी सामग्रियां जो वे एक स्मृति के तौर पर लेना पंसद करें।

कृषि पर्यटन व्यवसाय कैसे शुरू करें ?

कृषि पर्यटन व्यवसाय को शुरू करने के लिए सबसे बड़ी चीज है - मन बनाना, फिर जानकारियाँ जुटाना, आवश्यक धन का इंतजाम करना और फिर प्रबंधन करना। बस, इसके लिए कुछ बातों का ध्यान रखना बेहद जरूरी है।

- सबसे पहले यह देखना होगा कि आप पर्यटकों हेतु प्रस्तुत क्या करना चाहते हैं जिससे वह आपके यहां आने हेतु आकर्षित हो?
- दूसरा, पर्यटकों के आने - जाने, रूकने, खाने - पीने, क्षेत्र के भ्रमण के लिए आपने कितनी उत्तम व्यवस्थाएं कर रखी हैं?
- तीसरा, पर्यटक जाते वक्त यादगार के तौर पर कुछ स्थानीय सामग्री खरीद कर ले जाते हैं तो इसके लिए आपकी तैयारी क्या है? आप हस्तकला की चीजें बेच सकते हैं।
- हरियाली के बीच सारी सुविधाओं से युक्त कमरे या स्थानीय शैली में पारंपरिक झोपड़े, बांस - मिट्टी या कंक्रीट के तैयार करने होते हैं। धीरे-धीरे इसे बढा सकते हैं। इनमें से कुछ वातानुकूलित हो तो बेहतर होता है।
- यदि सक्षम हों तो मिनी जू, नर्सरी, मछली पालन, पशुपालन केंद्र, डेयरी जैसे फीचर्स भी जोड़ सकते हैं जो पर्यटकों विशेष रूप से बच्चों को कॉफी लुभाते हैं। स्कूली बच्चों के शैक्षिक टूर या मांगलिक समारोहों के लिए भी फार्म दिये जा सकते हैं।
- ग्रामीण पर्यटन में सफल बनाने हेतू जैविक का बहुत बड़ा हाथ है। गेहूं, चावल, मक्का, सभी प्रकार की सब्जियाँ, वह भी ताजा, दूध, दही, मक्खन, घी, लस्सी, छाछ, जड़ी-बूटियों की खेती।
- घोड़ा गाड़ी, बैलगाड़ी, ऊंट-गाड़ी या ऊट की सवारी की व्यवस्था की जा सकती है। बच्चे/विदेशी पर्यटक इसे बहुत पंसद करेंगें।

इन सभी व्यवस्थाओं को पूरा करने के बाद आम तौर पर एक दिन में 50 से 100 पर्यटक का आगमन हो सकता है जिसमें आंशिक या सभी सुविधाओं के लिए प्रतिदिन के अनुसार कुछ शुल्क लगाया जा सकता है इससे अच्छी खाशी कमाई हो सकती है।, इसके अतिरिक्त कुछ विशेष पारम्परिक और आकर्षक वस्तुओं की बिक्री से अन्य लाभ भी होगा, इस तरह से स्वरोजगार के लिए एक नया आयाम दिखाई देता है जो लाभकारी प्रतित होता है।

ISSN-2582-5976

ककोड़ा की खेती कर समृद्ध बनें किसान

श्रवण कुमार, देवराज सिंह
(सहायक प्राध्यापक) इंन्वर्टिस वि.वि. बरैली (उ.प्र.)
हिदेश यादव (लेक्चरर) कृषि ए. एस.आइ. सी., लखौटी, बुलंदशहर (उ. प्र.)

परिचय-ककोड़ा (मोमोर्डिका डाइवोका) एक बहुवर्षीय कद्दूवर्गीय फसल है जो कि भारत के कुछ क्षेत्रों में सुगमता से उगाया जा सकता है। समान्यत- जंगली क्षेत्रों में खेख्सा (ककोड़ा) उग जाते हैं, इसलिए इन क्षेत्रों के आस-पास के लोग इसका सब्जी के रूप में अधिकांश उपयोग करते हैं। ककोड़ा के बीज को एक बार बुवाई के बाद इसके मादा पौधे से औसतन 8-10 वर्षो तक फल प्राप्त किये जा सकते हैं। इसके अपरिपक्व फलों का उपयोग अचार बनाने के लिए भी किया जाता है। यह कफ, खांसी, वात, पित्तनाशक और हृदय में होन वाले दर्द के लिये लाभदायक है। इसकी जड़ों का उपयोग बवासीर में रक्त बहाव रोकने के लिए, पेशाब की शिकायत व बुखार होने पर बहुत लाभकारी होता है। ककोड़ा के फलों का सेवन करने से मधुमेह रोगी के शर्करा नियंत्रण में भी बहुत उपयोगी है।

वर्तमान समय में जब ककोड़ा का फल बाजार में आता है तो उसका मूल्य रूपये 90 से 100 रूपये तक प्रति किग्रा तक मिलता है। इससे किसान की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है। ककोड़ा की सब्जी बहुत स्वादिष्ट होता है तथा मानव संतुलित आहार में एक महत्वपूर्ण भाग भी होता है। ककोड़ा की सब्जी पौष्टिक गुणों से मालामाल होता है। ककोड़ा के हरे रंग वाले फलों की सब्जी बनाई जाती है, जिसमें 8-10 कड़े बीज होते हैं।

उपयुक्त जलवायु एंव भूमि

ककोड़ा नम एवं गर्म जलवायु की फसल है। ककोड़ा की खेती उन स्थानों पर सफलतापूर्वक कि कजा सकती है, जहां औसत वर्षा 1500-2500 मिली. होती है , तापमान 20-32 डिग्री सेन्टीग्रेड रहता हो। ककोड़ा अन्योन्य प्रकार की मिट्टी में सफलतापूर्वक की सकती है। लेकिन रेतीली भूमि जिसमें पर्याप्त मात्रा में जैविक पदार्थ उपस्थित हो तथा उचित जल निकास की व्यवस्था हो, उपयुक्त मानी जाती है। इसके साथ ही मृदा का पी.एच. मान 6-7 के बीच होना चाहिए। ककोड़ा अम्लीय भूमि के प्रति संवेदनशील होती है।

बुवाई का समय

ककोड़ा के बीजों की बुवाई का उपयुक्त समय जून-जुलाई है। बीजों के साथ-साथ ककोड़ा का प्रर्वधन उसके वानस्पतिक अंगों से भी किया जाता है। बीजों के द्वारा प्रवर्धन से 1:1 के अनुपात में नर व मादा पौधे मिलते है। इसलिए ककोड़ा की फसल के लिए बीजों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

प्रजातियां

इंदिरा कंकोडा-1, इंदिरा कंकोडा-2, अम्बिका-12-3, अम्बिका-12-1, अम्बिका-12-2 तथा छ.ग. कंकोडा-2।

बीज मात्रा

कंकोडा की बुवाई हेतु 8-10 कि.ग्र. बीज की मात्रा उपायुक्त होतीं हैं। वनास्पतिक प्रवर्धन द्वारा वानस्पतिक भाग अथवा जड़ के कन्द द्वारा करना चाहिए।

बुवाई की विधि

ककोड़ा की बुवाई अच्छी प्रकार से तैयार खेत में क्यारी बनाकर अथवा गड्ढों में किया जाता है। गड्ढे की आपस में दूरी 2म2 मीटर रखनी चाहिए। तथा प्रत्येक गड्ढे में 2-3 बीजों की बुवाई करते हैं। और इस प्रकार 4 म 4 मीटर के प्लाट में कुल 9 गड्ढे बनते हैं। जिसमें बीच वाले गड्ढे में नर पौधा रखते हैं तथा बाकी 8 गड्ढों में मादा पौधों को रखते हैं। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि एक गड्ढे में एक ही पौधा रखा जाता है।

खाद व उर्वरक

सामान्यतया 200 से 250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद खेत की अंतिम जुताई के समय खेत में डालकर मिट्टी में मिला देना चाहिए। इसके अलावा 65 किग्रा. यूरिया, 375 किग्रा. एसएसपी तथा 67 किग्रा. एमओपी प्रति हे. देना चाहिए।

सिंचाई व निंदाई-गुड़ाई

फसल की बुवाई के तुरन्त बाद खेत में हल्की सिंचाई करनी चाहिए। बरसात में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती, खेत में आवश्यकता से अधिक पानी को बाहर निकालने के लिए जल निकास की ऊचित व्यवस्था होनी चाहिए क्योंकि अधिक पानी से बीज या कन्द सड़ सकता है। 2-3 बार निंराई-गुड़ाई करना इस फसल के लिये लाभप्रद रहता है।

फसल प्रबन्धन

इस फसल पर बहुत कम कीट व रोगो का प्रकोप होता है। परन्तु फल मक्खी ककोड़ा के फलों को अधिक नुकसान पहुंचाती हैं। रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड या क्विनालफॉस 25 ई.सी. की 2-3 मिली मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव कर फसल की सुरक्षा की जा सकती है।

पौधों को सहारा (स्टेकिंग) देना

ककोड़ा से अधिक उपज प्राप्त करने के लिए पौधों को सहारा देना अति आवश्यक है। स्टेकिंग करने से पौधों की बढ़वार अच्छी होती है तथा गुणवत्ता युक्त फल प्राप्त करने के लिए बांस या सूखी लकडियों की टहनी आदि से सहारा देना आवश्यक होता है। ककोड़ा एक बहुवर्षीय फसल है इसलिए पौधों को सहारा देने के लिए लोहे के एंगल पर जालीनुमा तार 5-6 फीट ऊंची, 4 फीट गोलाकार संरचना का उपयोग कर सकते हैं जिससे अधिक फल प्राप्त कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

कवक क्या है तथा इसकी उपयोगिता

डॉ. दुर्गेश कुमार (सहायक प्राध्यापक)
ब्रह्मानंद स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राठ, हमीरपुर (उ.प्र.)

डॉ. विजय प्रताप गौतम (सहायक प्राध्यापक)
ब्रह्मानंद स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राठ, हमीरपुर (उ.प्र.)

परिचय

कवक (फंजाई) जगत-इस जगत में ऐसे जीव आते है जिन में काइटिन की कोशिका भित्ति पाई जाती है। कवकों की आकारिकी एवं आवासों में भिन्नता पाई जाती है। विज्ञान की वह शाखा जिसमें कवकों का अध्ययन किया जाता है, उसे माइकोलॉजी कहते है। सदाशिवन भारत के प्रसिद्ध कवक विज्ञानी है। **P. A.** माइकेली को माइकोलॉजी के पितामाह माना जाता है। बॉसपर्ड बॉहिनी ने फंजाई नाम दिया था।भारत में माइकोलॉजी के पितामाह **E.J.** बटलर है।

आवासीय व्यवस्था -

1. ये जीव उस मिट्टी में अधिक पाए जाते है जिसमें ह्यूमस की मात्रा अधिक होती है।नमी की स्थिति में कवक चमड़े के सामान, लकड़ी के टुकड़ों, आचार, ब्रेड इत्यादि पर उग जाते है। कुछ कवक पादप, जंतुओं तथा मनुष्यों में परजीवी के रूप में पाई जाती है।
2. सरसों की पत्तियों पर सफेद धब्बे पर जीवी कवक (एल्बूगो केन्डीडा) के कारण पाए जाते है।
3. कुछ एक कोशिक कवकों का उपयोग डबल रोटी एवं बीयर बनाने में किया जाता है। उदाहरण-सेक्रोमाइसिस सेरीविसी
4. रोटी या संतरे के सड़ने की प्रक्रिया फंजाई के कारण होती है।
5. कवक विश्व व्यापी है और ये वायु, जल, मिट्टी में तथा जन्तु एवं पादपों पर पाए जाते है। ये जीव नम तथा गरम स्थानों पर सरलता से उग जाते है।
6. कुछ कवक, शैवाल के साथ सहजीवी के रूप में पाए जाते है ऐसे दोहरे जीव को लाइकेन कहते है।
7. कुछ कवक उच्च पादप (पाइनस) की जड़ों के साथ सहजीवी संबंध दर्शाते है, इसे माइकोराइजिया (कवकमूल) कहते है।

टिप्पणी

भोजन को जीवाणु तथा कवकों से खराब होने से बचाने के लिए रेफ्रिजरेटर में रखा जाता है। रेफ्रिजरेटर में निम्न ताप पर जीवाणु तथा कवक में उपस्थित एंजाइम निष्क्रीय हो जाते है और भोजन खराब नहीं होता है।

कवकों में पोषण

कवकों में हरित लवक अनुपस्थित होते है अर्थात ये विषमपोषी होते है। कवकों में संचित भोजन जंतुओं की भांति ग्लाइकोजन होता है।भोजन के स्रोत के आधार पर कवक दो प्रकार के होते है-

1.मृतोपजीवी कवक-ये कवक अपना भोजन मृत कार्बनिक पदार्थों जैसे ब्रेड, सड़े हुए फल एवं सब्जियों, गोबर इत्यादि से प्राप्त करते है। इनमें पोषण अवशोषणी या परासरणीय विधि से होता है।

2. परजीवी कवक-ये अपना भोजन जीवित जीवों जैसे पादप,जंतु एवं मनुष्यों से प्राप्त करते है। ये कवक रोग उत्पन्न करते है।परजीवी कवक अपना पोषण चूसकांगों के द्वारा प्राप्त करते है।

कवकों की आकारिकी (Morphology)

कवक के शरीर को माइसिलियम (कवक जाल) कहते है। माइसिलियम एक जालनुमा संरचना है जो कई सारे कवक तंतुओं के मिलने से बनती है।कवक तंतु को कवक की संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई कहते है।

कवक तंतु के चारों ओर कोशिका भित्ति पाई जाती है जो काइटिन की बनी होती है। काइटिन के साथ कुछ मात्रा में सेल्युलोज, प्रोटीन एवं लिपिड पाए जाते है। अधिकांश कवक विषम जालिक होते है। कवक तंतु सत त्रलिकाकार होते हैजिनमें हुकेन्द्रकीय कोशिका द्रव्य भरा होता है जिन्हें सिनो साइटिक कवक तंतु कहते है।

कवक जाल के आधार पर कवक दो प्रकार के होते हैं-

1.विषम जालिक (हिटरोथैलिक) कवक-वे जातियाँ जिनमें निषेचन आनुवांशिक रूप से भिन्न युग्मकों के मध्य होता है अर्थात निषेचित होने वाले युग्मक अलग-अलग कवकजाल पर बनते है, विषम जालिक कवक कहलाते है। उदाहरण-म्यूकर, राइजोपस, पक्सिनिया

2.सम जालिक (होमोथैलिक) कवक-वे जातियाँ जिनमें निषेचन आनुवांशिक रूप से समान जातियों के मध्य होता है अर्थात निषेचित होने वाले युग्मक एक ही कवक जाल पर बनते है उन्हें समजालिक कहते है। उदाहरण-कीटोमियम

कवक के लाभ

कवक में पोषक तत्वों को इस तरह से बदलने की क्षमता होती है जिससे वे पौधों के लिए उपलब्ध हो जाते हैं। कुछ कवक डीकंपोजर होते हैं जिसका अर्थ है कि वे पौधों और जानवरों के अवशेषों को तोड़ते हैं, इस प्रकार पोषक तत्वों का चक्रण होता है और मिट्टी में उनकी उपलब्धता बढ़ जाती है।कवक, भोजन के रूप में, मशरूम के रूप में मानव पोषण में भूमिका निभाते हैं, और ब्रेड, चीज, मादक पेय और कई अन्य खाद्य तैयारियों के उत्पादन में किण्वन के एजेंट के रूप में भी भूमिका निभाते हैं। कवक के द्वितीयक मेटाबोलाइट्स का उपयोग दवाओं के रूप में किया जाता है, जैसे एंटीबायोटिक्स और एंटीकोआगुलंट्स।

हानियां

इसकी वजह से पौधों, पशुओं तथा मनुष्य में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं. बहुत से कवक खाने वाले पदार्थों पर उगकर उन्हें नष्ट कर देते हैं जैसे अचार एवं मुरब्बे में फफूंदी लगना । कवक तीन अलग-अलग तरीकों से मानव बीमारी का कारण बनता है- विषाक्तता, परजीवी संक्रमण और एलर्जी प्रतिक्रियाएं । कई खाद्य और औद्योगिक प्रक्रियाओं के लिए आवश्यक कवक का उपयोग एंजाइम, कार्बनिक अम्ल, विटामिन और एंटीबायोटिक दवाओं के उत्पादन में किया जाता है। कवक फसलों को भी नष्ट कर सकता है, मनुष्यों में बीमारियाँ पैदा कर सकता है (उदाहरण के लिए, कैंडिडिआसिस और दाद), और फफूंदी और सड़ांध के साथ कपड़े और भोजन को बर्बाद कर सकता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

बासमती धान का बकानी रोग धान की एक उभरती समस्या

उमारा रहमानी शोध छात्रा (पादप रोग विज्ञान विभाग) सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मोदीपुरम मेरठ (उ.प्र.)

विशेष यादव शोध छात्र (कीट विज्ञान विभाग) चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार, (हरियाणा)

मोहम्मद सलमान शोध छात्र (कीट विज्ञान विभाग) सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मोदीपुरम मेरठ (उ.प्र.)

धान विश्वभर में उगाई जाने वाली एक मुख्य खाद्यान फसल है। संसार के लगभग 1641 मिलियन हैक्टेयर पर इसका उत्पादन किया जाता है। अकेले एशिया महाद्वीप में दुनिया का लगभग 90 प्रतिशत धान उगाया जाता है। भारत की विश्व के कुल धान उत्पादन में 22.5 प्रतिशत हिस्सेदारी हैं। भारत में धान का उत्पादन करने वाले प्रमुख राज्य पश्चिम बंगाल, उ.प्र., पंजाब, आन्ध्रप्रदेश, हरियाणा है।धान का सेवन गेहूँ के बाद दूसरे नम्बर पर किया जाता है।धान की बासमती प्रजातियों का प्रयोग दुनियाभर में खाने के लिए किया जाता है। भारत, बासमती धान उगाने में प्रथम स्थान रखता है।भारत में उगाया गया बासमती धान मुख्यतः सऊदी अरब, ईरान, स्पेन, फांस, एशिया, यू0एस0ए0, जर्मनी, ऑस्ट्रेलिया व कुवैत आदि देशों में निर्यात किया जाता है। धान की निर्यात किये जाने वाली किस्मों में बासमती धान का प्रमुख स्थान है। भारत से बासमती धान के कुल उत्पादन का लगभग 2/3 भाग निर्यात किया जाता है। बासमती धान की देश विदेश में लगातार बढ़ती मांग को देखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि धान के उत्पादन को बढाया जाये। ऐसे में जरुरी है कि धान में लग ने वाले विभिन्न रोग व कीटों का नियन्त्रण जो कि लगभग 20% तक उत्पादन को कमकर देते हैं। धान में लगने वाले रोगों में धान का बकानी रोग जिसको धान का मुर्ख रोग के नाम से भी जाना जाता है बासमती धान उत्पादन में एक मुख्य समस्या के रूप में उभर रहा है। धान का बकानी रोग धान में पहले कम देखा जाता था तथा इसके ज्यादा लक्षण धान में प्रकट नहीं होते थे लेकिन जैसे जैसे बासमती धान का क्षेत्रफल बढ़ रहा है वैसे-वैसे ही धान के लगने वाला बकानी रोग भी बढ़ता जा रहा है। धान की PB-1121 प्रजाति इस रोग सेयसित होने वाली मुख्य प्रजाति है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में जो कि बासमती धान उत्पादन में अग्रणीय है यह रोग एक मुख्य समस्या के रूप में उभर रहा है।

लक्षण

बकानी रोग के लक्षण धान की नर्सरी से ही प्रारम्भ हो जाता है तथा फसल को परिपक्वता तक इस के लक्षण नजरआते रहते हैं। बकानी रोग से ग्रसित धान के पौधों को आसानी से पहचाना जा सकता है। इस रोग के निम्नल क्षण फसल पर प्रकट होते है इस रोग से ग्रसित पौधों की लम्बाई समान्य पौधों की अपेक्षा लम्बाई में बढ़े हुए पतले व हल्के पीले रंग के नजर आते हैं। कभी-कभी इस रोग से ग्रसित पौधे स्वस्थ पौधों की अपेक्षा तीन गुने तक लम्बे हो जाते हैं। ऐसे पौधों को दूर से ही देखा जा सकता है।

- जो पौधे लम्बाई में बढ़ जाते हैं वे शीघ्र ही सूख जाते हैं तथा इस तरह उस गुच्छे के पौधे सभी धीरे-धीरे सूखने लगते हैं।
- रोग से ग्रसित पौधों की गाठों से जड़ें निकल ने लगती है जो कि इस रोग से ग्रसित होने का ही एक लक्षण है ऐसा समान्य पौधों में नहीं देखा जाता है।
- रोग से ग्रसित पौधों के निचले हिस्से पर (विशेषतयां ग्रसित पौधों की गांठों पर) फफूंद की सफेद रंग की वृद्धि को भी आसानी से देखा जा सकता है जो कि इस रोग का मुख्य लक्षण हैं।
- रोग से ग्रसित पौधों पर सामान्यतः बालियां नहीं बनती है लेकिन संक्रमण यदि देर से होता है तो बनी बालियों में दाने नहीं बनते और रोग ग्रसित बालियों सफेद रंग की दिखाई देती है

रोगकारक

धान का बकानी रोग एक फफूंदपयूजेरियम मोनीलीफोरमी के द्वारा होता है। यह एक सफेद रंग की फफूँद है। इस फफूंद को सुक्ष्मदर्शी से देखने पर यह पाया गया है कि यह दो तरह के कोनिडिया (बीजाणु) दीर्घ कोनिडिया व लघुकोनिडिया बनाती है। दीर्घ कोनिडिया आकार मे बड़े जब कि लघुकोनिडिया आकार में छोटे व अण्डाकार होते हैं।

रोगचक्र

यह रोग मुख्यतः बीज जनित रोग है। रोग कारक के बीजाणु धान के बीजों से चिपक जाते है जो कि अगले वर्ष रोग फैलाने में मुख्य भूमि का निभाते हैं जब कि खेत में छूटे हुए पौधे पर भी रोग कारक फसल की अनुपस्थिति में बना रह सकता है व रोग फैला सकता है। ऐसा देखा गया है कि जो किसान पिछले फसलके बीज (जिस खेत में रोग के लक्षण देखें गये थे) या बिना फफूंदी नाशक के उपचारित बाद का इस्तेमाल नर्सरी डालने के लिए करते हैं उन किसानों के खेत में यह रोग ज्यादा लगता है। इस रोग का प्रकोप तापमान बढ़ने के अनुरूप होता है अर्थात जैसे-जैसे तापमान बढ़ता जाता है बकानी रोग के लक्षण ज्यादा प्रकट होते हैं।

रोग का नियंत्रण

- धान की रोग मुख्यत संक्रमित बीजों से ही फैलता है इस रोग के नियन्त्रण का सबसे अच्छा तरीका धान के बीजों का उपचार करना है। धान की नर्सरी डालने से पहले धान को निम्न फफूंदनाशी से उपचारित करके बोना चाहिए
- कारबेन्डाजिम 0.2% से बीज उपचार (2 ग्राम / किलोबीज)।

- मैन्कोजेब 02-03 प्रतिशत घोल से बीज उपचार (2-3 ग्राम/लीटर पानी)।
- धान के बीजों की बुवाई से पहले किसी जैविक नियन्त्रक जैसे ट्राइकोडर्मा स्यूडोमोनास फ्लूरोसेन्स कल्चर से उपचारित करके भी रोग को कम किया जा सकता है। (10 ग्राम कल्चर पाऊडर/एक किग्रा बीज)
- रोपाई से पूर्व नर्सरी को ट्राइकोडर्मा एवं स्यूडोमोनास के घोल से का उपचार करके लगाने से भी रोग को काफी हद तक रोका जा सकता है।
- यदि खेत में रोग से ग्रसित पौधे अधिक नजर आते है तो खेत में खड़ी फसल पर कारबेन्डाजिम फफूँदनाशक 0.2% का छिड़काव करके भी इस रोग के फैलने को कम किया जा सकता है।
- उर्वरकों का संतुलित रूप से प्रयोग किया जाये एवं खेत में जिंक, लोहा आदि तत्वों से युक्त उर्वर कोको भी डाला जायें क्योंकि ये तत्व पौधों में रोग सहनशीलता बढ़ाते है। जिस खेत में बकानी रोग से ग्रसित पौधे अधिक नजर आते है तो बेहतर होगा कि ऐसा फसल का बीज अगली फसल की भारी ना करें।

जैन बीज भण्डार एवं पशु आहार

फुटकर विक्रेता

मैन बाजार, चीनोर रोड, छीमक
जिला-ग्वालियर (म.प्र.)-475110
मोबाइल: 9977638510

टोल फ्री नम्बर: डॉ. दयाल-18002701979

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

कृषि और किसानों की सुरक्षा फसल बीमा के माध्यम से सशक्तिकरण

सुरेन्द्र कुमार (परास्नातक छात्र कृषि प्रसार शिक्षा विभाग), चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर

मुकेश कुमार (सहायक प्रोफेसर), राम ललित सिंह पी.जी. कॉलेज कैलहट, मिर्जापुर

आशीष कुमार मौर्य (परास्नातक छात्र), कृषि अर्थशास्त्र एवं सांख्यिकीय विभाग, चंद्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

सूर्यभान (शोध छात्र सस्य विज्ञान), चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

परिचयः कृषि, जो भारत की रीढ़ है, देश की आधी से अधिक आबादी को रोजगार देती है। हालाँकि, किसानों को उच्च जोखिम का सामना करना पड़ता है और विशेष रूप से अप्रत्याशित मौसम की स्थिति के प्रति संवेदनशील होते हैं, जैसा कि हाल ही में हुई बेमौसम बारिश से स्पष्ट है जिसने रबी फसलों को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। कीमतों में उतार-चढ़ाव किसानों की वित्तीय भलाई को और कमजोर करता है। फसल बीमा उन्हें ऐसी अनिश्चितताओं से बचाने के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में उभरता है। लघु और दीर्घकालिक उपायों को लागू करने से किसानों को जल संसाधनों का अनुकूलन करने, फसल की पैदावार में सुधार करने और सूखे या पानी की कमी के कारण फसल की विफलता के जोखिम को कम करने में मदद मिल सकती है। इसके अलावा, ये कदम उर्वरक उपयोग की बेहतर योजना बनाने, बर्बादी को कम करने और मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाने में सहायता करते हैं।

मौसम संबंधी नुकसान और कार्रवाई की तात्कालिकताः भारत में पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ मौसम की स्थिति पर बहुत अधिक निर्भर करती हैं, जिससे किसानों को बेमौसम बारिश, सूखा, बाढ़, कीटों और बीमारियों के कारण फसल के नुकसान का खतरा होता है। 2015 और 2021 के बीच, देश में फसली क्षेत्रों में काफी नुकसान हुआ। बाढ़ और अत्यधिक बारिश के कारण लगभग 33.9 मिलियन हेक्टेयर भूमि का नुकसान हुआ, जबकि सूखे के कारण 35 मिलियन हे. भूमि नष्ट हो गई। दरअसल, इस साल मार्च और अप्रैल में बेमौसम बारिश और ओलावृष्टि ने गेहूं, मक्का, प्याज, सरसों और चना जैसी महत्वपूर्ण रबी फसलों को बुरी तरह प्रभावित किया, जब वे कटाई के लिए तैयार थीं, जिससे लगभग 13,000 करोड़ रुपये के राजस्व का नुकसान हुआ।

लघु और दीर्घकालिक रणनीतियांः इन चिंताओं को दूर करने के लिए लघु और दीर्घकालिक उपायों को शामिल करते हुए एक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है। अल्पावधि में, केंद्र सरकार और राज्यों को कृषि ऋण माफ करने, किसानों को फसल नुकसान का मुआवजा देने और रियायती बीज और उर्वरक उपलब्ध कराने पर विचार करना चाहिए। न्यूनतम समर्थन मूल्य बढ़ाने से भी राहत मिल सकती है। बदलते मौसम के मिजाज के प्रति कृषि क्षेत्र की लचीलापन बढ़ाने के लिए दीर्घकालिक संरचनात्मक परिवर्तन आवश्यक हैं। इन परिवर्तनों में फसल विविधीकरण को बढ़ावा देना, उन्नत कृषि तकनीकों और प्रौद्योगिकी को अपनाने को प्रोत्साहित करना और अपशिष्ट और फसल के बाद के नुकसान को कम करने के लिए आपूर्ति श्रृंखला के बुनियादी ढांचे में सुधार करना शामिल है। इसके अतिरिक्त, अनियमित वर्षा का मुद्दा जलवायु परिवर्तन की व्यापक चुनौती को उजागर करता है, जिसके लिए भारत सरकार, राज्यों, नागरिक समाज संगठनों और निजी क्षेत्र से सक्रिय उपायों और सहयोगात्मक प्रयासों की आवश्यकता है।

सरकारी पहल और फसल बीमा की भूमिकाः इन चुनौतियों से निपटने के लिए सरकार ने कई पहल शुरू की हैं, जिनमें प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना), प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना) और मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना शामिल हैं। फसल बीमा के महत्व को पहचानते हुए, भारत सरकार ने जनवरी 2016 से प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना लागू की है। इस योजना का उद्देश्य फसल के नुकसान या अप्रत्याशित क्षति की स्थिति में किसानों को आर्थिक रूप से समर्थन देकर पिछली योजनाओं में मौजूदा खामियों को दूर करना है। यह किसानों की आय को स्थिर करता है और नवीन और आधुनिक कृषि पद्धतियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करता है। राज्य सरकारें भी फसल बीमा को सक्रिय रूप से बढ़ावा दे रही हैं। भारत में केंद्र और राज्य सरकारें कृषि बीमा पर सब्सिडी देती हैं। सामान्य बीमा निगम (जीआईसी) और कृषि बीमा कंपनी इसके कार्यान्वयन की देखरेख करती है। बीमा की सुविधा ग्रामीण वित्तीय संस्थानों के माध्यम से दी जाती है, जो अक्सर फसल ऋण से जुड़ी होती है।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के मुख्य बिंदु

1.प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के तहत प्राकृतिक आपदा के कारण फसलों का नुकसान होने पर किसानों को बीमा कवर राशि दी जाती है। इस योजना के अंतर्गत किसानों से रबी की फसल के लिए 1.5 त्र, खरीफ की फसल के लिए 2% और वाणिज्यिक एवं बागवानी फसलों के लिए 5% प्रीमियम लिया जाता है। 2. अधिकतम सरकार द्वारा प्रीमियम भरा जाता है ताकि कोई भी किसान बीमा कवर प्राप्त करने से वंचित ना रहे जाए और जिससे आपदा में हुए नुकसान की भरपाई आसानी से हो सके। 3.फसल काटने के बाद यदि 14 दिन तक फसल खेत में है और उस दौरान को याद आ जाती है तो ऐसी स्थिति में किसान को दावा राशि प्राप्त हो सकेगी। 4.प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना में टेक्नोलॉजी का भरपूर उपयोग किया जाता है ताकि सेटल करने के समय कम उपयोग किया जा सके। 5.एग्रीकल्चर इंडिया इंश्योरेंस कंपनी द्वारा प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना को नियंत्रित किया जाता है। 6.इस योजना के तहत बजट 2016-17 में किसानों को 5550 करोड़ रुपए का आवंटन किया गया था। 7.इस योजना की शुरुआत से अब तक 36 करोड़ किसानों का बीमा किया जा चुका है।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना में कौन कौन सी फसले शामिल की गई हैं-1.खाद्य फसलें (अनाज-धान, गेहूं, बाजरा इत्यादि) 2.वार्षिक वाणिज्यिक (कपास, जूट, गन्ना इत्यादि) 3.दलहन (अरहर, चना, मटर और मसूर सोयाबीन, मूंग, उरद और लोबिया इत्यादि) 4.तिलहन (तिल, सरसों, अरंडी, बिनौला, मूँगफली, सोयाबीन, सूरजमुखी, तोरिया, कुसम, अलसी, नाइजर सीड्स इत्यादि) 5.बागवानी फसलें (केला, अंगूर, आलू, प्याज, कसावा, इलायची, अदरक, हल्दी सेब, आम, संतरा, अमरूद, लीची, पपीता, अनन्नास, चीकू, टमाटर, मटर, फूलगोभी)

प्रधानमंत्री किसान संपदा योजनाः 72 घंटे पहले देनी होती है जानकारी रू प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के तहत प्राकृतिक आपदा से फसल नुकसान होने पर किसानों की जिम्मेदारी है कि वह कृषि विभाग को 72 घंटे के अंदर फसल खराब होने की जानकारी से सूचित करें। इसके अलावा किसान को एक लिखित शिकायत जिला प्रशासन एग्रीकल्चर डिपार्टमेंट में देनी होती है। और अपनी फसल नुकसान का पूरा ब्यौरा लिख कर देना होता है। शिकायत मिलते ही जिला प्रशासन एग्रीकल्चर डिपार्टमेंट द्वारा कार्यवाही की जाएगी। इसके लिए सूचना बीमा कंपनी को तुरंत जानकारी दी जाती है। जिसके बाद बीमा कंपनी द्वारा सूचना मिलने पर किसान को बीमा कवर दिलाने की कार्यवाही शुरू हो होती है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजनाः मृदा स्वास्थ्य कार्ड स्कीम को 2015 में किसानों के लिए लाया गया है। इस योजना से किसानों को बहुत ज्यादा फायदा भी हुआ है और आगे भी होने वाला है। इस योजना सभी किसानों को जो अपने खेत की मिटटी की जाँच करवाना चाहता है उन्हें अपने खेत की मिटटी को परिक्षण के लिए भेजने पर मृदा स्वास्थ्य कार्ड प्रदान किया जाता है।भारत में बहुत सारे किसान हैं जिनके खेतों में सही प्रकार से अनाजों का पैदावार नहीं हो पा रहा है। इसका सबसे बड़े कारण हैं।

1.किसान द्वारा गलत फसल का चुनाव। 2.किसान को पता ना होना कि उनके खेत की मिटटी में कौन सा खाद ज्यादा चाहिए और कौन सा कम। ना ही उन्हें पता है कैसे वो अपने मिटटी की उर्वरता शक्ति को बढा सकते हैं।

प्रधानमंत्री सिंचाई योजना- प्रधानमंत्री सिंचाई योजना का शुरुआती चरण वर्ष 2015 में हुआ था। इसका मुख्य लक्ष्य था कि भारत में कृषि क्षेत्र में सिंचाई के माध्यम से जल संसाधन को प्रबंधित करना और किसानों को जल संचयन की तकनीकों से अवगत कराना। यह योजना कृषि क्षेत्र में जल संसाधन की सुरक्षा और उपयोग में सुधार करने के लिए निर्मित है।

प्रधानमंत्री सिंचाई योजना से किसानों लाभ निम्नलिखित हैं-

1. **बेहतर कृषि उत्पादनः** सिंचाई के माध्यम से किसान अपनी खेती को संवृद्धि दे सकते हैं और उच्च उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।
2. **जल संचयनः** योजना के तहत जल संचयन के प्रोजेक्ट्स की शुरुआत की गई है जिससे बारिश के पानी को संचित करके सुरक्षित रखा जा सके।
3. **वृक्षारोपणः** योजना के अंतर्गत वृक्षारोपण की प्रोत्साहना की जाती है जिससे भूमि की आर्थिक और पर्यावरणिक सुरक्षा बढ़ती है।
4. **किसानों की आय वृद्धिः** सिंचाई से किसानों के पास अधिक समय होता है जिससे वे अन्य कृषि संबंधित कामों में लग सकते हैं और आय में वृद्धि हो सकती है।

यह योजना किसानों को जल संसाधन के प्रबंधन में मदद करने के साथ-साथ उनकी आर्थिक स्थिति में भी सुधार करने का प्रयास करती है।

फसल बीमाः किसानों के लिए जोखिम कम करनाः फसल बीमा किसानों की सुरक्षा करता है, उन्हें फसल बर्बाद होने की स्थिति में सुरक्षा कवच प्रदान करता है। यह उन्हें मौसम से संबंधित नुकसान और मूल्य में उतार-चढ़ाव से बचाता है, जो महत्वपूर्ण वित्तीय कठिनाइयों का कारण बन सकता है। हालाँकि, इसकी महत्वपूर्ण भूमिका के बावजूद, भारत में फसल बीमा कवरेज में अभी भी सुधार की आवश्यकता है। 2014 में, केवल 6.7% किसानों को फसल बीमा के तहत कवर किया गया था, जो बढ़ती जागरूकता और उठाव की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है।

अत्यधिक मौसम की स्थिति प्रतिरोधी कृषि पद्धतियां-अत्यधिक बारिश और सूखे के प्रभावों को कम करने के लिए ऐसी कृषि पद्धतियों, प्रौद्योगिकियों और बीजों को बढ़ावा देने की आवश्यकता है जो ऐसी चरम मौसम स्थितियों के प्रति लचीले हों। भारी वर्षा के दौरान जल धारण को बढ़ाने और मिट्टी के कटाव को कम करने के लिए किसान संरक्षण कृषि को अपना सकते हैं, जिसमें न्यूनतम मिट्टी की गड़बड़ी, स्थायी मिट्टी का आवरण और फसल चक्र शामिल है। सटीक सिंचाई प्रणालियाँ, जैसे ड्रिप सिंचाई, पानी के उपयोग को अनुकूलित कर सकती हैं और सूखे के दौरान पानी के नुकसान को कम कर सकती हैं। सूखा-सहिष्णु फसल किस्मों और आनुवंशिक रूप से संशोधित बीजों को विकसित करना और बढ़ावा देना अधिक टिकाऊ और उत्पादक खेती में योगदान दे सकता है। इन प्रथाओं, प्रौद्योगिकियों और बीजों को अपनाने से किसानों की मौसम की अनिश्चितताओं के प्रति लचीलापन बढ़ेगा और समग्र कृषि उत्पादकता और स्थिरता में सुधार होगा। कृषि की सुरक्षा और मौसम की अनिश्चितताओं के खिलाफ किसानों का समर्थन करने के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। फसल बीमा, लघु और दीर्घकालिक रणनीतियों और लचीली प्रथाओं और प्रौद्योगिकियों को अपनाने जैसे उपायों के माध्यम से, हम किसानों को सशक्त बना सकते हैं, कृषि लचीलेपन को बढ़ा सकते हैं, और भारत के महत्वपूर्ण कृषि क्षेत्र के लिए एक सुरक्षित भविष्य सुनिश्चित कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

बेल की खेती

उपेन्द्र मौर्य (शोध छात्र) फल विज्ञान विभाग सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक वि.वि. मेरठ (उ.प्र.)

इमरान अली (परास्नातक छात्र) फल विज्ञान विभाग सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक वि.वि. मेरठ (उ.प्र.)

सिद्धार्थ कुमार सब्जी विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

अभिषेक चन्द्र (शोध छात्र) पुष्प विज्ञान एवं भू-दृश्य निर्माण विभाग सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक वि.वि. मेरठ (उ.प्र.)

राहुल कुमार (परास्नातक छात्र), सब्जी विज्ञान विभाग सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक वि. वि. मेरठ (उ.प्र.)

सौरभ कुमार सिंह (परास्नातक छात्र) फल विज्ञान विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक वि. वि. मेरठ (उ.प्र.)

बेल भारत का देशज फल वृक्ष है द्य वैदिक साहित्य मे बेल को श्रीफल, दिव्य वृक्ष कहा गया है। बेल पोषण और औषधीय गुणों के लिए प्रचलित है। बेल को अन्य नामो जैसे बंगाल क्वीन, इंडियन क्वीन, गोल्डेन सेब, पवित्र फल, पत्थर सेब से भी जाना जाता है। इसमें मार्मेलोसिन् की अधिकता होती है। इससे बनी औषधियाँ दस्त ,पेप्टिक अल्सर को ठीक करने के काम आती है। इसके सेवन से श्वास संक्रमण एवं कब्ज मे राहत मिलती है। बेल में महत्वपूर्ण औषधीय गुणों जैसे- एंटी माइक्रोबियल, एंटीडायबिटिक, एंटीइंफ्लेमेटरी, एंटीपायरेटिक, ऐनाल्जेसिक, कार्डियोप्रोटेक्टिव, एंटीस्पर्मेटोजेनिक, एंटीकैंसर और रेडियो प्रोटेक्टिव होने कारण इसे औषधिय पौधा माना जाता है। बेल पर्णपाती, 6 - 8 मीटर की ऊंचाई का वृक्ष है। जिसमे हरे सफेद मीठे सुगंधित फूल होते है। फल आयताकार एवं आकार में पायरीफार्म आकार के होते है। बेल हिमालय की तलहटी, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, झारखंड, मध्यप्रदेश, दक्कन के पठार और पूर्वी तट के साथ बढ़ती हुई पाई पाती है।

पोषक तत्व सारणी

पोषक तत्व	पोषक तत्व मात्रा (प्रति 100 ग्राम में)
एनर्जी	137 कि. कैलोरी
कार्बोहाइड्रेट	31.8 ग्राम
प्रोटिन	1.8 ग्राम
वसा	0.3 ग्राम
नमी	55 ग्राम
फाइबर	2.9 ग्राम
विटामिन ए	55 मि. ग्रा.
विटामिन सी	60 मि. ग्रा.
विटामिन बी1	0.13 मि. ग्रा.
विटामिन बी 2	1.19 मि. ग्रा.
विटामिन बी 3	1.1 मि. ग्रा.

मृदा एवं जलवायु :- बेल का पौधा किसी भी प्रकार की मिट्टी मे उगाया जा सकता है परन्तु व्यवसायिक दृष्टि से अच्छी जल निकाश वाली बलुई दोमट तथा 5-8 PH वाली भूमि सर्वोत्तम होती है। उसके लिए उपयुक्त तापमान 7-46 °C उपयुक्त होता है।

किस्में: कृषि विश्वविद्यालयों एवं भाकृअनुप के अनुसंधान संस्थानों की चयनित किस्मों के प्रचलन मे आने के कारण पूर्व में विकासित किस्मों जैसे- सिवान, देवरिया बड़ा, कागजी इटावा, चकिया, मिर्जापुरी, कागजी गोण्डा आदि संस्तुति अब नहीं की जा रही है।

नरेंद्र बेल- 1,5,6,7,9,16,17 सी.आई.एस.एच. बी - 1, 2, पन्त अपर्णा,पन्त शिवानी, पन्त सुजाता, पन्त उर्वशी, थार दिव्या, थार नीलकंठ, गोमा यशी।

नरेंद्र बेल- 1, और नरेंद्र बेल- 2- सबसे अधिक लोकप्रिय एवं अच्छी उपज देने वाली।

नरेंद्र बेल - 5 : फल सिरे पर थोड़ा चपटा, मध्यम आकार 35-280 ए ब्रीक्स, कम बीज, पतला छिलका एवं औसत वजन 1.0-1.5 किग्रा होता है। उपज औसत 64.20 किग्रा प्रति वृक्ष तक हो ता है।

नरेंद्र बेल-9 : फल बड़े आकार, गोल/अंडाकर, औसत वजन 1.2-1.8 किग्रा प्रति फल तक होता है। औसत उपज 98.78 किग्रा प्रति वृक्ष होता है।

नरेंद्र बेल - 16 : फल औसत वजन 0.7-0.8 किग्रा तथा औसतन उपज 72.13 किग्रा प्रति वृक्ष तक होता है।

सी. आई.एस.एच. बी-1 : फल अप्रेल- मई तक पकते है। औसत वजन 1 किग्रा, फल अंडाकर होते है तथा औसतन उपज 50-80 किग्रा तक प्राप्त होता है।

गोमा यशी (गुजरात): फल औसत 1.14 किग्रा पेड़ मे बहुत कम कांटे होते हैं। औसत उपज 96 किग्रा तक प्राप्त होता है।

थार दिव्या : अगे ती किस्म है फल औसत न वजन 1.5-2.5 किग्रा होता है रंग पीला, आकार मे गोल लम्ब,पतला छिलका तथा पेड़ पर बहुत कम कांटे होते हैं। अर्ध शुष्क क्षेत्रों में औसत न उपज 90-108 किग्रा प्रति वृक्ष तक प्राप्त होता है।

पंत अपर्णा: बौनी एवं कम घना, प्रसंस्करण युक्त,औसतन फल 0.8-1.10 किग्रा भार तथा औसतन उपज 107.23 किग्रा प्रति वृक्ष तक होता है।

प्रवर्धन: बेल में नये पौधे मुख्य रूप से बीज द्वारा तैयार किए जाते है। व्यवसायिक स्तर पर चश्मा (पेंच बडिंग) और वलयन (रिंग बडिंग) विधि से तैयार किया जाता है। मूलवृन्त के लिए बीजों की बुआई मई- जून में 15-20 सें. मी. की ऊँचाई एवं 1म10 मीटर की क्यारियों में 1-2 सें. मी. की गहराई पर करते हैं। कालिका को चश्मा विधि से मई- जून में एक साल के पौधे पर 1 महीने की शाखा से कालिका को लेकर करते हैं।

गड्ढे तैयार करना एवं रोपण : बेल के पौधों को किस्मों के अनुसार 5-8 मी0 की दूरी पर जुलाई-अगस्त माह में करते हैं। बुआई से पूर्व अप्रैल- मई माह में 1म1म1 मी के गड्ढे तैयार कर 25-30 दिन खुला रहने के उपरांत प्रति गड्ढा 3-4 टोकरी सड़ी गोबर की खाद तथा दीमक के लिए क्लोरपारीफास् 20 ई. सी. गड्ढो में डालकर ढक दें।

खाद एवं उर्वरको का प्रयोग : बेल के पौधों की अच्छी बढ़वार, अधिक फलन एवं पेड़ों को स्वस्थ रखने के लिए प्रारम्भ में प्रति पौधा 10 किग्रा गोबर, 50 ग्राम नाइट्रोजन, 25 ग्राम फॉस्फोरस तथा 50 ग्राम पोटाश की मात्रा को जून - अगस्त तक थालो में देना चाहिए। 10 वर्ष के वृक्ष के लिए 500+350+500 ग्राम तथा 50 किग्रा गोबर की खाद देना चाहिए। जिन बागों में फलों के फटने की समस्या हो, उनमें खाद उर्वरक के साथ 100-150 ग्राम/वृक्ष बोरेक्स (सुहागा) का प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई : नये पौधों की दस वर्ष तक नियमित सिचाई करनी पड़ती है। बड़े वृक्षों के सुविधा होने पर मई-जून में 20-25 दिन के अन्तरात पर सिचाई कर देना चाहिए।

सधाई एवं छटाई : बेल पौधे में अत्यधिक काट- छांट की आवश्यकता नही होती है परंतु नये पौधो की उपयुक्त ढांचा तैयार करने के लिए प्रारंभिक अवस्था में सधाई (ट्रेनिंग) करना अत्यन्त आवश्यक होता है। सूखी एवं रोगग्रस्त शाखाओं को समय-समय पर काटकर, अलग कर देना चाहिए। वर्षा ऋतु से पहले जब प्रायः पौधों में पत्तियाँ नही होती कटाई छटाई के लिए उपयुक्त होता है।

फलों की तुड़ाई एवं उपज: कलमी बेल के पौधों में 4-5 वर्ष बाद फल लगते है। फल तैयार होने में लगभग 10-11 माह का समय लगता है। अप्रेल-मई में फल पक कर तैयार हो जाते है। फलों की संख्या वृक्ष के आकार के साथ बढ़ती है पूर्ण विकसित वृक्ष (10-12 वर्ष) से 100-150 किग्रा फल प्राप्त होता है।

रोग एवं कीट

बेल का कैंकर : यह रोग जैन्थोमोनास विल्वी बैक्टेरिया द्वारा होता है प्रभावित भागो पर जलशिक्त धब्बे बनते हैं जो बाद में भूरे रंग के हो जाते है। इस रोग के रोकथाम हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (200 PPM) का छिड़काव करें।

छोटे फलों का गिरना: यह रोग फ्यूज़ैरियम नामक फफूंद से होता है। भूरा छोटा घेरा फल के उपरी भाग पर विकसित होता है। नियंत्रण के लिए कार्बेन्डाज़िम (0.1%) का छिड़काव करें।

फलों का गिरना/ आन्तरिक विगलन: परिपक्व फल गिरते हैं जिसमें आंतरिक विगलन के लक्षण पाये जाते है। रोकथाम के लिए बोरेक्स 300 ग्राम प्रति वृक्ष का उपयोग करें।

कीट: बेल मे लगने वाले कीटों में प्रमुख कीट पर्ण सुरंगी एवं पर्णभक्षी इल्ली हैं। यह वृक्ष की पतियों को खाती है । इन कीटों के रोकथाम के लिए रोगर (0.5%) या थायोडान (0.7%) का छिड़काव करें।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

सहजन (मोरिंगा) एक बहु-उपयोगी पोषक तत्व और औषधीय वनस्पति

विजय कुमार (असिस्टेंट प्रोफेसर) स्कूल ऑफ़ एग्रीकल्चर साइंस IIMT यूनिवर्सिटी मेरठ

हरीश कुमार (असिस्टेंट प्रोफेसर) स्कूल ऑफ़ एग्रीकल्चर साइंस IIMT यूनिवर्सिटी मेरठ

एस.के. सिंह (प्रोफेसर) विभाग जेनेटिक्स एंड प्लांट ब्रीडिंग, सी.सी.आर. (पीजी) कॉलेज, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)

परिचय: सहजन को सहजन या मोरिंगा के नाम से जाना जाता है। आमतौर पर लोग कुसुम का इस्तेमाल इसकी सब्जी बनाने के लिए ही करते हैं. बहुत कम लोग जानते हैं कि वृत्ति और भी कई तरह से सेहत के लिए फायदेमंद होती है। जन्मजात औषधि के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। कुसुम के पेड़ को स्वास्थ्य लाभ माना जाता है। भारत में सहजन का इस्तेमाल सदियों से औषधि के रूप में किया जाता रहा है। जन्मजात चूना शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत करता है। सहजन को सुपीफूड भी कहा जाता है। सहजन सिर्फ सेहत के लिए ही फायदेमंद नहीं है, बल्कि ब्यूटी प्रोडक्ट्स में भी इसका इस्तेमाल किया जाता है।

पौधे का विवरण: कुसुम के पेड़ की ऊंचाई लगभग 10 मीटर होती है, लेकिन लोग इसे 1.5 से 2 मीटर की ऊंचाई तक काट देते हैं ताकि वे इसके फल, फूल और पत्तियों तक आसानी से पहुंच सकें। इसके कच्चे फल सबसे ज्यादा इस्तेमाल किए जाते हैं।

उपयुक्त भूमि: कुसुम का उत्पादन विभिन्न प्रकार की मिट्टी में किया जा सकता है और यदि आवश्यक हो तो कुसुम के पौधे पोषक मिट्टी में भी जीवित रह सकते हैं। अच्छी जल निकासी वाली और रेतीली मिट्टी में सहजन पनपते हैं। कुसुम के पौधे जड़ सड़न के प्रति संवेदनशील होते हैं, इसलिए वे बहुत घनी मिट्टी या बहुत अधिक नमी वाली मिट्टी में नहीं पनप सकते।

पानी : पानी के अनुकूल पौधों की मिट्टी को लगातार नम रखें, लेकिन गीला नहीं। जन्मजात पौधे 'गीलेपन' को सहन नहीं कर पाते हैं और पानी के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। प्रत्यारोपित जन्मजात पौधे सूखा-सहिष्णु होते हैं, लेकिन विकास को प्रोत्साहित करने के लिए पौधों को लगातार उच्च नमी की आवश्यकता होती है।

तापमान और आर्द्रता: सहजीवी पौधे 77-95 डिग्री फ़ारेनहाइट के तापमान में सबसे अच्छा करते हैं, हालांकि वे 118 डिग्री फ़ारेनहाइट तक के अत्यधिक तापमान को सहन कर सकते हैं, जब तक कि वे छाया में स्थित हों। ये पौधे ठंडे तापमान को आसानी से सहन नहीं करते हैं, हालांकि वे कुछ हल्के पाले को सहन कर सकते हैं। नीलगिरी के पौधे साल भर बढ़ सकते हैं और साल के किसी भी हिस्से में गर्म गर्मी का अनुभव करने वाले किसी भी क्षेत्र में उगाए जा सकते हैं।

उर्वरक (उर्वरक की मात्रा): रोपण के बाद, जन्मजात पौधों को विकास में मदद करने के लिए एक सामान्य, सभी उद्देश्य वाले उर्वरक के हल्के उपयोग से लाभ होता है। एक बार एक पौधा स्थापित हो जाने के बाद, जन्मजात पौधों को एक निश्चित मात्रा में उर्वरक की आवश्यकता नहीं होती है। हालांकि, वे खाद या खाद के साथ नियमित रूप से शीर्षासन को ढीला करने से लाभान्वित होते हैं।

प्रजाति (किस्में): जड़ी-बूटियों के पौधों की 13 से अधिक प्रजातियां हैं, जिनमें से सभी का उपयोग भोजन या औषधीय प्रयोजनों के लिए किया जा सकता है। पेरियाकुलम1-, पीकेएम1 और पीकेएम-2 फली उत्पादन के लिए सबसे आम और व्यावसायिक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली वार्षिक किस्में हैं। धनीजा, भाग्य, कोंकण रुड़ची और अनुपमा सहजन के अन्य लोकप्रिय पात्र हैं।

प्रसार: प्रजनन जन्मजात बीज या कलमों द्वारा प्रचारित किया जा सकता है, या तो दोनों तरीकों से। इसकी उच्च अंकुरण दर के कारण सीधी बुवाई भी संभव है। अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी में कुसुम के पौधों को वर्ष के किसी भी समय अंकुरित किया जा सकता है। वानस्पतिक प्रसार के लिए, 1 मीटर लंबा और कम से कम 4 सेमी। व्यास की कटिंग का उपयोग किया जा सकता है। गहरी पत्तियों के उत्पादन के लिए पौधों के बीच की दूरी 15 × 15 सेमी होनी चाहिए। या 20×10 सेमी। होना चाहिए, सुविधाजनक रोपण, रखरखाव और कटाई की सुविधा के लिए

दो पंक्तियों के बीच 2 से 4 मीटर की गली रखी जा सकती है। उच्च घनत्व के कारण कभी-कभी निराई और रोग नियंत्रण काफी मुश्किल होता है। अर्ध-गहन उत्पादन के दौरान, पौधों को 50 सेमी X 1 मीटर की दूरी पर रखा जाता है। यह कम शोर में अच्छे परिणाम देता है। मोरिंगा के पेड़ों के प्राकृतिक बाड़ के रूप में कई फायदे हैं, क्योंकि इन्हें गधों में लगाया जा सकता है और अन्य फसलों के साथ मिलाया जा सकता है। कृषि खेती में मोरिंगा के पौधों के बीच की दूरी आमतौर पर 2 मीटर और 4 मीटर होती है।

छंटाई: छंटाई नियमित छंटाई धनिया के पौधों को स्वस्थ रखने और पत्तियों के विकास को बढ़ावा देने, टूटने से बचाने और पेड़ को बहुत लंबा होने से रोकने में मदद करती है। यदि बिना काटे छोड़ दिया जाता है, तो सेजब्रश के पौधे शाखाओं के सिरों के पास कई शाखाओं, कुछ पत्तियों और केवल फूलों के साथ लंबे हो जाएंगे, जिससे कटाई मुश्किल हो जाएगी। नियमित छंटाई के साथ शाखाओं को प्रोत्साहित करने से भी फसल को बढ़ाने में मदद मिलती है।

कटाई : कटाई मोरिंगा के पौधों के लगभग सभी भाग जड़ों से लेकर पत्तियों और फूलों तक, बड़ी फलियों और शाखाओं से उगने वाले बीजों तक खाने योग्य होते हैं। पत्तियों को अक्सर सब्जी के रूप में पकाया जाता है या चाय के लिए भाप में पकाया जाता है, जिसकी पिसी फली खाना पकाने के लिए उपयोग की जाती है, और खाना पकाने के लिए बीजों से निकाला गया तेल, और इत्र और साबुन में इस्तेमाल किया जा सकता है। एक बार जब वे लगभग 1/2 इंच व्यास के हो जाते हैं और आसानी से टूट जाते हैं, तो फली को काटा जा सकता है। मोरिंगा के पत्तों को किसी भी समय तोड़ा जा सकता है, हालांकि पुराने पत्तों को नए पत्तों की तुलना में मोरिंगा पाउडर बनाना कठिन होता है।

कीट / बीमारी : सौभाग्य से, सेजब्रश के पौधे कई अलग-अलग कीटों और बीमारियों के लिए प्रतिरोधी हैं, हालांकि, सेजब्रश के पेड़ों में दीमक अभी भी एक समस्या हो सकती है। यदि आप दीमक देखते हैं, तो पेड़ के चारों ओर बैंगन के पत्तों, महोगनी के चिप्स या टेफ्रोडिसियाक के पत्तों को मलने से मदद मिल सकती है।

सहजन के फायदे (जन्मजात लाभ): सहजन प्रोटीन, विटामिन सी, विटामिन ए और कैसियम से भरपूर होता है। सहजन में सभी आवश्यक पोक तत्व होते हैं। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइकोथेरेपी रिसर्च ने पाया है कि बैंगन में चंदन से 7 गुना ज्यादा विटामिन सी, गाजर से 10 गुना ज्यादा विटामिन ए और केले से 15 गुना ज्यादा पोटैशियम होता है। इसके अलावा, इसमें दूध की तुलना में 17 गुना अधिक कैस्टियम और सब्जियों की तुलना में 25 गुना अधिक आयरन होता है। दही में 9 गुना ज्यादा पायोटीन होता है। इसलिए यह हमारे लिए प्रोटीन, विटामिन, खनिज और फाइबर का बहुत अच्छा स्रोत है। यह स्वास्थ्य के लिए अच्छा है और आम तौर पर उपलब्ध होने के कारण कुपोषण को नियंत्रित करने में काफी उपयोगी है।

पशुधन के लिए उपयोगिता: मोरिंगा के पत्तों का व्यापक रूप से सूअरों, बकरियों, जुगाली करने वाले पशुओं जैसे मुर्गियों, भेड़ और मछली के लिए पारंपरिक प्रोटीन फ़ीड के विकल्प के रूप में उपयोग किया जाता है। मोरिंगा की पत्तियाँ न केवल पोषक तत्वों की उच्च सामग्री के कारण बल्कि एंटीन्यूट्रिएंट्स की कम सामग्री के कारण भी पशु आहार में उपयुक्त हैं। आहार में मोरिंगा लीफ मील का उपयोग करके अंडे की गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है।

ब्लड शुगर पर नियंत्रण: सहजन में फाइटोकेमिकल्स होते हैं जो ब्लड शुगर को नियंत्रित करने का काम करते हैं. इसमें एंटी-इंफ्लेमेटरी और एंटी-बैक्टीरियल गुण होते हैं, जो पेट के लिए बहुत अच्छा होता है।

एनीमा का उपचार: कोजेन में भारी मात्रा में आयरन होता है। इसीलिए सिरदर्द विशेषज्ञ एनीमिया के इलाज के लिए इसके उपयोग की सलाह देते हैं। मोरिंगा प्रोटीन, अमीनो एसिड, फाइटेट, विटामिन बी, सी और ई से भरपूर होता है।

सहजन (जन्मजात) के विभिन्न भागों के औषधीय उपयोग

जड़ का चिकित्सा उपयोग

- जड़ों का उपयोग जलनरोधी, जंग, जलनरोधी, जलनरोधी, जलनरोधी, जलनरोधी, लकवाग्रस्त दूध आदि रोगों को ठीक करने हेतु किया जाता है।
- एक कार्सिनोजेनिक / एंटीसेप्टिक विष के रूप में उपयोग किया जाता है।
- गठिया, सूजन, जोड़ों के दर्द, पीठ के निचले हिस्से या गुदा के दर्द और कब्ज का इलाज करता है।

पत्तियां का चिकित्सा उपयोग

- पत्तियां रेचक होती हैं, घावों पर मिह्म के रूप में लगाई जाती हैं। मिह्म मथेपी लगाने से सिद्ध में कमी आती है। ■ कब्ज, खांसी, गले में खराश हेतु उपयोग किया जाता है। निमोनिया, आंख और कान के संक्रमण, स्कर्वी और जुकाम के लिए उपयोग किया जाता है। ■ पत्तियों का काढ़ा ग्लूकोज के स्तर को नियंत्रित करता है, इसे ग्रंथियों की सूजन को कम करने के लिए लगाया जाता है।

तने की छाल का चिकित्सा उपयोग

- कटु, वेदांत और नेत्र रोगों को दूर करने के लिए प्रयोग किया जाता है।
- प्लीहा को बड़ा करने और गर्दन की थर्मल ग्रंथियों के गठन को रोकने, ट्यूमर को नष्ट करने और ऑस्टियोपोरोसिस को ठीक करने के लिए उपयोग किया जाता है।
- जड़ की छाल का काढ़ा कान के दर्द से राहत के लिए कानों में डाला जाता है और दर्द निवारक के रूप में दांतों की कैविटी पर भी लगाया जाता है।

गोंद का चिकित्सा उपयोग

- दंत क्षय के लिए प्रयोग किया जाता है, और कसैला और रूफसेन्ट है। ■ तिल के तेल में गोंद मिलाकर लगाने से दूध को राहत मिलती है। ■ बुखार, आंतों की शिकायत, दस्त, अस्थमा और कभी-कभी गर्भपात के लिए उपयोग किया जाता है। ■ उपदंश और जोड़ों के दर्द में भी उपयोगी है।

फूल का चिकित्सा उपयोग

- उत्तेजक, कामोत्तेजक, गर्भपात और शामक के रूप में फूलों का उच्च औषधीय महत्व है। सूजन को ठीक करने के लिए प्रयोग किया जाता है। इसका उपयोग मांसपेशियों की बीमारियों, हिस्टीरिया, ट्यूमर, यकृत की सूजन और कोलेस्ट्रॉल कम करने के लिए भी किया जाता है।

बीज का चिकित्सा उपयोग: लीवर के ऊपर बीजो का अर्क अपना सुरक्षात्मक प्रभाव होता है। मोरिंगा पॉड्स से अलग किए गए पतला पेरोक्साइड, डाइथियोकार्बोनेट और आइसोथियोसाइनेट ग्लाइकोसाइड एंटीहाइपरटेंसिव हैं।

निष्कर्ष : मोरिंगा दुनिया के सबसे उपयोगी पेड़ों में से एक है, क्योंकि पेड़ के लगभग सभी हिस्से उपयोगी होते हैं। मोरिंगा एक ऐसा पेड़ है जिसमें इंसानों के लिए जरूरी पोषक तत्व मौजूद होते हैं। मोरिंगा की शक्तिशाली और औषधीय क्षमता के बारे में जागरूकता बढ़ाई जानी चाहिए, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में जहां कुपोषण के मामले प्रचलित हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

मूली की वैज्ञानिक खेती

लालू प्रसाद (शोध छात्र) सब्जी विज्ञान विभाग आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या (उ.प्र.)

कु. पूजा फर्त्याल शोध छात्रा, गोविन्द वल्लभ पंत कृषि एवं प्रौ. वि.वि. पंतनगर उत्तराखंड

धनश्वरी आर्या शोध छात्रा, भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान (नई दिल्ली)

शैलेन्द्र कुमार शोध छात्र, आरपीसीयू पूसा समस्तीपुर (बिहार)

अमरेश कुमार शोध छात्र भारतीय सब्जी अनुसन्धान संस्थान वाराणसी

मूली- मूली जड़ वाली फसलों में प्रमुख स्थान रखती है तथा यह अंताफसल तथा सहचर रुप में अन्य फसलों के साथ दो लाइनों के बीच तथा धीरे-धीरे बढ़ने वाली फसलों के पौधों की लाइनों में उगाने के लिए बहुत लाभदायक फसल है। और इसका उत्पत्ति स्थान दक्षिण पश्चिमी यूरोप माना जाता है भारत में यह प्रत्येक स्थान पर पैदा की जाती है लेकिन मुख्य रूप से बिहार उत्तर प्रदेश पंजाब असम पश्चिम बंगाल हरियाणा गुजरात और हिमाचल प्रदेश में पैदा की जाती है।

आहार मूल्य	मूली में
नमी	94.0 ग्राम
प्रोटीन	00.7ग्राम
वसा	00.1 ग्राम
खनिज पदार्थ	00.6 ग्राम
रेशा	00.8 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट	03.4 ग्राम
कैलोरी	17.0
कैल्शियम	50.0 मिली ग्राम
ऑक्जेलिक एसिड	09.0मिली ग्राम
फास्फोरस	22. 0 मिली ग्राम
लोहा	0.4 मिलीग्राम
सोडियम	33.0 मिलीग्राम
पोटैशियम	138.0 मिलीग्राम

विटामिन ए 5.0 । विटामिन सी 15 मिलीग्राम पाई जाती है।

प्रजातियां: मूली को आकार स्वरूप तथा रंग और उगने के आधार पर काफी अंतर पाया जाता है मूली मुख्य रूप से दो भागो बांटा गया है यूरोपीय किस्में इसमें मुख्य रूप से व्हाइट आईसिकल, स्कारलेट ग्लोब, फ्रेंच ब्रेकफास्ट, चैंपियन, चेरी बैल, रेड प्रिंस, आदि प्रमुख प्रजातियां आती हैं। जबकि एशियाई किस्मों में पूसा देसी पूसा चेतकी, व्हाइट जैपनीज, पंजाब सफेद,और पूसा रेशमी आती हैं।

मूली की कुछ प्रमुख जातियों का वर्णन

जापानी सफेद: इस प्रजाति की मूली 15 से 20 सेंटीमीटर लंबी मुलायम कम तीखी और सफेद होती है इसकी बुवाई अक्टूबर से दिसंबर तक की जाती है तथा फसल 40 से 45 दिन बाद तैयार हो जाती है।

व्हाइट लॉन्ग: यह जाति खाने में स्वादिष्ट तथा जड़ों की लंबाई काफी

अधिक और चिकनी व सफेद रंग की होती है।

पूसा देसी: यह प्रजाति देसी किस्मों के चयन से निकाली गई है इसकी जड़े 30 से 35 सेंटीमीटर लंबी मोटाई अधिक तीखी होती है इसकी बोबाई 15 अगस्त से अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक की जाती है तथा 50 दिन में तैयार होती है।

पूसा रेशमी: इसका विकास संकरीकरण द्वारा हुआ है इसकी जड़ों की मोटाई मध्यम होती है रंग सफेद लेकिन ऊपर से सिरा हरा होता यह चिकनी मध्यम 20 से 25 सेंटीमीटर लंबी होती है इसकी बुवाई 15 सितंबर से अक्टूबर तक होता है यह बोने के 50 से 55 दिन बाद तैयार हो जाते हैं।

कल्याणपुर: 1 यह प्रजाति शाक भाजी अनुसंधान केंद्र कल्याणपुर (कानपुर) से विकसित की गई है इसकी जड़े मध्यम आकार वाली सफेद चिकनी एवं मुलायम होती हैं बोने का समय 40 से 45 दिन बाद तैयार हो जाती है।

पंजाब सफेद: यह किशन पंजाब विश्वविद्यालय द्वारा विकसित की गई है जड़ की लंबाई 30 से 40 सेंटीमीटर तथा रंग सफेद होता है इसका स्वाद मध्यम तीखा होता तथा होने के 50 दिन बाद तैयार हो जाती है इसके बोने का समय सितंबर अक्टूबर होता है।

पूसा हिमानी: यह प्रजाति संकरकरण द्वारा निकाली गई है इसकी जड़े मध्य मोटी नीचे की तरफ पतली तथा 20 से 25 सेंटीमीटर लंबी होती है ऊपर का भाग हरा होता इसका रंग सफेद , मैदानी भाग में सितंबर से फरवरी तक बुवाई की जाती है यह 60 से 65 दिन बाद तैयार हो जाती है।

जलवायु और भूमि: मूली गर्मी के लिए सहनशील है लेकिन अच्छे सुगंध विन्यास तथा आकार के लिए ठंडा मौसम जिसका तापक्रम 10 से 15 सेल्सियस तापक्रम अच्छा होता है तथा यह सभी प्रकार की भूमि में उगाई जा सकती है लेकिन अच्छी खेती के लिए बलुई दोमट भूमि सर्वोत्तम होती है और इसकी अच्छी प्रकार की खेती के लिए पांच से छह जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी तथा खेत चिकना खरपतवार रहित कर लेना चाहिए।

बोने का समय और बीज की मात्रा: मूली की वर्षभर बुवाई की जाती है। लेकिन बड़े पैमाने पर सितंबर से जनवरी तक मैदानों में बोई जाती है तथा मार्च से अगस्त तक पहाड़ों पर वही बोई जाती है और बीज 10 से 12 किलो प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है।

बोने का ढंग एवं खाद उर्वरक: मूली मुख्य रूप से मेड़ों पर बोई जाती है तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से 15 सेंटीमीटर और कतार से कतार की दूरी 20 से 23 सेंटीमीटर रखते हैं तथा 1 हेक्टेयर में 20 से 25 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की खादऔर 100 किलोग्राम नाइट्रोजन 70 किलोग्राम फास्फोरस 70 किलोग्राम पोटाश का प्रयोग करते हैं।

सिंचाई: वर्षा ऋतु में फसल में सिंचाई की कोई आवश्यकता नहीं होती है अन्य फसलों के लिए भूमि में नमी की कमी हो तो हल्की सिंचाई कर देकर बीजों की बुवाई करनी चाहिए इसके बाद जब पौधा 4 से 7 सेंटीमीटर और तीन से चार पत्तियों का हो जाए तब कर देनी चाहिए अधिक सिंचाई नहीं करनी चाहिए लेकिन साथ ही ध्यान रखना चाहिए नमी की कमी ना हो पाए नहीं तो जड़ों का विकास रुक जाएगा गर्मी में सिंचाई 4 से 7 दिन के अंतर पर करनी चाहिए।

अंतशास्य क्रियाएं- 2-3 निराई गुड़ाई करना चाहिए यदि आवश्यकता हो तो तीसरी निराई करना चाहिए। जो दूसरी निराई के 15 दिन बाद करते हैं पौधे अधिक हो तो उन्हें निकाल देना चाहिए प्रत्येक सिंचाई के बाद पपड़ी को तोड़ना चाहिए तथा ऊपर निकली हुई जड़ों पर हल्की मिट्टी चढ़ा देना चाहिए इससे पैदावार अधिक होती है।

कटाई और पैदावार: इसकी कटाई जड़ों की मुलायम अवस्था में करनी चाहिए क्योंकि कटाई में देर करने से विशेषकर जड़े कठोर बन जाती है जो बाजार के लिए अच्छी नहीं होती है और पैदावार विदेशी किस्में की प्रति हेक्टेयर 80 से 100 कुंटल उपज प्राप्त होती है तथा देसी किस्मों की पैदावार 250 से 300 कुंतल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है।

बीज उत्पादन: शीतकालीन प्रजातियों का बीज उत्पादन केवल पहाड़ों पर किया जाता है जबकि ग्रीष्म कालीन प्रजातियों का बीज उत्पादन मैदानों में भी किया जा सकता है लेकिन पहाड़ों पर इसकी पैदावार अधिक होती है तथा मूली एक पर परागित फसल है इसका परागण मधुमक्खी के माध्यम से होता है। प्रति हेक्टेयर 3 से 6 क्विंटल बीज प्राप्त होता है।

कीड़े मकोड़े

माहू: शिशु पत्तियों का रस चूसते हैं जिससे पत्तियां पीली पड़ जाती है तथा एक प्रकार का चिपचिपा पदार्थ भी छोड़ता है इसकी रोकथाम के लिए फॉलीडोल 0.04% अथवा 0.1% मेटासिस्टॉक्स का प्रयोग करना चाहिए।

कैटरपिलर: पत्तियों को खाने वाला कैटरपिलर यह पत्तियों की नसों को खा जाता है और जाली नुमा बना कर छोड़ देता है इसकी रोकथाम के लिए मेटास्टॉक्स का प्रयोग करते हैं।

बीटिल: इसका प्रौढ़ तथा सूडिया दोनों ही पौधों को नुकसान पहुंचाते हैं ग्रसित पौधों की पत्तियों सूख जाती हैं किसके नियंत्रण के लिए मेटासिस्टॉक्स का प्रयोग करते हैं।

स्टिंग बग्स: यह पत्तियों से उनके अंदर से रस चूस लेता है। इसके नियंत्रण हेतु बीएचसी डस्ट का प्रयोग करते हैं सल्फर का भुरकाव करना चाहिए।

जैसिड: इसके नियंत्रण के लिए निकोटिन सल्फेट का छिड़काव करना चाहिए या मेलाथियान 25 ईसी के 2 लीटर मात्रा को 800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए आवश्यकता पड़ने पर 8 से 10 दिन के अंतर पर दूसरा छिड़काव करना चाहिए फसल में जैसिड तथा माहू के बचाव हेतु 0.1% मेटासिस्टॉक्स के घोल का 15 दिन के अंतर पर छिड़काव करना चाहिए।

बीमारियां

मोजैक: इसमें पौधे की बढ़वार रुक जाती है तथा पौधे की पत्तियां मुड़ जाती है जो उपज पर अधिक प्रभाव डालती है, इसके नियंत्रण हेतु अवरोधि जातियों को उगाना चाहिए और रोग ग्रसित पौधों को उखाड़ कर जला देना चाहिए।

अल्टरनेरिया ब्लाइट: इसकी रोकथाम के लिए -78 का 3 किलो या ब्लाइटॉक्स का 3 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए जो लाभकारी होता है।

रतुआ: इसकी रोकथाम हेतु Z-78 का 3 किलो या ब्लाइटॉक्स का 3 किलो प्रति हे. की दर से छिड़काव करना चाहिए जो लाभकारी होता है।

रूट नॉट नीमेटोड्स:पौधों की बढ़वार रुक जाती है इसके नियंत्रण के लिए नेमागोन का प्रयोग करना चाहिए।

फ्यूजेरियम रॉट: यह अधिक हानिकारक है इससे उपज पर प्रभाव पड़ता है इसके नियंत्रण के लिए मरक्यूरिक क्लोराइड का प्रयोग 1% करते हैं जो कि अधिक लाभकारी है।

एंथ्रेक्नोज: पत्तियों वा फल के ऊपर लाल काले धब्बे हो जाते हैं और उपज पर अधिक प्रभाव पड़ता है इसके नियंत्रण के लिए बोर्डेक्स मिक्सचर का प्रयोग करना चाहिए जो कि अधिक लाभकारी है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

मिट्टी में सूक्ष्मजीव विविधता सतत खेती के लिए वरदान

प्रदीप कुमार (शोध छात्र) मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

योगेश कुमार (सह-प्राध्यापक) मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

गौरव अयोध्या सिंह (शोध छात्र) पादप रोग विज्ञान सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

परिचय: मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की समृद्ध विविधता ने वैज्ञानिकों की रुचि को आकर्षित किया है। उन्होंने मिट्टी के इस मनोहारी और जटिल पारिस्थितिकी तंत्र के अध्ययन के लिए कई अध्ययनों को समर्पित किया हैं। इन अध्ययनों के माध्यम से सूक्ष्मजीवों के एक जटिल समुदाय का पता चला है जो मिट्टी की सतह के नीचे पाए जाते हैं। ये सूक्ष्मजीव मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने और टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बैक्टीरिया, कवक, आर्किया और प्रोटोजोआ जैसे मिट्टी के सूक्ष्मजीव मिट्टी के भीतर मौजूद विविध पारिस्थितिकी तंत्र का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। वे मिट्टी के ढांचे में रहते हैं और एक दूसरे के साथ जटिल संबंध बनाते हैं। इन सूक्ष्मजीवों की गतिविधियों का मिट्टी की उर्वरता और पोषक चक्रण को बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान होता हैं। विभिन्न जैविक प्रक्रियाओं में इन सूक्ष्मजीवों की चयापचय क्रियाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

मृदा सूक्ष्मजीव और पोषक तत्वों का चक्रण: पारिस्थितिक तंत्र पोषक तत्वों के चक्रण पर निर्भर करता हैं और मिट्टी के सूक्ष्मजीव इस प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कार्बन, नाइट्रोजन और फास्फोरस चक्र कई जैव-भू-रासायनिक चक्रों में से हैं जिनमें बैक्टीरिया, कवक, आर्किया और प्रोटोजोआ सहित मिट्टी के सूक्ष्मजीव भाग लेते हैं। ये सूक्ष्मजीव जटिल रासायनिक यौगिकों को सरल यौगिकों में तोड़ देते हैं जैसे वे कार्बनिक पदार्थों को तोड़ते हैं। वे अपनी चयापचय प्रक्रियाओं के माध्यम से मिट्टी में पोषक तत्व छोड़ते हैं, जिससे वे पौधों और अन्य प्राणियों द्वारा ग्रहण के लिए उपलब्ध हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, अमोनीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से, बैक्टीरिया कार्बनिक नाइट्रोजन को अमोनियम जैसे अकार्बनिक रूपों में बदल देते हैं। अन्य बैक्टीरिया नाइट्रीकरण की प्रक्रिया को अंजाम देते हैं, अमोनियम को नाइट्रेट में बदलते हैं, जिसका पौधे आसानी से उपयोग कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, मिट्टी के जीवाणु अनाइट्रीकरण में भाग लेते हैं, जो नाइट्रेट को वापस वायुमंडलीय नाइट्रोजन गैस में परिवर्तित करके नाइट्रोजन चक्र को पूरा करता है। फॉस्फोरस के चक्र में दूसरा कारक मिट्टी के सूक्ष्मजीव हैं। वे एंजाइमों का निर्वहन करते हैं जो कार्बनिक फास्फोरस अणुओं को विघटित करते हैं, पौधों के अवशोषण के लिए फास्फोरस जारी करते हैं। कुछ सूक्ष्मजीव, जैसे माइकोराइजल कवक, पौधों के साथ सहजीवी संबंध विकसित करते हैं जो पौधों की मिट्टी से फास्फोरस लेने की क्षमता को बढ़ाते हैं।

पादप-सूक्ष्मजीव अंतःक्रिया: पौधों और रोगाणुओं के बीच संबंध जिन्हें 'पौधे-सूक्ष्मजीव अंतःक्रिया' के रूप में जाना जाता है, लाभप्रद, तटस्थ या विनाशकारी हो सकते हैं। बैक्टीरिया और कवक से युक्त पारस्परिक सहजीवन जो पोषक तत्व प्रदान करते हैं और विकास को बढ़ावा देते हैं, लाभप्रद अंतःक्रिया के उदाहरण हैं। पौधों के

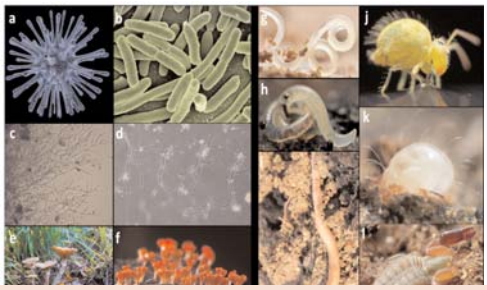

मिट्टी में रहने वाले सामान्य सूक्ष्मजीवों और पशु समूहों का अवलोकन।

विकास को प्रोत्साहित करने वाले राइजोबैक्टीरिया पौधों को बीमारियों से भी बचाते हैं। कुछ जीवाणु पौधों के प्राकृतिक शत्रुओं में रोगजनक के रूप में कार्य करते हैं। महत्वपूर्ण प्रभाव के बिना सह-अस्तित्व तटस्थ संबंधों की एक विशेषता है। हानिकारक अंतःक्रियाओं में बीमारियाँ पैदा करने वाले रोगजनक सूक्ष्मजीव और मेज़बानों से संसाधन निकालने वाले परजीवी पौधे शामिल हैं। इन अंतःक्रियाओं को समझने से कृषि में सुधार हो सकता है और टिकाऊ प्रथाओं को बढ़ावा मिल सकता है।

सतत कृषि के लिए मृदा सूक्ष्मजीवों का प्रबंधन: टिकाऊ कृषि मिट्टी के सूक्ष्मजीवों को नियंत्रित करने पर निर्भर करती है। बढ़ी हुई कार्बनिक पदार्थ सामग्री, कम जुताई, माइक्रोबियल इनोकुलेंट्स और जैव उर्वरक, खाद और वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग, फसल विविधीकरण, संतुलित उर्वरक, प्रभावी जल प्रबंधन, एकीकृत कीट प्रबंधन और मिट्टी की चल रही स्वास्थ्य पैरामीटर निगरानी कुछ ऐसी तकनीकें हैं जो मिट्टी के सूक्ष्मजीव समुदायों में सुधार कर सकती हैं। ये तकनीकें पोषक तत्वों के चक्रण, रोगों के नियंत्रण और मिट्टी के सामान्य स्वास्थ्य को बढ़ाती हैं, जिससे फसल उत्पादन बढ़ता है और रासायनिक आदानों की आवश्यकता कम हो जाती है। किसान लचीली और टिकाऊ कृषि प्रणालियाँ विकसित कर सकते हैं जो मिट्टी के रोगाणुओं की शक्ति का लाभ उठाकर दीर्घकालिक उत्पादकता और पर्यावरणीय प्रबंधन का समर्थन करेगी।

सूक्ष्मजीव प्रबंधन के लिए एकीकृत दृष्टिकोण: पौधों और सूक्ष्मजीवों के बीच परस्पर क्रिया को बेहतर बनाने के लिए कृषि में सूक्ष्मजीव प्रबंधन के लिए एकीकृत दृष्टिकोण में कई युक्तियों और तकनीकों को जोड़ा गया है। किसान फसल चक्र, संरक्षण कृषि, जैविक संशोधन, जैव नियंत्रण एजेंट, माइक्रोबियल इनोकुलेंट, सटीक कृषि, पोषक तत्व प्रबंधन, जल प्रबंधन और एकीकृत कीट प्रबंधन जैसी प्रथाओं को एकीकृत करके मिट्टी की सूक्ष्मजीव विविधता, पोषक चक्र, रोग दमन और समग्र पौधों के स्वास्थ्य में सुधार कर सकते हैं। ये एकीकृत दृष्टिकोण रासायनिक इनपुट को कम करके, संसाधन-उपयोग दक्षता में सुधार करके और लचीले और उत्पादक कृषि पारिस्थितिकी प्रणालियों को बढ़ावा देकर टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देते हैं।

सूक्ष्मजीव विविधता और खेती: स्वस्थ मिट्टी बनाए रखने और टिकाऊ कृषि का अभ्यास करने के लिए, कृषि में सूक्ष्मजीव विविधता आवश्यक है। मिट्टी में एक विविध सूक्ष्मजीव समुदाय मिट्टी की उर्वरता, बीमारी की रोकथाम और पोषक चक्र को बढ़ावा देता है। पौधों को पोषक तत्वों की उपलब्धता के लिए सूक्ष्मजीव कार्बनिक पदार्थों को तोड़ते हैं जिससे पौधों की पोषक तत्वों को अवशोषित करने की क्षमता में सुधार होता है। इसके अतिरिक्त, वे ऐसे पदार्थ बनाते हैं जो मिट्टी की संरचना को मजबूत करते हैं और पौधों की बीमारियों को रोकते हैं। सिंथेटिक कीटनाशकों और उर्वरकों का कम उपयोग, जैविक खेती के तरीके, कवर फसलों का उपयोग और फसल चक्रण सभी माइक्रोबियल विविधता को बढ़ावा देने का हिस्सा हैं। पर्यावरण की स्थिरता और दीर्घकालिक कृषि उत्पादकता एक विविध और संतुलित सूक्ष्मजीव समुदाय के रखरखाव पर निर्भर करती है।

कृषि हेतु मिट्टी में पाए जाने वाले कुछ सामान्य लाभकारी सूक्ष्मजीव

सूक्ष्मजीव एवं कार्य

राइजोबियम: नाइट्रोजन स्थिरीकरण, वायुमंडलीय नाइट्रोजन को ऐसे रूप में परिवर्तित करता है जिसका उपयोग पौधे कर सकते हैं

एजोटोबैक्टर: नाइट्रोजन स्थिरीकरण, मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाने में मदद करता है

आजोस्पिरिलम: नाइट्रोजन स्थिरीकरण, पौधों की वृद्धि और पोषक तत्व ग्रहण को बढ़ावा देता है

माइकोरिज़ल कवक: पोषक तत्वों के अवशोषण को बढ़ाता है, विशेषकर फॉस्फोरस को

ट्राइकोडर्मा: पौधों के रोगजनकों का जैविक नियंत्रण, पौधों के विकास को बढ़ावा देता है

बैसिलस सबटिलिस: मिट्टी से पैदा होने वाले रोगजनकों को कम करता है, पौधों की वृद्धि को बढ़ाता है

स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस: पौधों की बीमारियों का जैविक नियंत्रण, पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाता है

स्ट्रेप्टोमाइसेस: एंटीबायोटिक दवाओं का उत्पादन करता है जो पौधों के रोगजनकों को दबाते हैं

एक्टिनोमाइसेट्स: कार्बनिक पदार्थों को विघटित करते हैं, मिट्टी की संरचना में सुधार करते हैं

केंचुए: मिट्टी के वातन और पोषक चक्र में सुधार करते हैं

मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की संख्या कैसे सुधारें?

1. विभिन्न सूक्ष्मजीव समुदायों का समर्थन करने के लिए फसल चक्र का अभ्यास करें और कवर फसलें लगाएं।
2. सूक्ष्मजीवी आबादी को संरक्षित करने के लिए जुताई कम करें या ख़त्म करें।
3. विविध सूक्ष्मजीवों को भोजन उपलब्ध कराने के लिए खाद और फसल अवशेष जैसे कार्बनिक पदार्थ जोड़ें।
4. सिंथेटिक उर्वरकों, कीटनाशकों और शाकनाशियों का उपयोग कम से कम करें जो सूक्ष्मजीव विविधता को नुकसान पहुंचा सकते हैं।
5. ऊपरी मिट्टी और उसके सूक्ष्मजीवी जीवन को बनाए रखने के लिए संरक्षण प्रथाओं के माध्यम से मिट्टी के कटाव को रोकें।
6. सूक्ष्मजीव विविधता को पूरक करने और बढ़ाने के लिए जैवउर्वरक का उपयोग करें।
7. विविध सूक्ष्मजीवी आबादी को सहारा देने के लिए उचित मिट्टी की नमी का स्तर बनाए रखें।
8. सूक्ष्मजीव विविधता को बढ़ावा देने के लिए कृषि क्षेत्रों के आसपास प्राकृतिक आवासों को संरक्षित करें।
9. फसल के प्रकार और चक्र में विविधता लाकर निरंतर मोनोकल्चर से बचें।
10. यह सुनिश्चित करने के लिए कि माइक्रोबियल विविधता बनाए रखी जाए और उसमें सुधार किया जाए, मिट्टी के स्वास्थ्य की नियमित रूप से निगरानी और मूल्यांकन करें।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

खरीफ की फसलों में जैविक कीट नियंत्रण एक सफल उपाय

पुनीत कुमार शोध छात्र (कीट विज्ञान)
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

आशीष कुमार वर्मा शोध छात्र (शस्य विज्ञान)
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय अयोध्या

आशुतोष सिंह अमन शोध छात्र (कीट विज्ञान)
चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर

सुधीर कुमार एम.एस-सी कृषि (कीट विज्ञान)
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय अयोध्या

परिचय: जैसा कि आप सभी जानते हैं कि पर्यावरण का हमारे जीवन में बहुत ही बड़ा महत्व है जब हम किसानों को कीटों के नियन्त्रण के लिए विभिन्न प्रकार की जहरीली दवाओं का प्रयोग करते हुए देखते हैं, तो बहुत दुख होता है, क्यूंकि आमतौर पर किसानों को ये लगता है कि फसलों पर लगने वाले हानिकारक कीटों से मुक्ति का एकमात्र उपाय कीटनाशी रसायनों का उपयोग ही है। हमारी इस सोच के पीछे इन रसायनों का इतिहास छुपा हुआ है। 1940 डी.डी.टी. के आविष्कार और उसकी सफलता के सारे विश्व को अपनी चपेट में ले लिया था। चालीस पचास के दशकों में विस्तृत मारक क्षमता वाले कृत्रिम, कार्बनिक कीटनाशकों ने अन्य सभी नियंत्रण उपायों को धूमिल कर दिया। अंधाधुंध कीटनाशी के प्रयोग से अनेक समस्याएँ पैदा हो गई, नाशीजीवों के प्राकृतिक शत्रु यथा परभक्षी व परजीवी मारे गये। जहरीले रसायनों के मिट्टी में जमाव से फसलों की उत्पादकता पहले से घट गई, नये नाशीजीवों जो पहले हानिरहित थे, हानि पहुँचाने लगे। जहरीले रसायनों के फसलों पर छिड़काव से पर्यावरण में प्रदूषण बढ़ने लगा। आज के समय में यह एक प्रमुख समस्या बन कर खड़ी हो गई है, सरकार के द्वारा अधिक विषाक्त रसायनों का प्रयोग करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है, जिसके चलते अब कम जहरीले रसायनों का प्रयोग कीट नियन्त्रण के लिए किसानों द्वारा किया जा रहा है। अंधाधुंध अधिक जहरीले रसायनों का प्रयोग करने से कीटों द्वारा अधिक जहर सहन करने की क्षमता विकसित हो गई है जिसके चलते आज के समय में कम जहरीले रसायनों का प्रभाव नाशीकीटों पर नहीं पड़ रहा है, इन सब समस्याओं को देखते हुए जैविक कीट नियन्त्रण एक सफल उपाय उभर कर सामने आया है।

जैविक कीट नियन्त्रण

यह नाशीजीव को नियंत्रित करने वाली विधि है जिसमें कीटों, फुफुदियों, खरपतवारों आदि के प्राकृतिक शत्रुओं का प्रयोग किया जाता है। पहले प्राकृतिक शत्रु को पहचान कर उसे पालकर संख्या बढ़ाया जाता है। तत्पश्चात उन्हें उचित रूप और माध्यम की सहायता से फसलों पर तब छोड़ा जाता है जब नाशीजीव आर्थिक क्षति स्तर से अधिक आबादी में फसलों पर लगे हो। प्राकृतिक शत्रुओं को बायो-एजेंट कहते हैं जो अपने लक्ष्य पर ही प्रहार करते है, अन्य कहीं नहीं। इनसे पर्यावरण मनुष्य व पशु-पक्षियों पर कोई कुप्रभाव नहीं पड़ता। बायो-एजेंट जीवित प्राकृतिक शत्रु (मुख्यतः कीट वर्ग के) होते है जो जीवित भी हैं यतः बैक्ट्रिया, फफूंद विषाणु आदि और पादप जनित कीटनाशी।

ट्राईकोग्रामा

ट्राईकोग्रामा एक अत्यंत सूक्ष्म कीट (ततैया) है जो अनेक प्रकार के शत्रु कीटों पर आक्रमण करता है। यह एक अंडा-परजीवी है जो शत्रु कीट के अण्डों में अपना अंडा देकर उन्हें नष्ट कर देता है। इस प्रकार यह एक जीवित कीटनाशक का काम करता है जो सिर्फ अपने लक्षित शत्रु कीट को मारता और मनुष्य व पशुओं के स्वास्थ्य पर कुप्रभाव छोड़े बिना, पर्यावरण को भी सुरक्षित रखता है। ट्राईकोग्रामा के बहोत्पादन के लिए कोरसाईरा नामक पतंगों का पाला जाता है, पतंगों के अण्डों को इकट्ठा कर पोस्टकार्ड के आकार के कागज पर गोंद की सहायता से चिपका देते हैं, इसे ट्राईकोकार्ड कहते हैं। ट्राईकोग्रामा कोरसाईरा के अण्डों में अंडे देती है। चार दिनों बाद सारे अंडे काले पड़ जाते हैं। आठवें दिन ये खेत में छोड़ने योग्य हो जाते हैं। एक ट्राईकोकार्ड में लगभग 20,000 परजीवित अंडे होते हैं। इनको खेत में प्रयोग करने के लिए सबसे पहले ट्राईकोकार्ड को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लेते हैं, फिर पत्तियों की निचली सतह पर स्टेपलर द्वारा लगा देते हैं। इस विधि से ट्राईकोकार्ड का समान वितरण पूरे खेत में हो जाता है। ट्राईको ग्रामा को शाम के समय छोड़ना चाहिए क्योंकि दिन का उच्च तापमान इन कीटों के प्रतिकूल होता है। लगाने के कुछ ही घंटों में ट्राईको कार्ड स्थित परजीवित अण्डों से ट्राईकोग्रामा के वयस्क निकलने शुरू हो जाते हैं।

फसल शत्रु कीट	शत्रु कीट	मात्रा
धान	तना छेदक	1 लाख ट्राईको ग्रामा जैपोनिकम (5 ट्राईकार्ड/हे./सप्ताह) (तीन सप्ताह लगातार)
	पत्र लपेटक	1.5 लाख ट्राईकोग्रामा जैपोनिकम (8 कार्ड/हे./सप्ताह) (तीन सप्ताह लगातार)
मक्का	तना छेदक	1.5 लाख ट्राईकोग्रामा किलोनिस, अंकुरण एक 12वें तथा 22 वें दिन पर (8 कार्ड/हे.)
टमाटर	तंबाकू सुंडी	1 लाख ट्राईकोग्रामा प्रेटियोसम (5 ट्राईकार्ड/हे./सप्ताह) (तीन सप्ताह लगातार)

प्रयोग विधि

फफूंद कीटरोगाणु

मेटारिजियम एनीसोप्ली- यह विस्तृत रूप से मिट्टी में पाया जाने वाला फुफुन्दी है जो भृंग, तितली व पतंगे, बग, चींटी व ततैये तथा टिड्डे वर्ग के कीटों पर आक्रमण करता है। इसके द्वारा नियंत्रित महत्वपूर्ण हानिकारक कीट है- स्पिटल बग (गन्ना), धान का भूरा मधुआ, गोभी का पतंग, सेमीलूपर, किटुआ कीट, मीली बग, आदि। इसके पानी में तैयार घोल को मिट्टी में या फसल के ऊपर फैलाया जाता है। मिट्टी में मिलने के लिए इस घोल का एक किलोग्राम, 50 किलोग्राम गोबर की खाद में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से मिट्टी में छिड़काव् किया जाता है। गन्ना लगाने के पहले ही खेत में डालकर जुताई द्वारा अच्छी तरह से मिट्टी में मिला देते हैं। पाइरिल्ला के लिए छिड़काव् के साथ-साथ जीवित वयस्क कीड़ों को कीटशाला में लाकर इस फफूंदी से रोगग्रसित करवाया जाता है। इस रोग ग्रसित पाइरिल्ला कीटों को नमी की अवस्था में गन्ने की फसल में छोड़ा जाता है जहाँ ये अन्य कीड़ों में रोग फैला कर मार देते हैं। मेटारिजियम के प्रयोग के समय रसायनिक फफूंदनाशक का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

प्रयोग विधि

इस जैविक किटनाशक का प्रयोग मुख्यतः हम दो प्रकार से कर सकते हैं, छिड़काव् विधि व मिट्टी में प्रयोग विधि, छिड़काव विधि से प्रयोग करने हेतु 4 ग्राम कीटनाशी 1 लीटर पानी में चिपकने वाला पदार्थ 0.5 मि. प्रति लीटर पानी घोल बनाकर पौधों पर छिड़काव 7 दिन के अंतराल पर 3 बार करें तथा मिट्टी में प्रयोग विधि में 1 किलोग्राम कीटनाशी को 50 किलोग्राम गोबर मिलाकर 7 दिन के लिए गाँव में रखें एवं बीच-बीच में उसमें पानी का फव्वारा करें ताकि नमी बनी रहे। तत्पश्चात इसे 1 एकड़ मिट्टी में प्रयोग करें अथवा 10 ग्राम मिक्सचर को प्रत्येक पौधे के मिट्टी में मिलाएं।

बैक्टीरिया कीटरोगाणु

बैसिलस युथिजियेंसिस (बी.टी.)- यह मिट्टी में पाया जाने वाला बैक्टीरिया है जो अनेक प्रकार के कीटों के अलावा कृमियों (नीमटोड) को भी मारता है। इसके आक्रमण से कीट की आहार नली व मुख निष्क्रिय हो जाते हैं तथा कीट तुरंत मर जाता है। चूँकि ये बाहरी स्पर्श से प्रभावित नहीं करता है, इसे उस स्थान पर छोड़ा जाता है जहाँ कीट खा रहें हो। यह पाउडर व तरल रूप में उपलब्ध है। टमाटर, मिर्च, भिन्डी, धान, कपास, नींबू के पिल्लुओं के लिए इसे 1 से 1.5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव् करते हैं।

कीट विषाणु (वायरस): ये बैकुलो वाइरस होते हैं जो अपने विशेष शत्रु कीट में ही पलते बढ़ते हैं अरु उन्हें रोगग्रसित कर मार डालते हैं। ये अपने शत्रु-कीट को छोड़कर पौधों, मनुष्यों व अन्य किसी भी प्रकार के जीव जन्तुओं पर कोई प्रभाव नहीं डालते। इनके दो प्रकार प्रमुख है- ग्रेनुलोवायरस (जी.वी.) और न्यूक्लियर पौलीहेडोसिस वायरस (एन.पी. वी.)

ग्रेनुलोवायरस: इसका उपयोग मुख्यत गन्ना शीर्ष छेदक के कीट के नियंत्रण के लिए किया जाता है इसके लक्षण 5-8 दिन बाद प्रकट होते है, प्रभावित लार्वा खाना छोड़ देते हैं, शिथिल पड़ जाते हैं, पेट दुधिया सफेद पड़ जाता है व 8-22 दिनों में मर जाते हैं।

उपयोग विधि- 250 एल.ई. (750 ग्रसित लार्वा) 200 लीटर पानी में 100 मि.ली. टिपॉल मिलाकर प्रति एकड़ की दर से दो बार गन्ना लगाने के 35 वें व 50 वें दिन पर छिड़काव् करें।

न्यूक्लियर पौलीहेडोसिस वायरस (एन.पी. वी.)- इसका उपयोग मूंगफली व सोयाबीन के सूडी कीट के नियंत्रण के लिए किया जाता है, इस वायरस का उपयोग करने के बाद सूडी के निम्न लक्षण दिखाई देते है, जैसी भोजन न करना, शिथिल हो जाना, फूल जाना, त्वचा फटना, सफेद स्राव निकलना व उल्टा लटकर मरना इत्यादि

प्रयोग विधि

250 एल.ई. (500 मि.ली.) को 125 लीटर पानी, 0.5% गुड़ और 0.01% साबुन घोल मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से शाम के समय छिड़काव् करते हैं। यह छिड़काव् तब करना चाहिए जब फसल में एक लार्वा प्रति पौधा पर नजर आने लगे। आवश्यकतानुसार दो बार छिड़काव करना चाहिए।

निष्कर्ष

आज के समय में जब पर्यावरण प्रदूषण एक विकट समस्या बन गई है, एसे में किसानों द्वारा जहरीले रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग मानव जीवन के लिए अति हानिकारक हो रहा है, जिसके चलते मनुष्य में विभिन्न प्रकार की बीमारियां उत्पन्न हो रही है। जैविक कीटनाशकों के प्रयोग से इस प्रकार की समस्या से निदान पाना संम्भव है तथा विभिन्न प्रकार के हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रु जो कि जहरीली दवाओं के प्रयोग से नष्ट हो रहे हैं वो पुनः विकसित होकर हानि पहुचाने वाले कीटों को अपना भोजन बनाएंगे जिससे प्राकृतिक रुप से भी कीट नियंत्रण होगा और किसानों को इसका भरपूर लाभ प्राप्त होगा।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

किसान भाई मक्का फसल की खेती कैसे करें

मो. मुईद (शोध छात्र), पी.एच.डी. कृषि सस्य विज्ञान
रमाकांत तिवारी (शोध छात्र), सस्य विज्ञान एम.एस.सी. कृषि
सूरज अवस्थी (कृषि प्रसार)
Integral Institute of Agricultural Science and Technology, Integral University, Lucknow (U.P.)
आलोक यादव (शोध छात्र), C.S.A Kanpur

मक्का भारत की एक महत्वपूर्ण मोटे की खरीफ ऋतु की फसल है। मक्का का फसल मुख्य रूप से दाने, हरे चारे एंव भुट्टे के लिये उगाई जाती है। मक्का के हरे भुट्टे भूनकर खाने के काम आते है। मक्का की फसल से शराब,स्टार्च,प्लास्कि, गोंद, रंग, ग्लूकोज आदि बनाये जाते है। मक्का फसल को हरे चारे के रूप में पशुओं को खिलाया जाता है। मक्का के दाने से पॉपकार्न बनाये जाते है। भारत में मक्का फसल की सुरूवात 16 शताब्दी में पुर्तगालियों द्धारा हुआ था।

मक्का की फसल में पाये जाने वाले पोषक तत्व: प्यारे किसान भाईयों मुख्यता मक्का की फसल में प्रोटीन 11.6%, कार्बोहाइडेट 78.9 %, वसा 5.3%, राख 1.5%, सैल्युलोज 2.6% तथा शुगर 2.4% पाया जाता है।

मक्का फसल के फायदे:-

1.पाचन शक्ति में सुधार करने में भुट्टे का सेवन सकारात्मक प्रभाव डालता है। 2.मक्का में प्रचुर मात्रा में मक्खन होता है जोकि पेट संारिख्यकी को नियन्त्रित रखने में काम करता है जिससे शरीर में मोटापा नही बढने देता है।

जलवायु: मक्का की फसल ग्रीष्मकालीन है। समुद्र तल से 3000 मीटर ऊचाई तक इसे उगा सकते है तथा सभी अवस्थाओं में तापमान 25 डिग्री सेल्सियस के आस-पास होना चाहिये। पकते समय गर्म तथा शुष्क वातावरण ठीक रहता है, पाला फसल के लिये हानिकारक है। पूर्वी उ0प्र0 में दियारा क्षेत्र तथा दक्षिणी भारत में मक्का की फसल रबी में लगाई जाती है। मक्का फसल की वृद्धि के लिये अधिक नमी और आपेक्षित आर्द्धता 60-70 प्रतिशत आवश्यक होती है। मक्का फसल की बुवाई के समय 18 डिग्री सेल्सियस से कम तापमान होने पर अंकुरण विलम्ब से होता है।

फसल के लिये भूमि किस प्रकार होनी चाहिये: मक्का की खेती उचित मृदा प्रबन्ध द्धारा अनेक प्रकार की भूमियों में की जा सकती है। परन्तु अच्छी बढ़वार और पैदावार के लिये अधिक उपजाऊ दोमट मिट्टी जिसमें वायु संचार अच्छा हो तथा पानी का निकास उत्तम हो मक्का की खेती के लिये उत्तम भूमि मानी जाती है। मक्का की खेती के लिये मृदा का पी.एच. मान 6 से 7 होना चाहिये।

फसल के लिये भूमि की तैयारी कैसे करें: खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से 12-15 सेंमी. गहरी जुताई करनी चाहिये तथा उसके बाद 2-3 हैरो से जुताईयॉ करके पाटा लगाकर खेत को भुरभुरा व समतल बना लेना चाहिये किसान भाईयों को।

मक्का की उन्नतशील प्रजातियां

1.देशी: टाइप 41, मेरठ पीली, जौनपुरी सफेद, जौनपुरी पीली, रूद्रपुरी आदि ।

2.संकर प्रजातियां: संकर शक्तिमान 1, शंकर शक्तिमान, गंगा 11,5, सरताज, आशा, प्रकाश, इत्यादि।

3. संकुल प्रजातियां: नव ज्योति, स्वेता, नवीन, तरूण, कंचन, आजाद उत्तम इत्यादि ।

मक्का की खेती के लिये बीजदर: मक्का की फसल के लिये किसान भाई अगर संकर प्रजातियों का चयन करते है तो 20-25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर तथा संकुल किस्मो के लिये 16-18 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर लिया जाता है, तथा किसान भाई हरे चारे के लिये लगाना चाहते है तो 40-45 किलोग्राम प्रति है. की दर से बीज का प्रयोग करना चाहिये।

अन्तरण व पौधो की संख्या: मक्का के खेत में प्रति हैक्टेयर 75000 पौधे तथा अन्तराल 60×25 सेमी. रखने पर अधिकतम उपज प्राप्त होती है। कटाई के समय तक खेत में 60-65 हजार पौधे आवश्यक रहने चाहिये। देशी प्रजाति 40×25 सेमी. दूरी पर रखे।

मक्का की फसल बुवाई का समय: उत्तरी भारत में मक्का की बुवाई खरीफ में , वर्षा प्रारम्भ होने पर की जाती है। जून माह के मध्य से जुलाई के प्रारम्भ तक बुवाई की जाती है तथा दक्षिणी भारत में आन्ध प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, मैसूर, कर्नाटक व बिहार इन राज्यों में रबी में मक्का की फसल लगाते है एंव बसंत ऋतु में फरवरी-मार्च माह में मक्का फसल की बवाई की जाती है।

बोने की विधि: मक्का फसल के बुवाई हेतु निम्नलिखित विधिया प्रचलित हैं- 1.छिटकवॉ विधि 2.हल के पीछे कुडों में बुवाई 3.डिबलिंग विधि

खाद तथा उर्वरक: मक्का की अच्छी उपज लेने के लिये सन्तुलित उर्वरको का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए।

मक्का की किस्में	पोषक तत्वों की मात्रा किलोग्राम/है.		
	नाइट्रोजन	फॉस्फोरस	पोटाश
संकर मक्का	150	70	70
संकुल मक्का	100	50	50
देशी किस्में	80	40	40

उर्वरको के अतिरिक्त 20-25 किलोग्राम/है. जिंक सल्फेट का प्रयोग करना चाहियें।

विधि: बुवाई के समय आधी नाइट्रोजन तथा फास्फोरस व पोटाश की पूर्ण मात्रा कूँड में बीज के नीचे डालना चाहिये तथा 1/4 भाग नाइट्रोजन को बुवाई के 20-30 दिन बाद निराई के उपरान्त डालना चाहिये तथा शेष 1/4 भाग नाइट्रोजन 55-60 दिन बाद खेत में डालना चाहियें।

सिचांई एंव जल निकास प्रबन्ध: मक्का की फसल अत्याधिक पानी एंव सूखा दोनो के प्रति संवेदनशील है। बसन्त ऋतु में भुट्टे व चारे के लिये बुवाई की गई फसल में 8-10 दिन के अन्तर पर वर्षा होने तक सिंचाई करते रहना चाहिये। वर्षा ऋतु से पहले जून में बुवाई की गई फसल में वर्षा होने तक 10-15 दिन के अन्तर पर 2-3 सिचाईयों की आवश्यकता पडती है। जुलाई में बुवाई की गई फसल में अधिकतर वर्षा पर निर्भर रहती है।

निराई-गुड़ाई एंव खरपतवार नियन्त्रण किस प्रकार करें: मक्का की खेती में निराई गुडाई का बहुत महत्व है। खेत को सदैव खरपतवारों से मुक्त रखने के लिये मक्का में 2-3 निराई-गुडाई खुरपी से करते रहना चाहियें तथा रसायनिक विधि से खरपतवार नियन्त्रण के लिये रासायनिक टैफाजीन 50 प्रतिशत डब्लू.पी. सिमेजीन नामक रसायन की 1.5 किग्रा0 की मात्रा को 800-1000 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के तुरन्त बाद इसका प्रति हैक्टेयर की दर से छिडकाव करना चाहिये। एट्राजीन 1-2 किग्रा. को 600-800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर छिडकाव करना चाहिए।

मक्का फसल में कीट नियन्त्रण कैसे करें

1.तना बेधक: इस कीट का लारवा हानि पहुचाता है। लारवा 2.5 सेंमी. लम्बा होता है तथा इसका रंग भूरा होता है। पत्तियों में छोटे-छोटे छेद बना देता है। इसके रोकथाम हेतु किसान भाईयों को चाहिए कि बुवाई के 15 दिन बाद इण्डोसल्फान 35 ई.सी. के 0.15% का घोल का 600 लीटर पानी प्रति है. की दर से छिड़काव करे खेत में ।

2.तने की मक्खी: इस मक्खी के मेगट उ.प्र. के तराई क्षेत्रों में बसन्त ऋतु में बोई जाने वाली मक्का की फसल को बहुत ज्यादा हानि पहुंचाते हैं। यह मैगट सफेद रंग के होते है किसान भाईयों इसके रोकथाम हेतु अंकुरण के एक सप्ताह बाद मेटासिस्टॉक्स 1 मिली. दवा 1 लीटर पानी में 600 लीटर पानी का घोल बनाकर प्रति हैक्टेयर की दर से इसका छिडकाव करना चाहियें।

3.पत्ती लपेटने वाला कीट: यह एक गौण कीट है परन्तु यह कभी-कभी यह भयन्कर रूप धारण कर लेता है। पत्तियों को मोडकर उनके अन्दर छिपकर पत्तियों का हरा पद्धार्थ खाता है। किसान भाईयों इसके रोकथाम हेतु चाहिये कि लिन्डेन 1.3% डस्ट 25 किग्रा. प्रति है. की दर से छिडक देना चाहियें।

4.कुदका या टिड्डा: इस कीट के शीशु तथा पौढ दोनो ही पौधों की पत्तियॉ खा जाते है। कभी-कभी तो पौधे का मुख्य तना ही बच पाता है। किसान भाईयों को इसके रोकथाम हेतु चाहिए कि 1.5 मिली. साइपरमथ्रिन प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर फसल पर छिड़काव करना चाहियें।

5. गिडार या कमला कीट: इसके शरीर पर लम्बे रोये होते है। ये पत्तियॉ तथा रेशमी बाल को खा जाते है। किसान भाई इसके रोकथाम के लिये यह करें कि 1. मिली0 इण्डोसल्फान 35 ई.सी. 600-800 लीटर पानी का घोल प्रति हैक्टेयर की दर से छिडकाव करदें।

रोग

1. तुलासिता रोग: इस रोग में पत्तियों पर पीली धारियाँ पड़ जाती हैं। पत्तियों के नीचे की सतह पर सफेद रूई के समान फँफूदी दिखाई देती है। ये धब्बे बाद में गहरे अथवा लाल भूरे पड़ जाते हैं। रोगी पौधों में भुट्टे कम बनते हैं या बनते ही नहीं हैं। इसकी रोकथाम हेतु जिंक मैंगनीज कार्बामेट 2.5 किग्रा. हे. की दर से छिड़काव आवश्यक पानी की मात्रा में घोलकर करना चाहिए ।

2. पत्तियों का झुलसा रोग: इस रोग में पत्तियों पर बड़े लम्बे अथवा कुछ अण्डाकार भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। रोग के उग्र होने पर पत्तियाँ झुलसकर सूख जाती हैं इसकी रोकथाम हेतु जिनेब या जिंक मैंगनीज कार्बामेट 2 किग्रा हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

3. तना सड़न: यह रोग अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में लगता है इसमें तने की पोरियों पर जलीय धब्बे दिखाई देते हैं जो शीघ्र ही सड़ने लगते हैं और उनसे दुर्गन्ध आती है। पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती है। रोग दिखाई देने पर 10 ग्राम स्ट्रेपटोसाइक्लीन अथवा 50 ग्रा. एग्रीमाइसीन अथवा 100 ग्राम प्लान्टोमाइसीन प्रति है. की दर से छिड़काव करने से अधिक लाभ होता है।

अन्य आवश्यक क्रियायें: वर्षा में पानी और तेज हवा से फसल के बचाव हेतु पौधों की जड़ों पर मिट्टी पलटने वाले हल से मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।

फसल की देखभाल: कौओं, चिड़ियों तथा जानवरों से फसल की रक्षा हेतु रखवाली आवश्यक है।

कटाई एंव मडाई: चारे के लिये बुवाई की गई फसल को बोने के 60-65 दिन बाद काट लेते है। दाने हेतु उगाई जाने वाली देशी किस्में 70-80 दिन बाद काट ली जाती है। शंकर जातियां 100-115 दिन में तथा शंकुल जातियां 80-85 दिन में पककर तैयार होती है। जब दानों में नमी 25% से कम रह जाये तभी मक्का फसल की कटाई करनी चाहियें। संकर एंव शकुल मक्का के पौधों का रंग भुट्टे पकने पर भी हरा दिखाई देता है। जब भुट्टे का छिलके का रंग भुरा पड जाये तब भुट्टे को तोड लेना चाहियें।

उपज: देशी किस्मों की औसतन उपज 10-15 क्विं./है. तथा संकर किस्मों के दाने की उपज 40-45 क्विं./है. तक प्राप्त हो जाती है तथा संकुल मक्का की उपज 35-40 क्विं./है. होती है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

मेगा फूड पार्क : एक परिदृश्य

आदित्य भूषन श्रीवास्तव शोध छात्र, कृषि अर्थशास्त्र
डॉ. सुप्रिया सहायक प्राध्यापक, कृषि अर्थशास्त्र
सचिन कुमार वर्मा शोध छात्र, कृषि अर्थशास्त्र
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)
डॉ. रणधीर यादव सहायक प्राध्यापक, कृषि अर्थशास्त्र
चन्द्रशेखर आजाद महाविद्यालय परसपुर, गोंडा (उ.प्र.)

हरित क्रांति के बाद भारत में हर प्रकार से कृषि उत्पादन में बढ़ोतरी देखने को मिली है, और इसी वजह से भण्डारण और प्रसंस्करण की जरूरत को समझते हुए मेगा फूड पार्क योजना को शुरू किया गया हैं।

हमारा देश खेती प्रधान देश है यहाँ लगभग आधे से ज्यादा आबादी कृषि कार्यो से ही अपना जीवन निर्वाह करती है। ऐसे में अगर फसलों का उचित दाम न मिले तो आर्थिक जीवन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा, इसी बात को ध्यान में रखते हुए केंद्र सरकार द्वारा मेगा फूड पार्क योजना शुरू की गई है। इसी मेगा फूड पार्को में किसानो द्वारा उगाई गई फसल को भंडार करके रखा जाता है और इसे बाज़ार तक भी लेजाया जाता है। इसके फलस्वरूप सभी किसानो को उनकी फसल का सही और उचित मूल्य मिलता है।

मेगा फूड पार्क क्या है?

मेगा फूड पार्क यानी एक ऐसा बड़ा प्लॉट, एक ऐसी मशीनरी जहां कृषि उत्पादित फसल (एग्री प्रॉडक्ट्स), फल-सब्जियों के सुरक्षित भंडारण की व्यवस्था हो, जहां उन प्रॉडक्ट्स की प्रोसेसिंग की जा सके, उनसे मार्केट की डिमांड के मुताबिक प्रॉडक्ट्स तैयार किए जा सकें। मेगा फूड पार्क स्कीम "क्लस्टर" दृष्टिकोण पर आधारित है. मेगा फूड पार्क में संग्रहण केंद्रों, प्राथमिक प्रसंस्करण केंद्रों, केंद्रीय प्रसंस्करण केंद्रों, कोल्ड स्टोरेज और उद्यमियों द्वारा खाद्य प्रसंस्करण यूनिटों की स्थापना के लिए 25-30 पूर्ण विकसित भूखंडों समेत आपूर्ति श्रृंखला अवसंरचना शामिल होती है।

मेगा फूड पार्क योजना के उद्देश्य

किसानों की फसल के सही रखरखाव को ध्यान में रखते हुए केंद्र सरकार द्वारा मेगा फूड पार्क योजना के अंतर्गत मेगा फूड पार्क तैयार किए जाते हैं **जिनका उद्देश्य यह है कि-**

- प्रसंस्करणकर्ताओं/प्रोसिसिंग इंडस्ट्री तथा खुदरा विक्रेताओं को एक साथ लाना है ताकि कृषि उत्पादों को एक तंत्र के माध्यम से जोड़ा जा सके।
- मेगा फूड पार्को के तहत मुख्यतः कृषि उत्पादों की कीमतों में वृद्धि करने, खाद्य पदार्थों की बर्बादी रोकने,

किसानों की आय बढ़ाने तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार के अवसर उपलब्ध करने पर ज़ोर दिया जाता है।
- इन फूड पार्को का उद्देश्य खाद्य पदार्थों के प्रसंस्करण को 6 से 20 प्रतिशत तक बढ़ाना है तथा खाद्य पदार्थ उद्योग में भारत की हिस्सेदारी को बढ़ाकर 1.5 से 3 प्रतिशत तक करना है।

मेगा फूड पार्क योजना किस प्रकार काम करता है?

मेगा फूड पार्क योजना 2022 का शुभारंभ भारत सरकार द्वारा किया गया है, जिसके कार्य करने का तरीका किसानों की सुविधा को देखते हुए बहुत ही सरल बनाया गया है। यह योजना समावेशी विकास अर्थात किसान +उद्योग+ग्रहायक पर आलंबित है। इस योजना के माध्यम से लाभार्थी किसान अपने कृषि उत्पादनों को सीधे तौर पर ऐसे उधोगिक इकाइयों को विक्रय कर सकते है जो नए खाद्य उत्पादनों का निर्माण करते हैं। केंद्र सरकार द्वारा शुरू की गयी मेगा फूड पार्क योजना के तहत कृषि उत्पादों का खेत से मेगा फूड पार्क एवं फूड पार्क से बाजार तक सीधा संपर्क स्थापित किया जाता है। इस योजना का प्राथमिक उद्देश्य कृषि एवं बागवानी फसलों को लम्बे समय अवधी तक सुरक्षित रखने हेतु संग्रहण, प्राथमिक प्रसंस्करण, शीतग्रह, केंद्रीय प्रसंस्करण आदि सुविधा उपलब्ध करवाना है। इसके साथ ही इस योजना के माध्यम से किसानों एवं देश की कृषि अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाने हेतु उचित बाजार सुविधा उपलब्ध किया जाता है।

मेगा फूड पार्क योजना के अंतर्गत मिलने वाले रोजगार के अवसर

इस योजना के अंतर्गत एक विकसित फूड पार्क के माध्यम से 25 हजार किसानों एवं 5000 नागरिकों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान करने का प्रावधान है। इसके साथ ही रोजगार की संभावना मेगा फूड पार्को के पूर्ण विकास पर निर्भर करता है। इस योजना के अंतर्गत इच्छुक उम्मीदवार रोजगार प्राप्त करने हेतु ऑनलाइन अथवा ऑफलाइन माध्यम से आवेदन कर सकते है। उम्मीदवारों को ऑनलाइन आवेदन करने हेतु फूड पार्क की आधिकारिक वेबसाइट (megafoodevent-fpi@gov.in) के माध्यम से आवेदन करना होगा एवं ऑफलाइन आवेदन करने हेतु उम्मीदवारों को अपने नजदीकी फूड पार्को में जा कर अपनी योग्यतानुसार आवेदन करना होगा।

वित्तीय सहायता

- केन्द्र सरकार प्रति मेगा फूड पार्क परियोजना के लिये 50 करोड़ रु. तक की वित्तीय सहायता प्रदान करती है।
- यह परियोजना एक विशेष प्रयोजन साधन द्वारा कार्यान्वित की जाती है जो कंपनी अधिनियम, 2013 के तहत पंजीकृत एक निगमित निकाय है।
- एसपीवी एक सहायक कंपनी है जो एक विशिष्ट व्यावसायिक उद्देश्य या गतिविधि के लिये बनाई गई है।

वर्तमान स्थिति

वर्तमान में 22 मेगा फूड पार्क काम कर रहे हैं। यह भारत सरकार के 'मेक इन इंडिया' और 'आत्मनिर्भर भारत' विज़न के अनुरूप है।

मेगा फूड पार्क योजना के लाभ

- किसानों के लिए अतिरिक्त आय सृजन।
- किसानों को अधिक बाजार संचालित और लाभदायक कृषि गतिविधियों में स्थानांतरित करना।
- यह वन स्टॉप शॉप होगी जहां सब कुछ एक ही स्थान पर उपलब्ध होगा।
- एकीकृत फूड पार्क आपूर्ति श्रृंखला लागत को कम करने में मदद करेंगे।
- भारत में खाद्य मूल्य श्रृंखला में अपव्यय भी कम होगा और देश में खाद्य उत्पाद बनाने के लिए गुणवत्ता और स्वच्छता में सुधार भी देखा जा सकता है।

मेगा फूड पार्क योजना से संबंधित प्रमुख चुनौतियां

केन्द्र सरकार द्वारा प्रारंभ की गयी मेगा फूड पार्क योजना के अंतर्गत मेगा फूड पार्क स्थापित करने हेतु सरकार को विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। भारत सरकार द्वारा सामना किये जाने वाले विभिन्न चुनौतियों में से कुछ चुनौतियाँ निम्न प्रकार से है-

- सरकार को मेगा फूड पार्क स्थापित करने हेतु 20 एकड़ से लेकर 50 एकड़ तक की भूमि की आवश्यकता पड़ती है, जो एक अच्छे स्थान पर मिलना कठिन होता है।
- फूड पार्क के आस-पास विभिन्न यातायात के साधन, जैसे-राष्ट्रीय राजमार्ग, रेल एवं हवाई अड्डे की सुविधा उपस्थित होनी चाहिए, परन्तु ऐसे स्थान की खोज आसान नहीं होती है।
- वर्तमान समय में भी देश के किसान अपने उत्पादनों की बिक्री हेतु फूड पार्को के स्थान पर अनाज मंडियों एवं सहकारी समितियों को वरीयता प्रदान करते है।
- इसके कारण सरकार द्वारा कृषि उत्पादनों को मेगा फूड पार्क की ओर आकर्षित करना एवं इनका एकीकरण करना एक चुनौती की भाँति ही है।
- केन्द्र सरकार का लक्ष्य मेगा फूड पार्क योजना के अंतर्गत वैश्विक स्तर की कंपनियों को शामिल करके, उनसे निवेश करवाना था परंतु यह थोड़ी कम कामगार साबित हुई।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

भारतीय कृषि एवं कृषकों की समस्या और समाधान

रामाज्ञा सिंह (एम.एससी) उद्यान विभाग
मनीष कुमार (एम.एससी) पादप रोग विभाग
कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड यूनिवर्सिटी, झांसी (उ.प्र.)

भारत की स्वतंत्रता को कई दशक बीत चुके हैं। हाल ही में हमने अपना 76वां स्वतंत्रता दिवस मनाया है। देश के आजाद होने के वर्ष 1947 से अब तक देश के हर क्षेत्र ने पर्याप्त विकास किया है। परंतु कृषि ही एक ऐसा क्षेत्र है जो आज भी विकास की दौड़ में कहीं पीछे रह गया है। खाद्य सुरक्षा, ग्रामीण रोजगार जैसे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाला कृषि क्षेत्र आज भी उसी स्थिति में नहीं पहुंच पाया है। भारत को एक कृषि प्रधान देश कहा जाता है। यहां की लगभग 65 से 70% जनसंख्या आज भी कृषि पर ही आश्रित है जो अधिकांशतः गाँवों में ही निवास करते हैं। भारतीय कृषि और कृषक दोनों ही आज संकट के दौर से गुजर रहे हैं। लगभग प्रत्येक राज्य में कृषकों के बकाया ऋणों को माफ कर दिए जाने की घोषणा, कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य दिलाने के लिए लागत से डेढ़ गुना स्तर पर न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) की घोषणा, सभी कृषकों को प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना के अंतर्गत प्रतिवर्ष ?6000 दिए जा रहे हैं, प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना इत्यादि प्रकार की योजनाएँ सरकार की तरफ से चलाए जा रहे हैं। परंतु इन सब के बावजूद आज भी कृषि एवं कृषक दोनों ही संकट में हैं।

देश की आजादी के बाद कृषि की दशा सुधारने के लिए विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम चलाए गए। 1960 के दशक में देश में हरित क्रांति आई जिससे मुख्य रूप से खाद्यान्न (मुख्यतः गेहूं और धान का)उत्पादन बढ़ा और किसानों की दशा एवं कृषि में भी सुधार आया। अब कृषि में सार्वजनिक निवेश बढ़ाने तथा इसमें और भी सुधार लाने के लिए "राष्ट्रीय कृषि विकास योजना", गेहूं, चावल, दालों तथा मोटे अनाजों के उत्पादन की वृद्धि हेतु "राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन" की शुरुआत हुई। इन सब के बावजूद भी कृषि क्षेत्र का सम्यक विकास नहीं हो सका है।

भारतीय किसानों की मूल समस्या?

भारत की पहचान है एक कृषि प्रधान देश के रूप में रही है, लेकिन देश के किसान आजभी बेहाल हैं। किसानों की सबसे बड़ी समस्या उनके कृषि उत्पादों की कम कीमत है।

किसानों की मूल समस्याएं निम्न है-

कृषि में निवेश के लिए पूँजी की कमी

आज भी देश के ज्यादातर किसानों के पास पर्याप्त पूँजी का अभाव है जिसके कारण वे बीज,खाद,सिंचाई जैसी बुनियादी चीजों का भी प्रबंध नहीं कर पाते हैं और इसका परिणाम यह होता है कि किसान समय से फसलों का उत्पादन नहीं कर पाते तथा उनके फसलों में गुणवत्ता की कमी होती है। पूंजी के अभाव में किसान को निजी व्यक्तियों से ज्यादा ब्याज दर पर ऋण लेना पड़ता है जिससे उसकी समस्या कम होने की जगह और बढ़ जाती है।

फसल का उचित मूल्य न मिलना

किसानों की एक बड़ी समस्या यह भी है कि उन्हें अपने

फसल का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि वह अपनी फसलों को विभिन्न कारणों से जैसे ऋण चुकाने के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) से कम कीमतों पर ही बेच देते हैं,जिसके कारण उन्हें काफी हानि का सामना करना पड़ता है।

सिंचाई सुविधाओं की कमी

भारत के अधिकांश हिस्सों में आज भी सिंचाई सुविधाओं की कमी है। सिंचाई सुविधाओं का प्रबंध वही किसान कर पाते हैं, जिनके पास पर्याप्त पूंजी उपलब्ध है क्योंकि सिंचाई उपकरणों जैसे ट्यूबवेल स्थापित करने की लागत इतनी होती है कि छोटे या गरीब किसानों के पास इतना लागत नहीं होता है कि वह उसका वहन कर सके। इस प्रकार अधिकांश किसान मानसून पर निर्भर हो जाते हैं और समय पर वर्षा ना होने पर उनकी फसलें खराब हो जाती है। इसी तरह अधिक वर्षा होने या प्राकृतिक आपदाओं के कारण भी फसलें खराब हो जाती है और कई बार फसल का लागत भी किसान को नहीं मिल पाता है और किसान गरीबी के दलदल में फंसता जाता है।

मशीनीकरण का अभाव

कृषि क्षेत्र में अब मशीनों का प्रयोग ज्यादा होने लगा है। लेकिन अब भी कुछ इलाके ऐसे हैं जहां अभी भी किसान स्वयं ही काम करते हैं। वे कृषि में पारंपरिक तरीकों का इस्तेमाल करते हैं। खासकर छोटे किसानों के पास मशीनों का अभाव ज्यादा देखने को मिलता है जिससे कृषि उत्पादों की गुणवत्ता में कमी और लागत पर भी कमी साफ नजर आता है।

अच्छे बीज न मिलना

अच्छी फसल के लिए अच्छे बीजों का होना बेहद जरूरी है। लेकिन सही वितरण प्रणाली न होने के कारण छोटे किसानों के पास बीच नहीं पहुंच पाते हैं जिससे वह महंगे बीज लेने के लिए मजबूर हो जाते हैं तथा कभी-कभी बीच अच्छे भी नहीं मिल पाते हैं जिसके चलते इनकी फसल की उपज पर काफी प्रभाव पड़ता है।

परिवहन की सुविधा न होना

भारतीय कृषि की तरक्की में एक बड़ी बाधा अच्छी परिवहन व्यवस्था की कमी है। आज भी देश के कई गांव ऐसे हैं जो बाजारों और शहरों से नहीं जुड़े हैं। वहीं कुछ सड़कों पर मौसम का भी प्रभाव रहता है। ऐसे में किसान स्थानीय बाजारों में ही कम मूल्य पर अपने सामानों को बेच देते हैं जिससे उन्हें काफी नुकसान का सामना करना पड़ता है।।

भंडारण सुविधाओं का अभाव

भारत के ग्रामीण इलाकों में अच्छे भंडारण की सुविधाओं की कमी है। ऐसे में किसानों पर जल्द से जल्द फसल का सौदा करने का दबाव होता है और कई बार किसान कम दामों में ही फसल का सौदा कर लेते हैं। भंडारण सुविधाओं की न होने के कारण बिचौलियों को ज्यादा मुनाफा मिलता है। कभी कभी तो किसानों को उनके लागत मूल्य भी नहीं मिल पाता है और वे फसल का सौदा लागत मूल्य से कम में ही सौदा कर लेते हैं जिससे उन्हें काफी नुकसान होता है।

भारतीय किसानों की आत्महत्या की समस्या

भारतीय कृषि बहुत हद तक मानसून पर निर्भर है तथा मानसून की विफलता के कारण फसलों का नष्ट होना किसानों द्वारा की गई आत्महत्याओं का मुख्य कारण माना जाता है। मानसून की विफलता, सूखा, कीमतों में वृद्धि, ऋण का अत्यधिक बोझ इत्यादि तथा बैंकों, महाजनों,बिचौलियों आदि के चक्कर में फँसकर भारत के विभिन्न हिस्सों के किसानों ने आत्महत्या की है। भारत में किसान आत्महत्या 1990 के बाद पैदा हुई स्थिति है जिसमें प्रतिवर्ष 10000 से अधिक किसानों के द्वारा आत्महत्या की रिपोर्ट दर्ज की गई है। अभी तक लगभग तीन लाख से ऊपर किसानों ने आत्महत्या कर ली हैं। सरकार की तमाम कोशिशों और दावों के बावजूद कर्ज के बोझ तले दबे किसानों की आत्महत्या का सिलसिला अभी भी नहीं रुक रहा। देश में अभी भी हर महीने लगभग 70 से अधिक किसान आत्महत्या कर रहे हैं।

किसान आत्महत्या के कारण

किसानों को आत्महत्या की दशा तक पहुंचा देने के मुख्य कारणों में खेती का आर्थिक दृष्टि से नुकसानदायक होना तथा किसानों के भरण-पोषण में असमर्थ होना है।

कृषि की अनुपयोगिता या आत्महत्या के मुख्य कारण

* कृषि जोंतों का आकार छोटा होते जाना जिससे किसानों के पास खेती करने के लिए पर्याप्त जमीन का न होना।
* किसानों के लिए खेती का खर्च लगातार बढ़ रहा है, लेकिन किसानों की आमदनी में कोई बढ़ोतरी नहीं हुई है।
* किसानों को उसके फसल का उचित मूल्य प्राप्त न होना जब किसानों को फसल की सही कीमत नहीं मिलती है तो उन्हें आत्महत्या कर लेना ही एकमात्र विकल्प नजर आता है।
* छोटे किसान आर्थिक तंगहाली में कर्ज में डूब जाते हैं और अंत में आत्महत्या कर लेते हैं।

किसान की आत्महत्या का प्रभाव

किसान की आत्महत्या के बाद पूरा परिवार उसके असर में आ जाता है। बच्चे अपनी पढ़ाई छोड़ कर के खेती-बाड़ी के कामों में हाथ बंटाने लगते हैं। परिवार वालों पर बैंकों और महाजनों के द्वारा लिए गए कर्ज का बोझ इतना बढ़ जाता है कि परिवार के अन्य सदस्य भी आत्महत्या करने पर मजबूर हो जाते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

खेजड़ी की बागवानी

डॉ. हरपाल सिंह सहायक प्राध्यापक, उद्यान विज्ञान विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी (उ.प्र.)

संजीव यादव परास्नातक छात्र, उद्यान विज्ञान विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

प्रियंका चौहान परास्नातक छात्र, उद्यान विज्ञान विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी (उ. प्र.)

खेजड़ी (प्रोसोपिस साइनेरेरिया) शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में पाया जाने वाला बहुउपयोगी एवं बहुवर्षीय वृक्ष है। यह भारत के विभिन्न भागों में इसे भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है। दिल्ली क्षेत्र में इसे जांटी, पंजाब व हरियाणा में जांड, गुजरात में सुमरी, कर्नाटक में बनी, तमिलनाडु में बन्नी, सिन्ध में कजड़ी के नाम से पुकारा जाता है। वेदों एवं उपनिषदों में खेजड़ी को शमी वृक्ष के नाम से वर्णित किया गया है।

खेजड़ी लेग्यूमिनेसी कुल से संबंधित फलीदार पेड़ है जिसकी पत्तियां उच्च कोटि के पोषक चारे के लिए प्रख्यात हैं। खेजड़ी के पत्तियों का चारा (लूंग) बकरियाँ, ऊँट तथा अन्य पशु बड़े चाव से खाते हैं। खेजड़ी की कच्ची फलियों से बनने वाली सब्जी की लोकप्रियता से मारवाड़ के लोग भलीभाँति परिचित हैं। इतना ही नहीं हर वर्ष की जाने वाली छंगाई(प्रूनिंग) से जलाऊ लकड़ी तथा मोटे तने वाले पेड़ों की कटाई से इमारती लकड़ी भी प्राप्त होती है। लेग्यूमिनेसी कुल का पेड़ होने के कारण यह वायुमण्डल से नत्रजन स्थिरीकरण भी करता है। खेजड़ी की जड़ों में वातावरणीय नत्रजन को इकट्ठा करने वाले राइजोबियम बेक्टेरिया होते हैं। मरुक्षेत्र के किसान सदियों से यह जानते रहे हैं कि जहाँ-जहाँ खेजड़ी के पेड़ होते हैं वहां उगाई गई फसलों (बाजरा, ग्वार,मोठ, तिल आदि) की उत्पादकता सदैव अच्छी रहती है। खेजड़ी के पेड़ों में सूखा रोधी गुणों के अलावा सर्दियों में पड़ने वाले पाले तथा गर्मियों में उच्च तापमान को आसानी से सहन कर लेने के कारण यह इनके दुष्प्रभाव से बचा रहता है। यह वृक्ष शीतकाल में 4° सेल्सियस से ग्रीष्मकाल के 50° सेल्सियस तक के तापमान में जीवित रह जाता है। खेजड़ी के पेड़ मरु क्षेत्रों में पाई जाने वाली बालू रेत, रेत के टीबों (टीलों) तथा क्षारीय भूमि में पनप जाता है। खेजड़ी की इन्हीं विशेषताओं के कारण वर्ष 1983 में राजस्थान का राज्य वृक्ष घोषित किया गया

लूंग व सांगरी का पोषकीय महत्व

खेजड़ी से मिलने वाली लूंग में 14-18 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन, 15-20 प्रतिशत रेशा तथा 8 प्रतिशत खनिज लवण पाए जाते हैं। खनिज लवणों में कैल्शियम तथा फॉस्फोरस की अधिकता होती है। ताजा कच्ची सांगरी को सब्जी बनाने में प्रयुक्त किया जाता हैं तथा इन्हें सुखा कर भण्डारित भी किया जा सकता है। कच्ची हरी सांगरी अप्रैल-मई में कुछ दिनों तक ही उपलब्ध रहती है जबकि उबालकर सुखाने के बाद इन्हे वर्ष भर उपयोग में लाया जा सकता है। कच्ची सांगरी में औसतन 8 प्रतिशत प्रोटीन,

58 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 28 प्रतिशत रेशा, 2 प्रतिशत वसा, 0.4 प्रतिशत कैल्शियम तथा 0.2 प्रतिशत लौह तत्व पाया जाता है। राजस्थान की परंपरागत प्रसिद्ध पंचकुटा सब्जी, जो कि पाँच तरह की सूखी सब्जियों को मिलाकर बनाई जाती है उनमें सूखी सांगरी मुख्य घटक है। पक्की फलियों जिनको खोखा भी कहते हैं, में 8-15 प्रतिशत प्रोटीन, 40-50 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 8-15 प्रतिशत शर्करा तथा 9-21 प्रतिशत रेशा होता है। कुछ चुनीन्दा खेजड़ियों के खोखे बहुत मीठे तथा स्वादिष्ट होते हैं जिनको पशु ही नहीं बल्कि गावों में बच्चे भी खाते है। पके हुए सूखे खोखों के पाउडर से ढोकले बनाकर भाप से पका कर खाया जाता है जो कि बहुत ही पोष्टिक एवं स्वादिष्ट होता है।

खेजड़ी का पारम्परिक उत्पादन

वर्तमान में जितने भी खेजड़ी के वृक्ष लगे हुए दिखते है इनमें ज्यादातर प्राकृतिक तरीके से बीजों द्वारा बिना किसी योजना के लगे हुए है।

सांगरी उत्पादन हेतु उन्नत प्रजातियां

केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में उत्तम गुणवत्ता की सांगरी हेतु के 1, के-2, के- 13, के 16 व के- 17 चयनों को अति उत्तम पाया गया। खेजड़ी से व्यवस्थित एवं गुणवत्तायुक्त सांगरी उत्पादन के लिए केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने वर्ष 2007 में "थार शोभा "नामक प्रजाति की संस्तुति की है ।

वानस्पतिक प्रवर्धन तकनीक

प्राकृतिक तरीके से बीज द्वारा उगे होने के कारण खेजड़ी में स्वतः प्राकृतिक चयन होता जाता हैं। बीज से पनपे होने के कारण इनमें काफी विविधता पाई जाती है। एक अनुमान के अनुसार अच्छे किस्म की सांगरी केवल 15-20 प्रतिशत पेड़ो में ही पाई जाती है। अन्य 80 प्रतिशत खेजड़ी लूंग, लकड़ी आदि की दृष्टि से उपयोगी होती हैं। उत्तम तथा एक समान सांगरी उत्पादन के लिए खेजड़ी में कलिकायन एक सफल तथा सार्थक तकनीकी हैं। कलिकायन के लिए सर्व प्रथम प्राकृतिक तरीके से लगे पेड़ो की सांगरी का परीक्षण कर उत्तम सांगरी वाले पेड़ो को चिन्हित कर लिया जाता है तथा इन्हीं चुने हुए पेड़ो से ही कलिका ली जाती हैं। मूलवृंत के लिए एक वर्ष के बीजू पौधे ही उपयोग में लाये जाते हैं। कलिकायन किये पौधों का उचित रखरखाव करने से उनमें तीसरे वर्ष ही सांगरी उत्पादन शुरू हो जाता है जबकि बीजू पौधों में यह 8-10 साल बाद ही शुरू हो पाता है। साथ ही सांगरी की गुणवत्ता भी सुनिश्चित नहीं रहती हैं। कलिकायन विधि एक कायिक प्रवर्धन विधि है जिससे मातृ पौधो के समस्त गुण हूबहू शिशु पौधो मे हस्तांतरित हो जाते हैं। कलिकायन विधि से तैयार पौधों का उचित उत्पादन प्रबंधन कर हर वर्ष उत्तम गुण की सांगरी के साथ-साथ लूंग भी लिया जा सकता है। ऐसे पौधे कम ऊँचाई के होने के कारण इनकी कटाई-छंटाई तथा सांगरी की तुड़ाई भी आसानी से की जा सकती है। कलिकायन विधि से चयनित उत्तम सांगरी व लूंग वाली खेजड़ी के पेड़ों का बगीचा निम्न तीन विधियों से विकसित किया जा सकता है।

(i) शीर्ष क्रिया द्वारा (ii) स्वस्थानिक कलिकायन द्वारा, तथा (iii) पौधशाला में मूलवृन्त पर कलिकायन द्वारा

शिवहरे किसान सेवा केन्द्र डबरा
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाईयों के खेरिज विक्रेता
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है

प्रो. ओमप्रकाश शिवहरे
82248-44542
78282-60543
पंजाब नेशनल बैंक के सामने, भितरवार रोड, डबरा

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

पोटैटो डिगर आलू की खुदाई के लिए आधुनिक कृषि यंत्र

विवेकानन्द सिंह (शोध स्कॉलर) फार्म मशीनरी एंव पॉवर इंजीनियरिंग विभाग, सैम हिगिनबॉटम यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर, टेक्नोलॉजी एंड साइंसेस प्रयागराज (उ.प्र.)

अमित कुमार (शोध स्कॉलर) फार्म मशीनरी और पावर इंजीनियरिंग विभाग, केरला कृषि विश्वविद्यालय, केरल

इंजी. विवेक कुमार बाजपेयी (असिस्टेंट प्रोफेसर) मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती भाषा विश्वविद्यालय, लखनऊ

हमारे देश में आलू की खेती बहुत ही बड़े पैमाने पर की जाती है, आलू की खेती में की बुवाई से लेकर खुदाई तक का काम काफी मेहनत से भरा हुआ होता है। इस लेख में हम यही बात करेंगे कि इस काम को हम कैसे आधुनिक कृषि यंत्र की मदद से इसे आसान बना सकते हैं। अगर आलू की खुदाई पारंपरिक साधारण तरीकों से किया जाए तो इसमे काफी समय लगता है, और काफी श्रमिकों की भी जरूरत पडती है। खेती ङ्क किसानी की कार्यों को करने के लिए श्रमिकों की दिक्कत हर तरफ हो रही है। इन्ही सभी परेशनियों को देखते हुए किसान अब आलू की खुदाई करने का आधुनिक कृषि यंत्र पोटैटो डिगर का इस्तेमाल कर रहे है। पोटैटो डिगर के इस्तेमाल से आलू आसानी से जमीन से निकाला जा सकता है। इसके उपयोग से कम समय में अधिक से अधिक जमीन में आलू की खुदाई की जा सकती है।

आलू खुदाई कृषि यंत्र के उपयोग से कम समय और कम खर्च में अधिक जमीन से आलू की खुदाई कर सकते हैं। मशीन के द्वारा आलू खुदाई करने पर आलू की गुणवत्ता भी अच्छी होती है। आलू मे न तो ज्यादा मिट्टी लगे होते है, और नहीं ज्यादा कट्टे-छत्ते होते है, जिससे किसानों को इससे काफी लाभ मिलता है, और इसके बाद लगने वाले फसल भी समय से लग जाते है। पोटैटो डिगर 7 आलू को सब्जियों का राजा यूं ही नहीं कहा जाता। स्वादिष्ट पकवानों से लेकर कई उत्पादों में इसकी बड़ी हिस्सेदारी है। चावल, गेहूं और मक्का के बाद आलू दुनिया की चौथी सबसे अहम फसल है। गैर-अनाजों में इसका पहला नंबर आता है। आलू की मांग 12 माह बाज़ार में रहती है। यही वजह है कि किसान इसकी खेती से जुड़े हैं। तमिलनाडु और केरल को छोडकर आलू पूरे देश में होता है, लेकिन इसे आपकी थाली तक पहुंचाने के लिए किसानों को कड़ी मेहनत करनी होती है। आलू की फसल तैयार होने के बाद आलू की खुदाई करने का काम किसानों के लिए काफ़ी मेहनत वाला होता है। पारंपरिक तरीके से आलू की खुदाई में ज़्यादा समय लगता है यानी ज्यादा मज़दूरों की ज़रूरत पड़ती है। हाथ से आलू की खुदाई में आलू के कटने से बर्बादी भी ज्यादा होती है। कटे आलू की कीमत मंडी में अच्छी नहीं मिल पाती। ऐसे में किसानों की इस समस्या को हल करता है, पोटैटो डिगर। ये एक ऐसी मशीन है जो किसानों के खुदाई के काम को बेहद आसान बनाती है।

किसानों को देता है कम लागत में ज़्यादा मुनाफ़ा

कई किसान इस आधुनिक मशीन पोटैटो डिगर का

इस्तेमाल कर रहे हैं। पोटैटो डिगर के इस्तेमाल से आलू आसानी से जमीन से निकाला जा सकता है। इसके उपयोग से कम समय में अधिक से अधिक जमीन में आलू की खुदाई की जा सकती है। ये ब्लेड, चेन कनवेयर बेल्ट, गियर बॉक्स आदि से लैस होता है। ट्रैक्टर के साथ लगाकर इस्तेमाल की जाने वाली इस मशीन से कृषि ज़मीन पर एक सटीक गहराई सेट की जा सकती है। फिर वही सामान गहराई किसान को पूरे खेत में मिलेगी, जो आलू की खुदाई को बेहद आसान कर देता है। इससे होता ये है कि आलू को नुकसान नहीं पहुंचता, वो बिना कटे बाहर निकलते हैं। आप इसकी गहराई को बढ़ा-घटा भी सकते हैं।

पोटैटो डिगर क्या है: पोटैटो डिगर आलू की खुदाई करने का आधुनिक कृषि यंत्र है, जिसकी सहायता से आलू की खुदाई की जाती है इसमे खुदाई के लिए ब्लेड , चेन कन्वेयर बेल्ट , गिअर बॉक्स आदि एवं गहराई नियंत्रण के लिए दो चक्के फ्रेम पर लगे होते है। जिससे गहराई को आवश्यकता अनुसार बढ़ाया या घटाया जा सकता है। ब्लेड आलू की खुदाई करते है जिसमे आलू (मिट्टी सहित) कन्वेयर बेल्ट पर चढ़ जाती है, और इसमे लगा एक्सीलेटर इसे हिलाता है। जिससे मिट्टी आलू से अलग हो जाती है तथा आलू मशीन के पीछे गिरता है। आलू खुदाई मशीन के पीछे चल रहा श्रमिक आलू को उठाता जाता है, इस मशीन से एक दिन में करीब 15-20 हेक्टेयर क्षेत्र से आलू की खुदाई की जा सकती है। इस मशीन के प्रयोग मे लाने से फसल क्षति बहुत कम होती है। इस मशीन को चलाने के लिए ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है, जिसकी क्षमता लगभग 30HP या उससे अधिक होनी चाहिए, इससे ट्रैक्टर की मदद से आसानी से चलाया जा सकता है।

साफ और उच्च गुणवत्ता वाले आलू

पोटैटो डिगर ज़मीन से आलू निकालकर उससे मिट्टी को भी झाड़ देता है, जिससे एकदम उच्च गुणवत्ता वाला आलू बाहर निकलता है। इस मशीन पर एक जालीदार प्लेटफॉर्म लगा होता है, जिस पर से आलू जाल के घेरे से निकल कर गिरते हैं. यह जालीदार प्लेटफॉर्म लगातार हिलता रहता है, जिससे मिट्टी के ढेले टूट कर गिर जाते हैं और साफ आलू खेत में मिट्टी की सतह पर गिरते हैं। वहीं इस मशीन के प्रयोग से किसान समय पर अपनी आलू की फसल की खुदाई कर सकता है, जिससे वो अगली फसल भी लगा सके।

पोटैटो डिगर मशीन की विशेषताएं

* यह मशीन मिट्टी से आलू निकालकर चिपके हुए मिट्टी को भी झाड़ देता है.
* आलू को नुकसान नहीं पहुंचता, वो बिना कटे बाहर निकलते हैं.
* इसकी गहराई को बढ़ा-घटा भी सकते हैं.
* ये ब्लेड, चेन कनवेयर बेल्ट, गियर बॉक्स आदि से लैस होता है.
* खेत में साफ आलू मिट्टी की सतह पर गिरते हैं.
* इस कृषि यंत्र के प्रयोग से समय पर आलू की खुदाई होती है.

आलू की खुदाई यंत्र से फायदे

* इस मशीन के उपयोग मे लाने से कम समय और कम खर्च में अधिक जमीन से आलू की खुदाई कर सकते हैं।
* मशीन के द्वारा आलू खुदाई करने पर आलू की गुणवत्ता भी अच्छी होती है।
* आलू मे न तो ज्यादा मिट्टी लगे होते है और नहीं ज्यादा कट्टे-छत्ते होते है।
* इससे एक सामान चौड़ाई और गहराई मे आलू की खुदाई होती है, जिससे आलू को नुकसान नहीं पहुचता है।
* इस मशीन के प्रयोग में लाने से आलू की फसल-किसान समय से खुदाई कर सकता है।

पोटैटो डिगर मशीन की कीमत

इसकी कीमत की शुरुआत करीब 40 से 50 हजार से हो जाती है, और ये लगभग 1 से 1.5 लाख तक की होती है। समय-समय पर इसकी कीमत ऊपर-नीचे होती रहती है। इसकी कीमत अलग-अलग कंपनियों पर भी निर्भर करती है। इसमे कई अलग-अलग प्रकार के पोटैटो डिगर मशीन आते है, आप आपनी जरूरत और आवश्यकता के अनुसार ही इसका चुनाव कर सकते है।

पोटैटो डिगर यंत्र पर सब्सिडी

पोटैटो डिगर पर किसानों को समय-समय पर राज्यों के द्वारा पोटैटो डिगर मशीन पर सब्सिडी प्रदान की जाती है। सब्सिडी की दर सभी राज्यों में अलग-अलग होती है। सब्सिडी की और अधिक जानकारी के लिए DBT (Department of Agriculture) , कृषि विभाग की आधिकारिक वेबसाईट को चेक करें या तो फिर अनुदान की जानकारी के लिए अपने जिले में कृषि संबंधित कार्यालय से जानकारी प्राप्त करें।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

धान की फसल में नील-हरित शैवाल का उपयोग एवं बनाने की विधि

विकास सिंह शोध छात्र (शस्य विभाग), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, आयोध्या (उ.प्र.)

मंजू सिंह शोध छात्र (शस्य विभाग), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, आयोध्या (उ.प्र.)

कामरान आजम शोध छात्र (शस्य विभाग), आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, आयोध्या (उ.प्र.)

विवेक कुमार (मृदा एवं कृषि रसायन विभाग) गोचर महाविद्यालय, रामपुर, मनिहारान सहारनपुर, (उ.प्र.)

रासायनिक उर्वरकों के अलावा शैवाल तथा जीवाणु की कुछ प्रजातियां वायुमंडलीय नाइट्रोजन (80 प्रतिशत) का स्थिरीकरण कर मूदा तथा पौधों को देती है और फसल के उत्पादकता में वृद्धि करती है। पौधों के समुचित विकास के लिए नाइट्रोजन एक आवश्यक पोषक तत्व है। इस क्रिया को जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण कहते हैं। इन सूक्ष्म जीवाणुओं को ही जैव उर्वरक कहते हैं। नील-हरित शैवाल एक विशेष प्रकार की काई होती है।

प्रजातियां

जलाक्रान्त दशा, जिसमें धान उगाया जाता है, नील-हरित शैवाल की औलोसिरा, ऐनाबिना, ऐनाबिनाप्सिम, कैलोथ्रिक्स, कैम्पाइलोनिया, सिलिन्ड्रो स्पमर्म फिश्येरला, हैप्लोसीफान, साइक्रोकीटे, नास्टोक, वेस्टिलोप्सिम और टोलीपोथ्रिक्स नामक प्रजातियों के लिए सर्वथा उपयुक्त रहती हैं। धान के खेत का वातावरण नील-हरित शैवाल की वृद्धि के लिए सर्वथा उपयुक्त होता है। इसकी वृद्धि के लिए आवश्यक ताप, प्रकाश, नमी और पोषक तत्वों की मात्रा धान के खेत में विद्यमान रहती है।

नील-हरित शैवाल बनाने की विधि

इस जैव उर्वरक के उत्पादन लेने के पहले कुछ विषेष बातों पर ध्यान देना आवश्यक है जो निम्नलिखित है अन्यथा अत्पादन प्रभावित हो सकता है-

- छाया से दूर खुला स्थान
- मातृ कल्चर
- सिंगल सुपरफॉस्फेट
- कीटनाषक दवाई जैसे कार्बोफयुरान
- आवष्यकतानुसार चूना
- पास ही पानी का खेत

5 मीटर लम्बा, 1 मीटर चौड़ा तथा 10 से 15 सेमी गहरा पक्का टैंक बना लें। टैंक की लम्बाई, आवश्यकतानुसार घटाई बढ़ायी जा सकती है। टैंक उंचे व खुले स्थान पर होना चाहिए। टेंक के स्थान पर लगभग 12 से 15 सेमी गहरा, 1 मीटर चैड़ा और आवश्यकतानुसार लम्बा कच्चा गड्ढा बना सकते हैं। कच्चे गड्ढे में 400-500 गेज मोटी पालीथीन बिछा लें।टैंक व गड्ढे में 5 से 6 इंच तक पानी भर लें तथा प्रति मीटर लम्बाई के हिसाब से एक से डेढ़ किलोग्राम खेत की साफ-सुथरी भुरभुरी मिट्टी, 100 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट एवं 10 ग्राम कार्बोफयुरान डाल कर अच्छी तरह मिला लें तथा दो7तीन घण्टे के लिए छोड़ दें।मिट्टी बैठ जाने पर 100 ग्राम प्रति मीटर लम्बाई के हिसाब से, शैवाल स्टार्टर कल्चर पानी के उपर समान रूप से बिखेर दें। लगभग 1 सप्ताह में शैवाल की मोटी परत बन जाती है। साथ ही साथ पानी भी सूख जाता है। यदि तेज धूप के कारण परत बनने से पहले ही पानी सूख जाये तब टैंक में और पानी डाल दें, पानी सावधानीपूर्वक किनारें से धीरे-धीरे डालें ।टैंक को धूप में सूखने के लिए छोड दें। पूर्णतयः सूख जाने पर शैवाल को इकट्ठा करके पालीथीन बैग में भरकर खेतों में प्रयोग करने हेतु रख लें। शैवाल की मोटी परत बनने के एक हफ्ते बाद भी यदि गड्ढे व टैंक में पानी भरा हो, तो उसे डिब्बे इत्यादि से सावधानीपूर्वक बाहर निकाल दें। पुनः उपरोक्त विधि से उत्पादन शुरू करें तथा स्टार्टर कल्चर के स्थान पर उत्पादित कल्चर का प्रयोग करें। एक बार में 5 मीटर टैंक या गड्ढे से लगभग 6.50-7.00 किलोग्राम शैवाल का जैव उर्वरक प्राप्त होता है। नील-हरित का जैव उर्वरक के उत्पादन के लिए बलुई दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। अप्रैल, मई, जून माह इसके उत्पादन के लिए उपयुक्त होते हैं।

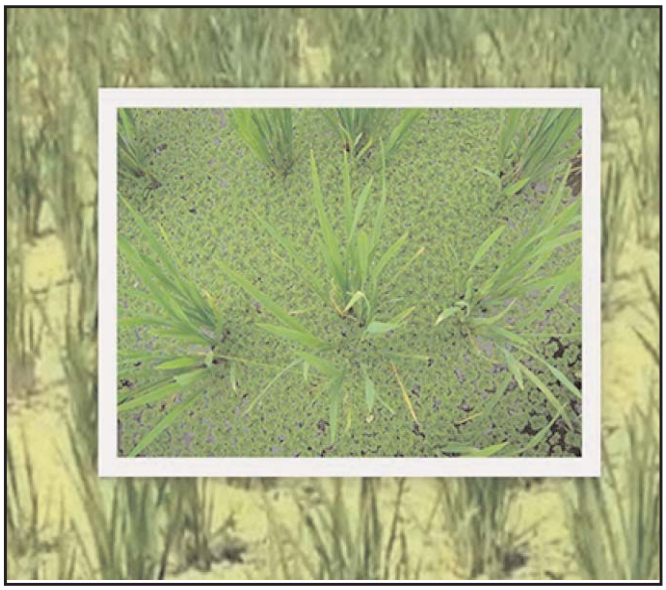

नील-हरित शैवाल बनाने में सावधानियां

- नील-हरित शैवाल जैव उर्वरक उत्पादन के प्रयोग में लायी जाने वाली मिट्टी साफ- सुथरी एवं भुरभुरी होनी चाहिए।
- उत्पादन में प्रयोग की जा रही मिट्टी ऊसर भूमि की नहीं होनी चाहिए।
- मिट्टी में कंकड़ पत्थर एवं घास को छननी से छान लें।
- जैव उर्वरक उत्पादन हेतु प्रयोगशाला द्वारा जांच किये गये अच्छे गुणवार वाले स्टार्टर कल्चर का ही प्रयोग करें।
- कृषक अपने यहां उत्पादित जैव उर्वरक के गुणवत्ता की जांच वैज्ञानिकों द्वारा अवश्य करा लें।
- शैवाल जैव उर्वरक की पपड़ियों को नाइट्रोजन उर्वरकों के साथ प्रयोग करें।

नील हरित शैवाल के उपयोग से लाभ

- नील हरित काई एक जैविक खाद है जिसे धान उत्पादक किसान अपने स्तर पर आसानी से तैयार कर सकते हैं।
- नील हरित काई सामान्य रूप से धान के फसल को करीब 25 से 30 किलो ग्राम प्रति हैक्टेयर नत्रजन की पूर्ति करता है।
- यह काई उपचार के पश्चात् प्रत्येक सीजन में अपने अवशेषों के द्वारा करीब 800 से 1200 किलो ग्राम तक सेन्द्रीय खाद प्रति हैक्टर की पूर्ति करता है जिसकी वजह से उसे खेत के मिट्टी की गुणवत्ता और उपजाऊ क्षमता कायम रहती है।
- नील हरित काई के द्वारा कुछ ऐसे रासायनिक पदार्थ स्त्रावित होता है जिससे बीजों का अंकुरण और फसलों में सामान रूप से वृद्धि होती है।
- लगातार 3-4 वर्षों तक यदि धान के उसी खेत में नील हरित काई का उपयोग किया जाये तो आने वाले कई सीजन तक पुनः उपचार करने की आवश्यकता नहीं होता साथ में इस काई के उपयोग का लाभ आगामी उन्हारी फसल पर भी देखा गया है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

सहजन के चमत्कारिक लाभ

विकास पटेल, आर.के. सिंह
हिमांशु सिंह, अनिकेत कुमार वर्मा
सब्जी विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय बांदा (उ.प्र.)

अनिल कुमार सिंह प्राविधिक सहायक, कृषि विभाग, चंदौली (उ.प्र.)

मोरिंगा एक उष्णकटिबंधी पौधा है, जो भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान के क्षेत्रों में मुख्य रूप से पाया जाता है। मोरिंगा को हिंदी में सहजन, सुजना, मुनगा आदि नामों और अंग्रेजी में मोरिंगा या ड्रमस्टिक नाम से जानते है। पौधे के विभिन्न भागो का ऊपयोग जैसे पत्ते, छाल, फूल, फल, बीज और जड़ प्रयोग औषधि बनाने में किया जाता है मोरिंगा या सहजन मानव जाति के इतिहास में सबसे व्यापक रूप से इस्?तेमाल होने वाले पौधों में से एक है। मोरिंगा की खासियत यही है, कि इसे पानी की कमी होने की स्थिति? में भी उगाया जा सकता है। ये कई तरह के जरूरी पोषक तत्वों, खनिज पदार्थों और विटामिंस का बेहतरीन स्रोत है। ये कई तरह के जरूरी पोषक तत्वों, खनिज पदार्थ और विटामिंस का बेहतरीन स्रोत है। यहां तक कि दुनियाभर में इसे सुपरफूड कहा जाता है।

सहजन में संतरे से 7 गुना ज्यादा विटामिन सी, गाजर से 10 गुना ज्यादा विटामिन ई और दही से 17 गुना ज्यादा कैल्शियम होता है। साथ ही इसमें प्रोटीन, पोटेशियम और आयरन की भी मात्रा ज्यादा होती है। मोरिंगा में प्रोटीन्स, विटामिंस और मिनरल्स भरपूर होता है। इसमें एंटीऑक्सीडेंट होने के कारण यह कोशिकाओं को क्षतिग्रस्त होने से भी बचाता है। सहजन एक प्रकार की फली है, जिसका उपयोग सब्जी के तौर पर किया जाता है। इसे अंग्रेजी में ड्रमस्टिक या मोरिंगा कहा जाता है। इसका वानस्पतिक नाम मोरिंगा ओलिफेरा है। आपको जानकर हैरानी हो सकती है कि भारत मोरिंगा का सबसे बड़ा उत्पादक है, यहां इसका वार्षिक उत्पादन 1.1 से 1.3 मिलियन टन है। सहजन का पेड़ बहुत ही तेजी से बढ़ता है और इसकी फलियों के साथ इसके पत्ते और फूल का भी इस्तेमाल खाने के लिए किया जाता है। सहजन के ये तीनों भाग बहुत गुणकारी होते हैं।

सहजन के फायदे

ब्यूटी प्रोडक्ट के रूप में: मोरिंगा या इसका पाउडर चेहरे पर जादू की तरह काम करता है. मोरिंगा मुंहासे को दूर करता है, स्किन को मुलायम बनाता है, और चेहरे से फाइन लाइन्स को दूर करता है.

मोटापे के लिए सहजन के फायदे: अगर आप मोटापे या बढ़ते वजन की समस्या से परेशान हैं, तो आपको काफी हद तक राहत मिल सकती है। हरी सब्जियों की लिस्ट में सहजन की फली या पत्तियों को शामिल कर बढ़ते वजन की परेशानी को कुछ हद तक नियंत्रित कर सकते हैं। दरअसल, इसमें क्लोरोजेनिक एसिड मौजूद होता है, जिसमें एंटी-ओबेसिटी गुण मौजूद होते हैं, जिससे मोटापे या वजन की परेशानी से लड़ने में मदद मिल सकती है। आप इसे एक स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थ के रूप में अपने आहार में शामिल कर सकते हैं।

कैंसर के लिए सहजन के लाभ: सहजन में मौजूद औषधीय गुण कैंसर जैसी खतरनाक बीमारी के जोखिम को कम करने में मदद कर सकते हैं। दरअसल, सहजन की छाल और सहजन की पत्तियों में एंटी-कैंसर और एंटी-ट्यूमर गुण मौजूद होते हैं। इसके अलावा, सहजन की पत्तियां पॉलीफेनोल्स और पॉलीफ्लोनोइड्स से समृद्ध होती हैं, जो एंटीऑक्सीडेंट और एंटी-कैंसर यौगिक होते हैं, जो इस घातक बीमारी के जोखिम को कम करने में मदद कर सकते हैं।

मधुमेह के लिए सहजन के लाभ: सहजन की फलियों, छाल और अन्य भागों में एंटी-डायबिटिक गुण मौजूद होते हैं, जो मधुमेह के लिए गुणकारी साबित हो सकते हैं और मधुमेह के स्तर को कम कर सकते हैं। अगर आपको सहजन खाना पसंद न हो, तो आप डॉक्टर की सलाह से सहजन की पत्तियों की टैबलेट भी ले सकते हैं, क्योंकि इसमें भी एंटी-डायबिटिक गुण होते हैं।

हड्डियों के लिए सहजन के फायदे: बढ़ती उम्र के साथ हड्डियों की देखभाल और उन्हें स्वस्थ रखना भी जरूरी है। आप अपनी हड्डियों को स्वस्थ रखने के लिए सहजन का सेवन कर सकते हैं। मोरिंगा को कैल्शियम, मैग्नीशियम और फास्फोरस का अच्छा स्रोत माना गया है, जो हड्डियों के लिए जरूरी पोषक तत्व हैं। इन गुणों की मौजूदगी की वजह से सहजन हड्डियों को स्वस्थ रखने में मदद कर सकता है। फिलहाल, अभी इस पर और शोध की जरूरत है। इसके अलावा, इसमें एंटी-ऑस्टियोपोरोटिक गुण भी होते हैं, जो ऑस्टियोपोरोसिस जैसी हड्डी की बीमारी के जोखिम को कम करने में मदद कर सकते हैं।

हृदय को स्वस्थ रखने के लिए: हृदय शरीर के सबसे महत्वपूर्ण अंगों में से एक है। ऐसे में हृदय को स्वस्थ रखना और उसका ध्यान रखना जरूरी है। अगर आप अपने हृदय को स्वस्थ रखना चाहते हैं, तो अपने आहार में सहजन की पत्तियों को शामिल करें। सहजन की पत्तियों में उच्च मात्रा में एंटीऑक्सीडेंट पाए जाते हैं, जो शरीर में इंफ्लेमेशन के कारण होने वाली समस्याओं से राहत दिलाने में मदद करते हैं और हृदय संबंधी परेशानी उन्हीं में से एक है। सहजन की पत्तियों में मौजूद बीटा कैरोटीन एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य कर हृदय को स्वस्थ रखने में मदद कर सकता है।

एनीमिया के लिए: सहजन की छाल या इसकी पत्तियों का सेवन एनीमिया यानी लाल रक्त कोशिकाओं की कमी से बचाव के लिए भी किया जा सकता है। सहजन की पत्तियों के एथनोलिक एक्सट्रैक्ट में एंटी-एनीमिया गुण मौजूद होते हैं, और इसके सेवन से हीमोग्लोबिन के स्तर में सुधार हो सकता है, जिससे लाल रक्त कोशिकाओं के उत्पादन में मदद मिल सकती है।

मस्तिष्क के लिए सहजन के फायदे: सहजन मस्तिष्क को स्वस्थ रखने में भी मदद करता है। बढ़ती उम्र का असर मस्तिष्क पर भी हो सकता है और मस्तिष्क सम्बन्धित बीमारिया जैसे अल्जाइमर (भूलने की बीमारी), पार्किंसंस (सेंट्रल नर्वस सिस्टम से जुड़ा विकार) और ऐसी ही कई अन्य समस्याएं हो सकती है। ऐसे में सहजन का सेवन काफी लाभदायक हो सकता है। यह अल्जाइमर रोगियों में उनमें याददाश्त तेज या सुधार करने में भी सहायक हो सकता है।

लिवर के लिए सहजन: गलत खान-पान और जीवनशैली का लिवर पर काफी गलत प्रभाव पड़ सकता है। ऐसे में जरूरी है वक्त रहते अपने खान-पान को सुधार लें और न सिर्फ सही वक्त पर खाना, बल्कि सही आहार को अपने डाइट में शामिल करें। अन्य आहारों के साथ डाइट में सहजन की फली या इसकी पत्तियों को शामिल किया जा सकता है। इसमें क्वारसेटिन नामक फ्लैवनॉल होते हैं, जो हेपाटोप्रोटेक्टिव की तरह कार्य करते हैं, यानी लिवर को किसी भी प्रकार की क्षति से बचाकर सुरक्षित रखने में मदद कर सकते हैं। इसलिए, सहजन की फली, फूल या सहजन की पत्तियों को डाइट में शामिल करें और लिवर को घातक बीमारियों के जोखिम से बचाएं।

इम्युनिटी के लिए सहजन का उपयोग: सहजन एंटीऑक्सीडेंट और एंटीइंफ्लेमेटी गुणों से भरपूर है, जो कि मौसमी बीमारियों से बचाव में मददगार है। यह गलत सिग्नलिंग मार्ग को सही करने में मदद करता है और सूजन को कम करता है। साथ ही इसमें कुछ फ्लेवोनोइड्स और पॉलीफेनोल्स से भरपूर होता है जो बैक्टीरिया और वायरस से लड़ने में मददगार है। अगर आपको साल भर मौसमी बीमारियों से बचना है तो आपको रोज सुबह मोरिंगा टी पीने चाहिए।

पेट के लिए सहजन के फायदे: सहजन या सहजन की पत्तियों का सेवन कई पेट संबंधी समस्याओं जैसे पेट दर्द और अल्सर से बचाव कर सकते हैं। इसमें एंटी-अल्सर गुण मौजूद होते हैं, जिस कारण इसके सेवन से अल्सर के जोखिम से बचाव हो सकता है। वहीं, ऊपर हमने पहले ही आपको जानकारी दी है कि यह लिवर की समस्याओं से भी राहत दिला सकता है। इतना ही नहीं इसकी छाल भी पेट के लिए उपयोगी है, यह पाचन क्रिया में सुधार करने में मदद कर सकती है।

त्वचा के लिए सहजन के गुण: सिर्फ स्वास्थ्य को ही नहीं, बल्कि त्वचा को भी स्वस्थ रखना आवश्यक है। आपकी त्वचा भी आपके अच्छे और बुरे स्वास्थ्य के बारे में संकेत देती है। अगर त्वचा में चमक न हो तो इसका मतलब यह है कि आपकी त्वचा स्वस्थ नहीं है। ऐसे में सहजन या सहजन की पत्तियों के सेवन से आप अपनी त्वचा को स्वस्थ बना सकते हैं। सहजन में मौजूद एंटीबैक्टीरियल, एंटीवायरल व एंटीफंगल गुण त्वचा के रैशेज, त्वचा संबंधी संक्रमण या अन्य त्वचा संबंधी बीमारियों के जोखिम से बचाव कर सकते हैं।

एंटी-एजिंग के लिए सहजन के लाभ: बढ़ती उम्र का असर चेहरे पर भी दिखने लगता है, नतीजतन चेहरे की चमक कम होने लगती है और झुर्रियां बढ़ने लगती हैं। ऐसे में आप में से कई लोग एंटी-एजिंग क्रीम का भी सहारा लेते होंगे, जिसका असर कुछ वक्त तक ही रहता है। इस कारण इसका उपयोग बार-बार करने की जरूरत होती है। इस स्थिति में बेहतर है कि आप अपनी डाइट का सही तरीके से चुनाव करें, क्योंकि कहीं न कहीं आपकी डाइट का असर आपकी त्वचा और चेहरे पर पड़ता है। आप अपने डाइट में सहजन को या इसकी पत्तियों को शामिल कर सकते हैं। इसका सेवन आपके चेहरे पर बढ़ती उम्र के प्रभाव को कम करने में मदद कर सकता है। इतना ही नहीं इसके बीज भी कम उम्र में त्वचा पर एजिंग के प्रभाव को कम करने में मदद कर सकते हैं।

डायबिटीज में भी हैं उपयोगी: सहजन के पत्तों को डायबिटीज की समस्या में भी फायदेमंद माना जाता है। ये आपके खून में ग्लूकोज और यूरिन में शुगर और प्रोटीन की मात्रा को कम करते हैं। इसके अलावा ये दिल को स्वस्थ बनाए रखने में भी मदद करते हैं। इसके लिए आप सहजन के पत्तों का जूस भी बना सकते हैं या उसे सुखाकर उसका पाउडर बनाकर सेवन कर सकते हैं।

पेट से जुड़ी बीमारियों के इलाज में हैं सहायक: सहजन के पत्ते पेट से जुड़ी समस्याओं, जैसे- कब्ज, पेट में सूजन, आंतों में सूजन आदि के इलाज में सहायक हैं। इसके एंटीबायोटिक और एंटीबैक्टीरियल गुण कई रोगों को बढ़ने से रोकने में मदद कर सकते हैं। साथ ही इसमें पाया जाने वाला विटामिन बी पाचन तंत्र को भी दुरुस्त बनाता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

सब्जियों की संरक्षित खेती

उमेश कुमार विषय वस्तु विशेषज्ञ (कृषि वानिकी)
डॉ. एम.पी. गौतम विषय वस्तु विशेषज्ञ (पादप सुरक्षा)
डॉ. एल.सी. वर्मा वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष
कृषि विज्ञान केन्द्र, लेदौरा, आजमगढ़-II (उ.प्र.)

भारत भौगोलिक विभिन्नताओं से परिपूर्ण एक कृषि आधारित अर्थव्यवस्था वाला देश है। हमारे देश के लगभग 58 प्रतिशत से ज्यादा लोग अपनी आजीविका के लिए मुख्य रूप से कृषि पर निर्भर हैं। इस प्रकार कृषि, रोजगार और जीविकोपार्जन का सबसे बड़ा स्रोत है। कृषि वैज्ञानिकों ने पारम्परिक कृषि में विविधीकरण का व्यापक रुप से प्रयोग करके आधुनिक कृषि में बदल दिया है । हमारे देश के किसान अधिक लाभ अर्जित करने के लिए उचित मूल्य वाली सभी प्रकार की फसलों जैसे- फल, फूल और सब्जियों आदि की खेती को विविधता प्रदान करते हैं। जिस तरह से जलवायु परिवर्तन से देश की कृषि प्रभावित हो रही है, ऐसे समय जरूरत है कृषि में नई तकनीक के इस्तेमाल करना, जिससे फसल उत्पादन पर कोई असरन पड़े और अच्छा उत्पादन मिलता रहे। ऐसी ही एक तकनीक है संरक्षित खेती।

क्या है संरक्षित खेती?: संरक्षित खेती नए युग की ऐसी नवीनतम कृषि प्रणाली है, जिसके माध्यम से किसान फसलों की मांग के अनुसार वातावरण को नियंत्रित करते हुए मंहगी फसलों के लिए ऐसा वातावरण तैयार करते हैं, जहां पर धूप, छांव, गर्मी व ठंडक का अधिक प्रभाव न हो साथ ही तेज बारिश का असर और तीव्र हवाओं का प्रकोप भी न हो, और फसलों का प्राकृतिक प्रकोपों व अन्य कारकों से बचाव किया जाता है और कम क्षेत्रफल में अधिक से अधिक गुणवत्ता युक्त उत्पादन प्राप्त किया जाता है। अर्थात वह खेती जो हर परिस्तिथि में उगाई गई फसलों को विविध आपदाओं से सुरक्षित रखती है उसको संरक्षित खेती कहते हैं।

संरक्षित खेती के फायदे

- फसलों में रोग एवं कीटों का प्रकोप कम एवं जंगली जानवरो से फसलों की रक्षा होती है।
- वातावरण को नियंत्रण करके सभी मौसममें, बेमौसमी, अगेती सब्जियों की खेती की जा सकती है।
- सिंचाई के समय पानी, खाद एवं उर्वरक तथा दवा की बचत, होती है।
- संरक्षित खेती से फसलों की उच्च गुणवत्ता एवं पैदावार में वृद्धि होती है।
- फूलों एवं सब्जियों की नर्सरी तैयार करके पौधों की बिक्री भी कर सकते हैं।
- बाजार मांग एवं अपनी पसंद के अनुसार सब्जियों एवं फसलों का चयन कर सकते हैं।
- वर्तमान परिस्तिथियों में परिनगरीय एवं शहरी क्षेत्रों के लघु एवं सीमान्त किसनों हेतु रोजगार तकनीक साबित हो रही है।

संरक्षित खेती के प्रकार: सब्जियों की आवश्यकता के अनुसार यह कई प्रकार से की जाती है।

पॉलीहाउस में खेती: पॉलीहाउस एक घरनुमा संरचना होती है जो जी.आई. पाइपों एवं पालीथीन से मिलाकर बनाया जाता है। इसके अन्दर कृषि यंत्रो का उपयोग आसानी से करके शिमला मिर्च, टमाटर, चेरीटमाटर, खीरा, कद्दू की खेती की जा सकती है। पॉलीहाउसों का क्षेत्रफल कम से कम 500 से 1000 रखना आवश्यक होता है। इसमें सिंचाई हेतु टपक सिंचाई तकनीक का उपयोग करना आवश्यक होता है जिससे सिंचाई के साथ ङ्क साथ दवाओं को भी दिया जा सके। पॉलीहाउस स्थापित करने में लगभग 750 रु. से 1000 रु. प्रति वर्गमीटर का खर्च आता है। लागत की सीमा सामग्री की गुणवत्ता, स्थान, आकार, आकार और संरचनाओ से कुछ कारकों पर निर्भर करती है । एक हजार वर्गमीटर क्षेत्र में पॉलीहाउस के निर्माण में लगभग 10 से 12 लाख रुपये की लागत आती है। इसके लिए नाबार्ड बैंक की तरफ से लोन भी दिया जाता है, तथा मिशन फॉर इंटीग्रेटेड डेवलपमेंट ऑफ हॉर्टिकल्चर (MIDH) के अंतर्गत पॉलीहाउस निर्माण पर सरकारी सब्सिडी अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग होती है । यह 50% से 80% तक हो सकती है।

कीट अवरोधी नेट हाउस खेती: यह संरचना भी पॉलीहाउस के समान है। इसमें फर्क सिर्फ इतना है पॉलीहाउस में पालीथीन से ढकते है लेकिन इसको सिर्फ कीट अवरोधी सफ़ेद जाली से ढका जाता है। इस खेती का मुख्य उद्येश्य छोटे-छोटे शत्रु कीटों से रक्षा करके फसलो को वायरस रोग से बचाया जा सके। यह संरचना उन क्षेत्रों के लिए उपयोगी है जिन क्षेत्रों में कम से कम बारिश पाला एवं ठंडक, सामान्य से कम पड़ती है और तापमान सदैव एक समान रहता है। इस कीट अवरोधी नेटहाउस के अन्दर वर्ष में दो बार खीरे की फसल, एक बार टमाटर और शिमला मिर्च की फसल ली जा सकती है। नेट हाउस संरचना 1000 वर्गमीटर बनाने की लागत लगभग रू. 5-6 लाख लग जाता है।

छायादार नेट हाउस खेती: यह संरचना भी कीटरोधी नेट हाउस की तरह बनाई जाती है। यह गर्मियों के मौसम में सब्जी उत्पादन में अहम्भूमिका निभाता है। नेट हाउस में गर्मियों के मौसम में पत्तीदार सब्जियों को उगाकर अधिक लाभ कमा सकते हैं। क्योंकि पत्तेदार सब्जियाँ जैसे- पालक, मेथी, मूली, चौलाई, धनिया आदि गर्मियों में खुले खेतों में नहीं होता है। इसको भी 1000 वर्गमीटर क्षेत्रफल पर बनाने का खर्च लगभग 5-6 लाख लग जाता है।

प्लॉस्टिक लोटनल खेती: लोटनल संरचना बनाने के लिए 6-10 मिली मीटर मोटी, 2-3 मीटर लम्बी जी. आई. तार या सरिया या बांस की फंठीयों का उपयोग करके बनाया जाता है। इन तारो को दोनों सिरों पर 1- 1.5 मीटर चौड़ी बेड पर गाड़ते है तो इसकी ऊंचाई स्वतः 2.5 -3.0 फीट की बन जाती है। टनल तारों की आपसी दूरी 2-2 मीटर रखते हैं। टनल बनने के बाद इसके ऊपर 25-30 माईक्रोन पारदर्शी मोटी पालीथिन से पूरा ढख देते है 7 इसके अन्दर नवम्बर, दिसम्बर एवं जनवरी के महीनों में इन सब्जियों की पौध बनाकर रोपण कर देते है और फरवरी माह में खोल देते है 7 खोलने के एक सप्ताह बाद कद्दूवर्गीय सब्जियों से फल प्राप्त होने लगते है 7 इस तकनीक से उत्पादन 1.5 -2 माह पहले बाजार में आ जाता है और किसानों को अधिक लाभ प्राप्त होता है। प्लास्टिक लो टनल को बनाने हेतु 1000 वर्गमीटर क्षेत्रफल का खर्च लगभग 25-30 हजार रू. आता है।

प्लॉस्टिक हाई टनल खेती: यह संरचना प्लास्टिक लो-टनल पॉलीहाउस का बड़ा रूप हैं इसके अन्दर आसानी से आ जा सकते हैं । इसलिए इसे वॉक-इन टनल कहते हैं। यह प्रायः पौने या आधा इंच गोल जी. आई. पाइपो के सहयोग से बनाई जाती है। इसको अर्द्धचंद्रा कर मोड़कर सरिया के खूटो के मध्य से लगाया जाता है। हाई टनल एक ऐसी संरचना है कि इसके ऊपर कीट रोधी जाली, छाया रोधी जाली एवं पालीथिन के टुकड़ों से फसल की आवश्यकता एवं मौसम परिवर्तन के अनुसार ढंक सकते हैं। इस टनल का उपयोग जाड़ो एवं बारिश मौसम में लाभकारी होता है। इस तकनीक के अंतर्गत अपनी आवश्यकतानुसार प्रत्येक सब्जियों को उगा सकते है और खेती से 2-3 गुना अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। सामान्यता 100 वर्गमीटर की एक वाकिंग पाली टनल बनाने में 30-32 हजार रू. की लागत आती है।

प्लॉस्टिक मल्चिंग खेती: इस तकनीक में 30-50 माइक्रोन मोटाई वाली काली, पीली, लाल, भूरी एवं चाँदनीं रंगों वाली पालीथिन चादर को खेत में बनी लम्बी-लम्बी ऊँची क्यारियों के ऊपर बिछाकर, उचित दूरी 1-2 फीट के अन्तराल पर छिद्रकर के सब्जियों की पौध लगाते हैं। इस तकनीक के साथ टपक सिचाई के पाइपों को पहले बिछा लेते है उसके बाद पालीथिन मल्च। यह तकनीक टमाटरवर्गीय, कद्दूवर्गीय, गोभीवर्गीय, मिर्च आदि की खेती के लिए उपयोगी सिद्ध होता है। इस तकनीक से 30-40% उपज वृधि, 40-50% जल की बचत, 20-25% उर्वरक बचत तथा 90% खरपतवार नियंत्रण पर होने वाले खर्च की बचत होती है। इस तकनीक से 1000 वर्गमीटर में खेती करने पर लगभग 8-10 हजार रू. की लागत आती है।

शारांश: बड़े शहरों के उपभोक्ताओं की मांग को ध्यान में रखते हुए अब समय आ गया है कि शहरी क्षेत्रों में उच्चगुणवत्ता वाली सब्जियों का उत्पादन किया जाये जिसके लिए सब्जियों की संरक्षित खेती एक कारगर व आकर्षक विकल्प है। संरक्षित खेती द्वारा इन क्षेत्रों में खेती करने वाले किसान, उच्च गुणवत्ता वाली सब्जियों को लम्बी अवधि तक उगाकर तथा सब्जियों की बेमौसमी खेतीकर के बड़े शहरों में उपलब्ध उच्च बाजारों से अधिक लाभ कमा सकते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

जीनोमिक्स और फसल सुधार में इसका अनुप्रयोग

सैयद ताजीन जैदी शोध छात्र, फसल कार्यिकी विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ. प्र.)

डॉ. अलोक कुमार सिंह सहायक प्राध्यापक, फसल कार्यिकी विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ. प्र.)

मिनाक्षी जैव प्रौद्योगिकी विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस, (उ. प्र.)

परिचयः पौधों की घरेलू बनाने की शुरुआत से, लगभग 10,000 वर्ष पहले, पौधों की बनाने की क्रिया ने फसलों और विविधताओं के विकास में बहुत सफलता प्राप्त की है जिन्होंने आधुनिक समाजों के विकास में योगदान दिया और (नव-) माल्थुसियन की पूर्वानुमानित को प्रतिक्रियाशील रूप से परास्त किया। पूर्व-जीनोमिक्स के लिए पारंपरिक वैज्ञानिक बनाने की विधियों का अनुप्रयोग ने आधुनिक पौधों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया है, जिन्होंने 20वीं सदी के मध्य से लेकर आज तक अधिकांश प्रमुख फसलों के उत्पादन में विशेष योगदान किया है। पिछले सदी में, पौधों के ब्रीडिंग की सफलता ने प्राकृतिक और म्यूटेंट-उत्प्रेरित जीनेटिक विविधता का उपयोग और प्रभावी ब्रीडिंग विधियों का प्रयोग करके समर्थ जीनेटिक संयोजनों का चयन करने पर आधारित था। इस संदर्भ में, फेनोटाइपिक मूल्यांकन बड़े हिस्से में रुचिस्वरूप वेरिएंट्स की जांच और पहचान पर आधारित था साथ ही उपयुक्त चयन विधियों का भी प्रयोग हुआ। आजकल, जीनोमिक्स जीनोटाइप का सीधा विश्लेषण और उसके प्रजातिकता के साथ संबंध को संभव बनाने के द्वारा पौधों के नस्ल के संबंध में नई टूल्स और तकनीकों की एक नई समूह प्रदान करती है, जो पूरे जीनोम की अध्ययन की अनुमति देती है और एक नया परिदिग्धि प्रतिकृति होती है। 20वीं सदी की शुरुआत में, हालांकि क्लासिकल जीनेटिक्स ने पौधों की ब्रीडिंग को क्रांति दिलाई, जीनोमिक्स ने 21वीं सदी की शुरुआत में पौधों की ब्रीडिंग में एक नई क्रांति का मार्ग प्रदान किया। जीनोमिक्स क्षेत्र और उसका पौधों के प्रजनन में उपयोग तेजी से विकसित हो रहे हैं। परंपरागत ब्रीडिंग तकनीकों और जीनोमिक उपकरणों और दृष्टिकोणों के संयोजन से जीनोमिक्स पर आधारित नई पौधों की ब्रीडिंग की ओर अग्रसर कर रहे हैं। इस पौधों की नई ब्रीडिंग के संदर्भ में, जीनोमिक्स प्रदूक्षण के लिए महत्वपूर्ण होगी, जिन्हें कृषि और खाद्य संगठन (स्नह्र) के अनुसार वर्तमान में जरूरी हो गई है, जो दुनिया की बढ़ती आबादी को खाने के लिए और प्राकृतिक संसाधनों को बनाए रखने के लिए आवश्यक है।

तामास रॅडेरिक ने 1986 में पहली बार शब्द जीनोमिक्स का उपयोग किया था। यह किसी जीवंत जीव के पूरे जीनोम के संरचना और कार्य का विश्लेषण करने के संबंध में होता है। जीनोमिक्स अब एक ऐसे जीनेटिक उप-शाखा के रूप में विकसित हो रहा है जो जीनोम मैपिंग, श्रृंखलन और कार्यात्मक विश्लेषण हेतु समर्पित है। एक जीनोम को पूरे जीनेटिक मेक-अप के रूप में वर्णित किया जाता है और इसमें व्यक्ति की आनुवंशिक जानकारी, जिसे जीन के नाम से जाना जाता है, शामिल है। यह ज्ञात है कि कुछ जीन प्लियोट्रोपिक होते हैं। जीन गतिविधि मार्गों का विश्लेषण अनेक शोध कार्यक्रमों के प्रमुख लक्ष्यों में से एक है। पौधों के डिज़ाइन का लक्ष्य उन्हें जैविक और अजैविक तनाव सहने, पैथोजन हमलों का सामना करने, उत्पादन और पोषण मूल्यों को सुधारने में सहायक बनाना है। यहाँ जीनोमिक्स आईतिहासिक दृष्टिकोण में आता है ताकि इन विशेषताओं को समझने और सुधारने के लिए आणविक दर्शन प्रदान कर सके। पौधों की जीनोमिक्स फसल नर्सरियों में बड़ी संभावना रखती है क्योंकि यह बहुत मूल्यवान जानकारी प्रदान करती है जिसका हम अपने ब्रीडिंग कार्यक्रमों में आधार रखते हैं।

फसल पौधों में जीनोमिक्सः पौधों की जीनोमिक्स पर काम दिसंबर 2000 में आरबिडोप्सिस थालियाना मॉडल पौधे के पूरे जीनोम श्रृंखला के प्रकाशन के साथ शुरू हुआ। इससे पौधों की विकास और पर्यावरण प्रोत्साहन प्रतिक्रिया के आणुरूप कारणों के मौलिक आधार की हमारी समझ में विशेष सुधार हुआ है। जीनोम की श्रृंखला होने से जीनोमिक दृष्टिकोणों की संभावनाओं को सक्रिय किया गया जो 26,000 जीनों को दिखाने की संभावना थी। आरएनआई तकनीक स्थापना जननाय बदलाव या जीन चुप्पी द्वारा उत्पन्न नष्टि कुप्रभाव, यदि म्यूटेंट्स को प्रजातिप्रति लिंक किया जा सकता है, तो जीन के लिए एक भूमिका निर्धारित करते हैं। महत्वपूर्ण विकास में शामिल हैं, अगस्त 2005 में उच्च गुणवत्ता वाले चावल जीनोम श्रृंखला का प्रकाशन, सितंबर 2006 का पॉपलर जीनोम का मसौदा, 2007 में दो डाक दराज जीनोटाइप का पूरा जीनोम श्रृंखला, 2008 में ट्रांसजेनिक पपया, और 2018 में पूरा गेहूँ जीनोम श्रृंखला।

जीनोमिक्स का वर्गीकरणः जीनोमिक्स की शिखा तीन खंडों में बाँटी जाती है, जो संरचनात्मक जीनोमिक्स, तुलनात्मक जीनोमिक्स, और कार्यात्मक जीनोमिक्स हैं। **ये निम्नलिखित तरीकों से वर्णित होते हैं-**

संरचनात्मक जीनोमिक्सः इसमें किसी जीवंत जीव के पूरे जीनोम की संरचना का अध्ययन करता है। दूसरे शब्दों में, इसमें जीनोम के प्रत्येक क्रोमोसोम की जीनेटिक संरचना का अध्ययन किया जाता है। इससे किस प्रजाति के जीनोम में [Mb] मेगा-बेस के रूप में उचित होता है और जीनोम के पूरे जीनोम में पाए जाने वाले जीनों की जानकारी शामिल होती है। इसे जीनोमिक श्रृंखला डेटा का निर्माण करने, जीन का पता लगाने और लोकेटिंग जीन मैप बनाने पर ध्यान केंद्रित होता है। यह डीएनए सीक्वेंसिंग प्रौद्योगिकी और कार्यक्रम सॉफ़्टवेयर का उपयोग करता है जो जीनोमिक सूची से संबंधित जानकारी का उत्पादन, संग्रहण और विश्लेषण करने के लिए प्रयुक्त होते हैं।

कार्यात्मक जीनोमिक्सः यह पूरे जीनोम में पाए जाने वाले सभी जीनों की कार्यों की शोध में शामिल है। इसमें प्रोटियोम और ट्रांसक्रिपटोम शामिल है। ट्रांसक्रिपटोम एक पूरे जीनोम-प्राकृतिक आरएनए के जीनोम द्वारा लिखित आरएनए का पूरा सेट होता है और जीनोम-प्राकृतिक आरएनए द्वारा लिखित पूरे सेट का संकेत करता है। जीनोम श्रृंखला के बाद विकसित होते समय तक सभी जीनों को कार्यों का प्रविष्ट किया जाना चाहिए। कुछ जीन पहले से ही एक परंपरागत विधि का उपयोग करके कार्यों को विशिष्ट कर सकते हैं जैसे कि म्यूटेजेनेसिस और लिंकेज मैपिंग। कुछ कार्यों को समरूपता खोजों का उपयोग करके नहीं किया जा सकता है। जीनोमिक्स के कार्यात्मक दृष्टिकोणों में अधिकांशतः सूची या हाइब्रिडीकरण पर आधारित मेथडों का उपयोग किया जाता है। प्रकटित सीक्वेंस टैग (ईएसटी), जीन व्यक्ति विश्लेषण के लिए सीरियल विश्लेषण ऑफ जीन एक्सप्रेशन (एसएजी) और बड़े पैमाने पर हस्तक्षेप पर हस्तक्षेप पर हस्तक्षेप पर हस्तक्षेप पर हस्तक्षेप पर हस्तक्षेप पर हस्तक्षेप पर हस्तक्षेप पर हस्तक्षेप पर हस्तक्षेप पर हस्तक्षेप पर अध्ययन किये जाते हैं। हाइब्रिडीकरण पर आधारित दृष्टिकोण तबीयतीकरण के तरीकों में शामिल होते हैं, जिन्हें सीडीएनए या सीडीएनए सैंपल के साथ संलग्न किया जाता है जो एक सतह पर अटैच किए जाते हैं ताकि व्यक्तिगता मूल्यांकन के लिए। ये अरे-बेस्ड दृष्टिकोण उद्देश्यित होते हैं; अर्थात् पहले ही सिक्वेंस जानकारी का अध्ययन करने के लिए स्वरूप या क्लोन की आवश्यकता होती है। टारगेटिंग इंड्यूस्ड लोकल लेशंस इन जीनोम्स (टिलिंग) प्रमुख रूप से बड़ी संख्या के म्यूटेंट्स का हाई-थ्रूपुट विश्लेषण करने की अनुमति देते हैं, एक संशोधित तकनीक, जिसे ईको टिलिंग कहा जाता है, के द्वारा प्राकृतिक पॉलिमॉर्फिज़्म की पहचान के लिए विकसित किया गया है, टिलिंग-सहायक उत्प्रेरित म्यूटेशन की पहचान। टीडीएनए, आरएआई और जीनोम संपादन की संपादन भी जीन कार्य का स्थान करने के लिए प्रयुक्त होते हैं।

तुलनात्मक जीनोमिक्सः यह एक जीवविज्ञानिक अनुसंधान क्षेत्र है जिसमें विभिन्न मानव प्रजातियों, माउस और अन्य विभिन्न प्राणियों के जीनोम श्रृंखलाएँ बक्टीरिया से चिम्पैंजी तक की तुलना की जाती है। विभिन्न प्राणियों की जीनोम श्रृंखलाओं की तुलना करके, शोधकर्ता मौलिक स्तर पर विभिन्न जीवन की रूपों को एक दूसरे से कैसे भिन्न किया जाता है, उसे समझा सकते हैं। तुलनात्मक जीनोमिक्स जीवों के बीच पैदावार परिवर्तनों का अध्ययन करने के लिए एक प्रबल उपकरण प्रदान करती है, जो प्रजातियों के बीच बचाए गए या सामान्य जीनों को पहचानने में मदद करती है, साथ ही प्रत्येक प्राणी को अद्वितीय विशेषताओं के लिए विशिष्ट जीन्स। यह जीनों की श्रृंखलाओं की तुलना करके संबंध का व्याख्यान करता है कि क्या यह कार्यात्मक या प्राकृतिक है। तुलनात्मक जीनोमिक्स विशिष्ट रूप से अनजाने जीनों और मशक्कत-स्तर के पुनर्व्यवस्थानों की खोज के लिए एक आदर्श प्रणाली है। तुलनात्मक जीनोमिक्स ने "जीनोम जिपर" के विचार के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, जिससे एक आंशिक श्रृंखलित जीनोम में एक वर्चुअल जीन क्रम स्थापित किया जा सकता है। जीनोम जिपर्स पूरी तरह से श्रृंखलित और विवरणात्मक चावल और ज्वार जीनोम को भिन्न डेटा स्रोतों से जोड़ते हैं जिनमें कम अध्ययित प्रजातियों से जेनोम सैंपल श्रृंखलाएँ और जीनेटिक मैप्ड मार्कर्स शामिल हैं। इन प्राणियों में, जीन क्रम और संगठन की पूर्वानुमानी करें। फिर भी, सिंटेनी पर आधारित निर्भर करने का मतलब है कि यह रणनीति नवीनतम विकसित जीनों और छोटे-मात्रा व्यवस्थापनों का अन्वेषण नहीं कर सकती है।

फसल सुधार में जीनोमिक्स की भूमिकाः जीनोमिक्स का विभिन्न प्रकार की फसलों को बढ़ावा देने में कई उपयोग होते हैं। कई तरीकों से, जीनोम मैपिंग का उपयोग कार्यकर्तव्य होता है। यह उपयोगी होता है या जानकारी प्रदान करता है जैसे जीनोम का आकार, जीन संख्या, जीन मैपिंग, जीन सीक्वेंसिंग, फसल पौधों की विकास, जीन क्लोनिंग, डीएनए मार्कर पहचान, मार्कर सहायक चयन, परिवर्तनकारी पैदावर, संलग्निक मानचित्र निर्माण और क्यूटीएल मानचित्रिता।

जीनोम आकारः जीनोम मैपिंग विभिन्न प्रजातियों के पौधों के जीनोम के आकार की मूल्यांकन के लिए एक बहुत ही उपयोगी तकनीक है। सबसे बड़े जीनोम आकार का रिकॉर्ड गेहूं में (14.5 जीबी) रखा गया था और सबसे छोटे जीनोम आकार वाले आरबिडोप्सिस थालियाना में (120 मीबी) अब तक की अध्ययित पौधों की प्रजातियों में।

जीन संख्याः जीनोम मैपिंग जानकारी प्रदान करता है एक प्रजाति की जीन संख्या पर। अब तक की अध्ययित पौधों में मेंकॉक में जीनों की अधिकतम संख्या रिपोर्ट की गई थी, जो 1,07,891 थी (तालिका 1)।

जीन मैपिंगः जीनोम शोध विभिन्न जीनोम के विभिन्न क्रोमोसोमों पर जीनों की मैपिंग/टैग करने में बहुत उपयोगी है। दूसरे शब्दों में, यह एक बड़ी पैमाने पर एक जीनोम में नए जीनों की खोज में मदद करता है।

जीन सीक्वेंसिंगः जीनोम मैपिंग को क्रोमोसोम जीन क्रम स्थापित करने में मदद मिलती है। जीन क्रम सभी जीनोम के प्रत्येक क्रोमोसोम पर निर्धारित किया जाता है।

विकासः जीनोम मैपिंग विभिन्न प्राणियों के विकास पर जानकारी प्रदान करती है। यह विभिन्न जीनोमों के बीच इंटरैक्शन की जांच करता है और इस तरीके से फसल पौधों के संबंध या जैवोल्यूटरी बायोलॉजी पर जानकारी प्रदान करता है।

जीन क्लोनिंगः जीनोम शोध एक प्रजाति से दूसरी प्रजाति में जीन की प्रतियों की बनाने और उन्हें जीनोटाइप से जीन की विकसन में बहुत उपयोगी है। इसलिए यह जीनों के सटीक स्थानांतरण में मदद करता है।

डीएनए मार्कर पहचानः जीनोम मैपिंग तकनीकें मार्कर सहायक चयन, अर्थात मॉलेक्युलर ब्रीडिंग में उपयोग किए जा सकने वाले डीएनए मार्कर्स की वर्गीकरण करने में उपयोगी होती है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

उड़द की जायद मौसम में उन्नतशील खेती

सुनिता, साक्षी संतोष व्यास, उदयभान निषाद
(विद्यावाचस्पति छात्र) उद्यान विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी, (उ.प्र.)

अंजली नागौरी (स्नातकोत्तर) सूत्रकृमि विभाग, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि., उदयपुर

श्वेता कुमारी (विद्यावाचस्पति छात्रा) मृदा विज्ञान, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी (उ.प्र.)

जायद उड़द नकदी फसल है जहां सिंचाई की सुविधा है वहां पर इस फसल को लिया जा सकता है। इसकी खेती किसानो को अतिरिक्त आय देने के साथ साथ भूमि की उर्वराशक्ति बनाये रखने में सहायक है। क्योकि इसकी खेती किसानों को अतिरिक्त आय देने के साथ-साथ भूमि की उर्वरा शक्ति बनाए रखने में सहायक है। क्योंकि उसकी जड़ों में ग्रंथियां पाई जाती है। इन ग्रंथों में एक सूक्ष्म जीवाणु राइजोबियम पाया जाता है।

जलवायु: उड़द उच्च तापक्रम सहन करने वाली उष्ण जलवायु की फसल है। इसी कारण जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा होती है वहाँ अनेक भागों में उगाया जाता है। इसकी अच्छी वृद्धि और विकास के लिए 25 से 35 डिग्री सेल्सियस तापमान आवश्यक है परन्तु यह 42 डिग्री सेल्सियस तापमान तक सहन कर लेती है। अधिक जलभराव वाले स्थानों में इसे नहीं उगाना चाहिए।

खेत की तैयारी: उड़द की खेती काली मिट्टी दोमट मटियार भूमि आदि सभी प्रकार की मृदा में सफलतापूर्वक उगाई जाती है। भारी भूमि की अपेक्षा हल्की मृदा अधिक उत्तम होती है। भरी भूमियों में जल निकास का होना आवश्यक है। उड़द कि सबसे उत्तम उपज दोमट भूमि में प्राप्त होती है। जायद में गेहूं की कटाई करकेए पलेवा करके साथ के साथ उड़द की फसल बो सकते हैं। इसके लिए रबी कटाई के तुरंत बाद भूमि की आवश्यकतानुसार एक जुताई करके खेत को तैयार करें।

जायद उड़द की बुवाई का समय: जायद उड़द की अधिकतम पैदावार के लिए इसकी बुवाई सरसोंए गेहूंए जौ की कटाई के तुरंत बाद 15 फरवरी से 15 मार्च तक की जा सकती है।

बीज की मात्राएं: खरीफ में उड़द की ग्रीष्मकालीन बीजदर 20 से 25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से बोना चाहिये

दूरी: बीज की बुवाई के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 से 25 सेमी तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी रखनी चाहिए।

बीजशोधन: मृदा एवं बीज जनित रोगों से बचाव के लिए 2 ग्राम थायरम एवं 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम मिश्रण (2:1) प्रति कि.ग्रा. बीज अथवा कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्रा. प्रति कि.ग्राम बीज की दर से शोधित कर लें। बीजशोधन कल्चर से उपचारित करने के 2-3 दिन पूर्व करना चाहिए।

बीज का उपचार

उड़द के बीज को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना: दलहनी फसलों के बीजों को राइजोबियम से उपचारित करने से अधिक पैदावार होती है। एक पैकेट 200 ग्राम राइजोबियम कल्चर 10 किग्रा. बीजों के लिए पर्याप्त होता है। बुवाई के 8-10 घंटे पहले 100 ग्राम गुड़/शक्कर को आधा लीटर पानी में घोल कर उबाल लेना चाहिए। ठंडा होने पर इसके बाद घोल में आप राइजोबियम कल्चर मिलाकर डंडे से हिला देवें। इसके बाद बाल्टी में 10 किलोग्राम बीज

डालकर अच्छी प्रकार से मिला देना चाहिए। ताकि राइजोबियम कल्चर बीज की सतह पर अच्छी तरह चिपक जाए, फिर उपचारित बीजों को छाया में सुखाकर दूसरे दिन बुवाई के लिए काम में ले सकते हैं।

जायद उड़द की उन्नत किस्में

टी.-9: खरीफ एवं जायद मौसम के लिए उपयुक्त उड़द की यह किस्म 70-75 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसकी औसत पैदावार 10-12 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक हो जाती है। तथा यह किस्म दक्षिणी राजस्थान हेतु विकसित की गई है।

पंत यु.-19: खरीफ एवं जायद मौसम के लिए उपयुक्त उड़द की यह किस्म 80-85 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसकी औसत पैदावार 10-11 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक हो जाती है। यह किस्म पीतशिरा विषाणु रोग के लिए प्रतिरोधी किस्म हैं।

पंत यु.- 30: यह किस्म 80-85 दिन पककर में 10 से 12 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देती है। तथा इसका दाना मोटा होता है तथा यह किस्म विषाणु रोग के लिए प्रतिरोधी है।

जे. वाई. पी.: खरीफ, जायद एवं रबी मौसम के लिए उपयुक्त उड़द की यह किस्म 80-90 दिन में पकती है तथा 12% प्रति हे. उपज देती है। यह पीला मोजेक रोग के प्रति प्रतिरोधक पाई गई है।

यू.जी.-218: यह किस्म 75-78 दिन में पकती है तथा 15 क्विं. प्रति हेक्टेयर उपज देती है। यह पीला मोजेक रोग के प्रति प्रतिरोधक पाई गई है

उर्वरक की मात्रा एवं प्रयोग विधि: जायद की अच्छी पैदावार के लिए 20 किलोग्राम नत्रजन 40 किलोग्राम फास्फोरस तथा 20 किलोग्राम गंधक प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। उर्वरक की पूरी मात्रा बीज बुवाई के समय कुंडो में दें। अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन से सल्फर के प्रयोग से 11% अधिक उपज प्राप्त हुई है। नाइट्रोजन एवं फासफोरस की पूर्ति के लिए 75 कि.ग्रा. डी.ए.पी. तथा सल्फर की पूर्ति के लिए 100 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति हैक्टेयर प्रयोग करना चाहिए। उर्वरकों को अन्तिम जुताई के समय ही बीज से 2-3 से.मी. की गहराई व 3-4 से.मी. साइड पर ही प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई: जायद उड़द की बुवाई प्लेवा कर के खेत तैयार होने पर करते हैं। जिसे पहली सिंचाई की आवश्यकता बुवाई के 30-35 दिनों के बाद होती है। इसके बाद भूमि के अनुसार दो से तीन सींचियों की आवश्यकता होती है। वैसे किसान भाई याद रखिए कि एक सिंचाई फूल आने से पूर्व तथा दूसरी सिंचाई फली में दाना बनते समय करें ध्यान रहे इस समय भूमि में उचित नमी बनी रहे।

निराई गुड़ाई: आवश्यकतानुसार खरपतवार निकालते रहे। 30 दिन की फसल होने तक निराई- गुड़ाई कर देनी चाहिए। बुआई के पूर्व खरपतवारनाशी फ्लूक्लोरोलीन 0.75 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिलाने के बाद बुआई करने से खरपतवार पर प्रभावी नियंत्रण रहता है और अधिक पैदावार मिलती है।

फसल संरक्षण

मोयला: मोयला कीट का प्रकोप होते ही मैलाथियान 50 ई.सी. या डायमिथोएट 30 ई.सी. 1 लीटर, मैलाथियान चूर्ण का 25 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

फली छेदक: क्यूनॉलफोस 25 ई.सी. 1 लीटर का पहला व दूसरा छिड़काव एसीफेट 75 एस.जी. 600- 700 ग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़कें।

एफिड: निम्फ और व्यस्क कीट बडी संख्या में पौधो की पत्तियों, तनों, कली एवं फूल पर लिपटे रहते है और फूलों का रस चूसकर पौधों को हानि पहुंचाते हैं। फसल को डायमिथिएट 30 ई सी, 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के साथ घोल कर छिड़काव करें।

सफेद मक्खी: दोनो ही पत्तियों की निचली सतह पर रहकर रस चूसते रहते हैं जिससे पौधे कमजोर होकर सूखने लगते हैं। यह कीट अपनी लार से विषाणु पौधों पर पहुंचाता है और यलो मौजेक नामक बीमारी फैलाने का कार्य करते हैं। पीले रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। फसल में डायमिथिएट 30 ई सी 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के साथ घोल कर छिड़काव करें।

चित्ती जीवाणु रोग: इस रोग के कारण छोटे गहरे भूरे रंग के धब्बे पत्तों पर तथा प्रकोप बढ़ने पर फलियों व तने पर दिखाई देते हैं। रोग दिखाई देते ही एग्रोमाइसीन 200 ग्राम या 2 किलो ताम्रयुक्त कवकनाशी प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

पीलिया रोग: रोग दिखने पर 0.1% गंधक के तेजाब या 0.5% फेरस सल्फेट का छिड़काव करें।

छाछ्या रोग: रोग की रोकथाम हेतु प्रति हैक्टेयर ढाई किलो घुलनशील गंधक का छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई देते ही एवं दूसरा छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करें अथवा 25 किलो गंधक चूर्ण का भुरकाव करें।

कटाई एवं गहाई: जब 70-80 प्रतिशत फलियां पक जाने तक कटाई आरंभ करें। फसल को खलिहान में 3-4 दिन तक सुखाकर गहाई करें।

पैदावार: उपरोक्त विधि से प्रबंधन की गई फसल से 12 से 17 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक दाने की पैदावार मिल जाती है।

भण्डारण: धूप में अच्छी तरह सुखाने के बाद जब दानों में नमी की मात्रा 8 से 9 प्रतिशत या कम रह जाये, तभी फसल को भण्डारित करना चाहिए

अधिक उत्पादन लेने हेतु आवश्यक बिंदु

- भूमि की ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई 3 वर्ष में एक बार अवश्य करें
- पोषक तत्वो की मात्रा मिट्टी परीक्षण के आधार पर ही दें
- बुवाई पूर्व बीजोपचार अवश्य करें
- पीला मोजेक रोग रोधी किस्मों का चुनाव क्षेत्र की अनुकूलता के अनुसार करें
- पौध संरक्षण समय पर करना चाहिए
- खरपतवार नियंत्रण अवश्य करें

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

भारत में हाइड्रोपोनिक्स खेती का भविष्य

मंजू फोगावत एम.एस.सी (एग्रीकल्चर), उद्यान विज्ञान विभाग, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

डॉ. हरपाल सिंह सहायक प्राध्यापक, उद्यान विज्ञान विभाग, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

अनुज कुमार शोध छात्र,आनुवंशिकी और पादप प्रजनन विभाग सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ. प्र.)

हाइड्रोपोनिक्स (बिना मृदा के खेती)

इस प्रकार की खेती में मृदा का प्रयोग नहीं होता है। इससे पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों को जल के सहारे सीधे पौधों की जड़ों तक पहुंचाया जाता है। तकनीक की भाषा में इसे हाइड्रोपोनिक्स कहा जाता है। हाइड्रोपोनिक्स लेटिन शब्द की उत्पत्ति दो शब्दों 'हाइड्रो' तथा 'पोनोस' से हुई है जिसमें 'हाइड्रो' का अर्थ है 'पानी' और 'पोनोस' का अर्थ है 'कार्य' ।

हाइड्रोपोनिक्स तकनीक में नियंत्रित वातावरण में मिट्टी के बिना केवल पानी से फसलोत्पादन किया जाता है। इसके लिए सिर्फ तीन चीजें जैसे- पानी, पोषक तत्व तथा धूप की आवश्यकता होती है। इस तकनीक में बीजों को ग्रीन हाउसनुमा मशीन में रखा जाता है, जिसे 'हाइड्रोपोनिक्स 'मशीन' कहा जाता है, जिसमें नियंत्रित तापक्रम तथा आर्द्रता में स्वचालित प्रणाली से पौध तैयार की जाती है।

क्या है हाइड्रोपोनिक्स ?

हाइड्रोपोनिक्स प्रौद्योगिकी असल में आदिकाल का उस प्रौद्योगिकी का वैज्ञानिक स्वरूप है जब नदी, पोखर, ताल, पौधे, जल स्रोत में कुछ सीमित पौधों की खेती की जाती थी। बेबीलोन के हैंगिंग गार्डन, एजटेक के तैरते खेत, तो भारत में भी नदी किनारे पनपी सभ्यता द्वारा जलीय खेती की जाती थी। मगर अब इसे बड़े स्तर पर अपनाया जा रहा है। पहली बार वर्ष 1940 में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में शोधरत सस्य वैज्ञानिक डॉ. जेरिक ने इसका नामकरण किया था । हाइड्रो यानी पोषक तत्वों को ले जाने वाला जल और पोनास यानी पौधों की खेती इसी से शब्द आया 'हाइड्रोपोनिक्स'।

हाइड्रोपोनिक्स पौधों की खुराक

आवरण में पनपते हाइड्रोपोनिक्स पौधे चूंकि जल आधारित होते हैं इसलिए उनकी संपूर्ण वृद्धि के लिए पोषक तत्व जल में ही मिलाए जाते हैं। आमतौर पर पौधों की बढ़वार के लिए 16 तत्वों की आवश्यकता होती है, ये हैं- कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सल्फर, जिंक, कॉपर, आयरन, मैगनीज, बोरॉन, मॉलीबिडनम और क्लोरीन । परंपरागत तरीके से उगते पौधे उन्हें सीधे वायुमंडल या फिर मिट्टी से लेते है । अगर उन्हें यह पर्याप्त मात्रा में न मिले, तो पौधों में उनकी कमी झलकती है और उसका प्रभाव उनकी बढ़वार पर पड़ता है ।

क्या कुछ उग सकता है ?

हाइड्रोपोनिक्स प्रौद्योगिकी द्वारा आज बड़ी संख्या में सब्जियों, फलों और खाद्यान्न फसलों को उगाया जाना संभव हो चला है । मोटे तौर पर देखा जाए तो टमाटर, खीरा वर्गीय सभी सब्जियां, लैट्यूस और पत्तीदार सब्जियों की सभी की जा रही है। यह पौध स्वस्थ, बेहतर गुणवत्ता वाली तो होती ही है साथ ही परंपरागत रूप से तैयार की जाने वाली पौध से तीन हफ्ते पूर्व भी प्राप्त हो जाती है। इस फसल की परिपक्वता समय में भी कमी ला देती है और उत्पादन समय से पूर्व यह बाजार में पहुंच जाती है।

हाइड्रोपोनिक्स के लाभ

हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली के बेहतर विकास को सुनिश्चित करता है, साथ ही मिट्टी आधारित बागवानी की तुलना में 95 प्रतिशत कम पानी का उपयोग होता है। इसके द्वारा उच्च गुणवत्ता और उपज के पौधे बड़ी संख्या में उगाएं जा सकते हैं। अन्य लाभ इस प्रकार हैं-

- हाइड्रोपोनिक्स विधि की विशेषताएं
- स्वच्छ एवं पर्यावरण युक्त खेती ।
- बहुत ही कम सिंचाई जल की अवश्यकता जल और जल में घुले पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण से लगातार उपयोग।
- थोड़ी मेहनत से ज्यादा लाभ।
- फसल की लागत में कमी।
- खरपतवारों से रोकथाम से निराई-गुड़ाई के श्रम से मुक्ति फसल के अनुकूल वातावरण न हो वहां पर भी इस विधि से फसल ली जा सकती है।
- जानवरों के द्वारा नुकसान पहुंचने एवं प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाद, सूखा, अत्यधिक गर्मी या ठंड से होने वाली समस्याओं से मुक्त
- गैर कृषि योग्य भूमि वाले क्षेत्रों होता है।
- पौधे बहुत कम समय में परि जाते हैं।
- मृदा कीट और रोगों में काफी कमी आ जाती है।

भारत में हाइड्रोपोनिक्स खेती का भविष्य

अभी भी भारत में हाइड्रोपोनिक पौधों को उगाने के अन्य तरीकों की तुलना में कम ही लोकप्रिय है। बढ़ती आबादी, खेती योग्य जमीन की कमी, जलवायु परिवर्तन, पानी की कमी और पानी की बिगड़ती गुणवत्ता सभी मिलकर किसानों को बागवानी के वैकल्पिक तरीकों की ओर रुख करने के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं। हाइड्रोपोनिक्स प्रौद्योगिकी के द्वारा कुशलतापूर्वक रेगिस्तान, बंजर जमीन, पहाड़ी क्षेत्रों, शहरी छतों और ठोस जमीन पर भी फसल उत्पादन किया जा सकता है। अधिक आबादी वाले क्षेत्रों में जहां जमीन की कीमतें आसमान छूने के कारण परपरागत कृषि असंभव सी हो गई है, वहां भी स्थानीय स्तर पर हाइड्रोपोनिक्स प्रौद्योगिकी के द्वारा उच्च मूल्य वाली फसलों जैसे ताजा हरा सलाद, जड़ी-बूटियों और कटे तथा गुलदस्ता वाले फूलों को उगाया जा सकता है। यह तकनीक विभिन्न प्रकार के पौधों को उगाने के लिए आदर्श स्थिति उपलब्ध कराती है। विशेष प्रकार के पौधे जैसे टमाटर, खीरा, बैंगनी, ब्रोकोली, भिंडी, काली और सफेद मिर्च, पत्तेदार सब्जियां तथा मौसमी फूल इत्यादि पर अधिकतम लाभ के लिए फसलों का चुनाव समय और बाजार को ध्यान में रखकर करना चाहिए

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

उत्तर प्रदेश के किसानों के लिए धान के प्रमुख रोग, लक्षण एवं उनका प्रबंधन

श्रीगोविन्द (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

कपिल गौतम (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

केशव बाबू (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

रवि दीक्षित (शोध छात्र) बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर, (उ.प्र.)

उत्तर प्रदेश, जो देश में चावल का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है, के 70 जिलों में धान की खेती के तहत 60 लाख हेक्टेयर भूमि है। धान के लिए उच्च तापमान, उच्च आर्द्रता और वर्षा की आवश्यकता होती है। यह जलोढ़ और चिकनी मिट्टी में अच्छी तरह से उगता है, जो पानी को बरकरार रख सकती है। चावल उगाने के लिए भी समतल खेत की आवश्यकता होती है । काला नमक चावल सिद्धार्थ नगर के तराई क्षेत्र और पूर्वी उत्तर प्रदेश के दस पड़ोसी जिलों में उगाया जाता है । यह एक सुगंधित चावल की किस्म है जिसे आम तौर पर किसानों को अन्य चावल की किस्मों की तुलना में बेहतर कीमत दी जाती है। 2020-21 तक, भारत के शीर्ष 3 चावल उत्पादक राज्य-पश्चिम बंगाल, उतार प्रदेश एवं पंजाब है। देश में चावल उगाने का मुख्य मौसम 'खरीफ' है । शीतकालीन (खरीफ) चावल की बुआई का समय जून-जुलाई है और इसकी कटाई नवंबर-दिसंबर में की जाती है । भारतीय बासमती एक प्रकार का लंबे दाने वाला चावल जिसे भारतीय बासमती के नाम से जाना जाता है, जिसे अक्सर ÷सुगंध की रानी÷ के रूप में जाना जाता है, अपने नाजुक स्वाद और सुगंधित सुगंध के लिए प्रसिद्ध है। संभवतः एक अलग नाम होने के बावजूद, बासमती चावल का उल्लेख 19वीं शताब्दी की शुरुआत से ही भारतीय साहित्य में किया गया है। भारत में उगाए जाने वाले चावलों में बासमती चावल अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सबसे प्रसिद्ध है। उत्तर प्रदेश के सात जिलों (बिजनौर, कुशीनगर, पीलीभीत, चंदौली, बागपत, वाराणसी और अंबेडकरनगर) में धान की उच्च उत्पादकता (2500 किलोग्राम/हेक्टेयर से अधिक) है । उत्तर प्रदेश की जलवायु को आम तौर पर उष्णकटिबंधीय मानसूनी जलवायु के रूप में परिभाषित किया जाता है।

धान का झुलसा: यह रोग पायरिकुलेरिया ओरायजी नामक एक फफूंद के कारण होता है । यह रोग लगभग धान के सभी खेतों में कम या अधिक अस्थायी बूंदा-बांदी या फिर बरसाती दिनों का यह रोग अधिक देखने को मिलता हैं। जब सापेक्ष आर्द्रता-93 से 99% व रात का तापमान कम होना (15-20 डिग्री के बीच अथवा 26 डिग्री से कम होता है)।

लक्षण: धान का ब्लास्ट रोग फसल वृद्धि की सभी अवस्था में पाया जा सकता है। रोग के लक्षण पत्तियों पर लम्बी लम्बी नीली धारियो के रूप में शुरू होती है। जो बाद में भूरे भूरे धब्बो में बदल जाती है। ये धब्बे अंडाकार होती है जिसके किनारे किनारे भूरा रंग तथा बीच का भाग सूखा देखने को मिलता है । पुराने पत्तियों पर बड़े धब्बे तथा नई पत्तियों पर छोटे-छोटे धब्बे बनते हैं। रोग के प्रभाव उग्र होने पर सभी धब्बे आपस मे मिल जाती है । बालियों के डंठल कमजोर पड़ जाती है और वह पकने से पहले ही टूट जाता है एवं दाने भूरे पड़ जाते है तथा बहुत दाने खाली रह जाते हैं।

प्रबंधन : ■ खेतों के मेड़ से एवं नालियों के आस पास सभी के रोगी पौधे को खेतों से अलग कर नष्ट कर देना चाहिये । झुलसा रोग रोग रोधी किस्मे ही अपने खेत में लगाए – CO47 , IR20, ADT39, ASD18, एवं IR64 आदि ■ बीज को बुआई से पहले कैप्टान या थीरम या कार्बेंडाज़ीम या ट्रायसायकलाज़ोल का 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचार करें। धान की नर्सरी में कार्बेंडाज़ीम-00g/L या ट्रायसायकलाज़ोल-300g/L छिड़काव कर सकते हैं। ■ धान के खेत में एडिनोफोस 500ml या कार्बेंडाज़ीम 500g प्रति हेक्टयर की दर से छिड़काव कर सकते हैं।

धान का भूरा धब्बा रोग: यह रोग धान में हेलमिंथोंस्पोरियम ओरायजी नामक फफूंद के कारण होता है । यह रोग भी धान के खेतों में अक्सर दिखाई देते हैं। भारत में यह रोग एक महामारी के रूप में 1942 में बंगाल में आकाल का प्रमुख कारण रहा था। इस रोग का प्रभाव नर्सरी अवस्था पर भी होता है। धान के भूरा धब्बा रोग के लिए सापेक्ष आर्द्रता 80% के ऊपर साथ ही तापमान 25 से 30 डिग्री बेहद अनुकूल माना जाता है ।

लक्षण : इस रोग का प्रभाव नर्सरी अवस्था पर ही दिखाई देने लगता है। इसमें रोग के लक्षण प्रांकुरचोल पर छोटे-छोटे धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। धब्बों का रंग गहरा भूरा या बैंगनी भूरा जाता है एवं पत्तियां भुरे होकर सूखने लगती है। यदि इस रोग का आक्रमण बालियां निकलने से पहले होता है, तब बालियां निकल नही पाती तथा रोग का आक्रमण बालियां निकलने के बाद होता है तो बालियां विकसित नही हो पाती हैं।

प्रबंधन : रोग के प्रकोप का प्रबंधन प्रारंभिक अवस्था से ही करना चाहिए, धान के अतिरिक्त पौधे जो इस रोग को आसरा देते हैं एवं सभी संक्रमित पौधे को अलग कर नष्ट कर देना चाहिए । बुआई के लिए रोग रहित बीजों का चुनाव कर सकते है।रोग सहनशील प्रजातियों को उगाना चाहिए जैसे- CO44, भवानी, इत्यादि ।

- बीजोपचार थीरम या कैप्टान से 4g / kg बीज दर से कर सकते है।
- नर्सरी में एडिफेंफोस 40 ml या मैंकोजेब 80g / 20 सेमी नर्सरी के हिसाब से छिड़काव करें । ■ धान की मुख्य फसल में- एडिफेंफोस 500ml या मैकोजेब 2 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से 15 दिनों के अंतराल में आवश्यकतानुसार छिड़काव कर सकते है एवं M-45 का भी 0.1% छिड़काव किया जा सकता है।

धान का पर्णच्छद सड़न रोग: यह रोग कवक के कारण होता है अर्थात इस रोग का रोगजनक यह फफूंद होता है।लक्षण : इसके प्रारंभिक लक्षण केवल सबसे ऊपरी पत्ती पर्णच्छद पर दिखाई देते हैं। जो युवा पर्णगुच्छ को घेरते हैं। फ्लैग लीफ शीथ से पर्णच्छद के प्रमुख भागों में बड़े और बीच में धूसर रंग तथा उसके किनारे-किनारे भुरे रंग का मार्जिन विकसित होता है । पेनिकल सड़न और ज्यादा मात्रा में सफेद पाऊडर के समान फफूंद की वृद्धि पत्ति शीथ के अन्दर होती हैं। धान की फसल को बहुत ही पास पास रोपाई करना। नाइट्रोजन की अधिक मात्रा इस रोग को बढ़ावा देता है। उच्च आर्द्रता और तापमान 20-30 डिग्री सें. के आसपास। पौधों को जब पत्ती फोल्डर और पतंगे क्षति पहुँचाते है तो इस रोग के संक्रमण में वृद्धि होती है।

नियंत्रण ■ धान के अतिरिक्त पौधे जो इस रोग को आसरा देते हैं तथा संक्रमित पौधे को खेत निकाल कर नष्ट कर देना चाहिए । ■ कार्बेंडाज़ीम 500 ग्रा. या एडिफेंफोस 1ली. या मेंकॉज़ेब 2 किग्रा. प्रति हेक्टेयर, बूटिंग स्टेज, (वह समय होता है जब बीजपत्र फ्लैग लीफ के शीथ के भीतर संलग्न होता है। यह प्रजनन चरण का एक हिस्सा है) के 15 दिनों बाद छिड़काव कर देना चाहिए ■ जिप्सम का मृदा अनुप्रयोग (500 किग्रा./हेक्ट.) दो बार कर सकते हैं। ■ नीम तेल 3% या इपोमिया 25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से पहला छिड़काव बूट लीफ स्टेज में तथा दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद करें।

धान का पर्णच्छद अंगमारी: यह रोग धान में राइजोक्टोनिया सोलेनाई नामक कवक के कारण होता है ।धान का शीथ ब्लाईट रोग बौनी उन्नत प्रजातियों को अधिक संक्रमित करता है । इस रोग का प्रकोप अगर पौधों की प्रारंभिक अवस्था में हो जाता है तो बालियों में दाने नही भरते हैं।

लक्षण : धान के खेत में इसके लक्षण पानी की सतह के ऊपर दिखाई देते हैं, इस रोग के कवक धान के फसल को टिलरिंग अवस्था से लेकर शीर्ष अवस्था तक प्रभावित करता है। प्रारंभिक लक्षण पानी की सतह के पास पत्ति के शीथ पर नजर आते है। जिससे पर्णच्छद पर अनियमित आकार के हरे धूसर धब्बे बन जाते हैं। जैसे-जैसे धब्बे बड़े होते जाते हैं केंद्र अनियमित रूप से सफेद होता जाता है तथा इसके किनारे-किनारे काले भुरे या बैंगनी भुरे रंग की घेरा बन जाता है । रोग बढ़कर तने के चारों ओर फैल जाता है । ज्यादा गंभीर स्थिति में पौधे की सभी पत्ते अभिशस्त हो सकते हैं।जब संक्रमण पूरे शीथ पर फैल जाता है जिससे पौधे की मृत्यु हो जाती है । पुराने पौधे इस रोग के अधिक संवेदनशील होते हैं । इस रोग का संक्रमण शुरुआती शीर्ष अवस्था और अनाज भरने के समय अधिक संकमण होता है । धान के पौध को अधिक पास-पास रोपण करने से एवं उच्च सापेक्ष आर्द्रता (96-97%) व उच्च तापमान (30-32 डिग्री) हो तो इससे भी इस रोग हो जाता हैं ।

प्रबंधन ■ धान की रोग रोधिता किस्मों को उगाएं जैसे कि-पंकज, मानसरोवर, इत्यादि एवं गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करे। खेत में या खेत की नालियों बचे फसल अवशेषों को जला दे। ■ कार्बनिक खादों का उपयोग करे, जैसे नीम की खली को-150 किग्रा. प्रति हेक्टेयर या गोबर की खाद-12.5 टन प्रति हे. के हिसाब से खेत में भली प्रकार से मिला दे। ■ स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस 2.5 किग्रा. प्रति हे., रोपण के 30 दिनों बाद 50 किग्रा. अच्छी सड़ी गोबर की खाद के साथ मिट्टी में में अच्छी तरह मिलाकर उपयोग कर सकते हैं। ■ कार्बेंडाज़ीम का 500 ग्राम प्रति हे. की दर से छिड़काव करें। ■ स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस का 0.2% का पत्तियों पर छिड़काव बूटिंग स्टेज के 10 दिन बाद करें ■ प्रोपिकोनाजोल-0.1% या हेक्साकोनाजाल 0.1% का छिड़काव करे।

धान का आभासी कंड: आभासी कंड रोग जिसको हल्दी रोग भी कहा जाता है । इसे सामान्यतः लाई फूटना भी कहते हैं। यह रोग फफूंद के कारण होता है। यह रोग खेत मे धान की बालियाँ निकलने के बाद ही दिखाई देता है। धान में आभासी कंड रोग के शुरुआत में धान के जिन दानो में यह रोग होना रहता है उन दानों का रंग सफेद हो जाता है। इस रोग के कंड धान के बालियों के सभी दानों में नही होता बल्कि बालियों के कुछ-कुछ दानों में ही होता है। शुरुआत में कंड छोटा रहता है और धीरे-धीरे इसका आकार बढ़ता जाता है व कंड पतली सफेद झिल्ली से ढँका रहता है। बाद में यह झिल्ली फट जाती है जिससे इस रोग के रोगजनक फफूंद के क्लेमाइडोस्पोर बाहर आ जाते है जो कि पाउडर की तरह दिखाई देते हैं। स्मट बालों या कंडो का रंग पहले पीला रंग फिर नारंगी रंग की तरह व अंत मे गाढ़ा हरा व काला रंग का हो जाता है। फूलने और परिपक्वता के दौरान वर्षा या बादल का मौसम होना एवं वातावरण में 96% से अधिक आर्द्रता व 25-35 डिग्री तापमान से अधिक तापमान होना।

प्रबंधन : धान लगाने से पहले खेत की पिछली फसल अवशेष को खेत से अच्छी तरह से बाहर निकाल दें और साथ साथ ही आसपास के मेढ़ साफ होने चाहिए। धान की नर्सरी स्वस्थ व प्रमाणित बीजों से लगाए और हो सके तो इस रोग के प्रति रोधी या सहनशील किस्में लगाना चाहिए।

■ धान के बीज का गर्म पानी से उपचारित भी किया जा सकता है इसके लिए धान के बीज को लगभग 10 मिनट तक 52 डिग्री सें. गर्म पानी मे डुबाकर रखना होता है। कार्बेंडाजिम, कवकनाशी से बीजोपचार 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज दर के हिसाब से उपचारित करें ■ धान के खेत में अगर यह रोग अधिक आ रहा हो तो प्रोपिकोनाजोल का जब धान में फूल आ रही हो तो या बालियाँ निकल रही हो तब इसका छिड़काव 1 मिली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से करना चाहिए।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

सीओ-238 गन्ने में कैंसर की तरह बढ़ता लालसड़न रोग किसानों के लिए समस्या

कृशानु, विकास सिंह
शैलेन्द्र प्रताप सिंह
सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

गन्ने की सीओ- 0238 प्रजाति में कैंसर कहे जाने वाले लालसड़न रोग के लक्षणों ने वैज्ञानिकों की चिंता बढ़ा दी है। इसके साथ ही रोकथाम के लिए प्रयास भी तेज हो गए हैं।

गन्ना प्रजनन संस्थान क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र करनाल के अध्यक्ष एवं प्रधान वैज्ञानिक डॉ. एसके पांडे और प्रधान वैज्ञानिक (पादप रोग) डॉ. एमएल छाबड़ा ने कहा कि उत्तर भारत के जिन राज्यों में यह किस्म लगाई गई है, उनमें किसानों को इस रोग के नियंत्रण के उपाय बताए जा रहे हैं।

गन्ने में यह असाध्य रोग है और जिस किस्म में इसका आगमन हो जाता है, वह धीरे-धीरे खेतों से हटानी पड़ती है। उत्तर भारत के राज्यों में ज्यादातर क्षेत्र में गन्ने की सीओ-0238 प्रजाति फैली हुई है। फिलहाल इस किस्म को कुछ वर्ष तक चलाने का प्रयास है, ताकि गन्ना।

0238 प्रजाति में लाल सड़न रोग (रेड रॉट) की समस्या

गन्ने में यह रोग कोलेटोट्रिचम फाल्कटम नामक फफूंद से होता है. लाल सड़न रोग देश में सबसे घातक गन्ना रोगों में से एक है और यह भारत और दक्षिण एशिया में पिछले 100 वर्षों से गन्ना उत्पादन में बाधा है। यह रोग पहले के दशकों में भारत में कई व्यावसायिक किस्मों के उन्मूलन के लिए जिम्मेदार था. यह रोग हरियाणा, पंजाब और उत्तर प्रदेश में तथा देश के लगभग सभी हिस्सों में महत्वपूर्ण व्यावसायिक किस्मों की विफलता में शामिल रहा है. वर्तमान में यह रोग कर्नाटक और महाराष्ट्र राज्यों को छोड़कर भारत के सभी गन्ना उत्पादक राज्यों में अलग-अलग तीव्रता से फैल रहा है. हरियाणा राज्य का पूर्वी भाग लाल सड़न से अधिक प्रभावित हैं, जबकि पश्चिमी भाग में यह रोग अपेक्षाकृत कम है.

लाल सड़न रोग के लक्षण

यह रोग पौधे के ऊपरी सिरे से शुरू होता है रेड रॉट बीमारी में तने के अन्दर लाल रंग के साथ सफेद धब्बे के जैसे दिखते हैं. धीरे धीरे पूरा पौधा सूख जाता है. पत्तियों पर लाल रंग के छोटे-छोटे धब्बे दिखायी देते हैं, पत्ती के दोनों तरफ लाल रंग दिखायी देता है. गन्ने को तोड़ेंगे तो आसानी से टूट जाएगा और चीरने पर एल्कोहल जैसी महक आती है.

- इस रोग का गन्ने में पोरी निर्माण से पूर्व और पोरी बनने तक संक्रमण होता है।
- रोग के लक्षण अप्रैल-मई में ही दिखाई देने शुरू हो जाते हैं। ग्रस्त पौधों में ऊपर से तीसरी-चौथी पत्ती किनारे या अग्रभाग से पीली पड़कर सूखने लगती है। मध्यशिरा की निचली सतह पर लाल-भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं।
- ग्रस्त गन्नों को बीच से लंबाई में फाड़ने पर अंदर से ऊत्तक लाल दिखाई देते हैं। लाल मज्जा के बीच में सफेद रंग के धब्बे पाए जाते हैं। सूघने पर सिरका जैसी गंध आती है।
- रोग की बड़ी अवस्था में गन्ने सूखने लगते हैं। छिलकर सुकड़कर धंस जाता है। सूखे गन्ने की पोरियों में फफूंद का विकास दिखाई देता है।
- उत्पादन प्रभावित न हो और चीनी मिलें सुचारु रूप से चलती रहे।

ऐसे करें प्रबंधन

- चीनी मिलों को लालसड़न संक्रमित खेत को प्राथमिकता के आधार पर कटवाना चाहिए।
- खेत का निरीक्षण कर रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें। यह क्रिया अप्रैल से जुलाई तक आवश्यक है। उखाड़े गए पौधों को गड्ढे में पांच से दस ग्राम काबेंडाजिम 50 डब्ल्यूपी पाउडर डालकर मिट्टी से ढक दें।

फसल कटाई उपरांत रोगी व सूखे अवशेषों को जलाकर नष्ट कर दें तथा उस खेत में एक वर्ष तक गन्ने की बिजाई न करें।

- संक्रमित खेत से सिंचाई के पानी के रिसाव को रोकने के लिए खेत की मेड़बंदी अवश्य करें।
- रोग प्रभावित फसल पर 400 ग्राम थायोफिनेट मिथाईल दवाई का करीब 300 लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अंतराल पर दो बार प्रति एकड़ छिड़काव करें।
- खेत से जल निकास का उचित प्रबंध आवश्यक है।

गन्ने की उपयुक्त प्रजातियां

किसानों को चाहिए कि उनके गन्ने की अच्छी कीमत मिले इसके लिए वह इसलिए वह गन्ने की नई प्रजातियों का चुनाव करें।

शी o o 1 18 सी ओ15023 सी o s 13 235-शुगर मिल्स ज्यादातर सीओ 15023 प्रजाति को अधिक लगवा रही है क्योंकि इसमें शुगर की रिकवरी भी 14 प्रतिशत तक है इसलिए किसान इस प्रजाति को बोलो यह में अधिक रूचि ले रहे हैं वह सीओ 150 23 को ही अपने खेतों में लगाएं।

पश्चिमी उत्तरप्रदेश में बोई जाने वाली गन्ने की प्रजातियां-सीओएस 13235, सीओएस 13231, सीओ 0118, सीओ 15023, सीओएल के 14201

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

अमरूद का प्रसंस्करण

शंकर राजपूत (शोध छात्र) पी.एच.डी. फसलोत्तर प्रौद्योगिकी, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यलाय बांदा (उ.प्र.)

डॉ. विज्ञा मिश्रा, डॉ. बाला जी विक्रम (सहायक प्राध्यापक) फसलोत्तर प्रौद्योगिक, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय बाँदा

अमरूद एक स्वादिष्ट और पौष्टिक फल है जो अधिकांश देशों में पाया जाता है। यह फल शुष्क भूमि में अच्छे से उगता है। अमरूद की महत्ता उसके पौष्टिक गुणो आर्थिक महत्व औषधीय उपयोग के कारण होती है। अमरूद फल प्राकृतिक रूप से पौष्टिकता से भरपूर होता है। इसमें विटामिन सी, विटामिन ए, विटामिन बी, फाइबर, कैल्शियम, पोटैशियम और फोस्फोरस जैसे महत्वपूर्ण पोषक तत्व पाए जाते हैं। इसका नियमित सेवन शरीर को स्वस्थ बनाएं रखने में मदद करता है, इम्यून सिस्टम को मजबूत बनाता है और पाचन प्रक्रिया को सुधारता है। अमरूद का प्रसंस्करण और उद्योगिक उत्पादन किसानों के लिए आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण है। अमरूद की खेती से किसान अच्छा मुनाफा कमा सकते हैं, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत होती है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार का अवसर भी मिलता है और आर्थिक विकास होता है। अमरूद के पत्तों, बीजों और छिलकों के उपयोग से विभिन्न औषधीय उपचार तैयार किए जाते हैं। यह फल पेट के रोगों, डायबिटीज, गैस्ट्रिक और एंटी.इंफ्लेमेटरी प्रॉपर्टीज के लिए उपयुक्त होता है।

भोजन के रूप में: अमरूद का स्वाद मिठा और स्वास्थ्यवर्धक होता है। इसे विभिन्न तरीकों से उपयोग किया जाता हैए जैसे कि ताजे फल, सलाद, चटनी, जैम, जेली, फ्रेश जूस, प्यूरी पल्प और पाउडर आदि। इसके सेहत के लाभ का भी विश्वास है, जिसके कारण लोग इसे व्यापक रूप से उपभोग करते हैं। दुनिया भर में अमरूद की लगभग 400 प्रकार की प्रजातियों पाई जाती हैं। जिनमें से 10 से 12 प्रकार की ही प्रजातियों को उपयोग में लाया जाता है अमरूद का मुख्य उत्पादक देश भारत है, जो प्रति वर्ष लगभग 25 लाख टन अमरूद उत्पन्न करता है। भारत विश्व के अमरूद उत्पादन का 45% योगदान करता है, इसके बाद इंडोनेशिया, चीन और मैक्सिको आते हैं।

अमरूद के उत्पादन के वैश्विक प्रभाव: अमरूद का उत्पादन वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण है। इससे कई लोगों को रोजगार मिलता है और कृषि उत्पादों के व्यापार में वृद्धि होती है। इसका उत्पादन स्थानीय और विदेशी बाजारों में आर्थिक समृद्धि को बढ़ाता है। इसके सेहत के लाभों का भी व्यापक उपयोग होता है, जिससे लोग स्वस्थ रहते हैं और उत्पादक तंत्रों को बढ़ावा मिलता है।

अमरूद की खेती में चुनौतियां: अमरूद की खेती कई चुनौतियों का सामना करती है। इसे उष्णकटिबंधी फल माना जाता है और यह जलवायु स्थितियों के अनुकूल होने पर ही अच्छे उत्पादकता का सार्थ्य रखता है। भारत जैसे उष्णकटिबंधी देशों में अमरूद की उत्पादकता उच्च होती है, जबकि ठंडी जलवायु वाले क्षेत्रों में यह उत्पादकता कम होती है। इसके अलावा कई देशों में अमरूद का उत्पादन तो अच्छा होता है परन्तु फलों हेतु उचित प्रसंस्करण संयंत्रों की कमी होती है। भारत में अमरूद प्रसंस्करण उद्योग विकासशील हो रहा है। यह उद्योग अमरूद से संबंधित विभिन्न उत्पादों को निर्मित करने में विशेषज्ञता विकसित कर रहा है। विभिन्न उद्योगिक योजनाएं और अनुसंधान के माध्यम से अमरूद से बने उत्पादों की गुणवत्ता को बेहतर बनाने का प्रयास किया जा रहा है। इससे अमरूद उत्पादों के बाजार में मांग और पसंद में वृद्धि हुई है। भारत में अमरूद के प्रसंस्करण उद्योग के विकास से न सिर्फ उत्पादन में वृद्धि हुई है बल्कि कई लोगों को रोजगार का मौका मिला है। अमरूद प्रसंस्करण इंडस्ट्री में कई छोटे और मध्यम आय के व्यक्तियों को काम करने का अवसर मिलता है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति सुधारती है।

भारत में अमरूद प्रसंस्करण उद्योग: अध्ययन के अनुसार 2017 में वैश्विक अमरूद प्यूरी उत्पाद की मूल्य 313.8 मिलियन रु. के बराबर थी। 2017 से 2025 तक की परिकल्पित अवधि में इस बाजार की विकास दर की उम्मीद 5.6% है। आगामी कुछ वर्षों में अमरूद प्यूरी सेगमेंट खाद्य उद्योग में अपनी प्रमुखता बनाए रखने की उम्मीद है। एशिया प्रशांत क्षेत्र की यह दर वर्ष 2020 से 2025 तक सबसे तेजी से वृद्धि करने की उम्मीद है। भारत अमरूद गूदे का सबसे बड़ा उत्पादक और निर्यातक है। पिंक गूदे वाले अमरूद प्यूरी का बाजार शेयर 55.3% है और सफेद अमरूद प्यूरी का बाजार शेयर 40% है। बाकी 5% अन्य विविधताओं के साझेदारी में हैं। इसके अलावा अमरूद प्रसंस्करण हेतु तकनीक की कमी ने वैश्विक अमरूद उद्योग के विकास को धीमा किया है। हालांकि हाल के वर्षों में उत्कृष्ट फसलोत्तर तकनीक के विकास ने खाद्य और पेय प्रसंस्करण उद्योग को लाभ पहुंचाया है।

अमरूद गूदे का प्रसंस्करण विधि: बागों से अमरूद फल कारखाने में लाए जाते हैं और पकने के कमरों में स्थानांतरित किए जाते हैं। उन अमरूद फलों को प्राकृतिक रूप से पकाए जाते हैं। छटनी के लिए फल को कन्वेयर बेल्ट के माध्यम से क्षतिग्रस्त अमरूद फल अलग किए जाते हैं। फलों को गंदगी को हटाने के लिए क्लोरिनेटेड और जलसंवहनी से धोया जाता है। अच्छी तरह से साफ फलों को फ्रूट मिलर से गुजारा जाता है और गूदा कलेक्शन टैंक में इकट्ठा कर लिया जाता है। अमरूद के पल्प को पल्प संग्रहण टैंक में इकट्ठा कर लेते है और उत्पाद को 65-70 डिग्री सेल्सियस तक गर्म किया जाता है। अमरूद प्यूरी में असमान पल्प के थक्के को एक जालीदार छन्ने से अलग कर लिया जाता है। गूदा पल्प को गाढ़ा करने हेतु, पानी की मात्रा को हटाने हेतु वाष्प अवशोषक चैम्बर से गुजारा जाता है। गूदा पल्प से अवांछित पदार्थों को चुंबकीय जाल, स्ट्रेनर, और धातु संसूचक मशीन से गुजारा जाता है। जीवाणु-नाशन प्रक्रिया के द्वारा अमरूद प्यूरी से पॉथोजन और अन्य जैविक कणों को हटा दिया जाता जिससे पल्प में कोई संक्रमण न हो पाए। प्यूरी को ठंडा करने के बाद पॉलीलाइनर के साथ मेम्ब्रेन ड्रायर ड्रम में एसेप्टिक बैग में भरा जाता है। गोदामों में उत्पाद के तापमान को नियंत्रित रखे जाते हैं जिससे पल्प लम्बे समय तक सुरक्षित रखे जा सकें ।

भारत में अमरूद प्रसंस्करण के विभिन्न प्रकार: सफेद अमरूद और गुलाबी अमरूद भारत में संसाधित सबसे लोकप्रिय प्रकार हैं। यहां पर अमरूद प्रसंस्करण का अर्थ है कि अमरूद फलो के बीज निकालकर, गूदे को मैश करके प्यूरी बनाया जाता है। इसके बाद उस प्रसंस्कृत अमरूद को फ्रूट प्यूरी, पेस्ट, जूस, शरबत, जेली, जैम चटनी आदि रूप में उपयोग किया जाता है। सफेद अमरूद और गुलाबी अमरूद इस उद्योग में प्रमुख रूप में जाने जाते हैं। इलाहाबाद सफेदा और सरदार भारत में सबसे ज्यादा खेती की जाने वाली अमरूद प्रजातिया है और इसका प्रसंस्करण भी अधिक होता है। सफेद अमरूद फल का रंग सफेद होता है और इसका बाहरी छिलका भी सफेद हरे रंग का होता है। यह अमरूद प्रायः बड़े आकार के होते हैं और तेजी से पकने की वजह से बाजार में बहुत लोकप्रिय हैं। इसे पोषण, स्वाद और खुशबू के लिए जाना जाता है।

ललित (गुलाबी अमरूद) फल का रंग गुलाबी या गुलाबी-लाल होता है और इसका बाहरी छिलका भी पिंक रंग का होती है। इस अमरूद प्रजाति के फल छोटे आकार के होते हैं और स्वाद में थोड़ा गरम और खट्टा होते हैं। गुलाबी अमरूद प्रसंस्करण में भी बहुत लोग इसका उपयोग करते हैं। यह अमरूद के आधारित पेय निर्माताओं द्वारा पसंद किया जाने वाला महत्वपूर्ण वाणिज्यिक प्रकार है। गुलाबी अमरूद का प्रसंस्करण फ्रूट जूस, फ्रूट पल्प, फ्रूट बार, फ्रूट सॉर्बे, जैम, फ्रूट सॉलैड, आदि में होता है। पिंक अमरूद प्यूरी और पिंक अमरूद कंसंट्रेट खाद्य पेय निर्माताओं द्वारा उपयोग किए जाते हैं। इसका टीएसएस लगभग 8 डिग्री ब्रिक्स होता है और इसकी शेल्फ लाइफ निर्माण की तारीख से 24 महीने तक की होती है। भारत में अमरूद प्यूरी के दो प्रमुख सीजन होते हैं। पहला सीजन जनवरी से मार्च तक चलता है, जब मौसम ठंडा रहता है और फलों की उत्पादकता अधिक होती है। दूसरा सीजन अगस्त से दिसंबर तक चलता है, जब मौसम गर्म होता है और फलों की उत्पादकता कम होती है। इन दोनों सीजनों में भारत में अमरूद प्रसंस्करण कारखाने अधिक उत्पादन करते हैं ताकि वे पूरे वर्ष भर में फलों की उपलब्धता को पूरा कर सकें।

अमरूद प्रसंस्करण उद्योग में भविष्य की रुचियां विकसित और विकासशील राष्ट्रों के उपभोक्ताओं को उपलब्ध आय और गतिशील शहरीकरण के कारण तत्पर किया जाता है। अमरूद प्रसंस्करण का उद्योग उत्पादक और उपभोक्ता दोनों के लिए फायदेमंद है। प्राथमिक अमरूद प्रसंस्कृत उत्पाद अमरूद प्यूरी, गूदा, और कंसंट्रेट होते हैं। प्राथमिक अमरूद प्रसंस्कृत उत्पाद से सेकेंडरी अमरूद उत्पादों के लिए संभावना पैदा होती है। अमरूद यूरोप और संयुक्त राज्य में सबसे लोकप्रिय फ्लेवरिंग एजेंट है। इन क्षेत्रों में पेय उद्योग अमरूद प्यूरी पर जोर देता है, जबकि वास्तविक अमरूद फल का सेवन मामूली रहता है। अमरूद के माध्यम से होने वाला व्यापार बड़े हिसाब से प्यूरी और कंसंट्रेट के रूप में होता है। मुख्य सेकेंडरी अमरूद प्रसंस्कृत उत्पाद जेली, जैम, मारमलेड, मिठाई और पेय, और फल से बने कॉस्मेटिक होते हैं, जिनमें फल के अवयव शामिल होते हैं। तैयार पीने के लिए पेय, अमरूद प्रसंस्कृत उत्पाद खाद्य पाउडर मिश्रणों या स्क्वॉश में उपयोग होते हैं। कन्फेक्शनरी और डेयरी उद्योग में अमरूद प्रसंस्कृत उत्पादों के सेवन के वृद्धि के साथ, बेकरी भरे, पुडिंग, आइसक्रीम मिश्रण, और बच्चों के फल भोजन में प्यूरी का उपयोग बाजार के विकास में बढ़ोतरी की उम्मीद है। पेय उद्योग में अमरूद प्यूरी और कंसंट्रेट अंतिम उत्पाद में अमरूद के विशेष स्वाद और फ्लेवर को जोड़ते हैं। आधुनिक जीवनशैली, बढ़ती शहरीकरण, और जीवन में तेजी से बदलते खाद्य आदतें उपभोक्ताओं को ताजा और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पादों की तलाश करने हेतु प्रेरित कर रहे हैं। इस समय में, प्रसंस्कृत खाद्य उत्पादों की मांग बढ़ रही है और इसमें फल प्यूरी का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। अमरूद प्यूरी को फल जूस निर्माताओं के लिए फ्लेवरिंग योजकों के बजाय प्राथमिक रूप से उपयोग किया जाता है, क्योंकि इससे जूस का स्वाद और गुणवत्ता बेहतर बनती है। सामान्य फलों की तुलना में अमरूद प्यूरी की लोकप्रियता बढ़ रही है, और यह खासकर ताजे फलों के स्थान पर इस्तेमाल होती है।

अमरूद प्रसंस्कृत उत्पाद

अमरूद पाउडर: निर्जलीकरण विधि का उपयोग करके बनाया जाता है, जो फलों के संरक्षण का एक सामान्यः तरीका है। इसे सभी बीज कोरो को हटाने के बाद निर्जलित स्लाइस या टुकड़ों को पीसकर बनाया जा सकता है। अमरूद के पाउडर से हल्का शेक करके अन्य पेय पदार्थ बनाया जा सकता है। अमरूद पाउडर में प्रति 100 ग्राम पाउडर में कुल मिलाकर 459.33 से 1,229 मिलीग्राम एस्कॉर्बिक एसिड होता है। अमरूद पाउडर फेनोलिक रसायनों का एक अच्छा स्रोत है। तैयार अमरूद पाउडर का उपयोग पेय पदार्थों, शिशु आहार और अन्य सामानों में भी किया जा सकता है।

जेली बनाना: अमरूद के फलों को छिलकर बारीक काटें। अमरूद के कटे भागों को उबालने के बाद इन्हें पानी से निकाल लें और एक पात्र में ठंडा होने के लिए रख दें। इन्हे मैश करके मस्लीन कपड़े से छान ले। पतीले को वापस मध्यम आँच पर रखें, उसमें छना हुआ अमरूद का गूदा और रस, चीनी और आधा चम्मच साइट्रिक एसिड डालें। इस मिश्रण को पकाते समय जोर-जोर से हिलाएं। तथा पकाने के बाद ठंडा करके जार में भर लेते हैं।

जूस बनाना: अमरूद के फलों को छिलकर काटकर जूस निकालें। इसे शक्कर और पानी के साथ मिलाकर रस बनाएं। इस रस को बोतलों में भरें और उसे बंद करके स्त्रावित स्थान पर रखें। अमरूद प्यूरी, जिसे अमरूद का गूदा भी कहा जाता है, एक सुगंधित, गाढ़ा पदार्थ है, जिसे ताजे फलों को प्रसंस्कृत करके बनाया जाता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

वर्मीकम्पोस्ट बनाने की विधि

सत्यार्थ सोनकर, अनुशी, नितिन कुमार चौहान
शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

रजत राजपूत शोध छात्र, सब्जी विज्ञान विभाग, नागालैंड केंद्रीय वि.वि., सासर्ड, मेड़जीफेमा कैम्पस (797106), नागालैंड

केंचुओं की मदद से कचरे को खाद में परिवर्तित करने हेतु केंचुओं को नियंत्रित वातावरण में पाला जाता है। इस क्रिया को वर्मीकल्चर कहते हैं, केंचुओं द्वारा कचरा खाकर जो कास्ट निकलती है उसे एकत्रित रूप से वर्मी कम्पोस्ट कहते हैं।

केंचुओं का महत्व: केंचुए खेती में बहुत सहायक होते हैं क्योंकि वे मिट्टी को बेहतर बनाते हैं। वे हर जगह होते थे, खासकर जब बारिश होती थी। लेकिन अब, क्योंकि किसान अपनी फसलों पर बहुत सारे रसायनों का उपयोग करते हैं, अब उतने केंचुए नहीं हैं। यह बुरा है क्योंकि इसका मतलब है कि मिट्टी चीज़ें उगाने के लिए उतनी अच्छी नहीं है और यह रेगिस्तान की तरह बनती जा रही है।

केंचुए बहुत महत्वपूर्ण जीव हैं जो मिट्टी में रहते हैं। वे मिट्टी और पत्तियों जैसी अन्य चीजें खाते हैं और उन्हें एक विशेष प्रकार की खाद में बदल देते हैं जिसे वर्मी कम्पोस्ट कहा जाता है। यह खाद वास्तव में पौधों के लिए बहुत अच्छी है। हम इस खाद को खेत में केंचुओं का उपयोग करके भी बना सकते हैं और इसे तैयार होने में केवल 45 दिन लगते हैं। जब लोग केंचुओं की देखभाल करते हैं, तो इसे वर्म कल्चर या वर्मी कल्चर कहा जाता है। दुनिया में 4500 विभिन्न प्रकार के केंचुए हैं। केंचुए पानी या ज़मीन पर रह सकते हैं। आज, वैज्ञानिकों ने विशेष प्रकार के केंचुए बनाए हैं जो हमारे दैनिक कचरे को एक विशेष प्रकार के उर्वरक में बदल सकते हैं जिसे वर्मी कम्पोस्ट कहा जाता है। यह उर्वरक वास्तव में मजबूत है और इसमें बहुत सारे पोषक तत्व हैं जो पौधों को पसंद हैं। जब पौधे इस उर्वरक का उपयोग करते हैं, तो उन्हें तुरंत सभी आवश्यक पोषक तत्व मिल सकते हैं।

वर्मीकल्चर: वर्मीकल्चर कीड़ों का उपयोग करके खाद बनाने का एक तरीका है। आप इसे लकड़ी के बक्से, प्लास्टिक के टोकरे या बाल्टी जैसे विभिन्न कंटेनरों में कर सकते हैं। आप इसे जमीन में उथले गड्ढे में भी कर सकते हैं। यदि आप बाल्टी या डिब्बे का उपयोग करते हैं, तो इसका आकार लगभग 20 लीटर या लगभग 45 सेमी × 45 सेमी × 30 सेमी होना चाहिए। यदि आप किसी गड्ढे या टैंक का उपयोग करना चुनते हैं, तो सुनिश्चित करें कि यह छायादार क्षेत्र में हो और इसमें पानी जमा न हो। सबसे पहले, हमें अपने कीड़ों के लिए एक अच्छा कंटेनर ढूंढना होगा। हम कंटेनर में कुछ छोटे छेद करते हैं ताकि कोई भी अतिरिक्त पानी बाहर निकल सके। फिर, हम कंटेनर के अंदर कीड़ों के लिए एक विशेष बिस्तर तैयार करते हैं। निचली परत छोटे पत्थरों, ईंटों और मोटी रेत से बनी है, जो लगभग 3.5 सेमी मोटी है, ताकि पानी का प्रवाह ठीक से हो सके। इसके बाद, हम मिट्टी की एक परत डालते हैं जो कम से कम 15 सेमी मोटी होती है। हम सुनिश्चित करते हैं कि मिट्टी अच्छी और गीली हो। यदि हम केवल कुछ विशेष प्रकार के केंचुओं या विभिन्न स्थानों से आए विशेष प्रकार के कीड़ों की देखभाल कर रहे हैं, तो हमें बहुत अधिक गंदगी की आवश्यकता नहीं है लेकिन अगर हम एक साथ विभिन्न प्रकार के केंचुओं की देखभाल कर रहे हैं, तो हमें कुछ गंदगी की आवश्यकता है। हम आसपास से लगभग 100 केंचुए गंदगी में डाल सकते हैं। हम गंदगी के ऊपर ताजा गाय के मल से बनी छोटी-छोटी गेंदें भी डालते हैं। पूरा बॉक्स एक छोटे खिलौने के आकार का है। हमने इसके ऊपर कुछ खुरदरा, सूखा सामान रख दिया। फिर हम इसे एक विशेष कपड़े से बने बैग से ढक देते हैं। हम इस पर थोड़ा सा पानी छिड़क कर इसे गीला कर देते हैं. हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि यह 30 दिनों तक नम रहे और इसे पक्षियों, मुर्गियों और मेंढकों से सुरक्षित रखें। इस दौरान केंचुए बढ़ते हैं और अधिक केंचुए बनाते हैं।

केंचुओं को भोजन देना: 30 दिनों के बाद, 31वें दिन, कृमि बिस्तर में थोड़ा सा बचा हुआ भोजन और अन्य प्राकृतिक अपशिष्ट डाला जा सकता है। इसे समान रूप से फैलाना चाहिए, लेकिन बहुत गाढ़ा नहीं, नहीं तो यह बहुत गर्म हो सकता है और कीड़ों को नुकसान पहुंचा सकता है। ऐसा सप्ताह में केवल दो बार ही करें। कृमि बिस्तर को नम रखना भी महत्वपूर्ण है, बहुत गीला या बहुत सूखा नहीं। भोजन का यह क्रम 30 दिनों तक चलता है। उसके बाद, कृमि बिस्तर में भोजन डालना बंद कर दें और उसे ढक दें। कीड़ों को सुरक्षित रखने के लिए इसे ढकना होगा, लेकिन सुनिश्चित करें कि इसमें अभी भी हवा आती रहे।

खाद निकालना: खाने के लगभग एक महीने बाद केंचुए सभी बचे हुए कार्बनिक पदार्थों को काले, दानेदार वर्मीकास्ट में बदल देते हैं। वर्मीकम्पोस्ट वर्मीकास्ट और वास्तव में पुरानी, ??सड़ी हुई खाद का मिश्रण है। एक बार जब वर्मीकम्पोस्ट तैयार हो जाता है, तो हम केंचुओं के घर में पानी देना बंद कर देते हैं। इससे वह सूख जाती है और केंचुए मिट्टी में चले जाते हैं। फिर, हम खाद के ऊपरी हिस्से को बाहर निकालते हैं और इसे धूप में प्लास्टिक की थैली पर ढेर में रख देते हैं। इससे केंचुए नीचे की ओर चले जाते हैं। हम खाद के ऊपरी भाग को अलग कर देते हैं। फिर, हम खाद के निचले हिस्से और केंचुओं को उनके घर में वापस रखकर एक नया चक्र शुरू करते हैं।

अधिक मात्रा में केंचुआ खाद का निर्माण: एक विशेष डिब्बे में केंचुओं की देखभाल करने के बाद, बचे हुए ढेर सारे सामान का उपयोग करके हम वर्मीकम्पोस्ट नामक चीज़ बना सकते हैं। हम एक विशेष प्रकार के केंचुओं का उपयोग करते हैं जो मिट्टी की सतह के पास रहना पसंद करते हैं। ढेर सारी खाद बनाने के लिए, आपको एक छायादार जगह ढूंढनी होगी। यदि खेत या बगीचे में छाया देने वाले पेड़ हैं तो आप उनके नीचे खाद बनाने के लिए क्यारियां बना सकते हैं। यदि कोई पेड़ नहीं हैं, तो आप ऊंचे बांस या डंडों का उपयोग करके आश्रय बना सकते हैं और इसे घास से ढक सकते हैं। खाद के लिए बिस्तर लगभग 3 फीट चौड़ा और 1 फीट लंबा होना चाहिए। लंबाई उतनी ही हो सकती है जितनी आपके पास जगह और कचरा हो, लेकिन यह जमीन से थोड़ी ऊंची होनी चाहिए ताकि इसमें पानी इकट्ठा न हो।

वर्मीबेड बनाना: वर्मीबेड बनाना कीड़ों के लिए एक विशेष घर बनाने जैसा है। यह एक ऐसी जगह है जहां कीड़े रह सकते हैं और हमारे बगीचे में हमारी मदद कर सकते हैं। जमीन पर वर्मीबेड बनाने के लिए, बिस्तर के समान आकार में सूखी लकड़ियां और कूड़ा-कचरा फैलाकर शुरुआत करें। फिर, लगभग 4 इंच मोटी परत में विभिन्न प्रकार के कचरे जैसे सूखा और हरा कचरा, रसोई का कचरा, घास और राख डालें। इसे पानी डालकर गीला अवश्य करें। इसके बाद, ऊपर पुरानी या सूखी गाय के गोबर की लगभग 3-4 इंच मोटी खाद की एक परत डालें। इसे भी पानी से गीला कर लें. आपको बस थोड़ा सा पानी छिड़कना है, ज्यादा नहीं। फिर, आप प्रत्येक वर्ग मीटर मिट्टी में लगभग 100 केंचुए डाल सकते हैं। इसके बाद ऊपर हरी पत्तियों की एक पतली परत लगा दें और सभी चीजों को सूखी घास या बोरे से ढक दें. मेंढकों, मुर्गियों, पक्षियों और लाल चींटियों को कृमि बिस्तर से दूर रखना महत्वपूर्ण है। कीड़ों के लिए एक विशेष बिस्तर बनाने के बाद, अब हमें अपना कचरा फेंकने की ज़रूरत नहीं है। हम अधिक कचरा इकट्ठा करके और उसे पहले बिस्तर से थोड़ी दूरी पर रखकर दूसरा बिस्तर बना सकते हैं। लगभग 40-60 दिनों के इंतजार के बाद, पहला बिस्तर विशेष कृमि मल में बदल गया होगा जिसे वर्मीकम्पोस्ट कहा जाता है। हम इसे पानी देना बंद कर देते हैं और मल की ऊपरी परत को धीरे-धीरे हटा देते हैं। निचली परत, जिसमें सभी कीड़े हैं, को दूसरे बिस्तर पर रखा जाता है ताकि अधिक वर्मीकम्पोस्ट बनाया जा सके। हम क्यारियों के पास ताजा वर्मीकम्पोस्ट का ढेर भी रखते हैं और उसमें पानी देना बंद कर देते हैं। चूँकि पर्याप्त पानी नहीं है, कीड़े धीरे-धीरे ताज़े ढेर से पास के बिस्तर में चले जाते हैं। अब हम वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग खेत में कर सकते हैं। खाद में छोटे अंडे और बच्चे कीड़े स्वाभाविक रूप से मिट्टी में अधिक कीड़े बनाएंगे। यदि आपके घर या खेत में कुछ कचरा है, तो आप बायोडंग विधि या चार-गड्ढे वाली गोलाकार प्रणाली का उपयोग करके वास्तव में अच्छी खाद बना सकते हैं। यदि बहुत अधिक कचरा और जगह उपलब्ध है, तो हम एक विशेष प्रकार का उर्वरक बना सकते हैं जिसे बायोडंग कहा जाता है। सबसे पहले, हम एक छायादार जगह ढूंढते हैं और बायोडंग को एक महीने के लिए वहीं पड़ा रहने देते हैं। फिर, हम कीड़ों के रहने हेतु एक विशेष बिस्तर बनाते हैं और उसमें बायोडंग मिलाते हैं। कुछ समय बाद कीड़े बायोडंग को खाद में बदल देंगे, जो पौधों हेतु बहुत अच्छा है। इस विधि का उपयोग व्यवसायों के लिए बड़े पैमाने पर खाद बनाने के लिए भी किया जा सकता है।

वर्मीकम्पोस्ट में विभिन्न तत्वों की मात्रा: वर्मीकम्पोस्ट एक विशेष प्रकार की खाद है जिसमें नियमित मिट्टी की तुलना में कुछ महत्वपूर्ण पोषक तत्व अधिक होते हैं। इसमें 5 गुना अधिक नाइट्रोजन, 7 गुना अधिक फॉस्फेट, 7 गुना अधिक पोटाश और 2 गुना अधिक मैग्नीशियम और कैल्शियम होता

वर्मीवॉश बनाना: वर्मीवॉश बनाने हेतुआपको निश्चित मात्रा में नाइट्रोजन और फास्फोरस की आवश्यकता होती है। वर्मीवॉश के प्रत्येक 100 भाग हेतु, आपके पास नाइट्रोजन का 1 से 2.25 भाग और फॉस्फोरस का 1 से 1.5 भाग होना चाहिए। एक अन्य विकल्प वर्मीवॉश के प्रत्येक 100 भाग हेतु 2.5 से 3 भाग नाइट्रोजन रखना है।

वर्मीवॉश एक विशेष तरल है जो पौधों को बढ़ने में मदद करता है। इसे पौधों की पत्तियों पर छिड़क कर बनाया जा सकता है. वर्मीवॉश बनाने के लिए आपको एक बड़ी प्लास्टिक की बाल्टी या टोंटी वाला मिट्टी का बर्तन चाहिए। आप बाल्टी को एक निश्चित तरीके से पानी से भरें।

हमारे पास विभिन्न परतों से भरी एक विशेष बाल्टी है। पहली परत ईंटों और पत्थरों से बनी है, दूसरी परत रेत है, तीसरी परत मिट्टी और खाद है, और चौथी परत घास और पत्तियों से बनी है। हमारी बाल्टी में कुछ केंचुए भी हैं। एक महीने के बाद हम बाल्टी के ऊपर पानी से भरा एक छोटा बर्तन लटका देते हैं। पानी धीरे-धीरे बर्तन और बाल्टी में छोटे-छोटे छिद्रों से टपकता है। बाल्टी में केंचुए इधर-उधर घूमते हैं और खाद में छोटे-छोटे छेद कर देते हैं। इन छिद्रों से रिसने वाला पानी केंचुओं द्वारा छोड़े गए पदार्थों को एकत्र करता है, जो पौधों के लिए बहुत सारे अच्छे पदार्थों के साथ विशेष रस की तरह होते हैं। हम 24 घंटे के बाद बाल्टी के नीचे टोंटी खोलकर इस पानी को इकट्ठा करते हैं। इसे वर्मीवॉश कहा जाता है और यह पौधों को बढ़ने में मदद करता है और कीटों को दूर रखता है। वर्मीकम्पोस्ट वास्तव में पौधों के लिए अच्छा है क्योंकि यह उन्हें बड़ा और मजबूत होने में मदद करता है। यह विशेष कीड़ों द्वारा बनाया जाता है जो बचे हुए भोजन को खाते हैं और उन्हें एक विशेष प्रकार की मिट्टी में बदल देते हैं। इस विशेष मिट्टी में बहुत सारे पोषक तत्व होते हैं जिनकी पौधों को स्वस्थ रहने के लिए आवश्यकता होती है। जब हम अपने बगीचे में वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग करते हैं, तो यह पौधों को तेजी से बढ़ने, अधिक रंगीन फूल लगाने और अधिक फल या सब्जियां पैदा करने में मदद करता है। तो, वर्मीकम्पोस्ट पौधों के लिए एक सुपरफूड की तरह है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

फूलों का भारत में अतिरिक्त आय स्रोत: रंग-बिरंगी खुशियों की किलकारी

सतवान सिंह पीएच.डी. शोध छात्र, (पुष्प विज्ञान एवं भू-दृश्य निर्माण विभाग)

अमित कुमार पीएच.डी. शोध छात्र, (फल विज्ञान विभाग)

मोहम्मद वामिक पीएच.डी. शोध छात्र, (सब्जी विज्ञान विभाग)

प्रशान्त गौतम पीएच.डी. शोध छात्र, (फल विज्ञान विभाग), सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

प्रस्तावना

भारत, विविधता और सौंदर्य का देश, अपनी सुंदर प्राकृतिक खूबसूरती के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ के लोग अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के नए और अनूठे तरीकों की खोज में रहते हैं। इसी कड़ी में, फूलों की खेती भारत में एक अतिरिक्त आय स्रोत के रूप में उभर कर आ रही है। यह न केवल आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण माध्यम है, बल्कि प्राकृतिक सौंदर्य को भी बढ़ावा देने का एक शानदार तरीका है। इस लेख में, हम देखेंगे कि कैसे फूलों की खेती भारत में एक उचित और सतत आय स्रोत के रूप में विकसित हो रही है और लोगों को नए विकास के मार्ग पर आगे बढ़ने का अवसर प्रदान कर रही है।

फूलों की खेती का महत्व

फूलों का महत्व भारतीय समाज में हमेशा से ही अध्ययनों और पौराणिक कथाओं में दिखाई दिया है। यहाँ के लोग पूजा-अर्चना, उत्सवों, शादियों, और खास मौकों पर फूलों का उपयोग करते हैं। फूलों का रंगीन और मनमोहक दृश्य दर्शने वाले के मनोबल को भी बढ़ाता है और उन्हें प्राकृतिक शांति और सुख-शांति की अनुभूति होती है।

फूलों की खेती के फायदे

आर्थिक विकास का स्रोतः फूलों की खेती विशेष रूप से छोटे किसानों और गांवों के लिए एक महत्वपूर्ण आर्थिक स्रोत साबित हो सकती है। यह उन्हें नए आय स्रोत की परिकल्पना करने में मदद करती है और उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार करने में मदद कर सकती है।

रोजगार का अवसर: फूलों की खेती के साथ ही इसके संबंधित श्रेणियों में रोज़गार के अवसर भी पैदा होते हैं, जैसे कि फूलों की कटाई, पैकिंग, और वितरण। यह स्थानीय समुदायों में नौकरियों का स्रोत बन सकता है और बेरोज़गारी को कम करने में मदद कर सकता है।

विपणन का माध्यम: फूलों की खेती से उत्पन्न होने वाले फूलों को विभिन्न तरीकों से विपणित किया जा सकता है। ताकि यह फूलों की खेती विशेष रूप से छोटे उत्पादकों के लिए एक लाभकारी व्यवसाय बन सके। फूलों की विपणन में निम्नलिखित तरीके शामिल हो सकते हैं:

स्थानीय बाजार: स्थानीय बाजार फूलों की बिक्री का मुख्य स्रोत हो सकता है। गाँव और शहरों में फूलों की मांग कई आवश्यकताओं के लिए होती है, जैसे कि पूजा-अर्चना, शादियाँ, उत्सव, और त्योहार। छोटे व्यापारियों के लिए स्थानीय बाजार एक सरल और सामान्य माध्यम हो सकता है जिसमें वे अपने फूलों को बेच सकते हैं।

फूलों की दुकानें: अनेक शहरों में फूलों की विशेष दुकानें होती हैं जो विभिन्न प्रकार के फूल बेचती हैं। ये दुकानें आमतौर पर बाजारों और शादियों के पास स्थित होती हैं और लोग यहाँ से अपने आवश्यकताओं के अनुसार फूल खरीदते हैं।

ऑनलाइन विपणन: आजकल ऑनलाइन विपणन भी एक बड़ा माध्यम बन चुका है। फूलों की खेती करने वाले उत्पादक वेबसाइट या विभिन्न ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म्स के माध्यम से अपने उत्पादों को बेच सकते हैं। यह उन्हें विभिन्न क्षेत्रों में अपनी बिक्री बढ़ाने का मौका प्रदान कर सकता है।

होटल और रेस्टोरेंट्स: फूलों की सजावट और आरामदायक वातावरण के लिए होटल और रेस्टोरेंट्स में फूलों का अधिक इस्तेमाल होता है। यहाँ के उत्पादक अपने फूलों को होटल और रेस्टोरेंट्स को बेचकर उनसे आय प्राप्त कर सकते हैं।

नृत्य शो और आयोजन: विशेष आयोजनों, उत्सवों, और नृत्य शो में फूलों का इस्तेमाल आमतौर पर होता है। यहाँ के उत्पादक इन आयोजनों में अपने फूलों की सप्लाई प्रदान करके आय कमा सकते हैं। फूलों की खेती से अधिक आय प्राप्त करने के लिए उपरोक्त विपणन माध्यमों का सही रूप से उपयोग करना महत्वपूर्ण है। यह उत्पादकों को विपणन के माध्यम से अधिक लाभ प्राप्त करने में मदद कर सकता है और उन्हें अपने व्यवसाय को विकसित करने के लिए नए दिशा की ओर बढ़ने में सहायक साबित हो सकता है।

फूलों की खेती के लिए आवश्यक उपाय: फूलों की खेती को सफल बनाने के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपाय निम्नलिखित हो सकते हैं:

उचित बीज चयन: फूलों की खेती में सबसे पहला कदम उचित बीजों का चयन करना होता है। अच्छे गुणवत्ता वाले बीजों का प्रयोग करके बेहतर पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

भूमि और पानी की उपलब्धता: फूलों की खेती के लिए उचित मात्रा में खाद देना और सही तरीके से पानी प्रदान करना महत्वपूर्ण है। फूलों के पैदावार को बढ़ाने के लिए उपयुक्त खाद और पोषण प्रदान करना आवश्यक होता है।

उचित देखभाल: फूलों की सही देखभाल करना बहुत महत्वपूर्ण है। उन्हें समय-समय पर पूरी तरह से काटनी, पौधों की देखभाल करनी और नुकसान पहुंचाने वाली कीटों और रोगों से बचाने की आवश्यकता होती है।

समय पर बिक्री: फूलों की समय पर बिक्री करना बहुत महत्वपूर्ण है। फूलों की खेती के मौसम और मौड़ों के अनुसार उन्हें बाजार में पेश करना आवश्यक होता है ताकि आपके उत्पादों का सही मूल्य प्राप्त हो सके।

मार्केट रिसर्च: फूलों की विपणन के लिए बाजार में पूरी तरह से प्रयुक्त मार्केट रिसर्च करना आवश्यक होता है। आपको विभिन्न फूलों की मांग, मूल्य विवरण और विपणन के अन्य आसपास की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए।

निष्कर्ष: संक्षिप्त में कहें तो, फूलों की खेती भारत में एक बहुत ही उचित और सतत आय स्रोत हो सकती है। यह छोटे उत्पादकों के लिए एक उत्तम माध्यम हो सकता है ताकि वे अपनी आर्थिक स्थिति को सुधार सकें और नए दिशानिर्देश प्राप्त कर सकें। इसके साथ ही, फूलों की खेती से हमारे प्राकृतिक सौंदर्य को भी बढ़ावा मिलता है और देश की कृषि उद्यमिता को मजबूती मिलती है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

टमाटर की फसल में समन्वित कीट रोग प्रबन्धन

डॉ. रिंकी कुमारी चंद्रजीतभाई चौहान
विषय वस्तु विशेषज्ञ (कीट विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, हैदरगढ़ (बाराबंकी) (उ.प्र.)

परिचय

टमाटर वर्गीय सब्जियां भारत देश में खेती की प्रमुख सब्जी फसलें हैं। उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रो में टमाटर की बसन्त-ग्रीष्म ऋतु की फसल के लिए पौधशाला में बीज की बुआई कर दें एवं दिसंबर से जनवरी में तैयार पौध की रोपाई करें। उचित जल निकास वाली रेतीली दोमट अथवा दोमट भूमिए जिसमें पर्याप्त मात्रा में जीवांश उपलब्ध होए टमाटर की खेती के लिए उपयुक्त होती है। इसके लिए जल निकास व्यवस्था होना अति आवश्यक है। टमाटर की उन्नत किस्मों के लिए 350.400 ग्राम बीज तथा संकर किस्मों के लिए 200.250 ग्राम बीज/है. खेत की रोपाई के लिए पर्याप्त है। सीमित बढ़वार वाली प्रजातियों की रोपाई 60×60 सेंमी. तथा असीमित बढ़वार वाली किस्मों की रोपाई 75.90×60 सेंमी. की दूरी पर बनी कतारों में करें एवं पौधे से पौधे की दूरी 45 से 60 सेंमी. रखते हुए शाम के समय करना चाहिए। टमाटर की फसल में तरह तरह के कीट एवं बीमारियां लगती हैं उससे उसके उत्पादन में भी भरी गिरावट देखने को मिलती हैए केवल जंतुनाशक दवाइयों का इस्तेमाल, टमाटर की फसल पर अवशेष के रूप में बहुत ही हानिकारक पाया गया है। इसीलिए किट एवं रोगों का समन्वित प्रबंधन आज के समय के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण मुद्दा बन गया है! इस लेख में हमने कीट एवं रोगों से टमाटर की फसल को कैसे बचाया जा सके, इसके बारे में विस्तृत से चर्चा की है।

टमाटर की फसल में वैधिक समेकित नाशीजीव प्रबंधन युक्तियां

नर्सरी अवस्था

- डेम्पिंग आफ से बचने के लिए अच्छी निकासी के लिए भूमि स्तर से लगभग 10 सेंमी ऊपर उठी हुई नर्सरी की क्यारियां तैयार करें।
- मृदा से पैदा होने वाले नाशीजीवों के लिए मृदा सौर्यीकरण के लिए क्यारियों को 45 गेज (0.45 मिमी) मोटाई की पॉलीथीन शीट से तीन सप्ताह के लिए ढकें। मृदा सौर्यीकरण के दौरान मिट्टी में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।
- सफेद मक्खी जैसे रोगवाहकों के नियंत्रण के लिए मलमल जाली (40 गेज) का इस्तेमाल करें।
- आद्र-गलन के नियंत्रण हेतु 10 ग्रा. प्रति किग्रा बीज ट्राइकोडर्मा या कैप्टान 75 डब्ल्यूपी के साथ (0.25 प्रतिशत) की दर से बीजोपचार करें। आवश्यकता होने पर कैप्टान 70 डब्ल्यू पी 0.25 प्रतिशत की दर से मिट्टी में मिला दें।
- टमाटर नर्सरी से 20 दिन पूर्व अलग से गेंदा की पौध तैयार करें।

मुख्य फसल के दौरान

- चूसक कीटों तथा सफेद मक्खी के नियंत्रण हेतु रोपाई से पूर्व, इमीडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल के 7 मिली प्रति ली पानी के मिश्रित घोल में टमाटर पौध की जड़ों को 15 मिनट तक डुबोकर रखना चाहिए।
- पुष्पन समकालिता के लिए टमाटर की प्रत्येक 16 पंक्तियों के बाद 45 दिन पुराने गेंदा के पौधों की एक पंक्ति फसल प्रपंच के रूप में लगानी चाहिए।
- पहली व अंतिम पंक्ति गेंदा फसल की होनी चाहिए और इन पर 250 एलई प्रति हे./ 7.5 मिली प्रति टंकी पानी की दर से एचएएनपीवी का छिड़काव करना चाहिए।
- रोगों के फैलने की संभावना को कम करने के लिए टमाटर की किस्मों के लिए पंक्ति से पंक्ति व पौधे से पौधे की दूरी 60×45 सेंमी तथा संकर किस्मों के लिए 90×60 सेंमी की दूरी रखें।
- पर्ण सुरंगक, चेपा तथा सफेद मक्खी के नियंत्रण हेतु पौध रोपण के 25 दिन पश्चात् नीम अर्क 5 प्रतिशत का छिड़काव करें।
- आवश्यकता पड़ने पर सफेद मक्खी के नियंत्रण हेतु पौध रोपण के 25 दिन पश्चात् इमीडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल 3 मिली प्रति टंकी की दर से अथवा डायमिथोएट 30 ईसी 29ण्7 मिली प्रति टंकी की दर से पानी के साथ छिड़काव करें।
- फल वेधक, पर्ण सुरगंक एवं सूत्रकृमियों के प्रकोप को कम करने के लिए पौध रोपण के 20 दिन पश्चात 250 किग्रा प्रति हे की दर से नीम की खली का प्रयोग करें।
- फल बेधक सक्रियता की निगरानी के लिए 2 फेरामोन प्रपंच प्रति एकड़ की दर से लगाएं। प्रत्येक 20-25 दिन के अन्तराल पर पुराने ल्योर के स्थान पर ताजा ल्योर लगाएं।
- पौधों के शीर्ष तीन पर्णों की निगरानी फल बेधक के अण्डों के लिए करें।
- अण्डे के परजीवी ट्राइकोग्रामा प्रैटियोसम को 1.0 लाख प्रति हे की दर से एक सप्ताह के अंतराल पर फूल आरंभ होने की अवस्था से 4-5 बार छोड़ें।
- गेंदा के फूलों और कलियों में फल बेधक नष्ट करने हेतु एचएएनपीवी (250 एलई हे./7.5 मिली प्रति टंकी टंकी की दर से शाम के समय छिड़काव करें।
- टमाटर की पौध रोपने के 28, 35 एवं 42 दिनों के पश्चात् एचएएनपीवी (250 एलई प्रति हे./7.5 मिली प्रति टंकी की दर से शाम के समय छिड़काव करें। सूर्य की अल्ट्रा-वायलेट किरणों से तीव्र अपघटन रोकने हेतु 2% गुड़ मिलाकर छिड़काव करें।
- फल बेधक क्षतिग्रस्त फलों को समय समय पर एकत्रित कर नष्ट कर दें। ऐसा करना सूण्डी का एक फल से दूसरे फल में पहुंचने से रोकने हेतु अनिवार्य है।
- फल बेधक का अधिक प्रकोप होने पर केवल आवश्यकता होने पर रासायनिक कीटनाशक जैसे क्लोरएंट्रानीलीप्रोल 18.5 एससी का 4.5 मिली प्रति टंकी की दर से या इन्डोक्साकार्ब 14.5 एससी 12 मिली प्रति टंकी की दर से पानी के साथ छिड़काव करें।
- पर्ण कुंचन संक्रमित पौधों को नियमित रूप से एकत्रित कर नष्ट कर दें।
- अगेती एवं पछेती झुलसा के नियंत्रण हेतु केप्टान 50 डब्ल्यूपी 37.5 ग्रा. प्रति टंकी की दर से पानी के साथ या मैन्कोजेब 75 डब्ल्यूपी 30 ग्रा. प्रति प्रति टंकी की दर से पानी के साथ सुरक्षात्मक छिड़काव करें।
- बैक्टीरियल सूखा रोग के नियंत्रण हेतू पौध पर स्ट्रैप्टोसायक्लीन (40-100 पीपीएम) घोल का छिड़काव खेत में करें।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियां: गर्मी के कारण फसल की उपज में कमी में इसकी भूमिका

धर्मवीर सिंह, आयुष कुमार (शोध छात्र)
आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय बांदा (उ.प्र.)

अजीत कुमार गुप्ता, ऋषभ गुप्ता, जावेद
शोध छात्र आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या (उ.प्र.)

परिचय: प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन, जिसे आरओएस के रूप में भी जाना जाता है, पौधों के उपापचय का एक प्राकृतिक उप-उत्पाद है जो सिग्नलिंग पथ और कोशिका विनियमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उच्च तापमान जैसी स्थितियों में, आरओएस का स्तर तेजी से बढ़ सकता है, जिससे ऑक्सीडेटिव तनाव और पौधों की कोशिकाओं को नुकसान हो सकता है। इस ऑक्सीडेटिव तनाव के कारण फसल की उपज में कमी आती है, जिससे समग्र कृषि उत्पादन प्रभावित होता है। परिणामस्वरूप, यह पता चला है कि गर्मी के तनाव के प्रति पौधों की संवेदनशीलता में आरओएस की उपस्थिति एक महत्वपूर्ण कारक है। बदलती जलवायु परिस्थितियों में फसल उत्पादकता बढ़ाने हेतु रणनीति विकसित करने हेतु आरओएस उत्पादन और गर्मी के तनाव से प्रेरित फसल उपज में इसकी भूमिका को समझना महत्वपूर्ण है। इस लेख का उद्देश्य पादप शरीर क्रिया विज्ञान में आरओएस के महत्व और कृषि उत्पादन पर इसके प्रभाव को उजागर करना है।

प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (आरओएस) का संक्षिप्त अवलोकन और पौधों की तनाव प्रतिक्रियाओं में उनकी भूमिका: पौधे विभिन्न पर्यावरणीय तनावों, जैसे गर्मी, सूखा और उच्च लवणता के संपर्क में आते हैं, जो उनकी वृद्धि और विकास को महत्वपूर्ण नुकसान पहुंचा सकते हैं। प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियां (आरओएस) वे हैं जो पौधों की कोशिकाओं में सेलुलर उपापचय के प्राकृतिक उपोत्पाद के रूप में बनाई जाती हैं। जबकि वे विभिन्न शारीरिक प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, आरओएस का उच्च संचय ऑक्सीडेटिव तनाव का कारण बन सकता है, जिससे पौधों की कोशिकाओं में क्षति हो सकती है। तनाव के जवाब में पौधों ने आरओएस के उत्पादन और सफाई के लिए एक जटिल प्रणाली विकसित की है। सिग्नलिंग पौधों की वृद्धि और विकास के नियमन के साथ-साथ अजैविक और जैविक तनावों के खिलाफ रक्षा प्रतिक्रियाओं में शामिल है। इसलिए, गर्मी के तनाव के कारण फसल की उपज के नुकसान के लिए प्रभावी रणनीति तैयार करने के लिए पौधों के तनाव प्रतिक्रियाओं में आरओएस की भूमिका को समझना आवश्यक है।

ताप-तनावग्रस्त पौधों में आरओएस उत्पादन का तंत्र: पौधों में गर्मी के तनाव के परिणाम स्वरूप प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजाति (आरओएस) का उत्पादन होता है, जो सेलुलर घटकों को नुकसान पहुंचाता है, जिसके परिणाम स्वरूप फसल की उपज कम हो जाती है। ताप-तनावग्रस्त पौधों में उत्पादन का प्राथमिक तंत्र माइटोकॉन्ड्रिया में इलेक्ट्रॉन परिवहन श्रृंखला (ईटीसी) के कारण होता है, जो स्थानांतरण के अवरोध के कारण परेशान होता है। इस गड़बड़ी से अतिरिक्त इलेक्ट्रॉनों की उत्पत्ति होती है, जो वायुमंडलीय ऑक्सीजन के साथ संपर्क करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप आरओएस का उत्पादन होता है। गर्मी का तनाव छाक्र्ब्मे की गतिविधि को भी बढ़ाता है, जो एंजाइम हैं जो सेलुलर प्रक्रियाओं को संकेत देने के लिए आरओएस उत्पन्न करते हैं। आरओएस पीढ़ी के ये तंत्र उजागर करते हैं। गर्मी के तनाव के तहत पौधों की ऑक्सीडेटिव तनाव प्रतिक्रिया और उपज के नुकसान को कम करने के लिए प्रभावी आरओएस सफाई प्रणालियों की आवश्यकता पर जोर दिया गया।

गर्मी के तनाव के तहत उत्पन्न होने वाले विभिन्न प्रकार के आरओएस का अवलोकन: गर्मी के तनाव से प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों का उत्पादन हो सकता है (जब पौधे गर्मी के तनाव का अनुभव करते हैं, तो प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (आरओएस) का उत्पादन तेजी से बढ़ता है। आरओएस, जिसमें सुपरऑक्साइड आयन, हाइड्रोजन पेरोक्साइड, और हाइड्रॉक्सिल रेडिकल, अत्यधिक प्रतिक्रियाशील अणु हैं जो पौधों की कोशिकाओं और ऊतकों को नुकसान पहुंचा सकते हैं। गर्मी-तनावग्रस्त पौधों में आरओएस उत्पादन के तंत्र में प्रकाश संश्लेषक इलेक्ट्रॉन परिवहन श्रृंखला, एनएडीपीएच ऑक्सीडेज और माइटोकॉन्ड्रियल जैसे विभिन्न सेलुलर घटकों के बीच जटिल बातचीत शामिल है। इलेक्ट्रॉन परिवहन श्रृंखला। गर्मी के तनाव के तहत उत्पन्न होने वाले विशिष्ट प्रकार के आरओएस पौधों की प्रजातियों, ऊतक प्रकार और तनाव की तीव्रता और अवधि पर निर्भर करते हैं। प्रभावों को कम करने के लिए रणनीति विकसित करने के लिए तंत्र और विभिन्न प्रकार के आरओएस पीढ़ी को समझना महत्वपूर्ण है। फसल की पैदावार पर गर्मी का दबाव।

आरओएस से पौधों की कोशिकाओं पर पड़ने वाले प्रभावों की चर्चा, जिसमें झिल्ली, प्रोटीन ऑक्सीकरण और डीएनए क्षति शामिल है: आरओएस अत्यधिक प्रतिक्रियाशील होते हैं और झिल्ली, प्रोटीन और डीएनए सहित पौधों की कोशिकाओं के विभिन्न घटकों को नुकसान पहुंचा सकते हैं। आरओएस झिल्ली की लिपिड बाईलेयर पर हमला करता है, अखंडता की हानि और परिवर्तित झिल्ली पारगम्यता। प्रोटीन ऑक्सीकरण प्रकाश संश्लेषण श्वसन जैसी सेलुलर प्रक्रियाओं के लिए महत्वपूर्ण एंजाइमों और अन्य प्रोटीनों को नुकसान पहुंचाता है। डीएनए क्षति से आनुवंशिक उत्परिवर्तन और कोशिका मृत्यु हो सकती है, जो अंततः पौधों की वृद्धि और उपज को प्रभावित कर सकती है। चूंकि आरओएस का उत्पादन ऊंचे तापमान पर होता है, पौधों की कोशिकाओं पर उनका प्रभाव गर्मी के तनाव के कारण फसल की उपज के नुकसान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उन तंत्रों को समझना जिनके माध्यम से पौधों की कोशिकाओं पर प्रभाव पड़ता है, फसल की उपज पर आरओएस के नकारात्मक प्रभावों को कम करने के लिए रणनीतियों के विकास में मार्गदर्शन करने में मदद कर सकते हैं।

हीट-स्ट्रेस्ड प्लांट्स में आरओएस सिग्नलिंग: गर्मी का तनाव एक महत्वपूर्ण पर्यावरणीय कारक है जो फसलों की वृद्धि और उपज को प्रभावित करता है। यह पौधों की कोशिकाओं में प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (आरओएस) के उत्पादन की ओर ले जाता है। सिग्नलिंग गर्मी के तनाव के प्रति पौधों की प्रतिक्रिया का एक अनिवार्य घटक है। पौधों में, आरओएस सिग्नलिंग में जीन अभिव्यक्ति, एंजाइम गतिविधि और प्रोटीन संश्लेषण सहित विभिन्न शारीरिक और प्रक्रियाओं का विनियमन शामिल है। आरओएस सिग्नलिंग मार्ग जटिल हैं और इसमें कई एंजाइमों और अणुओं की सक्रियता शामिल है। गर्मी-तनावग्रस्त पौधों में आरओएस सिग्नलिंग का विनियमन आरओएस उत्पादन के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है, जो पौधों के विकास के लिए आवश्यक है। गर्मी-तनावग्रस्त पौधों में आरओएस सिग्नलिंग मार्गों को समझने से संभावित रूप से गर्मी-तनाव की स्थिति के तहत फसल की उपज के लिए नई रणनीतियों का विकास हो सकता है।

ताप-तनावग्रस्त पौधों में प्रेरित विभिन्न सिग्नलिंग मार्गों का अवलोकन: पौधों में गर्मी का तनाव विभिन्न सिग्नलिंग मार्गों को ट्रिगर करता है। ये मार्ग पौधों को प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (आरओएस) से होने वाले नुकसान से बचाने के लिए जिम्मेदार हैं। गर्मी के तनाव के दौरान पौधों में ऊर्जा के अधिक उत्पादन और अन्य चयापचय प्रक्रियाओं के कारण आरओएस संचय होता है। एंटीऑक्सीडेंट एंजाइम, तनाव प्रोटीन, हार्मोन संश्लेषण और तनाव प्रतिक्रियाओं सहित विभिन्न सिग्नलिंग मार्गों को ट्रिगर करने में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। ये रास्ते जैव रसायन का एक झरना उत्पन्न करते हैं जो पौधे को गर्मी के तनाव के नकारात्मक प्रभाव को कम करने में मदद करता है। सिग्नलिंग मार्ग अन्य शारीरिक और जैव रासायनिक प्रक्रियाओं, जैसे संश्लेषण और श्वसन, को विनियमित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जो फसल की उपज के लिए आवश्यक हैं। पौधों में गर्मी के तनाव से प्रेरित विभिन्न मार्गों को समझने से फसल पौधों की तापमान तनाव को सहन करने की क्षमता बढ़ाने के लिए रणनीति विकसित करने में मदद मिल सकती है।

आरओएस द्वारा ट्रिगर होने वाली शारीरिक प्रतिक्रियाओं की चर्चा, जैसे एंटीऑक्सिडेंट उत्पादन और हीट शॉक संश्लेषण: पौधों में प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (आरओएस) की क्रिया से फसल की उपज पर गंभीर परिणाम हो सकते हैं, खासकर जब गर्मी के संपर्क में आने की बात आती है। आरओएस द्वारा ट्रिगर की गई प्रमुख विशेषताओं में से एक एंटीऑक्सिडेंट उत्पादन और हीट शॉक संश्लेषण जैसी शारीरिक प्रतिक्रियाएं हैं। एंटीऑक्सिडेंट का उत्पादन एक रक्षा तंत्र आरओएस द्वारा किया जाता है, जबकि हीट शॉक प्रोटीन (एचएसपी) को गर्मी से प्रेरित क्षति के खिलाफ प्रमुख सेलुलर संरचनाओं की रक्षा में मदद करने के लिए संश्लेषित किया जाता है। फसलों में आरओएस के महत्व और उससे जुड़ी शारीरिक प्रतिक्रियाओं को समझना पर्यावरण के कारण उपज के नुकसान को कम करने हेतु बेहतर रणनीतियों की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

सिग्नलिंग कैस्केड में आरओएस की भूमिका जिसके परिणाम स्वरूप गर्मी के तनाव के कारण फसल की उपज में कमी आती है: जब पौधों को तापमान के अधीन किया जाता है, तो प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (आरओएस) के उत्पादन में वृद्धि होती है। आरओएस अत्यधिक प्रतिक्रियाशील अणु हैं जो पौधों को नुकसान पहुंचा सकते हैं, जिससे ऑक्सीडेटिव तनाव हो सकता है, जिससे कई शारीरिक और जैव रासायनिक प्रतिक्रियाएं हो सकती हैं। आरओएस सिग्नलिंग में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है जिससे गर्मी के तनाव के कारण फसल की उपज में कमी आती है। इस सिग्नलिंग कैस्केड में विभिन्न रक्षा तंत्रों का सक्रियण शामिल है, जो आरओएस को ट्रिगर करते हैं। आरओएस के संचय से विशिष्ट प्रतिलेखन कारकों की सक्रियता होती है, जो बदले में गर्मी तनाव जीन की अभिव्यक्ति को नियंत्रित करते हैं। इन जीनों की अभिव्यक्ति के परिणाम स्वरूप विशिष्ट उपापचय पथ सक्रिय हो जाते हैं जो पौधों को गर्मी के तनाव से निपटने में मदद करते हैं। हालाँकि, गंभीर गर्मी तनाव की स्थिति में, आरओएस के अत्यधिक संचय से ऑक्सीडेटिव क्षति हो सकती है, जिसके परिणामस्वरूप फसल की उपज कम हो सकती है

सिग्नलिंग कैस्केड में आरओएस की भूमिका जिसके परिणाम स्वरूप गर्मी के तनाव के कारण फसल की उपज में कमी आती है: जब पौधों को तापमान के अधीन किया जाता है, तो प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (आरओएस) के उत्पादन में वृद्धि होती है। आरओएस अत्यधिक प्रतिक्रियाशील अणु हैं जो पौधों को नुकसान पहुंचा सकते हैं, जिससे ऑक्सीडेटिव तनाव हो सकता है, जिससे कई शारीरिक और जैव रासायनिक प्रतिक्रियाएं हो सकती हैं। आरओएस सिग्नलिंग में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है जिससे गर्मी के तनाव के कारण फसल की उपज में कमी आती है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

आम में लगने वाले मुख्य रोग एवं उनका रोकथाम

ऋषि नाथ पाण्डेय, अरविन्द कुमार (शोध छात्र) पादप रोग विज्ञान विभाग, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय बांदा (उ.प्र.)

उत्कर्ष उपाध्याय शोध छात्र पादप रोग विज्ञानं विभाग चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

हरिओम द्विवेदी यंग प्रोफेशनल, पादप रोग विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा

परिचय

आम (मैंगीफेरा इंडिका) भारत का राष्ट्रीय फल है, इसे 'फलों के राजा' भी माना जाना जाता है। आम की खोज पूर्वी भारत, थाईलैंड, म्यांमार, अंडमान द्वीप समूह या मलेशिया में पांच से छह हजार साल पहले हुआ था। भारत पूरे विश्व में आम का सबसे बड़ा उत्पादक और निर्यातक है। आम कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, विटामिन ए, बी 1 बी 6 और सी, सोडियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, जस्ता, तांबा, मैंगनीज, लोहा, फास्फोरस, पोटेशियम, प्रदान करता है। आम के जड़ से लेकर शीर्ष तक के प्रत्येक भाग का विभिन्न प्रकार से उपयोग किया जाता है। यह फसल कई फफूंद, जीवाणु और अन्य गैर-परजीवी रोगों से प्रभावित होती है।

आम का बंझा रोग (Malformation Disease)

लक्षण

इस रोग में मकड़ियां पत्तियों का रस चूस कर नुकसान पहुंचाती है मकड़ियों के द्वारा ही बंझा रोग फैलता है यह रोग उन सभी स्थानों पर पाया जाता जहां भी आम की पैदावार होती हैं आम में इस रोग द्वारा ग्रसित बौरों पर पुष्प कभी खिलते ही नहीं है जिससे आम की पैदावार में भारी कमी आती हैं।

रोकथाम

1. अक्टूबर के माह में 100-200 पीपीएम पर एनएए का छिड़काव करने से रोग में कमी आती है।
2. अप्रैल और अक्टूबर के बाद रोग ग्रषित टहनियों और पुष्पगुच्छों को काट कर हटा देना चाहिए।
3. अक्टूबर के तुरंत बाद फॉस्फोमिडोन 0.05ः का छिड़काव करना चाहिए।
4. पहले दो बार अगस्त-सितंबर और दिसंबर-जनवरी में अमीनो एसिड कॉपर कवकनाशी का छिड़काव करना चाहिए।

आम का दहिया रोग (Powdery Mildew)

लक्षण

आम के इस रोग में आम के पुष्पों पर, कलियों एवं फलों की डण्डियों पर हल्के भूरे रंग के चूर्णिल धब्बे पड़ जाते हैं। जिसके कारण आम के पुष्प, कलियों और फलों की डण्डियों सूख जाती हैं आम में इस रोग के कारण फलों की गुणवत्ता एवं पैदावार में कमी आ जाती हैं।

रोकथाम

पौधों पर 0.5 किग्रावृक्ष की दर से बारीक सल्फर (250-300) छिरकाव करना चाहिए पहला प्रयोग फूल आने के तुरंत बाद, दूसरा 15 दिन बाद करना चाहिए। या वेटेबल सल्फर 0.2 प्रतिशत या कार्बेन्डाजिम 0.1% या ट्राइडेमोर्फ 0.1% या कैराथेन 0.1% का स्प्रे करना चाहिए।

आम का ऐन्थ्राक्नोज रोग (Anthracnose Disease in Mango)

लक्षण

आम में लगने वाले इस रोग के लक्षण पत्तियों पर, टहनियों एवं फलों पर काले या भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं और बाद में आम के फल उन्ही जगह से सड़ने लगते हैं जिसके कारण आम की पैदावार में कमी आती हैं

रोकथाम

फूलों की शाखाओं पर अक्टूबर से शुरू करके 3 सप्ताह के अंतराल पर पी. फ्लोरेसेंस (एफपी 7) 5 ग्राम प्रति की दर से छिड़काव करें। फूलों एवं गुच्छों पर 5-7 छिड़काव करना है। भंडारण से पहले, 15 मिनट के लिए गर्म पानी (50-55 डिग्री सेल्सियस) से उपचारित करें या 5 मिनट के लिए बेनोमिल घोल (500 पीपीएम) या थायोबेंडाजोल (1000 पीपीएम) में डुबोएं। कार्बेन्डाजिम/1 ग्राम प्रति लीटर या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड/3 ग्राम प्रति लीटर या हेक्साकोनाजोल/1 मिली प्रति लीटर का पत्तियों पर प्रयोग करे।

आम का कैन्कर रोग

लक्षण

आम में इस रोग के कारण पत्तियां पीली होकर झड़ने लगती हैं तथा आम में फलों पर चिपचिपे पदार्थ उठे हुए दाग के रूप में उभर आते हैं जिससे फल फट जाते हैं और सड़ना सुरु हो जाते हैं।

रोग प्रबंधन

प्रतिरोधी किस्मों का चयन करना चाहियें जैसे जहाँगीर, फजारी और सुवर्णरेखा।

मध्यम प्रतिरोधी- लंगड़ा, दशहरी, केसर, सुंदर लंगड़ा और मनकुराड़।

बाग की स्वच्छता का पूर्ण ध्यान रखना चाहिए।

स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट 200 पीपीएम/0.2 मिली प्रति लीटर पानी के साथ पत्ते पर स्प्रे करने से इक निश्चित सीमा तक रोग को रोका जा सकता है।

आम का कोयली रोग (Black Tip of Mango)

लक्षण

इस रोग में आम के फलों का निचला सिरा मुलायम पड़ कर काला पड़ जाता हैं और बाद में सूखकर सख्त पड़ जाता हैं। आम का यह रोग पश्चिम बंगाल, बिहार, और उत्तर प्रदेश में इक बरे पैमाने पर पाया जाता है यह रोग ईट के भट्टे के धुएं द्वारा पैदा होता है। इस बीमारी का प्रकोप भट्टे से 700 मीटर की दूरी तक पाया जाता है।

रोकथाम

इस रोग की कोई खास रोकथाम नहीं हैं हमेशा ध्यान रखें कि आम के नये उद्यानों को लगायें तो ईट के भट्टे से कम से कम 1.5-2 किलोमीटर दूरी पर ही लगायें और भट्टे की चिमनी को जमीन से 25 मीटर ऊपर उठाकर लगाना चाहिए।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

राई-सरसों की आधुनिक खेती

रवि दीक्षित (शोध छात्र) बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

केशव बाबू (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चन्द्रशखर आजाद कृषि एंव प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

श्रीगोविन्द (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एंव प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

कपिल गौतम (शोध छात्र) आनुवंषिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एंव प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

खेत की तैयारी: खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद में पाटा लगाकर खेत को भुर-भुरा बना लेना चाहिए, यदि खेत की नमी कम हो तो पलेवा करके खेत को तैयार करना चाहिये। ट्रैक्टर चालित रोटावेटर द्वारा खेत एक बार में अच्छी तरह से तैयार हो जाता है।

बीज दर: तोरिया-04 कि.ग्रा./हेक्टेयर, राई-05 कि.ग्रा./हेक्टेयर

बीज शोधन: बीज जनित रोगो से सुरक्षा हेतु 2.5 ग्राम थीरम प्रति किलो की दर से बीज को उपचारित करके बुवाई करे। मैटालेक्सिल 35% डब्लू, एस. 2 ग्रा. प्रति किग्रा बीज षोधन करने से सफेद गेरूई एवं तुलासित रोग की प्रारम्भिक अवथा में रोकथाम हो जाती है।

बुवाई का समय एवं तिथि: तोरिया एवं राई बोने का उपर्यक्त समय बुन्देलखण्ड एवं आगरा मण्डल में सितंबर का अन्तिम सप्ताह तथा शेष में अक्टूबर का प्रथम पखवारा है। बुवाई देशी हल से पीछे उथले कूड़ों में 45 सेन्टीमीटर की दूरी पर करना चाहिए।

उर्वरक की मात्रा: उर्वरक का प्रयोग मिट्टी परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर किया जाए सिंचित क्षेत्रों में तोरिया में नत्रजन 80 कि.ग्रा., फास्फेट 40 कि.ग्रा., पोटाश 40 कि.ग्रा. एवं 30 कि.ग्रा. गंधक प्रति हे. तथा राई में नत्रजन 120 कि.ग्रा., फॉस्फेट 60 कि.ग्रा., पोटाश 60 कि.ग्रा. एवं 40 कि.ग्रा. गंधक प्रति हे. की दर से प्रयोग करने से अच्छी उपज प्राप्त होती है। फॉस्फोरस का प्रयोग सिंगल सुपर फास्फेट के रूप में अधिक लाभदायक होता है तथा अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु 60 क्विं. प्रति हे. की दर से सडी हुई गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहिये। सिंचित क्षेत्रों में नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फेट एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय कूड़ों में बीज के 2-3 सेंमी नीचे नाई या चोंगे से दिया जाए। नत्रजन की शेष मात्रा पहली सिंचाई के बाद टापड्रेसिंग में डाली जाये।

निराई-गुडाई एवं विरलीकरण एवं खरपतवार नियंत्रण: बुवाई के 15-20 दिन के अन्दर घने पौधो को निकालकर उनकी आपसी दूरी 15 सेंमी. कर देना आवश्यक है। खरपतवार नष्ट करने के लिए एक निराई, गुडाई, सिंचाई के पहले और दूसरी सिंचाई के बाद करनी चाहिये। रसायन द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने पर बुवाई से पूर्व फलूक्लोरोलिन 45 ईसी 22 लीटर प्रति 800-1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव कर भली-भाँति हैरो चलाकर मिट्टी को मिला देना चाहिये। पैडीमिथिलीन 30 ईसी

3.3 लीटर प्रति हे. की दर से बुवाई के दो तीन दिन के अंदर 800-1000 लीटर पानी में घोलकर समान रूप से छिड़काव करें। यदि खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग न किया गया हो तो खुर्पी से निराई कर खरपतवार का नियंत्रण किया जाए।

सिंचाई: राई में नमी की कमी, फूल आने के समय तथा दाना भरने की अवस्थाओं में विशेष संवेदनशील होती है। अतः अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 02 सिंचाई क्रमशःपहली बुवाई के 30-35 दिनों के बाद तथा दूसरी वर्षा न होने पर 55-65 दिन बाद करें।

फसल सुरक्षा:

प्रमुख कीट

आरामक्खी: इस कीट की सूडियां काले सिलेटी रंग की होती हैं जो पत्तियों को किनारों से अथवा पत्तियों में छेद कर तेजी से खाती है। तीव्र प्रकोप की दशा में पूरा पौधा पत्ती विहिन हो जाता है।

चित्रित बग: इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ चमकीले, नारंगी एवं लाल रंग के चकत्ते युक्त होते है। शिशु एवं प्रौढ़ पत्तियों, शाखाओं, तनों, फूलों एवं फलियों का रस चूसते हैं जिससे प्रभावित पत्तियां किनारों से सूखकर गिर जाती है। प्रभावित फलियों में दानें कम बनते हैं।

बालदार सूडी: सूडी काले एवं नारंगी रंग की होती है तथा पूरा शरीर बालों से ढका रहता है। सूड़ियां प्रारंभ में झुंड में रहकर पत्तियों को खाती है। तथा बाद में पूरे खेत में फैलकर पूरी पत्तियों को खाती है। तीव्र प्रकोप की दशा में पूरा पौधा पत्ति विहिन हो जाता है।

माहू: इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़पीलापन लिये हुये हरे रंग के होते है जो पौधों के कोमल तनों, पत्तियों, फूलों एवं नये फलियों के रस चूसकर कमजोर कर देते है। माहू मधुस्त्राव करते है। जिस पर काली फफूँदी उग आती है जिससे प्रकाश संश्लेशण में बाधा उत्पन्न होती है।

पत्ती सुरंगक कीट: इस कीट की सूडियां पत्तियों में सुरंग बनाकर हरे भाग को खाती है जिसके फलस्वरूप पत्तियों में अनियमित आकार की सफेद रंग की रेखाएं बन जाती हैं।

नियंत्रण के उपाय: 1. आरामक्खी एवं बालदार सूडी के नियंत्रण के लिये मैलाथियान 5% डी.पी.की. 20-25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बुरकाव अथवा मैलाथियान 50% ई.सी. की1.50 लीटर अथवा डाई क्लोरोवास 76 के प्रतिशत ई.सी. की 500 मिली. मात्रा अथवाक्यूनालफास 25% ई.सी. की 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से लगभग 600-750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये। 2. माहू , चित्रित बग एवं पत्ति सुरंगक कीट के नियंत्रण के लिये डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. अथवा आक्सीडेमेटॉन मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. अथवा क्लोरोपाइरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. को 01 लीटर अथवा मोनाक्रोटोफास 36 प्रतिशत एस.एल. की 500 मिली.प्रति हेक्टेयर की दर से लगभग 600-750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये। एजाडिरेक्टिन 0.15 प्रतिशत ई.सी. को 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

प्रमुख रोग

अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा: इस रोग में पत्तियों तथा फलियों पर गहरे कत्थई रंग के धब्बे बनते है जो गोल छल्ले के रूप में पत्तियों पर स्पष्ट दिखाई देते हैं। तीव्र प्रकोप की दशा में धब्बे आपस में मिल जाते है जिससे पूरी पत्ती झुलस जाती है।

सफेद गेरूई: इस रोग में पत्तियों की निचली सतह पर सफेद फफोले बनते है जिससे पत्तियाँ पीली होकर सूखने लगती है। फूल आने की अवस्था में पुष्पक्रम विकृत हो जाता है। जिससे कोई भी फली नहीं बनती है।

तुलासिता: इस रोग में पुरानी पत्तियों की ऊपरी सतह परद छोटे-छोटे धब्बे तथा पत्तियों की निचली सतह पर इन धब्बों के नीचे सफेद रोयेदार फफूंदी उग आती है धीरे-धीरे पूरी पत्ती पीली होकर सूख जाती है।

नियंत्रण के उपाय

बीज उपचार

1. सफेद गेरूईएवं तुलासिता रोग के नियंत्रण हेतु मैट्रालैक्सिल 35 प्रतिशत डब्लूएस. की 2.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज शोधन कर बुवाई करना चाहिये। 2. अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा रोग के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत डब्लूएस. की 2.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज शोधन कर बुवाई करना चाहिए।

भूमि उपचार: 1.भूमि जनित एवं बीज जनित रोगो के नियंत्रण हेतु बायोपेस्टीसाइड(जैव कवकनाशी) ट्राइकोडरमा विरिडी 01 प्रतिशत डब्लूपी. अथवा ट्राइकोडरमा हारिजिएनम 02% डब्लूपी. की 2.5 ग्राम प्रति हे. 60-75 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से राई-सरसों के बीज भूमि जनित आदि रोगो के प्रबन्धन में सहायक होता है।

पर्णीय उपचार: अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा, सफेद गेरूई एवं तुलासिता रोग के नियंत्रण हेतु मैनकोजेब 75% डब्लूपी. की 2.0 किग्रा. अथवा जिनेब 75% डब्लूपी. की 2.0 किग्रा0.अथवा जिरम 80% डब्लूपी. की 2.0 किग्रा. कॉपर आक्सी क्लोराइड 50% डब्लूपी. की 3.0 किग्रा0 मात्रा प्रति हेक्टेयर लगभग 600-750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये। कटाई-मड़ाई-जब 75% फलियाँ सुनहरें रंग की हो जाए, फसल को काटकर सुखाकर व मड़ाई करके बीज अलग करना चाहिए। देर करने से बीजों के झड़ने की आशंका रहती है। बीज को खूब सुखाकर ही भण्डारन करना चाहिये।

प्रभावी बिन्दु: 1.विरलीकरण करना परम आवश्यक है। 2.सल्फर का प्रयोग अवश्य करें। 3.आईपीएम का प्रयोग किया जाए। 4.संतुलित उर्वरकों का प्रयोग किया करें।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

किसान द्वारा फसलों के खरपतवारों का उचित प्रबंधन

राम स्वरुप चौधरी परास्नातक विद्यार्थी; शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

डॉ. सुरेन्द्र कुमार मीणा असिस्टेंट डायरेक्टर, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली

शुभ्रांशु मणि त्रिपाठी, अजीत पाण्डेय परास्नातक विद्यार्थी; सस्य विज्ञान विभाग

राम निवास घासल, मनीष कुमार परास्नातक विद्यार्थी; पादप रोग विज्ञान विभाग

रामाज्ञा सिंह परास्नातक विद्यार्थी; उद्यान विज्ञान विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी (उ.प्र.)

खरपतवार

प्रायः यह देखा जाता है कि कीट व रोग लगने पर उनके निदान के लिये किसान तुरंत ध्यान देते हैं लेकिन खरपतवारों के नियंत्रण की ओर ध्यान नहीं देते हैं। किसान खरपतवारों को बढ़ने देते हैं जब तक कि वे हाथ से पकड़कर उखाड़ने लायक न हो जायें, ज्यादातर कीट व रोग खरपतवारों पर ही शरण लेते हैं।

खरपतवार से प्रहेज

बुआई के लिये प्रयोग किया जाने वाला बीज खरपतवार रहीत होना चाहिए। गोबर की खाद या कम्पोस्ट को अच्छी तरह से सड़ाकर ही प्रयोग करें। कृषि यंत्रो को खेत में ले जाने से पहले उसकी अच्छी तरह से सफाई कर लेनी चाहिए

यांत्रिक विधि निराई-गुड़ाई

यह खरपतवार नियंत्रण की सर्वोत्तम विधि है। फसलों की प्रारम्भिक अवस्था में बुआई के 15-35 दिनों के मध्य का समय खरपतवारों से प्रतियोगिता की दृष्टि से क्रांतिक समय होता है। अतः प्रारम्भिक अवस्था में ही फसलों को खरपतवारों से मुक्त करना लाभदायक होता है।

खरपतवार नियंत्रण की कृषिगत क्रियाएं

उपयुक्त ग्रीष्मकालीन जुताई : इस विधि में सर्वप्रथम हल्की मृदा में डिस्क प्लाक तथा मध्यम से भारी मृदा में मिट्टी पलट हल से गर्मियों में खेतों की गहरी जुताई कर खुला छोड़ देते हैं। अधिक गर्मी से मृदा के तापमान में वृद्धि होती है।

समय पर कर्षण क्रियाएं

उपयुक्त समय पर जुताई करने से भी खरपतवारों को बुआई से पूर्व नियंत्रित किया जा सकता है। जैसे-फसल कटने के तुरंत बाद गहरी जुताई कर देनी चाहिये। इस विधि से काफी संख्या में खरपतवारों की रोकथाम की जा सकती है।

बुआई का समय

फसल की ऐसे समय पर बुआई की जाये कि खरपतवारों के निकलने से पहले ही खेत को ढक ले या खरपतवारों को एक बार पहले उगने दें। फिर जुताई कर नष्ट करने के बाद फसल की बुआई कुछ दिनों बाद करनी चाहिए।

बुआई की विधि

बुआई हमेशा पंक्तियों में करनी चाहिये, ताकि दो पंक्तियों के बीच में निराई-गुड़ाई करने में आसानी रहे और खरपतवारों को आसानी से नियन्त्रित किया जा सके।

उपयुक्त बीजदर व दूरी

बीजदर और पौधे से पौधे तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी का खरपतवारों की वृद्धि पर बहुत असर पड़ता है। पक्तियों की दूरी कम होने पर फसल छायादार रहेगी, जिसके कारण प्रकाश तथा वायु भूमि पर नहीं पहुंची जिससे खरपतवारों का अंकुरण नही होता है।

उपयुक्त फसलचक्र

उपयुक्त फसलचक्र खरपतवार नियंत्रण की एक प्रभावित विधि है। फसलचक्र में दलहनी फसलों जैसे रबी में चना, मसूर एवं मटर और खरीफ में मुंग, उरद, मोठ, चवला एवं ग्वार आदि को शामिल करने से खरपतवारों का प्रभाव तो कम होता ही है। इसके साथ ही भूक्षरण भी कम होता है और मृदा उर्वरता भी बहती है। एक ही फसल की निरन्तर खेत में उगाने से उस फसल के खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है।

उपयुक्त उर्वरक प्रबंधन

खरपतवार फसलों में दिये गये पोषक तत्वों के लिये प्रतिस्पर्धा करते हैं। यदि उर्वरक उचित समय व विधि से नहीं दिये जाते हैं, तो उर्वरकों का अधिकतम हिस्सा खरपतवार ग्रहण कर लेते हैं और इस स्थिति में फसल वृद्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

?खरपतवारों के द्वारा खेतों से आवश्यक पोषक तत्व ग्रहण कर लिये जाते हैं। विभिन्न अनुसंधान परिणामों के अनुसार खरपतवार 22-162 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 3-24 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 21-203 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर तक अवशोषित कर लेते हैं।

खरपतवार नियंत्रण की रासायनिक विधियां

यांत्रिक एवं सस्य क्रियाओं द्वारा प्रतिकूल मौसमी परिस्थितियों, जैसे लगातार वर्षा होने या समय पर मजदूरों का अभाव या अधिक क्षेत्रफल में श्रमिकों द्वारा खरपतवार निकालना संभव नहीं होता है।

बुआई के पूर्व प्रयुक्त खरपतवारनाशी

इन रसायनों को बुआई से पूर्व खेत की अंतिम जुताई के समय छिड़काव कर भूमि में मिला दिया जाता है। ये खरपतवारों के अंकुरण को रोकते हैं।

बुआई के तुरन्त बाद एवं अंकुरण पूर्व

इस प्रकार के खरपतवारनाशी बुआई के तुरन्त बाद (24-36 घण्टे तक) एवं अंकुरण से पूर्व प्रयोग में लिये जाते हैं।

सावधानियां

खरपतवारनाशी ये एक प्रकार के जहरीले होते हैं. अतः इनके प्रयोग में विशेष सावधानी रखनी चाहिये। जिस प्रकार ये खरपतवारों व अन्य जीवों के लिये घातक है उसी प्रकार पालतु जानवर एवं मानव शरीर पर भी इनका कुप्रभाव पड़ता है।

छिड़काव यंत्रों के प्रयोग में सावधानियां

किसी भी यंत्र की उपयोग लाने से पूर्व यह देख लें कि छिड़काव करने से पूर्व नोजल को साफ तथा ढीला कर लेना, उसके सभी जोड़ ठीक से कसे हो

यंत्रों पर लगने वाले पट्टे, बेल्ट, कमानी आदि के कसाव की जाँच करनी चाहिये।

विभिन्न खरपतवारों के नियंत्रण हेतु खरपतवारनाशी का प्रयोग एवं टिप्पणियां

फसलें /शाकनाशी	मात्रा (कि.ग्रा./है.)	प्रयोग का समय	सन्दर्भ शर्ते टिप्पणियां
मक्का एट्राजिन एट्राजिन + पेंडी मेथालिन	1.0-1.5 0.75+0.75	अंकुरण पूर्व (बुआई 1-2 दिन के बाद) या अंकुरण के बाद (15-20 दिन बुआई के बाद)	यह व्यापक रूप से खरपतवार के नियंत्रण में उपयोगी, लेकिन मुख्य रूप से यह चौड़ी पत्तियों वाले खरपतवार का नास करता है इसमें नम मिट्टी का होना आवश्यक है।
ज्वार, बाजरा एट्राजिन एट्राजिन + पेंडी मेथालिन	1.0-1.5 0.75+0.5 2.4 डी 0.75	अंकुरण पूर्व (बुआई 1-2 दिन के बाद)	व्यापक रूप से खरपतवार के नियंत्रण में उपयोगी, लेकिन मुख्य रूप से यह चौड़ी पत्तियों वाले खरपतवार का नास करता है, बारहमासी सेज के खिलाफ प्रभावी नियंत्रण नहीं है।
2,4 D करें।	0.75	बुआई के 30-35 दिन बाद	कुछ सेज का अच्छा नियंत्रण; खेत में चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की संख्या ज्यादा हो तो इसका प्रयोग
चना पेंडीमेथालिन	1.0	बुआई 1-2 दिन के बाद	व्यापक नियंत्रण करता है लेकिन मूल रूप से घास को मारता है। यह सेज, टंडला, गाजर घास को प्रभावी ढंग से नियंत्रित नहीं करता है।
पलूक्लोरालिन	1.0	पूर्व संयंत्र निगमन	यह खरपतवारों को व्यापक तौर पर नियंत्रित करता है; भूमि की तैयारी के बाद और फसल की बुआई से पहले, मिट्टी पर शाकनाशी का छिड़काव करें।
मटर, मसूर पेंडीमेथालिन	1.0	बुआई 1-2 दिन के बाद	सभी प्रकार के घास को मारता है।
गेहूं सल्फोसल्फ्युरोन 75% 2g	13.5 gm	बुआई 30-35 दिन और 2-3 पत्ती अवस्था हो	संकरी पत्ती (जंगली जई) तथा चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को मारता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

आधुनिक तरीके से करें सब्जियों की खेती

राजेश कुमार मीणा उद्यान विभाग, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय) लखनऊ (उ.प्र.)

सोनम मीणा भा.कृ.अनु.प.-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान (बेंगलुरु) कर्नाटक

सब्जियों का हमारे दैनिक भोजन में महत्वपूर्ण स्थान है। विशेषकर शाकाहारियों के जीवन में। सब्जी भोजन में ऐसे पोषक तत्वों के स्रोत हैं, हमारे स्वास्थ्य को ही नहीं बढ़ाते, बल्कि उसके स्वाद को भी बढ़ाते हैं। पोषाहार विशेषज्ञों के अनुसार संतुलित भोजन के लिए एक वयस्क व्यक्ति को प्रतिदिन 85 ग्राम फल और 300 ग्राम साग-सब्जियों का सेवन करना चाहिए, परंतु हमारे देश में साग-सब्जियों का वर्तमान उत्पादन स्तर प्रतिदिन, प्रति व्यक्ति की खपत के हिसाब से मात्र 120 ग्राम है। इसलिए हमें इनका उत्पादन बढ़ाना चाहिए।

ऐसे बनाएं सब्जी बगीचा

स्वच्छ जल के साथ रसोईघर एवं स्नानघर से निकले पानी का उपयोग कर घर के पीछे में उपयोगी सब्जी उगाने की योजना बना सकते है। इससे एक तो एकत्रित अनुपयोगी जल का निष्पादन हो सकेगा और दूसरे उससे होने वाले प्रदूषण से भी मुक्ति मिल जाएगी। साथ ही, सीमित क्षेत्र में सब्जी उगाने से घरेलू आवश्यकता की पूर्ति भी हो सकेगी। सबसे अहम बात यह कि सब्जी उत्पादन में रासायनिक पदार्थों का उपयोग करने की जरूरत भी नहीं होगी। यह एक सुरक्षित पद्धति है तथा उत्पादित सब्जी कीट नाशक दवाइयों से भी मुक्त होंगे।

पौधे लगाने के लिए खेत की तैयारी

सर्वप्रथम 30-40 सेंटीमीटर की गहराई तक कुदाल या हल की सहायता से जुताई करें। खेत से पत्थर, झाड़ियों एवं बेकार के खर-पतवार को हटा दें। खेत में अच्छे ढंग से निर्मित 100 किलोग्राम कृमि खाद चारों ओर फैला दें। आवश्यकता के अनुसार 45 सेंटीमीटर या 60 सेंमी की दूरी पर मेड़ या क्यारी बनाएं।

बुआई और पौध रोपण

सीधे बुआई की जाने वाली सब्जी जैसे - भिंडी, बीन एवं लोबिया आदि की बुआई मेड़ या क्यारी बनाकर की जा सकती है। दो पौधे 30 सेमी. की दूरी पर लगाई जानी चाहिए। प्याज, पुदीना एवं धनिया को खेत के मेड़ पर उगाया जा सकता है। प्रति रोपित फसल, जैसे - टमाटर, बैंगन और मिर्ची आदि को एक महीना पूर्व में नर्सरी बेड में उगाया जा सकता है।

बुआई के बाद मिट्टी से ढककर उसके ऊपर 250 ग्राम नीम के फली का पाउडर बनाकर छिड़काव किया जाता है ताकि इसे चींटियों से बचाया जा सके। टमाटर के लिए 30 दिनों की बुआई के बाद तथा बैंगन, मिर्ची तथा बड़ी प्याज के लिए 40-45 दिनों के बाद पौधे को

नर्सरी से निकाल दिया जाता है। टमाटर, बैंगन और मिर्ची को 30-45 सेंमी की दूरी पर मेड़ या उससे सटाकर रोपाई की जाती है। बड़ी प्याज के लिए मेड़ के दोनों ओर 10 सेमी. की जगह छोड़ी जाती है। रोपण के तीसरे दिन पौधों की सिंचाई की जाती है। प्रारंभिक अवस्था में इस प्रतिरोपण को दो दिनों में एक दिन बाद पानी दिया जाए तथा बाद में चार दिनों के बाद पानी दिया जाए।

सब्जी बगीचा का मुख्य उद्देश्य अधिकतम लाभ प्राप्त करना है तथा वर्ष भर घरेलू साग-सब्जी की आवश्यकता की पूर्ति करना है।

1. कुछ पद्धतियाँ को अपनाते हुए इस लक्ष्य को हासिल किया जा सकता है।
2. बगीचा के एक छोर पर बारहमासी पौधों को उगाएं। इससे इनकी छाया अन्य फसलों पर न पड़े तथा अन्य साग-सब्जी फसलों को पोषण दे सकें।
3. बगीचा के चारों ओर तथा आने-जाने के रास्ते का उपयोग विभिन्न हरी सब्जी जैसे - धनिया, पालक, मेथी, पुदीना आदि उगाने के लिए किया जा सकता है।

सब्जी बगीचा के लिए स्थल चयन

सब्जी बगीचा के लिए स्थल चयन में सीमित विकल्प है। हमेशा अंतिम चयन घर का पीछे ही होता है जिसे हम लोग बाड़ी भी कहते हैं। यह सुविधाजनक स्थान होता है क्योंकि परिवार के सदस्य खाली समय में सब्जियों पर ध्यान दे सकते हैं तथा रसोईघर व स्नानघर से निकले पानी आसानी से सब्जी की क्यारी की ओर घुमाया जा सकता है। सब्जी बगीचा का आकार भूमि की उपलब्धता और व्यक्तियों की संख्या पर निर्भर करता है। सब्जी बगीचा के आकार की कोई सीमा नहीं है परंतु सामान्य रूप से वर्ग की अपेक्षा समकोण बगीचा को पसंद किया जाता है। चार या पांच व्यक्ति वाले औसत परिवार के लिए 1/20 एकड़ जमीन पर की गई सब्जी की खेती पर्याप्त हो सकती है।

बारहमासी खेत

सहजन की फली, केला, पपीता, कढ़ी पता उपरोक्त फसल व्यवस्था से यह पता चलता है कि वर्ष भर बिना अंतराल के प्रत्येक खेत में कोई- न-कोई फसल अवश्य उगाई जा सकती है। साथ ही, कुछ खेत में एक साथ दो फसलें (एक लंबी अवधि वाली और दूसरी कम अवधि वाली) भी उगाई जा सकती है। सब्जी बगीचा निर्माण के आर्थिक लाभ व्यक्ति पहले अपने परिवार का पोषण करता उसके बाद बेचता है।

आवश्यकता से अधिक होने पर उत्पाद को बाजार में बेच देता है या उसके बदले दूसरी सामग्री प्राप्त कर लेता है। कुछ मामले में घरेलू बगीचा आय सृजन का प्राथमिक उद्देश्य बन सकता है। अन्य मामले में, यह आय सृजन उद्देश्य के बजाय पारिवारिक सदस्यों के पोषण लक्ष्य को पूरी करने में मदद करता है। इस तरह, यह आय सृजन और पोषाहार का दोहरा लाभ प्रदान करता है।

फसल पद्धति

भारतीय परिस्थितियों के अनुसार सब्जी बगीचा के लिए सहायक फसल पद्धति को इस प्रकार अपनाएं-

सब्जी का नाम	बुआई/रोपे जाने का महीना
टमाटर एवं प्याज	जून-सितंबर
मूली	अक्टूबर-नंबर
बीन	दिसंबर-फरवरी
भिंडी (ओकरा)	मार्च-मई
बैंगन	अक्टूबर-नवंबर
टमाटर	जून-सितंबर
अमरांतस	मई
मिर्ची और मूली	जून-सितंबर
लोबिया	दिसंबर-फरवरी
प्याज (बेल्लारी)	मार्च-मई
भिंडी और मूली	जून-अगस्त
पत्तागोभी	सितंबर-दिसंबर
बीन	जनवरी-मार्च
बेल्लारी प्याज	जून-अगस्त
शक्कर कंद	सितंबर-नवंबर
टमाटर	दिसंबर-मार्च
प्याज	अप्रैल-मई
बीन	जून-सितंबर
बैगन और शक्करकंद	अक्टूबर-जनवरी

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

शाकीय फसलों में सिंचाई एवं जल प्रबंधन

डॉ. राघवेन्द्र सिंह और राहुल रंजन
कृषि विज्ञान संकाय और संबद्ध उद्योग,
रामा विश्वविद्यालय, मंधना, कानपुर (उ.प्र.)

प्रस्तावना

परिनगरीय खेती में शाक-सब्जी की खेती बहुत ही महत्वपूर्ण शाकीय फसलों की श्रेष्ठतम उत्पादकता फसल/पौधों को उसकी आवश्यकतानुसार पूरे जीवन-काल में समुचित मात्रा में जल उपलब्ध होने से संभव है। आज के संदर्भ में यह अवधारणा है कि किसी विशेष फसल को रबी या खरीफ क्रमशः छह या सात सिंचाई अथवा दो या तीन सिंचाई देना प्रासंगिक नहीं रही। ऐसे सिद्धांत मौलिक रुप से गैर-वैज्ञानिक हैं। किसी भी फसल के जीवन काल में सिंचाइ की अवधि या जल की मात्रा का निर्धारण विगत तीन दशको में विकसित विधियों एवं सिंचाई पद्धतियों द्वारा किया जाना चाहिए। इन विधियों में प्रतिदिन कोई पौधा अपनी आयु एवं भू-आच्छदन के अनुसार कितना (मि.मी.) पानी चाहेगा, का आकलन संभव है और उतना ही पानी दिया जाए।

जल प्रबंधन के समय दें विशेष ध्यान

पानी लगाते समय या सिंचाई करते समय यह ध्यान रहे कि सिंचाई पौधे या पौध में की जा रही है न कि भूमि में । इसमें सिंचाई की विकसित सूक्ष्म सिंचाई विधियाँ उपयोग में लाई जा सकती हैं। लगभग तीन दशकों में सिंचाई की सूक्ष्म प्रणाली से फसलोत्पादन करने की प्रक्रिया में ऐसा पाया गया है कि औसतन अन्य पारंपरिक सिंचाई विधियों की तुलना में इसके द्वारा अपेक्षाकृत 40 से 60 प्रतिशत जल की मात्रा में बचत की जा सकती है। आम जन एवं सभी कृषकों के लिए यह उल्लेख करना आवश्यक है कि यह होने वाली बचत इसलिए है कि इस विधि में भू-आच्छादित फसलों के आंशिक भाग को ही सींचा जाता है और ये भू-भाग अपनी सतह के नीचे सभी जड़ों को संजोये होते हैं। भू-सतह का आंशिक हिस्सा गीला होता है, इसलिए खेत में खरपतवार भी कम होते हैं। यहाँ पर यह आसानी रहती है कि ड्रिप सिंचाई में ऊँची-नीची एवं ढलान आदि वाले खेतों को बिना सममतल किये हुए ड्रिप प्रणाली से फल एवं सब्जी की खेती सममतल करने वाले अतिरिक्त खर्च के बिना सफलतापूर्वक लगाया जा सकता है।

जिस प्रकार ड्रिपरों से बूंद-बूंद जल दिया जाता है उसी प्रकार रासायनिक उर्वरकों को भी सिंचाई जल में फर्टिलाइजर इंजेक्टर की मदद से विभिन्न प्रकार के उर्वरण या पोषक तत्वों को मिश्रित करके फसलों को दिया जा सकता है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के संदर्भ में इस प्रक्रिया को फर्टिगेशन का नाम दिया गया है। यह उर्वरण देने की अत्याधुनिक विधि है। ऐसी व्यवस्था के अन्तर्गत उर्वरकों को कम मात्रा में कम अन्तराल रख कर जल्दी-जल्दी पूर्व नियोजित सिंचाई के साथ दिया जा सकता है। इससे पौधों को आवश्यकतानुसार सभी

पोषक तत्व सदैव उपलब्ध कराकर उत्पादन में भारी वृद्धि करते हुए मूल्यवान उर्वरकों के अपव्यय को रोका जा सकता है। उपरोक्त उल्लेखों को ध्यान में रखें तो एक बात स्पष्ट होती है कि आधुनिकतम सिंचाई प्रणाली से जल एवं उर्वरक में जो बचत होती है उसे अन्यत्र उपयोग में लाकर और अधिक खेतों पर शाक-सब्जी उगायी जा सकती है और किसानो की आय में वृद्धि की जा सकती है।

शाकीय फसलों की जल मांग

किसी भी फसल की सिंचाई की मांग से पहले यह जानना आवश्यक है कि संबंधित फसल की जल की मांग क्या है। जल मांग फसल की अवधि एवं मौसम पर निर्भर करता है। यदि संयोग से उस अवधि में बारिश होती है और इसकी मात्रा प्रभावी रहती है जो मिट?टी की नमी बढ़ाने में पर्याप्त रुप से सहायक है तो सिंचाई की मांग और भी कम हो जाती है। इसका आकलन मृदा जल के संतुलन से किया जाता है। फसल उगाने के दौरान यदि कोई बारिश हो तो उसको समायोजित करके संशोधित सिंचाई की मात्रा दी जानी चाहिए। ऐसा करने से जल की बचत एवं फसल की गुणवत्ता बहुत अच्छी होगी। बचे हुए जल से और सूखे पड़े हुए खेतों में शाक सब्जी उगायी जा सकती है। बेहतर गुणवत्ता होने से बाजार में अच्छी कीमत किसान को मिल सकती है।

निष्कर्ष के तौर पर यह समझा जा सकता है कि लहसुन के लिए पूरे समय में 34 से 35 लाख लिटर एवं प्याज के लिए 40 से 42 लाख लिटर पानी एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त है। सामान्य तौर पर विभिन्न प्रकार की शाक-सब्जियों को यदि सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली, ड्रिप, स्प्रिंकलर या माइक्रो स्प्रिंकलर से सिंचाई की जाए तो 150 मि.मी. से 450 मि.मी. के दायरे में अच्छी सिंचाई कर अधिकतम उत्पादन किया जा सकता है।

परम्परागत जल सिंचाई की विधियां

देश के किसान सिंचित खेती में परम्परागत तरीकों जैसे सतही विधियों, चौकोर क्यारियों, कुंड़ों या गुलों में करते रहे हैं। आज के समय की मांग है कि इस विधि को त्यागें और सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली अपना कर अपने सब्जी उत्पादन को बढ़ाएँ और पूरे साल भर फसल लेते रहें। आज के संदर्भ में सिंचाई विज्ञान एवं अभियांत्रिकी एक विशिष्ट ज्ञान का विषय है। अतः यह अत्यंत आवश्यक है कि शाकीय फसलोत्पादन की जो भी प्रौद्योगिकी विकसित करने की परिकल्पना की जाए उसमें जल प्रबंधन से संबंधित विशेषज्ञों को शामिल कर उनके अनुभवों पर आधारित ज्ञान का पूरा लाभ उठाना वांछित है। इससे विकसित प्रौद्योगिकी कृषकों में लोकप्रिय होगी और उसे मूल्य मिलेगा। फलस्वरुप सिंचाई की दक्षता बढेगी, किसान पूरे वर्ष अपने खेत पर हरियरली देख सकेंगे। अंतिम परिणाम यह होगा कि उनकी आमदनी में उत्तरोत्तर बढ़ोत्तरी होगी।

सिंचाई के तरीके व साधन

सिंचाई की आधुनिक विधियों द्वारा हम जल का उपयोग मितव्ययता से कर सकते हैं, ये विधियाँ निम्न हैं-

छिड़काव तंत्र

इस विधि का उपयोग असमतल भूमि के लिए किया जाता हैं। जहाँ पर जल कम मात्रा में उपलब्ध होता ह। उधर्व पाइपों के उपरी सिरों पर घूमने वाले नोजल लगे होते हैं। ये पाइप निश्चित दूरी पर एक मुख्य पाइप से जुड़े होते हैं। जब पाइप की सहायता से जल उपरी पाइप में भेजा जाता है तो वह घूमते हुए नोजल से बाहर निकालता है। इसका छिड़काव पौधों पर इस प्रकार होता है, जैसे वर्षा हो रही हो।

ड्रिप तंत्र

इस विधि में जल बूंद बूंद कर पौधों की जड़ों में गिरता हैं। अतः इसे ड्रिप तंत्र कहते हैं, फलीदार पौधों, बगीचों एवं वृक्षों को पानी देने का यह सर्वोत्तम तरीका हैं। इससे पौधों को बूंद बूंद करके जल प्राप्त होता हैं। इस विधि से जल व्यर्थ नही होता हैं। अतः यह जल की कमी वाले क्षेत्रों के लिए एक वरदान हैं।

कटवाँ या तोड़ विधि

यह सिंचाई का परम्परागत तरीका हैं, इसमें नहर अथवा तलाब के जल को खेत में एक नाले के द्वारा जोड़ा जाता है। मुख्य रूप से धान की फसलों में इस विधि का अधिक उपयोग किया जाता है। इस पद्धति में प्रवाहित जल अबाधित रूप से ढ़लान के अनुसार बहकर चला जाता है। इस विधि से जल का अपव्यय अधिक मात्रा में होता है।

थाला विधि

यह भी परम्परागत विधि हैं, जिसमें मुख्य से बागवानी अथवा वृक्षों को पानी देने के लिए थाला विधि का उपयोग किया जाता है। पेड़ के चारों ओर गोल अथवा चोकोर आकृति का घेरा (गड्ढा) बनाया जाता हैं. उस गड्ढे में जल को प्रवाहित कर भर दिया जाता है। जब पेड़ छोटा होता है तो गड्ढा भी छोटे आकार का बनाया जाता हैं। पेड़ के बढ़ने के साथ-साथ इस गड्ढे के आकार को भी बढ़ा दिया जाता है।

मृदा स्वास्थ्य सुधार क्यों जरूरी?

प्रदीप कुमार शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग
आशीष कुमार यादव और सूर्यभान
सस्य विज्ञान विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

मिट्टी की उपजाऊ शक्ति में हुई कमी को दूर कर उर्वरता बनाए रखना।
प्रति इकाई क्षेत्रफल में उत्पादन बढ़ाना ।
किसानों को आर्थिक लाभ प्राप्त कराना।

बढ़ती हुई जनसंख्या एवं घटते कृषि क्षेत्र एवं प्राकृतिक संसाधनों की दशा में फसल सघनता एवं उत्पादकता में वृद्धि ही विशाल जनसंख्या की भूख मिटा सकती है। विगत वर्षों में लम्बे समय तक अन्धाधुन्ध एवं असंतुलित उर्वरकों के प्रयोग के बावजूद भी उपज में कमी आने लगी है। भूमि में बहुपोषक तत्वों की कमी स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ने लगी है।

विभिन्न अनुसंधानों एवं मृदा परीक्षणों के जो परिणाम सामने आए हैं, उसके अनुसार वर्तमान समय में क्रमशः नत्रजन की 63, फास्फोरस की 42. पोटाश की 37. गंधक की 41. बोरान की 33 एवं जिंक की 49 प्रतिशत मृदा नमूनों में कमी के संकेत मिले हैं।

स्वस्थ मिट्टी बैक्टीरिया, कवक, शैवाल, प्रोटोजोआ, नेमाटोड और अन्य छोटे प्राणियों के साथ मिलाई जाती है। वे जीव पादप स्वास्थ्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मिट्टी के जीवाणु प्राकृतिक एंटीबायोटिक्स का उत्पादन करते हैं जो पौधों को रोग का प्रतिरोध करने में मदद करते हैं। कवक पानी और पोषक तत्वों को अवशोषित करने में पौधों की सहायता करता है। साथ में, इन जीवाणुओं और कवक को ÷कार्बनिक पदार्थ÷ के रूप में जाना जाता है। मिट्टी के एक नमूने में अधिक कार्बनिक पदार्थ, मिट्टी जो स्वस्थ है।

अतः अब समय आ गया है कि उपरोक्त लक्ष्यों को पाने के लिए पोषक तत्वों के संतुलित प्रयोग, विशेष रूप से उर्वरक की मात्रा प्रकार, समय व प्रयोग विधि के साथ-साथ दक्षता बढ़ाये जाने पर विशेष प्रयास की आवश्यकता है। उर्वरकों के साथ-साथ वैकल्पिक संसाधनों के उपयोग को विशेष महत्व देना होगा।

मृदा स्वास्थ्य संवर्धन के वैकल्पिक संसाधन

कार्बनिक खाद व हरी खाद का प्रयोग

हरी खाद, गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, पशुओं की बिछाली, खलियां इत्यादि भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के साथ-साथ भूमि का स्वास्थ्य ठीक करने में विशेष सहायक है। विभिन्न हरी खादों की फसलों से पोषक तत्व निम्न मात्रा में भूमि में उपलब्ध होता है।

फसल का नाम	हरे पदार्थ की मात्रा टन/हैक्टेयर	नाइट्रोजन का प्रतिशत	प्राप्त नाइट्रोजन (किग्रा./ है.)
सनई	20-30	0.43	86-129
ढैचा	20-25	0.42	84-105
उर्द	10-12	0.41	41-49
मूंग	8-10	0.48	38-48
ग्वार	20-25	0.34	68-85
लोबिया	15-18	0.49	74-88

फसल चक्र में दलहनी फसलों का समावेश

फसल चक्र में दलहनी फसली को उगाकर अथवा हरी खाद के रूप में प्रयोग कर मृदा स्वास्थ्य को ठीक रखते हुए 50-60 कि.ग्रा. प्रति है. नत्रजन की बचत की जा सकती है।

फसल अवशेष का कारगर प्रबंधन

फसल अवशेष को भूमि में सड़ाकर भूमि के भौतिक जैविक व रासायनिक गुणों में सुधार के साथ-साथ थोड़ी बहुत मात्रा में योषक तत्वों की भी आपूर्ति की जा सकती है। फसल अवशेष के रूप में हमारे देश में बहुत बड़ी । मात्रा में धान का पुआल गन्ने की पत्ती तथा विभिन्न फसलों के डंठल व गांठो इत्यादि का प्रयोग आसानी से किया सकता है

जैव उर्वरकों का प्रयोग

मृदा स्वास्थ्य संवर्धन में वैकल्पिक स्रोत के रूप में जैव उर्वरकों का उपयोग महत्वपूर्ण है। इनके प्रयोग से आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है। संस्तुत मात्रा में जैव उर्वरकों के प्रयोग से 25-30 किग्रा नत्रजन तथा 20-25 किग्रा. फास्फोरस की उपलब्धता प्रति है. बढ़ाई जा सकती है।

अन्य स्रोत

आधुनिक औद्योगिक एवं शहरी परिवेश में बहुत से उत्पाद जैसे प्रेसमड फास्फोजिप्सम तथा अन्य खाद्य प्रसंस्करण से मूल्यवान खाद प्राप्त किया जा सकता है।

अतः समय की मांग को ध्यान में रखते हुए फसलों की खुराक पूरी करने हेतु रासायनिक उर्वरकों के साथ ही स्थानीय उपलब्धता के अनुसार अन्य सभी पोषक तत्व प्रदान करने वाले वैकल्पिक संसाधनों का कारगर उपयोग सुनिश्चित करना होगा।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

केला के प्रमुख रोग एवं निदान

प्रभात कुमार, अवधेश कुमार
अभिषेक प्रताप सिंह, दिव्यांश मिश्रा
अमन श्रीवास्तव, हेमंत कुमार
(शोध छात्र) आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या

चित्ती रोग या सिगाटोक रोग

यह रोग सर्कोस्पोरा म्यूसी नामक फफूंद से उत्पन्न होता है । इस रोग ने सन् 1913 में फिजी द्वीप के सिगाटोका के मैदानी भाग में व्यापकता से प्रकोप कर केले की फसल को बुरी तरह से प्रभावित किया था इसलिए रोग का नाम सिगोटोका पड़ गया है। अब यह रोग विश्व के सभी केला उत्पादक देशों में प्रकोप कर रहा है।

लक्षण

पत्ती का अधिकांश भाग धब्बों के कारण झुलस जाता है। रोग के प्रारम्भिक लक्षण ऊपर से तीसरी या चौथी पत्ती पर सूक्ष्म चित्तियों के रूप से प्रगट होते । धब्बे सबसे पहले हल्के पीली या हरी पीली धारियों के रूप में बनते है

रोग नियंत्रण के उपाय

रोग के आरंभिक लक्षण दिखाई देने पर रोग नियंत्रण के लिए उपयुक्त ताम्रयुक्त दवा जैसे फाइटोलान, क्यूपरामार, ब्लूकापर या ब्लाईटाक्स-50 का 0.3 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें। एक हेक्टर के लिए 1000 लीटर द्रव छिड़कना चाहिए। इस घोल में 2 प्रतिशत अलसी का तेल मिश्रित करना चाहिए जिससे केले की चिकनी पत्तियों पर दवा का घोल चिपक सके।

गुच्छशीर्ष रोग

केले का गुच्छशीर्ष रोग विषाणु द्वारा उत्पन्न होता है। जिसे केला वाइरस-1 के नाम से पहचाना जाता है भारतवर्ष में केले के भागों में सर्वाधिक महत्व गुच्छशीर्ष रोग का है जिसने सन् 1950 में केरल के 4000 वर्ग किलो मीटर क्षेत्र के बगीचों को संक्रमित कर पूरे देश में तहलका मचा दिया था।

लक्षण

रोग के लक्षण पौधों पर किसी भी अवस्था में देखे जा सकते हैं। पौधों के शीर्ष पर पत्तियों का गुच्छा बन जाता है इसलिए इस रोग को गुच्छ शीर्ष कहते हैं। रोग के कारण पौधे बौने रह जाते है। रोग का प्राथमिक संक्रमण रोगी अतः भूस्तारी के रोग से होता है तथा द्वितीय संक्रमण रोग वाहन कीड़ों द्वारा होता है। जब रोग प्रकोप तरूण पौधों पर होता है।

रोग नियंत्रण के उपाय

स्वस्थ व रोगी पौधों पर कीटनाशक दवा जैसे- मेटासिसटॉक्स (0.1 से 0.5) दवा का छिड़काव करना चाहिए जिससे रोगवाहक कीड़े नष्ट हो जाते है और रोग प्रसार पर रोक लग जाती है।

जीवाणु म्लानि या मोको रोग

यह रोग स्यूडोमोनारा सोलेनेसिएरम नामक जीवाणु से उत्पन्न होता है। रोग का प्रकोप सर्वप्रथम ब्रिटिश घाना में सन् 1840 में देखा गया था। रोग प्रकोप से पूरा पौधा मर जाता है। रोग से फसल को बहुत हानि होती है। रोग भारतवर्ष में सबसे पहले बंगाल में सन् 1968 में पाया गया

लक्षण

रोग की पहचान पौधे के हरा का हरा सूख जाने से की जा सकती है। प्रभावित पौधों में रोग के कारण शुरू में पौधों की नई पत्तियों का रंग पर्णवृंत के पास पीला सा पड़ जाता है जो बाद में पर्णवृंत से टूट जाता है। इस कारण पौधे की मध्य पत्ती सूख जाती है

रोग नियंत्रण के उपाय

मिट्टी जनित रोग के निदान के लिए कोई भी दवा नहीं उपयोग की जानी चाहिए क्योंकि उससे कोई लाभ नहीं होता है। रोग प्रसार कम करने के लिए प्रभावित पौधों को, जड़ सहित उखाड़कर जला दें।

दुग्ध इकाइयों की स्थापना पर भू उपयोग व श्रेणी परिवर्तन शुल्क से मिलेगी छुट्टी, होगा संशोधन

उत्तर प्रदेश सरकार दुग्ध आधारित उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहित करने के लिए निवेशकों को भू उपयोग परिवर्तन शुल्क व वाह्य विकास शुल्क से छूट या राहत सहित कई अतिरिक्त लाभ देने जा रही है। इसके लिए दुग्धशाला विकास व दुग्ध उत्पाद प्रोत्साहन नीति 2022 में संशोधन की तैयारी शुरू कर दी गई है।

प्रस्ताव के अनुसार राजस्व संहिता के नियमों के तहत कृषि भूमि के गैर कृषि भूमि में उपयोग तथा प्रोजेक्ट के बीच पड़ने वाली आरक्षित श्रेणी की भूमि के श्रेणी परिवर्तन पर लिए जाने वाले शुल्क को माफ करने की योजना है। इसी तरह शहरी व औद्योगिक क्षेत्रों में भू उपयोग परिवर्तन व वाह्य विकास शुल्क में रियायत देने की तैयारी है। दुग्ध नीति-2018 के तहत निवेश करने वाले उन निवेशकों को अनुदान व रियायतें देने की भी व्यवस्था की जाएगी, जिन्होंने तय समय में निवेश किया, लेकिन लाभ के आवेदन पर कार्रवाई हो उसके पहले नई नीति आ गई और मंजूरी नहीं मिल पाई। शासन के एक अधिकारी ने बताया कि दुग्ध विकास विभाग ने 2022 की नीति में संशोधन के लिए कैबिनेट प्रस्ताव तैयार कर लिया है। संबंधित विभागों से इस पर राय लेकर कैबिनेट से मंजूरी दिलाने की कार्रवाई की जाएगी।

नीति में संशोधन कर इस तरह लाभ देने का प्रस्ताव

- यदि कोई परियोजना कृषि भूमि पर स्थापित की जानी है तो कृषि भूमि को गैर कृषि उपयोग में बदलना पड़ता है। इसके लिए निर्धारित सर्किल रेट पर भूमि के मूल्य का एक फीसदी शुल्क देना पड़ता है। यह शुल्क माफ किया जाएगा।
- परियोजना के लिए ली जा रही भूमि के बीच यदि चकरोड जैसी आरक्षित श्रेणी की भूमि आती है तो इसका श्रेणी परिवर्तन कराना पड़ता है। इसके लिए सर्किल रेट के 25% के बराबर श्रेणी परिवर्तन शुल्क देना पड़ता है। श्रेणी परिवर्तन निशुल्क होगा।
- आवास विकास परिषद व विकास प्राधिकरण, यूपीसीडा, यूपीडा व अन्य औद्योगिक विकास प्राधिकरणों के क्षेत्र में कृषि भूमि पर लगने वाले उद्योगों के लिए भूमि उपयोग का रूपांतरण शुल्क लिया जाता है। उस भूमि के सर्किल रेट के मूल्य का 20 प्रतिशत शुल्क लिया जाता है। इसमें 50 प्रतिशत कमी का प्रस्ताव है।
- प्राधिकरण क्षेत्रों में उद्योगों की स्थापना पर संबंधित प्राधिकरण वाह्य विकास शुल्क लेते हैं। यह शुल्क भूमि के क्षेत्रफल पर प्रति वर्ग मीटर के अनुसार होता है। इसमें 75 फीसदी छूट देने का प्रस्ताव है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

फसल सुधार में जीनेटिक इंजीनियरिंग का अनुप्रयोग

सैयद ताजीन जैदी शोध छात्र, फसल कार्यिकी विभाग आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ. प्र.)

डॉ. अलोक कुमार सिंह सहायक प्राद्यापक, फसल कार्यिकी विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या (उ. प्र.)

मीनाक्षी जैव प्रौद्योगिकी विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस, (उ. प्र.)

नियाज़ अहमद पादप आणविक जीवविज्ञान एवं जैव-प्रौद्योगिकी विभाग आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ. प्र.)

जीनेटिक इंजीनियरिंग एक प्रक्रिया है जिसमें एक जीव को डीएनए या अन्य परमाणु जैसे न्यूक्लिक एसिड की कृत्रिम परिवर्तन, पुनर्विन्यास और पुनरुत्पादन के माध्यम से संशोधित किया जाता है। डीएनए, जिसे डेऑक्साइराइबोन्यूक्लिक एसिड के रूप में भी जाना जाता है, एक मोलेक्यूल है जो जीव के विकास और कार्यान्वयन के लिए आनुवंशिक जानकारी को बेहतरीने करता है। जीनेटिक इंजीनियरिंग, जिसे जीनेटिक मॉडिफिकेशन भी कहा जाता है, वैज्ञानिकों को एक जीव से दूसरे जीव में जीन बदलने की स्वीकृति देता है। मनुष्य, पशु और पौधे इन जीवों की उदाहरण हैं। इस प्रकार, जीनेटिक मॉडिफिकेशन एक जीव से दूसरे जीव में वांछित जीनों की स्थानांतरण को सूचित करता है। इस जीनेटिक मॉडिफिकेशन प्रक्रिया के माध्यम से वांछित जीन को शरीर में प्रविष्ट किया जाता है, जिससे शरीर में इस विशेष जीन का परिचय होता है और फलस्वरूप विकसन तेज होता है।

जीनेटिक इंजीनियरिंग भोजन का उत्पादन करने के तरीके को बदल रही है, जिससे फसल उत्पादन में त्वरित वृद्धि संभव हो रही है साथ ही सूखों और प्राकृतिक आपदाओं की रोकथाम भी हो रही है। जीएमओ, यानी जीनेटिकली मॉडिफाइड ऑर्गेनिज्म्स, वे जीव हैं जिनके जीनों को जीनेटिक इंजीनियरिंग की प्रक्रिया के माध्यम से संशोधित किया गया है। चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में, जीनेटिक इंजीनियरिंग भी फलदायक परिणाम दे रही है। वैज्ञानिकों ने पहले ही सिद्ध किया है कि जीनेटिक इंजीनियरिंग के माध्यम से कैंसर जैसी बीमारियों का इलाज किया जा सकता है और पर्यावरण समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। जीनेटिक इंजीनियरिंग प्रौद्योगिकी के माध्यम से वैज्ञानिक लक्ष्य जीन का पूरा अध्ययन कर सकते हैं, जिससे वे दवाओं, बहुत सारी जीवनरक्षक टीके और कीटनाशकों की तैयारी कर सकते हैं और कीटनाशकों का उपयोग कम कर सकते हैं।

जीनेटिक इंजीनियरिंग के फायदे

बच्चों और अनायास में बीमारी की पहचानः जीनेटिक इंजीनियरिंग द्वारा हम छोटे बच्चों और अनायास में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं कि वे किसी बीमारी से प्रभावित हैं। उदाहरण हेतु, हंटिंगटन की बीमारी एक ऐसी बीमारी है जो माता-पिता से बच्चों में पारित हो सकती है, और जीनेटिक इंजीनियरिंग की मदद से डॉक्टर अब इस बीमारी को अनायास में भी गर्भधारण में ही पहचान सकते हैं और उपचार शुरू कर सकते हैं, जिससे बच्चा ज्यादा देर तक जी सकता है।

नई खाद्य प्राणियों का उत्पादनः जीनेटिक इंजीनियरिंग की मदद से वैज्ञानिक खाद्य को उनकी इच्छानुसार डिज़ाइन कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, हम एक फल के जीन को इतनी कठिन जलवायु परिस्थितियों का सामना करने के लिए संशोधित कर सकते हैं, जिससे हमें भविष्य में यदि हमें सूखा और सुनामी जैसी प्राकृतिक आपदाएँ आएं तो हमें मदद मिलेगी। वैज्ञानिक उच्च औषधीय और पोषणात्मक मूल्य वाले खाद्य बना सकते हैं, जिससे पशुओं और मनुष्यों दोनों को ज्यादा दीर्घ और स्वस्थ जीवन जीने में सहायक होता है।

दीर्घ जीवन की क्षमताः हम पहले से ही जानते हैं कि मनुष्य दुनिया पर सभी अन्य जीवों से ज्यादा देर तक जीता है। इसका मुख्य कारण जीनेटिक इंजीनियरिंग है। पहले ही बात की गई है, जीनेटिक इंजीनियरिंग हमें उच्च पोषणात्मक और चिकित्सात्मक मूल्य वाले खाद्य बनाने में मदद कर सकता है, जिससे मनुष्य दुनिया पर बहुत अधिक समय तक जी सकता है।

पौधों में विकास को बदलनाः हम जानते हैं कि जीनेटिक इंजीनियरिंग के पास आवश्यकतानुसार जीनों को संशोधित करने की क्षमता होती है, जिससे वैज्ञानिक पौधों के जीनों को ऐसे संशोधित कर सकते हैं कि पौधा पहले से ज्यादा तेज बढ़ सके और कठिन जलवायु परिस्थितियों का सामना कर सके, जिससे पौधा जीवित रह सके और अधिक फसल उत्पादित कर सके।

कीट प्रतिरोधः पौधों का प्रधान रूप से जीनेटिक इंजीनियरिंग से संशोधित किया जाता है। वैज्ञानिक जीनेटिक इंजीनियरिंग की तकनीक का उपयोग करके पौधों के जीनों को कीटनाशकों के प्रति अधिक संवर्धनशील बनाया जा सकता है। पौधों के जीनों को विकसित करने के लिए भविष्यवाणी बनाने के लिए जीनेटिक इंजीनियरिंग का उपयोग किया जाता है।

जैविक खेती में जीनेटिक इंजीनियरिंग के अनुप्रयोगः सबसे पहले हम देखें कि खेती में जीनेटिक इंजीनियरिंग क्यों आवश्यक है। जीनेटिक इंजीनियरिंग उच्च औषधीय और पोषणात्मक मूल्य को बढ़ावा देने में सहायक होती है। यह वैज्ञानिकों की मदद करती है संभावित खतरनाक बीमारियों और कठिन जलवायु परिस्थितियों का सामना करने में साहसिक पौधे डिज़ाइन करने में। हम खेती में जीनेटिक इंजीनियरिंग का उपयोग कई तरीकों से कर सकते हैं, जैसेः जीनेटिक इंजीनियरिंग का उपयोग पौधों के जीनों को बदलकर उन्हें वर्धित उपज, कम खाद्य मूल्य, खाद्य गुणवत्ता, खाद्य सुरक्षा और औषधीय मूल्य में सुधार करने में किया जा सकता है। उपरोक्त सभी का अनुसरण जैनेटिक इंजीनियरिंग में किया जा सकता है। इस प्रकार, जैनेटिक इंजीनियरिंग पौधों के विकास में महत्वपूर्ण है।

B. जड़ संवर्धनः जड़ संवर्धन में जीनेटिक इंजीनियरिंग का महत्वपूर्ण योगदान है। जड़ संवर्धन की अनुभूति को जीनेटिक इंजीनियरिंग के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है, जिससे हम उच्च उत्पादन स्तर पर पौधों की वृद्धि कर सकते हैं, हर्बाइसाइडों का प्रयोग कम कर सकते हैं, और हर्बाइसाइडों के प्रयोग को सरलीकृत कर सकते हैं। हर्बाइसाइडों का प्रयोग आधुनिक कृषि प्रैक्टिस में आवश्यक है, और उपयोग में कम विषैले पदार्थ विकसित करने की बड़ी इच्छा है। इसलिए हर्बाइसाइड संवर्धन पौधों का विकास का प्रमुख लक्ष्य है, और यहां कुछ कारण हैंः

* पौधों में एक जीन को स्थानांतरित करके हर्बाइसाइड संवर्धन प्राप्त किया जा सकता है। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि पौधों में एक से अधिक जीनों का स्थानांतरण अभी तक एक हल बनाया नहीं गया है।

* हर्बाइसाइड संवर्धन पौधों के उपयोग से किसानों को हर्बाइसाइड का उपयोग कम करने और सरलीकृत करने का अतिरिक्त लाभ प्राप्त होता है। हर्बाइसाइड संवर्धन पौधों का किसानों के लिए नया नहीं है, लेकिन इनका उपयोग बढ़ते हुए लोकप्रिय हो रहा है। हालांकि, उनका अनुप्रयोग सीमित है। आजकल की दुनिया में जीनेटिक इंजीनियरिंग वैज्ञानिकों को गैर-हर्बाइसाइड पौधों में संक्रमण की प्रतिरोधकता को स्थानांतरित करने में मदद कर रही है।

C. कीट प्रतिरोधः आजकल भारत में खेती से होने वाले नुकसान का बड़ा हिस्सा कीटों द्वारा होने वाले पौधों के क्षति का कारण है। हम जीनेटिक इंजीनियरिंग का उपयोग करके पौधों को कीटों के प्रति अधिक प्रतिरोधी बनाने के लिए एक नई डीएनए (डिऑक्सीराइबोन्यूक्लिक एसिड) की नई क्रमबद्धता को प्रस्तुत करने के लिए जीनेटिक इंजीनियरिंग का उपयोग कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, Bacillus thuringiensis (Bt) पौधे ऐसे जीनेटिक इंजीनियरिंग पौधे हैं जिनमें बैक्टीरियम क्रिस्टल टॉक्सिन्स होते हैं जो उन्हें अन्य कीटों के प्रति अधिक प्रतिरोधी बनाते हैं। इस प्रकार, जीनेटिक इंजीनियरिंग का उपयोग कीटों के प्रति प्रतिरोधी पौधों या फसलों को बनाने में किया जा सकता है।

D. वायरस प्रतिरोधः पौधों में वायरस रोग नियंत्रण में विभिन्न कृषि अमलों और रणनीतियों का योगदान हुआ है, जिसमें सफलता के विभिन्न डिग्री होती है। भाग्यशाली रूप से, जीनेटिक इंजीनियरिंग के प्रगति के साथ, वैज्ञानिक अब पौधों में वायरस प्रतिरोधीता के प्रति अधिक उम्मीदवार परिणाम प्रस्तुत कर सकते हैं। एक कोट प्रोटीन सिक्वेंस का प्रकटीकरण पौधों में प्रोटीन जीन के साथ व्यक्ति करना वर्तमान में पौधों में वायरस प्रतिरोधीता की सबसे सफल विधि है। इस तरीके से पौधे वायरस के प्रति सकारात्मक रिस्पांस दिखाते हैं। ज्यादा अनुसंधान किया जा रहा है ताकि प्रोटीन जीन को पौधों में प्रविष्ट करने की सरलीकृत विधि विकसित की जा सके और पौधों को वायरस के प्रति अधिक प्रतिरोधी बनाने के लिए।

E. फलों की दोहराव समयीकरणः फलों की दोहराव समयीकरण खेती क्षेत्र में एक बड़ी समस्या है। फलों की दोहराव समयीकरण का जीनेटिक इंजीनियरिंग का उपयोग किया जा सकता है। फल की दोहराव समयीकरण के लिए, उसे ठंडे तापमान में, विशेष रूप से फ्रीजर में संग्रहित किया जाता है। फल की दोहराव समयीकरण के लिए जीनेटिक इंजीनियरिंग के साथ, एक्सेस से एसीस को जिनका जीन होता है जो एसीथिलीन के उत्पादन के अंतिम चरण में एसीस का जलयोजन करता है, को नीचे आने की दिशा में नियंत्रित करने के लिए उपयोग किया जाता है। एसीस ऑक्सिडेस जीन की नियंत्रणशून्य प्रौढ़ता से नतीजे में एसीस के उत्पादन को दबाने का परिणाम होता है, जिससे फल की दोहराव समयीकरण होता है।

F. बर्फ की प्रतिरोधिताः हम जानते हैं कि पौधे किसी निश्चित तापमान को सह सकते हैं, और अगर तापमान उस सीमा से नीचे गिरता है, तो पौधा मर जाता है। उदाहरण के लिए, सामान्य बीज पौधे -1 डिग्री सेल्सियस तक की तापमान को सह सकते हैं; हालांकि, तापमान -4 डिग्री सेल्सियस से नीचे गिरता है तो पौधा जम जाता है और मर जाता है। हम जीनेटिक इंजीनियरिंग का उपयोग पौधों के जीनों को बदलने के लिए कर सकते हैं ताकि बीज पौधा नकारात्मक तापमान को सह सके, जिससे पौधा बिना किसी दिक्कत के अत्यधिक जलवायु स्थितियों को भी सह सके।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

सब्जी फसलों में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन

नीरज कुमार प्रजापति फसल उन्नयन विभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)

राजीव कुमार वर्मा फसल उत्पादन विभाग, भा.कृ.अनु.प.- भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)

शरद शर्मा फसल रक्षा विभाग, भा.कृ.अनु.प.- भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)

मिट्टी एक बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन है जो पानी और हवा के समान ही महत्वपूर्ण है। मिट्टी का उचित उपयोग देश के सामाजिक-आर्थिक विकास को बहुत हद तक निर्धारित करता है। वित्तीय वर्ष 2020-21 में सब्जियों का कुल उत्पादन 10.8 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र से लगभग 200.44 मिलियन मीट्रिक टन होने का हुआ है। वर्ष 2025 तक सब्जी की मांग कुल खपत के आधार पर 225 मिलियन टन होगी। इस लक्ष्य को प्राप्त करने का एकमात्र विकल्प उच्च उपज वाली किस्मों/संकर, आधुनिक उत्पादन तकनीक के उपयोग के माध्यम से सब्जी उत्पादन स्तर को ऊपर उठाना है। भविष्य में सब्जी उत्पादन और मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने के लिए एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन आधुनिक उत्पादन तकनीक के सबसे महत्वपूर्ण घटकों में से एक है। पौधों के पोषक तत्वों की आपूर्ति विभिन्न स्रोतों से की जा सकती है, जैसे- जैविक खाद, खाद/वर्मीकम्पोस्ट, फसल अवशेष, हरी खाद, जैव उर्वरक और रासायनिक उर्वरक। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन भविष्य की पीढ़ियों के लिए मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने के अलावा फसल उत्पादकता बढ़ाने में मदद करेगा।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन से प्राप्त उत्पाद

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन की अवधारणा: उर्वरकों का निरंतर और असंतुलित उपयोग पर्यावरण प्रदूषण के अलावा कृषि उत्पादन की स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहा है। स्थायी कृषि उत्पादन हेतु प्रमुख तथ्य मृदा जैविक कार्बन का प्रबंधन और पशु खाद, फसल अवशेष, हरी खाद, सीवेज कीचड़ और कचरे जैसे जैविक आदानों का तर्कसंगत उपयोग होगा, जिसे एकीकृत संयंत्र संसाधन प्रबंधन के रूप में जाना जाता है। चूंकि जैविक खाद आधुनिक कृषि की कुल पोषक तत्वों की जरूरतों को पूरा नहीं कर सकती है, इसलिए उर्वरकों और जैविक स्रोतों से पोषक तत्वों का एकीकृत उपयोग समय की आवश्यकता है।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का उद्देश्य

- पौधों के पोषक तत्वों के जैविक और जैविक स्रोतों के साथ संयुक्त खनिज उर्वरकों के संतुलित उपयोग के माध्यम से मिट्टी की उत्पादकता को बनाए रखना या बढ़ाना • मिट्टी में पौधों के पोषक तत्वों के भंडार में सुधार करना। • पौधों के पोषक तत्वों की दक्षता में सुधार करना, जिससे पर्यावरण को होने वाले नुकसान को सीमित करना। • बढ़ते मौसम के दौरान मिट्टी में सभी स्रोतों से पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने के लिए। • फसल द्वारा पोषक तत्वों की मांग और सभी स्रोतों से पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिए स्थान (जड़ वाले क्षेत्र) और समय (आने वाले मौसम) दोनों में अस्थिर मिट्टी पोषक पूल के माध्यम से आपूर्ति करने के लिए। • निर्दिष्ट कार्यों के संबंध में मिट्टी के जीवमंडल के कार्य को अनुकूलित करने के लिए, जैसे कार्बनिक पदार्थ (खनिजीकरण) का अपघटन, उनके प्राकृतिक शत्रुओं द्वारा रोगजनक जीवों का नियंत्रण, मिट्टी की संरचना का जैविक गठन, फाइटोटॉक्सिक यौगिक का अपघटन आदि।

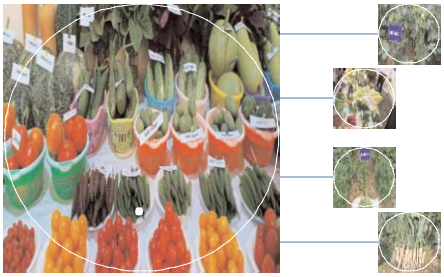

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के घटक

1.कार्बनिक खाद : यह पौधे (फसल, खर-पतवार, फलों-सब्जियों के छिलके व उनके अवशेष) या पशु मूल का जैविक अपशिष्ट पदार्थ होता है, जिसे विभिन्न विधियों द्वारा निम्न प्रकार का खाद तैयार किया जाता है। इसका उपयोग मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने हेतु किया जाता है।

(क) गोबर की सड़ी खाद : यह खेत के जानवरों के गोबर और मूत्र के साथ-साथ कूड़े और खेत के जानवरों को खिलाए जाने वाले खुरदरे या अन्य साग से बनी सामग्री से बनी होती है। इसमें औसतन 0.5 प्रतिशत नत्रजन, 0.2 प्रतिशत फास्फोरस और 0.5 पोटाश होता है।

(ख) कम्पोस्ट: जैविक पदार्थ के सड़ने के बाद बनने वाले द्रव्यमान को कम्पोस्ट कहते हैं। धान के पुआल, गन्ने का कचरा, सरसों का ठूंठ, खर-पतवार या अन्य समान सामग्री जैसे खेत के कचरे का उपयोग आमतौर पर किसानों द्वारा खाद बनाने के लिए किया जाता है। इस प्रकार की खाद को फार्म कम्पोस्ट कहा जाता है। इसके विपरीत गली की झाड़ू, मल, कूड़ेदान के कचरे से बनी खाद शहरी खाद कहलाती है। फार्म कम्पोस्ट में 0.5% नत्रजन, 0.5 प्रतिशत फास्फोरस और 0.5% पोटाश होता है। टाउन कम्पोस्ट में 1.4% नत्रजन, 1.0% फास्फोरस और 1.4 प्रतिशत पोटाश होता है।

(ग) वर्मीकम्पोस्ट: केंचुए का उपयोग करके वर्मीकम्पोस्ट विकसित किया जाता है। केंचुए कार्बनिक पदार्थ का उपभोग करते हैं और इसे एक कास्ट के रूप में उत्सर्जित करते हैं। इस कास्ट का उपयोग वर्मीकम्पोस्ट के रूप में किया जाता है। औसतन इसमें 3 % नत्रजन, 1% फास्फोरस और 1.5% पोटाश होता है।

(घ) हरी खाद: उर्वरता और उत्पादकता को बहाल करने के लिए, कुछ फसलों को मिट्टी में तब भी बदल दिया जाता है जब वे हरी होती हैं। इस अभ्यास को हरी खाद के रूप में जाना जाता है। लेग्युमिनोसे समूह के पौधों का उपयोग सामान्यतः हरी खाद के लिए किया जाता है, जिसमें हरी खाद फसलें जैसे सनई, ढैंचा, शीशम, जंगली नील एवं पत्तियों द्वारा हरी खाद बनाने वाले फसल जैसे ये फसलें नाइट्रोजन स्थिरीकरण में सक्षम होने के कारण मिट्टी में नाइट्रोजन मिलाती हैं। औसतन इसमें 2.5 प्रतिशत नत्रजन, 0.5% फास्फोरस और 1.8 प्रतिशत पोटाश होता है।

2.जैव उर्वरक : सब्जियों की खेती में इस्तेमाल होने वाले मुख्य जैव उर्वरक, एजोटोबैक्टर और फॉस्फेट सॉल्युलाइजर्स हैं। एजोटोबैक्टर मुक्तजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकारक जीवाणु है जो 25.0-30.0 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर स्थिरीकरण करता है। यह इंडोल एसिटिक एसिड (आईएए) जैसे हार्मोन भी पैदा करता है और विटामिन जैसे बायोटिन, फोलिक एसिड और विभिन्न बी-समूह भी बनते हैं। जैविक पदार्थ और उर्वरक के साथ एजोटोबैक्टर का प्रयोग अच्छा अंकुरण, विकास और उत्पादन सुनिश्चित करता है।

3.अकार्बनिक उर्वरक: यह एक रासायनिक पदार्थ है जो कृत्रिम रूप से निर्मित होता है। उर्वरक पोषक तत्वों का एक समृद्ध स्रोत है और फसल उत्पादन में एक विशेष पोषक तत्व की आपूर्ति के लिए लागू होता है जिसमें मिट्टी की कमी होती है। रासायनिक पोषक तत्वों की उपलब्धता तीव्र गति से होता है और पौधों की शुरुआती स्थापना और विकास में मदद करता है। उर्वरक मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं:

नत्रजन आधारित उर्वरक: इस प्रकार के उर्वरकों में केवल नाइट्रोजन होता है। नाइट्रोजन नाइट्रेट (एन.ओ.3) या अमोनिकल रूप (एन.ओ.4) में पाया जा सकता है जैसे- यूरिया, अमोनियम सल्फेट, अमोनियम नाइट्रेट।

फास्फेट आधारित उर्वरक: ऐसे उर्वरकों में केवल फास्फोरस होता है जैसे-सिंगल सुपर फास्फेट, डबल सुपर फास्फेट, ट्रिपल सुपर फास्फेट।

पोटाश आधारित उर्वरक: नाइट्रोजन को छोड़कर किसी भी अन्य पोषक तत्व की तुलना में पोटाश की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है। पोटाश उर्वरकों का उपयोग करके पौधों को पोटाश की आपूर्ति की जाती है। जैसे- म्यूरेट आफ पोटाश, पोटैशियम सल्फेट।

सब्जी फसलों पर एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का प्रभाव

फसल	उपज (टन प्रति हे.)		
	रासायनिक उर्वरक	कार्बनिक खाद	एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन
बैंगन	37.81	35.15	45.46
पतागोभी	33.24	31.92	32.99
मिर्च	6.11	6.39	7.075
शिमला मिर्च	24.87	19.39	29.66
सब्जी मटर	5.81	3.91	10.31
भिंडी	10.83	10.19	16.45
प्याज	33.19	27.39	33.67
टमाटर	38.57	29.16	51.02
गाजर	7.46	7.34	7.64
बीन्स	13.37	11.98	13.68

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के लाभ

- मृदा उर्वरता में सतत् वृद्धि होती है। • फसल अवशेष प्रबंधन से पोषक तत्वों की आपूर्ति से लागत घटती है। • फसलों को संतुलित पोषण प्रदान करता है। • मिट्टी की भौतिक, रासायनिक और जैविक कार्यप्रणाली में सुधार करता है और उसे बनाए रखता है। • मृदा में कार्बन की मात्रा बढ़ती है जिससे मृदा की जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है एवं फसलों को पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि होती है।

कुछ व्यावसायिक सब्जियों की फसलों में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन

फसल: संस्तुत उर्वरकों का विकल्प

बैंगन: प्रति हेक्टेयर 50.0 किग्रा. नत्रजन पोल्ट्री खाद के माध्यम के साथ व 50.0 किग्रा. नत्रजन यूरिया के माध्यम का उपयोग करने से बैंगन की उपज बढ़ाने और मृदा स्वास्थ्य रखने में मदद मिलती है।

भिंडी: असम में नत्रजनःफास्फोरसःपोटाश प्रत्येक की 37.5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर के साथ-साथ वर्मीकम्पोस्ट 1.0 टन, माइक्रोबियल कंसोर्टिया 3.5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर के साथ मिलाकर देने से फल की उपज में वृद्धि और मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद मिलती है।

टमाटर : नत्रजनः फास्फोरसः पोटाश का संयोजन प्रत्येक की 50.0 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद 10.0 टन प्रति हेक्टेयर के साथ उपज बढ़ाने में लाभकारी पाया गया।

मिर्च: नत्रजनः फास्फोरसः पोटाश (75:30:30) किग्रा. प्रति हेक्टेयर की आधी खुराक के साथ 40.0 टन प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद समावेश उर्वरक की अनुशंसित खुराक का 50 प्रतिशत प्रतिस्थापित करता है।

प्याज: दापोली (महाराष्ट्र) में गोबर की खाद 10.0 टन प्रति हेक्टेयर, उर्वरकों की 50 प्रतिशत अनुशंसित खुराक फायदेमंद होती है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

दैनिक आहार में सब्जियों का महत्व

निमित सिंह (शोध छात्र) सब्जी विज्ञान विभाग, उद्यान महाविद्यालय, नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

आलोक कुमार सिंह वनस्पति दर्शन विभाग, कृषि महाविद्यालय, नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

भोजन में सब्जियों का प्रमुख स्थान है। सब्जियों से हमें खाद्य रेशा, खनिज, विटामिन, कार्बोहाइड्रेट, वसा तथा प्रोटीन जैसे आवश्यक पौष्टिक तत्व प्राप्त होते हैं। सारिणी-1 सब्जियां हमारे भोजन को सरस, स्वादिष्ट व पौष्टिक बनाने में मदद करती है। वर्तमान शोध परिणामों से यह स्पष्ट हो पाया है कि सब्जियों में पाए जाने वाले कुछ विशेष प्रकार के यौगिक जैसे बीटा-कैरोटीन, विटामिन सी, विटामिन ई (टोकोफेरॉल) तथा ग्लूकोसिनोलेट फिनोल इत्यादि हमें बीमारियों से लड़ने में सहायता करते हैं, अतः सब्जियों को रक्षात्मक भोजन भी कहा जाता है। सब्जियाँ पौष्टिक आहार के उन अनिवार्य तत्वों की पूर्ति करती है, जो यद्यपि बहुत छोटी मात्राओं में आवश्यक होते है, परन्तु मानव शरीर में विभिन्न जैवरासायनिक क्रियाओं के लिए अनिवार्य तत्वों की पूर्ति करती है। मांस पनीर तथा अन्य वसीय पदार्थों के पाचन के दौरान बने अम्लों को निष्प्रभावी करने के लिए सब्जियों का सेवन आवश्यक है। सब्जियों में पाये जाने वाले खाद्य रेशे पाचन में सहायक होते हैं तथा कब्ज को रोकते हैं। पोषण न्यूनता जनित प्रमुख रोगों जैसे विटामिन ए की कमी तथा लोहे की कमी से उत्पन्न रक्ताल्पता इत्यादि निवारण में सब्जियों का बहुत योगदान है।

प्रमुख पौष्टित तत्वों की उपलब्धता के अनुसार सब्जियों का वर्गीकरण

पौष्टिक तत्व	प्रमुख सब्जियां
कार्बोहाइड्रेट	आलू, टैपियोका, अरवी, शकरकन्द, सूरन (जमीकंद), चुकन्दर, ग्वार की फली, गाजर, प्याज, कमलककड़ी, सेम, ब्रुसेल्स स्प्राउट्स, सूखा लहसुन, करी पत्ता।
प्रोटीन	सब्जी मटर, सेम, ब्रुसेल्स स्प्राउट्स, लोबिया, बाकला, चैलाई, सरसों, मेंथी, पालक, कुल्फा, ग्वार की फली, बथुआ, करी पत्ता, सूखा लहसुन
वसा	सेम के बीज, कद्दू, तोरी, खरबूजा, खीरा, करैला आदि के बीज

प्रमुख विटामिन एवं उनके सब्जी स्रोत

विटामिन एवं प्रमुख सब्जी स्रोत

विटामिन ए: (बीटा-कैरोटीन)-पत्तागोभी, गाजर, टमाटर, पालक, सहिजनपत्ती, सरसों का साग, चैलाई, धनिया, शलजम पत्ती, अरवी की पत्ते, शकरकंद, सलाद पत्ता, शिमला मिर्च, पुदीना, कुल्फा, बथुआ, चुकन्दर की पत्ती, मूली के पत्ते, करी पत्ता, खबूज, तरबूज इत्यादि।

विटामिन ई: पत्तेदार सब्जियां, सलाद पत्ता, शलजम की पत्ती, करी पत्ता

विटामिन के: पत्तेदार सब्जियां, सलाद पत्ता, शलजम की पत्ती, करी पत्ता

विटामिन सी: करेला, शिमला मिर्च, सरसों का साग, शलजम की पत्ती, पालक, तरबूज, शलजम, सेम, बंदगोभी, हरी मिर्च, पुदीना, गाजर, मूली की पत्ती, धनिया, गांठगोभी, कुल्फा, सहिजन की पत्ती, सहिजन, आलू, ब्रुसेल्स स्प्राउटस, फूलगोभी इत्यादि।

विटामिन बी-1: कुल्फा, फुलगोभी, अरवी की पत्ती, पालक, शलजम, भिण्डी, सरसों का साग, लोबिया, टमाटर, गाजर।

विटामिन बी-2: सलाद पत्ती, बैंगन, कुल्फा, फूलगोभी, अरवी की पत्ती, अरवी, चौलाई, गाजरे, पुदीना।

निकोटिनिक अम्ल: कमल ककड़ी, चौड़ी सेम, मूली व मूली के पत्ते, चुकंदर के पत्ते, आलू, चैलाई, गाजर।

पेन्टोथेनिक अम्ल: फूलगोभी, शकरकन्द, लोबिया

विटामिन बी-6: शकरकन्द, आलू, फूलगोभी

फोलिक अम्ल: चौलाई, पालक, पुदीना, बंदगोभी, प्याज, अरवी

विटामिन बी-10: टमाटर, बैंगन, सेम, खीरा, कद्दू, चिचिण्डा

बायोटिन आलू, तरबूज, लोबिया, फूलगोभी, गाजर बंदगोभी : भारतीय आहार में सब्जियों का पूरा उपयोग नहीं किया जा रहा है। ऐसा सम्भवतः भारत में सब्जियों की गुणवत्ता के सम्बन्ध में अज्ञानता तथा आमजनों में सब्जियों के पोषण मान से सम्बन्धित जानकारी का न होना हैं। भोजन शास्त्रियों व वैज्ञानिकों के अनुसार हममें अपने भोजन को पौष्टिक व संतुलित बनाने हेतु लगभग 300 ग्राम सब्जियां प्रतिदिन खानी चाहिए, जिसमें लगभग 125 ग्राम हरी पत्तेदार सब्जियां, 75 ग्राम जड़ वाली तथा 100 ग्राम अन्य प्रकार की सब्जियों का सेवन करना चाहिए।

पोषक तत्वों की आवश्यकता क्यों: संतुलित आहर में वे सभी पौष्टिक तत्व रहते हैं जो मानव शरीर में विभिन्न प्रकार की जैव रासायनिक क्रियाओं हेतु आवश्यक है। संतुलित आहर में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, पानी, विटामिन, रेशा एवं खनिज पदार्थों में 15 पदार्थों का होना आवश्यक माना गया है, जिनमें लौह, आयोडीन कैल्शियम, फास्फोरस, सोडियम, पोटैशियम, क्लोरीन, सल्फा, मैगनीज, बोरान, कॉपर, कोबाल्ट जिंक तथा आक्सीजन आते हैं। इसलिए दैनिक आहार में संतुलित मात्रा में इनका होना अनिवार्य है। जिससे शरीर के निर्माणात्मक कार्य तथा नियंत्रण सही ढंग से होता रहे। संतुलित आहार में कच्ची शाक-सब्जियों (गाजर, टमाटर, धनिया, पुदीना, प्याज, खीरा, हरी मिर्च, चुकन्दर, मूली, पत्तागोभी) का प्रयोग करना चाहिए जिससे संतुलित मात्रा में विटामिन और खनिज प्राप्त हो सके। सलाद शरीर को ताजगी प्रदान करता है, भूख बढ़ाता है तथा पेट की पाचन शक्ति को ठीक रखने में वसा युक्त भोजन के पाचन में विशेष मदद करता है।

खनिज पदार्थ एवं लवण: मानव शरीर में बहुत से खनिज पदार्थ एवं लवण पाए जाते हैं। दैनिक आहार में इनकी कमी से मानव शरीर में विभिन्न प्रकार की विकृतियां आ जाती हैं। इनमें से कुछ मानव शरीर के अंगों के निर्माण में सहयोग प्रदान करती हैं तथा कुछ उत्प्रेरक के रूप में जैव रासायनिक क्रियाओं में सहायक होती है। दांत और हड्डियों के निर्माण में मुख्य रूप से कैल्शियम मैग्नीशियम एवं फास्फोरस का योगदान होता है, जबकि लौह तत्व रक्त का प्रमुख अवयव है। इसके अतिरिक्त जिंक, मालिब्डेनम, तांबा, मैगनीज तथा मैग्नीशियम शरीर में एन्जाइम के उत्प्रेरक के रूप में विभिन्न जैव रासायनिक क्रियाओं को सम्पन्न करते हैं। आयोडिन थायराक्सिन का प्रमुख अवयव है। इसकी कमी से घेंघा रोग हो जाता है सोडियम, पौटैशियम शरीर में उपलब्ध द्रवों के प्रमुख अंग हैं, तथा ये क्लोराइड तथा कार्बोनेट एवं बाइकोर्बोनेट आयन्स के साथ मिलकर जल एवं अम्ल क्षार के संतुलन को ठीक रखते हैं। मानव शरीर से 20-30 ग्रा. खनिज पदार्थ उत्सर्जन होता है। जिनकी पूर्ति उन्हें भोज्य पदार्थों जिनमें सब्जियों का प्रमुख योगदान है,

खाद्य रेशा: बहुत सी सब्जियां विशेष रूप से हरी पत्तेदार सब्जियों में काफी मात्रा में खाद्य रेशा पाया जाता है जो न सिर्फ हमारी पाचन शक्ति को बढ़ाती है अपितु कब्ज रोकने में भी सहायक होता है तथा हृदय से संबंधित विभिन्न प्रकार की बीमारियों की रोकथाम भी करती है। रेशे मानव शरीर की रक्त धमनियों में कोलेस्ट्राल की मात्रा को कम करते हैं। विशेष प्रकार के घुलनशील रेशे और गम एवं पेक्टिन रक्त में शर्करा की मात्रा पर भी नियंत्रण रखती है जिससे मधुमेह जैसी बीमारियों की संभावना काफी कम हो जाती एक स्वस्थ वयस्क हेतु 40 ग्राम रेशा प्रतिदिन की मात्रा संस्तुति की गयी है। मेंथी, पालक, चैलाई, सरसों का साग, बथुआ, लेटयूस, ब्रसेल्स स्प्राउटस, शलजम, बन्दगोभी गाजर, प्याज, सेम इत्यादि से पर्याप्त मात्रा में खाद्य रेशे की प्राप्ति हो जाती है।

सब्जियों से कैंसर की रोकथाम : दुनिया भर मे किए गए विभिन्न शोध प्रयोगों के आधार पर यह देखा गया है कि सब्जियां विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे विटामिन एवं खनिज तथा लवणों की पूर्ति तो करती ही है, उनमें कुछ अन्य जटिल यौगिक जैसे ऐन्थोसाईनिन, पॉलीफीनॉल, ट्राईटरपिनायड्स तथा गन्धक युक्त यौगिक भी काफी मात्रा में उपलब्ध होते हैं जो कैंसर तथा मधुमेह जैसी गंभीर बीमारियों की रोकथाम में सहायक होते हैं। विशेष रूप से गोभी वर्गीय सब्जियों में पाया जाने वाला ष्लूकोसिनोलेटष् नामक यौगिक कैंसर की रोकथाम में बहुत ही प्रभावी सिद्ध हुआ है। ग्लूकोसिनोलेट ऐसे आवश्यक उत्प्रेरकों की उपस्थिति में मिथाइल आईसोथायोसाईनेट के रूप में परिवर्तित होकर अत्याधिक क्रियाशील हो जाता है तथा कैंसर कारकों के उत्सर्जन में सहायक होता है। सब्जियों में उपलब्ध यह एन्टीऑक्सीडेन्ट उक्त खतरनाक एवं क्रियाशील रेडिकल की सक्रियता की काफी कम कर देते हैं तथा सुगमता से उन्हें प्रभावहीन बनाकर नियंत्रित कर देते हैं। इस दिशा में विश्व के अनेक भागों में काफी शोध कार्य किए जा रहे हैं। अच्छे स्वास्थ्य के लिए सब्जियों से पोषण सुरक्षा देश भर में भली-भांति समझा और सराहा गया है तथा उनकी गुणवत्ता के प्रति भी अभूतपूर्व चेतना जागृत हुई है। अतः अच्छे गुणों वाली और अपेक्षाकृत अधिक पोषक तत्वों वाली सब्जियों की फसलों के उत्पादन तथा उनके उपभोग के प्रति लोगों का रूझान बढ़ा है। अतः देशवासियों को पोषक तथा संतुलित आहार की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए सब्जी फसलों के उत्पादन को बढ़ावा देना अत्यन्त आवश्यक है जो पोषण की दृष्टि से संतुलित हो तथा उनमें शरीर को निरोगी रखने, ऊर्जा देने, वृद्धि करने और शरीर के लिए आवश्यक तत्वों की पूर्ति करने की भी क्षमता हो।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

ज्वार के पौष्टिक उत्पाद

प्रज्ञा M.Sc (एजी) कृषि अर्थशास्त्र
डॉ. अभिषेक कालिया सहायक प्रोफेसर, कृषि अर्थशास्त्र, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

अंतराष्ट्रीय पौष्टिक अनाज वर्ष 2023 मार्च 2021मैं सयुक्त राष्ट्र बैठक मैं महासभा द्वारा भारत की ओर से एक प्रस्ताव को मंजूरी कर लिया गया जिसके तहत वर्ष 2023 को अंतराष्ट्रीय पौष्टिक अनाज वर्ष घोषित किया गया। इसका उद्देश जलवायु की बदलती परिस्थितियां मे पौष्टिक अनाज के पोषकओर स्वस्थ के अनेक लाभ ओर इसकी खेती के लिए उपयुक्तता के बारे मे जागरूकता बढ़ाना हैं। पौष्टिक अनाज मे बाजरा; ज्वार; रागी; कुटकी; सावा आदि हैं।

ज्वार एक प्रकार का मोटा अनाज हैं जो एशिया, अफ्रीका, और दक्षिण अमेरिका सहित दुनिया के कई जगहों में उगाया जाता है।आज ज्वार तेजी से एक ऐसा बहुमुखी अनाज बनता जा रहा है जो ग्लूटेन-मुक्त ओर मोटे अनाज गुणों के कारण तेजी से लोकप्रियता हासिल कर रहा हैं। यह हृदय स्वस्थ मे सुधार करता हैं इसमें मौजूद फाइबर शरीर मे (खराब कोलेस्ट्रॉल) को कम करने मे मदद करता हैं; जिससे दिल का दौरा पड़ने का खतरा कम होता हैं। यह रक्त प्रवाह मे बाधा; धमनीकाठिन्यक की संभावना भी कम करता है। इसमें कॉम्प्लेक्स कार्ब होता हैं जिससे वजन कम को नियंत्रण कर सकते हैं। 1980 के पहले भारत मे ज्वार, बाजरा, मक्का, जो, की रोटी बहुत लोकप्रिय थी। जो धीरे धीरे खत्म हो गया हैं। आमतौर पर घरों में त्योहार,अतिथि के आने पर ही गेहूं की रोटी बनती थी ओर उस पर घी लगाकर दिया जाता था, अन्यथा मिक्स अनाज ही था। ज्वार को पोषण तंत्वो से भरपूर होने के कारण न्यूट्री सीरियल्स भी कहा जाता हैं।

ज्वार के महत्व

ज्वार मे आयरन, कैल्शियम, फास्फोरस, पोटैशियम, सोडियम की मात्रा से भरपूर, हड्डियो को मजबूत करता हैं, इसमें विटामिन थायमिन, नियासिन, ओर राइबोफ्लेविन भी होते हैं जो सकल स्वस्थ को बढ़ावा देने के लिए हैं। परंपरागत तरीके से ज्वार के व्यंजन बनाए जाते हैं जैसे-ज्वार की रोटी, इडली, मठरी,डोसा, खिचड़ी, ज्वार के केक, बिस्कुट, चॉकलेट, नमकीन आदि भी बनाए जाते । यदि गेहूं के स्थान पर ज्वार का उपयोग किया जाए तो व्यंजन के पोषक तत्व मे भी वृद्धि हो जायेगी व मोटापे, डायबिटीज, की स्थिति भी नही आयेगी।

ढोकला

सामग्री

1 प्लेट ज्वार का आटा, 1 चौथाई प्लेट गेहूं का आटा, 1प्याज, जीरा एक छोटा चम्मच, अदरक छोटा टुकड़ा, दही एक कटोरी, दो छोटा चम्मच तेल, हरी मिर्च, नमक स्वादानुसार।

विधि

* सभी सामग्री मिलाकर आटा गूथे।
* आटे के छोटे टुकड़े कर कर गोले बनाए और उसे 20 मिनट तक भाप मे पकाए।

बीच में चम्मच डालकर देख ले सामग्री चिपक तो नही रही हैं, तब आंच से उतार ले। तेल मे राई डालकर ढोकले मे तड़का लगाए। हरी चटनी, टोमैटो सास, के साथ गरम गरम परोसे।

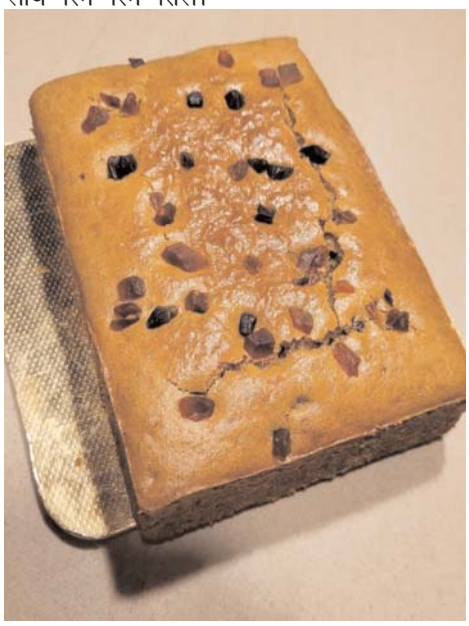

ज्वार का केक

सामग्री

ज्वार का आटा 200 ग्राम , मैदा 200 ग्राम ,चावल का आटा 150 ग्राम, मिल्क पाउडर 30 ग्राम, बेकिंग पाउडर 10 ग्राम, बेकिंग सोडा 3.5 ग्राम, चीनी पीसी हुई 400 ग्राम , घी 200 ग्राम, दूध 1/2 लीटर, सिट्रिक ऐसिड 1.5 ग्राम

विधि

ज्वार का आटा, चावल का आटा, मैदा , मिल्क पाउडर, बेकिंग सोडा, बेकिंग पाउडर इन सभी को मिलाकर रख लें। फुलावट आने तक पीसी हुई चीनी, सिट्रिक ऐसिड, घी को फेटे। फूलावट आने के पश्चात आटे का मिश्रण मिलाए व घोल तैयार करे, केक के पैन मैं रिफाइन लगाकर जिससे चिकना घोल हो। चिकना घोल डाले अब ओवन मे 190 डिग्री सेल्सियस पर 1 घंटे तक बेक करे।

ज्वार का मठरी

सामग्री

ज्वार का आटा 200 ग्राम , चावल का आटा 200 ग्राम, घी 60 ग्राम , अजवाइन 3 ग्राम , मंग्रायिल 2 ग्राम, कसूरी मेथी 10ग्राम, चाट मसाला 5 ग्राम, सोडा 3 ग्राम, सोयाबीन तेल, नमक स्वादानुसार।

विधि

ज्वार का आटा, एवं चावल का आटा को मिला ले, अजवाइन, मंग्रायिल, कसूरी मेथी, चाट मसाला, सोडा को मिला कर रखे। पानी व घी मिलाकर सख्त आटा गूंथ लें। गूथे हुए आटे को ढक कर 1/2 घंटे के लिए रख दे। आटे से लोइयां बराबर आकार की बना ले। लोइयां रोटी की तरह बेलकर काट लें। कढ़ाई में तेल गरम करके धीमी आंच पर सुनहरा होने तक तल लें। ठंडा करके डिब्बे में संरक्षित करके रख दे।

ज्वार का इडली

सामग्री

ज्वार का आटा, 200 ग्राम, सूजी 200 ग्राम, दही 150 ग्राम, राई, करी पत्ता,तेल, नमक स्वादानुसार।

विधि

ज्वार का आटा, सूजी , दही व नमक मिला कर मिक्स करे थोड़ा थोड़ा पानी डालकर घोल तैयार करे और उसे 20 मिनट तक ढक कर रख दे। इडली स्टैंड मैं तेल लगाकर उसमें घोल डाल दें और उसे पकने दें। चम्मच से चेक करे सॉफ्ट लगे तो इडली बनकर तैयार हैं। गरम गरम इडली सांभर के साथ परोसे ।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

सब्जियों की फसलों में ग्राफ्टिंग

मोहम्मद वामिक पीएच.डी. शोध छात्र (सब्जी विज्ञान विभाग), सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

ज्ञान श्री कौशल पीएचडी वानिकी शोध छात्र (सिल्वीकल्चर एंड एग्रोफोरेस्ट्री) SHUATS, प्रयागराज (उ.प्र.)

सतवान सिंह पीएच.डी. शोध छात्र (पुष्प विज्ञान एवं भू-दृश्य निर्माण विभाग) सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

परिचय

सब्जी ग्राफ्टिंग एक बागवानी प्रक्रिया है जिसमें दो अलग-अलग पौधे खंड, अक्सर एक रूटस्टॉक और एक साइऑन, दोनों मूल पौधों से वांछनीय लक्षणों के साथ एक पौधे का उत्पादन करने के लिए एक साथ जुड़े होते हैं। सब्जी फसलों में ग्राफ्टिंग का लक्ष्य कई पौधों के प्रकारों के फायदों का लाभ उठाना है, अक्सर उच्च रोग प्रतिरोध, उत्पादन में वृद्धि, फलों की गुणवत्ता में सुधार और कठिन पर्यावरणीय परिस्थितियों के लिए बेहतर अनुकूलन के लिए।

ग्राफ्टिंग की प्रक्रिया:

रूटस्टॉक: ग्राफ्टेड पौधे का सबसे निचला खंड जो जड़ प्रणाली के साथ-साथ अन्य उपयोगी विशेषताओं की आपूर्ति करता है। रूटस्टॉक का चयन बीमारियों के प्रतिरोध, जीवन शक्ति, विशेष मिट्टी के प्रकारों के अनुकूल होने की क्षमता और पर्यावरणीय तनाव के लिए सहिष्णुता के आधार पर किया जाता है।

स्किओन: ग्राफ्टेड पौधे का सबसे ऊपरी हिस्सा, जिसमें तना, पत्तियां और अंततः फल शामिल होते हैं, को साइटियन के रूप में जाना जाता है। इसमें फल की गुणवत्ता, स्वाद, रंग और संभावित उपज सहित आवश्यक गुण हैं।

सब्जी ग्राफ्टिंग के विभिन्न तरीके

क्लेफ्ट ग्राफ्टिंग: बड़े रूटस्टॉक और साइन्स हेतु उपयुक्त, रूटस्टॉक में एक ऊर्ध्वाधर विभाजन किया जाता है, और साइटियन को फांक में डाला जाता है। इस विधि का उपयोग अक्सर तब किया जाता है जब रूटस्टॉक साइऑन की तुलना में बहुत बड़ा होता है।

साइड-लिबास ग्राफ्टिंग: इस विधि में, रूटस्टॉक स्टेम के किनारे एक छोटा, आयताकार कट बनाया जाता है, और साइऑन पर एक मिलान कट बनाया जाता है। फिर दो भागों को रूटस्टॉक पर कट में साइऑन को स्लाइड करके जोड़ा जाता है।

यह तकनीक विशेष रूप से छोटे रूटस्टॉक पर बड़े साइन्स को ग्राफ्टिंग करने के लिए उपयोगी है।

नवोदित (टी-बडिंग और चिप बडिंग): बडिंग में रूटस्टॉक में बने टी-आकार या ढाल के आकार के चीरे में एक कली या साइऑन की एक छोटी चिप रखना शामिल है। टी-बडिंग का उपयोग आमतौर पर बढ़ते मौसम के दौरान किया जाता है, जबकि चिप बडिंग अक्सर देर से सर्दियों या शुरुआती वसंत में किया जाता है।

इनआर्चिंग (ब्रिज ग्राफ्टिंग): इस विधि में, रूटस्टॉक और साइऑन को जमीन में एक साथ उगाया जाता है। एक बार जब वे एक उपयुक्त आकार तक पहुंच जाते हैं, तो वे दोनों तनों के माध्यम से एक विकर्ण कट बनाकर और उन्हें एक साथ बांधकर जुड़ जाते हैं।

व्हिप-एंड-टंग ग्राफ्टिंग: यह छोटे पौधों को ग्राफ्टिंग करने के लिए एक लोकप्रिय विधि है। रूटस्टॉक और साइऑन दोनों को मिलान कोणों पर काटा जाता है और प्रत्येक टुकड़े में एक छोटी "जीभ" काट दी जाती है। फिर दोनों भागों को एक साथ जोड़ा जाता है, जिससे सफल उपचार के लिए कैंबियम परतों के बीच अच्छा संपर्क सुनिश्चित होता है।

ग्राफ्टिंग के फायदे

रोग प्रतिरोध: रूटस्टॉक पर ग्राफ्टिंग जो बीमारी के प्रतिरोधी हैं, मिट्टी द्वारा किए जाने वाले नेमाटोड, संक्रमण और अन्य खतरनाक सूक्ष्मजीवों से साइऑन पौधे को ढालने में मदद कर सकते हैं।

अजैविक तनाव सहिष्णुता: ग्राफ्टेड पौधे सूखे, नमक और उच्च तापमान सहित अजैविक तनावों के लिए अधिक लचीला हो सकते हैं।

फलों के उत्पादन और समग्र उपज में वृद्धि: ग्राफ्टिंग फल उत्पादन और समग्र उपज को बढ़ावा दे सकती है क्योंकि यह पोषक तत्वों के अवशोषण, जड़ विकास और पौधे की शक्ति में सुधार करती है।.

गुणवत्ता में सुधार: ग्राफ्टिंग उन फलों का उत्पादन कर सकती है जो बड़े, बेहतर आकार के, अधिक रंगीन, अधिक स्वादिष्ट होते हैं, और लंबे समय तक शेल्फ जीवन होता है।

विस्तारित बढ़ते मौसम: ऐसी फसलें जिन्हें आमतौर पर एक निश्चित स्थान या मौसम में खेती करना मुश्किल हो सकता है, अब ग्राफ्टिंग के कारण उगाई जा सकती हैं।

जैविक और टिकाऊ कृषि: ग्राफ्टेड पौधे जैविक और टिकाऊ खेती के तरीकों के अनुरूप सिंथेटिक उर्वरकों और कीटनाशकों की आवश्यकता को कम कर सकते हैं। टमाटर, मिर्च, बैंगन, खीरे, तरबूज और स्क्वैश आम सब्जी फसलों में से हैं जिन्हें अक्सर ग्राफ्ट किया जाता है। प्रभावी ग्राफ्ट यूनियनों को स्थापित करने के लिए विभिन्न प्रक्रियाओं, उपकरणों और सामग्रियों का उपयोग किया जा सकता है, और ग्राफ्टिंग प्रक्रियाएं फसल के प्रकार और इच्छित परिणामों के अनुसार भिन्न होती हैं।

ग्राफ्टिंग के नुकसान

जबकि ग्राफ्टिंग पौधों की विशेषताओं को बढ़ाने और चुनौतियों पर काबू पाने के लिए कई लाभ प्रदान करता है, तकनीक से जुड़े कुछ नुकसान भी हैं। यह तय करते समय इन कमियों पर विचार करना महत्वपूर्ण है कि ग्राफ्टिंग किसी विशेष स्थिति के लिए सही दृष्टिकोण है या नहीं। ग्राफ्टिंग के कुछ नुकसान यहां दिए गए हैं:

कौशल और श्रम तीव्रता: ग्राफ्टिंग को उचित तकनीक और सफल संघ सुनिश्चित करने के लिए विशेष ज्ञान और कौशल की आवश्यकता होती है। यह श्रम-गहन हो सकता है, खासकर जब बड़ी संख्या में पौधों को ग्राफ्टिंग किया जाता है।

लागत: ग्राफ्टिंग में अतिरिक्त लागत शामिल हो सकती है, जिसमें उपकरण, सामग्री (जैसे रूटस्टॉक बीज या पौधे), और संभावित रूप से विशेष रूटस्टॉक शामिल हैं। ये लागत छोटे पैमाने पर या संसाधन-सीमित उत्पादकों के लिए एक बाधा हो सकती है।

जटिलता: ग्राफ्टिंग एक जटिल प्रक्रिया हो सकती है जिसके लिए विस्तार, परिशुद्धता और सावधानीपूर्वक निगरानी पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है। शुरुआती लोगों को लगातार सफलता प्राप्त करने से पहले सीखने की अवस्था का अनुभव हो सकता है।

ग्राफ्ट विफलता: ग्राफ्टिंग के परिणामस्वरूप हमेशा सफल संघ नहीं होते हैं। खराब संरेखण, अपर्याप्त उपचार की स्थिति, या रूटस्टॉक और साइऑन के बीच असंगति जैसे कारक ग्राफ्ट विफलता का कारण बन सकते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

औषधीय और सुगंधित पौधों का महत्वपूर्ण उपयोग व लाभ

नरेन्द्र कुमार (शोध छात्र) उद्यान विभाग सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इलाहाबाद) (उ.प्र.)

प्रो. (डॉ.) वी.एम. प्रसाद प्राध्यापक उद्यान विभाग सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इलाहाबाद)

भारत वर्ष में औषधीय एवं सुगंधित पौधों का उपयोग सभी लोग करते हैं इसके उपयोग करने से मानव के शरीर में रोगो से छुटकारा मिलता है और मनुष्य के शरीर में फुर्ती भी आ जाती है इसीलिये औषधीय पौधों का उपयोग हम लोग सुगंधित पौधों के रूप में भी करते हैं।

औषधीय पौधे

औषधीय पौधों का उपयोग हम लोग जड़ी बूटी के रूप में करते हैं औषधीय पौधों में उपचारात्मक गुण अधिक मात्रा में पाए जाते हैं इसलिए औषधीयों पौधों का उपयोग मानव व पशुओं दोनों के लिए महत्वपूर्ण रहता है यह मानव व पशुओं के शरीफ में कोई हानि भी नहीं पहुंचता है इसलिए इसका सेवन कर अपने शरीर को स्वस्थ बना सकते हैं अधिकांश औषधीय पौधें निम्न कुल के होते हैं जिसमें प्रमुख हैं। जैसेः-फैबेसी, यूफोरबिएसी, एस्टेरेसी, रूबिएसी, कुकुरबिटएसी, कन्वोल्वुलेसी, मालवेसी और सोलेनेसी इत्यादि। और जिनमें महत्वपूर्ण पौधें हैं- पीपल, बरगद, अश्रवगंधा, सदाबहार, सहिजन/मुनंगा, नीम, अडूसा, हल्दी, ब्राही, तुलसी, करीपत्ता, दूधिया घास, मीठा घास, एलोवेरा, दूब घास, आंवला, अदरक, पिपली, इमली, अर्जुन, हर्रे, पलाष, षतावर, चिरचिटा, बबूल आदि।

सुगंधित पौधे

सुगंधित पौधों का उपयोग हम लोग सुगंध/अरोमा के रूप में करते हैं सुगंधित पौधों में उपचारात्मक गुण अधिक मात्रा में पाए जाते हैं इसलिए सुगंधित पौधों का उपयोग मानव व पषुओं दोनों के लिए महत्वपूर्ण रहता है यह मानव व पशुओं के शरीफ में कोई हानि भी नहीं पहुंचता है इसलिए इसका सेवन कर अपने शरीर को स्वस्थ बना सकते हैं अधिकांश सुगंधित पौधें निम्न कुल के होते हैं जिसमें प्रमुख हैं। जैसेः मायटेरेसी, एस्टेरेसी, रूटसी, लॉरासी, जिंजीबरेसी, पोएसी, अरैकेसी, एमारिलिसैसी इत्यादि। और जिनमें महत्वपूर्ण पौधें हैं- दालचीनी, जीरा, मिर्ची, मेथी, धनिया, अजवायन, सौंफ आदि।

औषधीय पौधों का महत्व

मानव सभ्यता की शुरूआत से ही औषधीय पौधों का उपयोग दवाइयों के रूप करते आ रहा है। अतः 20 वी शताब्दी के दौरान एलोपैथी के क्षेत्र में जबरदस्त विकास के बावजूद भी पौधे अभी भी आधुनिक और साथ ही दुनिया भर में चिकित्सा की पारंपरिक प्रणाली

में दवाओं के प्रमुख स्त्रोतो में से एक है। अतः फार्मास्युटिकल औषधियों का लगभग एक तिहाई पौधों से मिलने वाले अल्कॉइडस, पर ही निर्भर करता है और जिसमे कवक, बैक्टीरिया भी शामिल होते हैं भारत में चिकित्सा की स्वदेशी प्रणाली की प्रथा मुख्य रूप से औषधीय पौधों के ऊपर आधारित है। सन (1000 ई.पू-100 ई.पू) में रोगों के उपचार के लिए 2000 पौधों के उपयोग का रिकॉर्ड है परन्तु प्राचीन चिकित्सा पुरी तरह से अनुभवबाद पर आधारित नहीं थीं और यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि कुछ औषधीय पौधे जो प्राचीन काल में उपयोग किए जाते थे वे पौधे आज भी आधुनिक चिकित्सा में अपना स्थान शीर्ष पर रखते हैं इसका उदाहरण है कि चीन एफेड्रा मे 4000 साल पहले से इस्तेमाल किया गया एक पौधा आज भी एक महत्वपूर्ण दवा एफेड्रिन के स्त्रोत के रूप में आधुनिक फॉर्मकोपिया में वर्णित है सर्पगंधा नामक पौधों जो भारत में पागलपन के लिए उपाय के लिए विख्यात था आज भी मानसिक बीमारियों के इलाज के लिए अस्तित्व में है। अतः इसके अलावा आधुनिक चिकित्सा की एक अन्य महत्वपूर्ण मलेरिया-रोधी की दवा कुनैन, सिनकोना पेड़ से प्राप्त की गई थी।

औषधीय पौधों का धार्मिक महत्व

भारत एक धार्मिक देश है इस देश में हिंदू, मुस्लिम, सिख, एवं इसाई समुदाय के लोग रहते हैं इसलिए इसलिए हिन्दू समुदाय के लोग इन पौधों का उपयोग पुजा और संस्कारो में करते हैं हिन्दू समुदाय में महत्वपूर्ण पौधे हैं जो पूजा अर्चना में उपयोग किए जाते हैं वह इस प्रकार हैं तुलसी, बेल, बरगद, पीपल, हल्दी आदि ।

मसालों में उपयोग होने वाले महत्वपूर्ण औषधीय पौधे

विश्वभर में कुछ औषधीय पौधों का उपयोग मसालों के रूप में किया जाता है देखा जाये तो भारत में मसालों का उपयोग बहुत ज्यादा किया जाता है विशेष कार्यक्रम में बनने वाले भोजन को स्वादिष्ट बनाने के लिए मसालों का उपयोग किया जाता है तो मासले निम्न प्रकार है। जैसेः- हल्दी, अदरक, दालचीनी, तेजपत्ता, जीरा, मिर्ची, मैथी, धनिया एवं करीपत्ता इत्यादि।

औषधीय पौधों का कॉस्मेटिक उत्पाद बनाने में महत्वपूर्ण उपयोग

महत्वपूर्ण औषधीय पौधे हैं जो कॉस्मेटिक उत्पाद बनाने में उपयोग किए जाते हैं जैसेः- एलोवेरा का उपयोग से तो अनेक उत्पाद तैयार किए जाते हैं जिनमें कुछ महत्वपूर्ण हैं एलोवेरा फेशवॉस, एलोवेरा साबून, एलोवेरा शैम्पू, एवं क्रीम इत्यादि उत्पाद एलोवेरा से बनाये जाते हैं इसके अलावा नीम का उपयोग साबुन, फेसबॉस, एवं बालों के तेल बनाने में किया जाता है देखा जाए तो कॉस्मेटिक उत्पाद बनाने में कुछ सुगंधित पौधों का उपयोग भी किया जाता हैं सुगंधित पौधों का उपयोग सुगंध के लिए किया जाता है और इसका इस्तेमाल बॉडी स्प्रे, एवं इत्र बनाने में किया जाता है इस प्रकार औषधीय पौधों का कॉस्मेटिक उत्पाद बनाने में महात्वपूर्ण है

उद्योग धंधो में उपयोग होने वाले महात्वपूर्ण औषधीय पौधे

उद्योग धंधों उपयोग होने वाले महात्वपूर्ण औषधीय पौधे हैं जो निम्न प्रकार है- एलोवेरा, हल्दी, नीम का तेल इत्यादि कई ऐसे उद्योग है जो फार्मा और कॉस्मेटिक उत्पादो का निर्माण किया जाता है क्योकि इन औषधीय पौधों में एल्कलॉडस के संश्लेषण तथा फार्मास्युटिकल्स के कारखाने और सौंदर्य प्रसाधन बनाने वाले कारखाने कच्चे माल के लिए इन्ही पौधों पर निर्भर होना पड़ता है।

औषधीय पौधों से बने उत्पादों द्वारा मिलने वाला रोजगार

औषधीय और सुगंधित पौधों की खेती से बहुत से लोगों को रोजगार मिलता है इस की खेती करने में वर्षभर श्रमिको की अवश्यकता पड़ती रहती है क्योकि इससे निम्न उत्पाद बनाये जाते हैं जैसेः- सुगंधित पौधों से बहुत से वाष्पशील तेलो को अलग करने तथा इसके उत्पादों के विनिमय में अच्छे रोजगार के अवसर होते है।

आय का महात्वपूर्ण स्त्रोत

किसान भाई औषधीय पौधों एवं सुगंधित पौधों की खेती कर अधिक मुनफा कमा सकते है देखा जाए तो किसान भाई कम जमीन में खेती कर अधिक से अधिक लाभ उठा सकते है। क्योंकि औषधीय पौधों एवं सुगंधित पौधों की कीमत हमेशा अधिक रहती है औषधीय पौधों एवं सुगंधित पौधों की मांग दिन पे दिन बढ़ती जा रही है। इसलिए किसान भाई औषधीय पौधों एवं सुगंधित पौधों की खेती करना ज्यादा प्रसंद कर रहे हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

भिण्डी की वैज्ञानिक खेती

✍ **कपिल गौतम** (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

✍ **श्रीगोविन्द** (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

✍ **रवि दीक्षित** (शोध छात्र) बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर, (उ.प्र.)

✍ **केशव बाबू** (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

हमारे देश में किसान कई तरह की सब्जियों की खेती करते हैं, जिनमें भिण्डी काफी लोकप्रिय है. यह सब्जियों की सूची में सबसे ऊपर आती है। इसे अंग्रेजी में लेडी फिंगर व ओकरा के नाम से भी जाना जाता है। गर्मी के मौसम में बाजार में इसकी कीमत काफी ज्यादा बढ़ जाती है, क्योंकि ज्यादातर लोग तरह-तरह से भिंडी की सब्जी को बनाते हैं, जिनकी खेती करके किसान भिंडी की फसल से ज्यादा से ज्यादा उपज प्राप्त कर सकते हैं। सब्जियों में भिंडी का मुख्या स्थान है। भिंडी एसी सब्जी है जिसका इस्तेमाल कई तरह की सब्जियों के साथ कर सकते है भिंडी में बहुत तरह के पोषक तत्व मौजूद है जैसे कैल्शियम, फास्फोरस, विटामिन ए, बी और विटामिन सी प्रचुर मात्र में उपलब्ध है जो मनुष्य के स्वस्थ्य के लिए अति आवश्यक है। भिंडी का सेवन करने से बहुत सी बीमारी दूर हो जाती है, कुल मिलकर भिंडी का उपयोग से हमें बहुत लाभ है भिंडी को सभी तरह की भूमि में उगाया जा सकता है जिसमें जल निकासी का स्रोत हो और इस भिंडी की खेती को ग्रीष्म तथा खरीफ, दोनों ही ऋतुओं में कर सकते है इसके लिए भूमि का Ph. मान 7.0 से 7.8 होना उपयुक्त माना जाता है। भिंडी की खेती प्रायः सभी प्रकार की मिटटी में कर सकते है।

भिंडी की खेती करने के लिए उपयुक्त जलवायु: भिंडी की खेती के लिए उष्ण और नम जलवायु की आवश्यकता पड़ती है। इसके बीजों के जमाव के लिए करीब 20 से 25 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान चाहिए होता है. ध्यान दें कि गर्मी में 42 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा तापमान इसकी फसल को काफी हद तक नुकसान पहुंचाता है, क्योंकि ऐसे में इसके फूल गिरने लगते हैं. जिस वजह से इसका सीधा असर उपज पर पड़ता है।

भिंडी की खेती करने हेतु उपयुक्त भूमि : भिंडी की खेती किसान सभी प्रकार की मिट्टी में कर सकते हैं, लेकिन इसके लिए हल्की दोमट मिट्टी काफी अच्छी मानी जाती है, क्योंकि इस मिट्टी में जल निकास काफी अच्छी तरह हो जाता है। इसके अलावा इसकी खेती के लिए भूमि में कार्बनिक तत्व का होना बेहद ज़रूरी है, इसके साथ ही इसका पी.एच.मान लगभग 6 से 6.8 तक होना चाहिए। आपको बता दें कि किसान खेती के पहले एक बार मिट्टी की जांच जरुर करवा लें. ताकि बाद में उन्हें खेती करते समय किसी प्रकार की परेशानी न हो और वे अच्छे से खेती कर सकें।

भिंडी की खेती की तैयारी: सर्वप्रथम हमें गोबर की खाद डालकर 2-3 बार जुताई कर लेना चाहिए जिससे की खरपतवार नस्ट हो जायेंगे यवम मिट्टी पोली और बीज लगाने योग्य हो जाएँगी, इसके साथ ही खेत को भुर-भुरा करके उसपर पाटा चला लें ताकि खेत अच्छी तरह से समतल हो जाए। भिंडी को क्यारी बनाकर या खेत को बराबर करके भी लगा सकते है। भिंडी की फसल 120 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।

भिंडी की खेती करने हेतु उन्नत किस्में: आजकल कृषि वैज्ञानिकों द्वारा भिंडी की कई प्रकार की उन्नत किस्में विकसित हो चुकी हैं। इन किस्मों की खेती कर किसान फसल की उपज को काफी हद तक बढ़ा सकते हैं, किसानों को भिंडी की किस्मों का चयन अपने क्षेत्र की जलवायु और मिट्टी के अनुसार ही करना चाहिए।

पूसा द्वारा विकसित भिंडी की प्रमुख किस्में: वर्षा उपहार, अर्का अभय, परभनी क्रांति, पूसा मखमली, पूसा सावनी, वी.आर.ओ.-6, हिसार उन्नत, पूसा ए-4।

बीज की मात्रा: यदि हम ग्रीष्मकालीन बुवाई करते है, तो

भिंडी के बीज की मात्रा 5-8 किलो ग्राम प्रति एकड़ और अगर खरीब के समय बुवाई करते है तो बीज की मात्रा 4-5 किलो ग्राम प्रति एकड़ लगेगी।

भिंडी की खेती करने के लिए बीज और बीजोपचार: भिंडी की फसल बुवाई करने के लिए 1 हेक्टेयर खेत में करीब 3 कि.ग्रा से 10 कि.ग्रा बीज की ज़रूरत पड़ती है। इसलिए ध्यान दें कि इसके बीजों को बोने से पहले करीब पानी में 24 घंटे तक डुबाकर रखें. इस तरह बीजों का अंकुरण अच्छा होगा. इसके अलावा इसके बीजों को थायरम या कार्बेन्डाजिम से भी उपचारित किया जा सकता है।

भिंडी के लिए उपयुक्त समय: ग्रीष्म में फरवरी से मार्च महीने में व खरीब के सीजन के लिए जून से जुलाई यदि हमें भिंडी की अंग्रेजी खेती करना हो तो हम 15 जनुअरी के बाद कर सकत है ध्यान रहे रात का तापमान 12 डीग्री सेल्सिअस से कम ना हो यदि कम है तो भिंडी के बीज की बुवाई नहीं करना चाहिए ।

भिंडी की खेती करने के लिए बुवाई: भिडी की बुवाई किसान भाइयों को कतारों में करनी चाहिए । इसके लिए ध्यान दें कि खेत में कतारों की दूरी करीब 25 से 30 से.मी तक होनी चाहिए. इसके साथ ही पौधों की दूरी भी करीब 15 से 20 से.मी तक की रखनी चाहिए।

भिंडी की खेती करने के लिए सिंचाई: गर्मियों के मौसम में भिंडी की फसल सिंचाई लगभग 5 से 7 दिनों के अंतराल पर करते रहना चाहिए। अगर खेत में नमी न हो तो फसल की बुवाई से पहले भी आप एक बार सिचाई कर सकते हैं।

भिंडी की खेती करने के लिए निराई-गुड़ाई : भिंडी की खेती करते समय किसान भाइयों को अपने खेतों को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए, इसलिए इसकी फसल की बुवाई करने के करीब 15 से 20 दिनों के बाद पहली निराई-गुड़ाई कर देनी चाहिए। आपको बता दें कि भिंडी के खेत में खरपतवार नियंत्रण के लिए किसान रासायनिक उत्पादों का भी इस्तेमाल कर सकते हैं।

भिंडी में खाद का प्रबंधन : जब खेत की तैयारी हो जाये तब बुवाई से पहले या साथ में NPK का उपयोग करना चाहिए एवं बुवाई के 20-22 दिन बाद DAP 25 से 30 किलो ग्राम और उरिया 10 से 15 किलो ग्राम देना चाहिए । दूसरी खाद 40 से 45 दिन बाद इसी क्रम में खाद डाल दे उसके बाद जब हमारी फसल 55 से 60 दिन की हो जाए तब हमें सिर्फ DAP ही देना चाहिए। दो महीने बाद फसल को देखे यदि पौधे की उपरी पत्ती पिली हो रही हो तब हमें नाइट्रोजन देना चाहिए यदि पत्तियों की धार ऊपर की तरफ आ रही हो तब फास्फोरस देना चाहिए और पत्तियों की धार पर पत्तिया सूखने लगे तब हमें पोट्टेसियम का उपयोग करना चाहिए यह लक्षण नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम की कमी को दर्शाता है ध्यान रहे यह सभी खाद नियमित मात्रा में डालना चाहिए।

भिंडी की खेती करने के लिए कीट एवं रोग नियंत्रण

येलो मोजेक : भिंडी की फसल में अधिकतर येलो मोजेक यानी पीला रोग होने का खतरा काफी हद तक बना रहता है। इस रोग में फल, पत्तियां और पौधा पीला पड़ने लगता है। अगर इस रोग से फसल को समय रहते बचाना है, तो उसके लिए आवश्कयतानुसार मेलाथियान को पानी में घोलकर खेतों में समय -समय पर छिड़कते रहें. इससे पीला रोग का खतरा काफी कम हो जाता है। भिंडी की फसल में विभिन्न कीट देखने को मिलते है जैसे-फल्ली छेदक ,फल छेदक, रस चूसने वाली कीट, लाल मकड़ी वही प्रमुख रूप से मंजिक वायरस, जड़ गलन शामिल है। कीट के ज्यादा प्रभाव होने से कार्बोरिल 3 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिडकाव करें फुल आने के बाद कार्बोरिल 50 Wp 2 ग्राम प्रति लीटर पानी या मोनोक्रोटोफास 2 ml प्रति लीटर पानी का छिडकाव करना चाहिए।

प्ररोह एवं फल छेदक: रोग यह छोटे कीट फसल के फलों में छेद करके उनमें घुस जाते हैं. फिर धीरे -धीरे पूरे फल को खा लेता हैं। इससे बचने के लिए आप जिस भी फल, फूल और कोपलों पर ये कीट लगा हुआ है. उसको इकट्ठा करके पूरी तरह नष्ट कर दें. ताकि उसकी वजह से बाकि फसल न ख़राब हो। अगर यह कीट ज्यादा फसल पर फ़ैल रहे हैं तो किसान भाई आवश्यकतानुसार कार्बोरिल को पानी में घोलकर फसल पर छिड़क दें. या फिर आवश्यकतानुसार नीम ऑयल और लहसुन को पानी में घोलकर छिड़कें।

रस चूसक कीट: रोग इससे बचने के लिए आप भिंडी की फसल में मोयला, हरा तेला, सफेद मक्खी आदि कीट का प्रकोप हो सकता है, जो फसल की फूल-पत्तियों का पूरा रस चूस लेते हैं. जिस वजह से पौधों का विकास रुक जाता है । इसके साथ ही पत्तियां मुरझाकर पीली पड़ने लगती हैं और कमजोर हो कर गिर जाती हैं. इसके लिए आप पौधों के बढ़ते समय नीम के तेल को पानी में अच्छे से मिलाकर छिड़क दें। यह प्रक्रिया हर 10 दिन के बाद करे. इसके अलावा आवश्यकतानुसार डायमेथोएट, मोनोक्रोटोफोस, ऐसीटामीप्रीड, एसीफेट 2 में से किसी एक को पानी में अच्छे से घोलकर छिड़क दें. इस प्रक्रिया को हर 10 दिन के बाद 5 से 6 बार करें।

भिण्डी का फफूंद : भिंडी को फफूंदनाशक से बचाने हेतु एमिडाक क्लोफ्रिड 70% Wg, 12 से 15 ग्राम प्रति एकड़ छिडकाव करना चाहिए। इसके अलावा क्लोरेन्ट्रोनिलिप्रोल 18.5% का 5 ml प्रति 15 लीटर पानी के साथ या क्यूनालफास 25 इसी 2 ml प्रति लीटर पानी में मिलकर स्प्रे करना चाहिए। हमें विशेष ध्यान रखना चाहिए की प्रत्येक बार अलग अलग दवा का उपयोग करना चाहिए। जड़ गलन रोग से भिंडी के पौधे को बचाने हेतु इस रोग से जड़े सड़ने लगती है और पौधा पीला होने लगता है। बाविस्टिन 2 ग्रा. प्रति किलो ग्राम बीज की दर से बीज का उपचार करना चाहिए। किसी भी कीटनाशक का स्प्रे करने के 7-8 दिन बाद ही भिंडी की तुडाई करना चाहिए।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

धान फसल में लगने वाले प्रमुख रोग और उनका प्रबंधन

कामरान आजम (शोध छात्र) शस्य विज्ञान, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय अयोध्या (उ.प्र.)

डॉ. मोहम्मद सलमान असिस्टेंट प्रोफेसर, सीएसएसईए, ईटावा (उ.प्र.)

डॉ. सोहराब तकनीकी सहायक, कृषि विभाग (उ.प्र.)

विकास सिंह (शोध छात्र) शस्य विज्ञान, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ.प्र.)

धान एक प्रमुख खाद्यान फसल है, जो पूरे विश्व की आधी से ज्यादा आबादी को भोजन प्रदान करती है। चावल के उत्पादन में सर्वप्रथम चीन के बाद भारत दूसरे नंबर पर आता है। भारत में धान की खेती लगभग 450 लाख हैक्टर क्षेत्रफल में की जाती है छोटी होती जोत एवं कृषि श्रमिकों की अनुपलब्धता व जैविक, अजैविक कारकों के कारण धान की उत्पादकता में लगातार कमी आ रही है। इन सभी समस्याओं को ध्यान में रखते हुये आज हम इस लेख में धान की फसल में लगने वाले प्रमुख रोग तथा पहचान और उनके प्रबंधन के बारे में बात करेंगे जिससे कि हमारे किसान साथी अपनी धान की फसल में उस रोग की समय से पहचान करके फसल का बचाव कर सकें।

धान का झोंका रोग: यह धान की फसल का मुख्य रोग है जो एक पाइरीकुलेरिया ओराइजी नामक फफूंद से फैलता है। इस रोग के लक्षण पौधे के सभी वायवीय भागों पर दिखाई देते हैं। परंतु सामान्य रूप से पत्तियां और पुष्पगुच्छ की ग्रीवा इस रोग से अधिक प्रभावित होती हैं। प्रारंभिक लक्षण पौधे की निचली पत्तियों पर धब्बे दिखाई देते हैं जब ये धब्बे बड़े हो जाते हैं तो ये धब्बे नाव अथवा आंख की जैसी आकृति के जैसे हो जाते हैं। इन धब्बों के किनारे भूरे रंग के तथा मध्य वाला भाग राख जैसे रंग का होता है। बाद में धब्बे आपस में मिलकर पौधे के सभी हरे भागों को ढक लेते हैं जिससे फसल जली हुई प्रतीत होती है।

रोग का प्रबंधन: 1.रोगरोधी क़िस्मों का चयन करना चाहिए। 2.बीज का चयन रोगरहित फसल से करना चाहिए। 3. बीज को सदैव ट्राइकोडरमा से उपचारित करके ही बुवाई करना चाहिए। 4.फसल की कटाई के बाद खेत में रोगी पौध अवशेषों एवं ठूठों इत्यादि को एकत्र करके नष्ट कर देना चाहिए। 5.फसल में रोग नियंत्रण हेतु बायोवेल का जैविक कवकनाशी बायो ट्रूरूपर की 500 मिली. मात्रा का प्रति एकड़ में 120 से 150 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

जीवाणु झुलसा या झुलसा रोग: यह रोग जेंथोमोनास ओराइजी नामक जीवाणु से फैलता है। इसे 1908 में जापान में सबसे पहले देखा गया था। यह रोग पौधों की छोटी अवस्था से लेकर परिपक्व अवस्था तक यह बीमारी कभी भी लग सकती है। इस रोग में पत्तिया नोंक अथवा किनारों से शुरू होकर मध्य भाग तक सूखने लगती हैं। सूखे हुए किनारे अनियमित एवं टेढ़े मेढ़े या झुलसे हुये दिखाई देते हैं। इन सूखे हुये पीले पत्तों के साथ साथ राख के रंग के चकत्ते भी दिखाई देते हैं। संक्रामण की उग्र अवस्था में पत्ती सूख जाती है। बालियों में दाने नहीं पड़ते हैं।

रोग का प्रबंधन: 1.शुद्ध एवं स्वस्थ बीज का ही प्रयोग करें। 2.बीजों को बुआई करने से 2.5 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन और 25 ग्राम कापर आक्सी क्लोराइड के घोल में 12 घंटे तक डुबोयें। 3. इस बीमारी को लगने की अवस्था में नत्रजन का प्रयोग कम कर दें। 4.जिस खेत में बीमारी लगी हो उस खेत का पानी किसी दूसरे खेत में न जाने दें। साथ ही उस खेत में सिंचाई न करें। 5.बीमारी को और अधिक फैलने से रोकने के लिए खेत में समुचित जल निकास की व्यवस्था की जानी चाहिए।

धान का भूरा धब्बा रोग : यह एक बीज जनित रोग है जो हेलिमेन्थो स्पोरियम ओराइजी नामक फफूंद द्वारा फैलता है। इस रोग की वजह से 1943 में बंगाल में अकाल पड़ गया था। इस रोग में पत्तियों पर गहरे कत्थई रंग के गोल अथवा अण्डाकार धब्बे बन जाते हैं। इन धब्बों के चारों तरफ पीला घेरा बन जाता है तथा मध्य भाग पीलापन लिये हुए कत्थई रंग का होता है तथा पत्तियां झुलस जाती हैं। दानों पर भी भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। इस रोग का आक्रमण पौध अवस्था से लेकर दाने बनने की अवस्था तक होता है।

शीत झुलसा या आवरण झुलसा रोग : यह एक फफूंद जनित रोग है, जिसका रोग कारक राइजोक्टोनिया सोलेनाई है। इस रोग का संक्रमण नर्सरी से ही दिखना आरंभ हो जाता है, जिससे पौधे नीचे से सड़ने लगते हैं। मुख्य खेत में ये लक्षण कल्ले बनने की अंतिम अवस्था में प्रकट होते हैं। लीफ शीथ पर जल सतह के ऊपर से धब्बे बनने शुरू होते हैं। इन धब्बों की आकृति अनियमित तथा किनारा गहरा भूरा व बीच का भाग हल्के रंग का होता है। पत्तियों पर घेरेदार धब्बे बनते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में कई छोटे-छोटे धब्बे मिलकर बड़ा धब्बा बनाते हैं। इसके कारण शीथ, तना, ध्वजा पत्ती पूर्ण रूप से ग्रसित हो जाती है और पौधे मर जाते हैं। खेतों में यह रोग अगस्त एवं सितंबर में अधिक तीव्र दिखता है। संक्रमित पौधों में बाली कम निकलती है तथा दाने भी नहीं बनते हैं।

रोग प्रबंधन: 1.धान की रोगरोधी प्रजातियों का चयन करें। 2.शुद्ध एवं स्वस्थ बीजों का ही प्रयोग करें। 3.बीजों को फफूंद नाशक से उपचारित करके बुआई करें। 4.मुख्य खेत एवं मेड़ों को खरपतवार से मुक्त रखें। 5.संतुलित उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए। 6.नाइटोजन उर्वरकों को दो या तीन बार में देना चाहिए। 7.खेतों से फसल अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए। 8.फसल में रोग नियंत्रण हेतु बायोवेल का जैविक कवकनाशी बायो ट्रूरूपर की 500 मिली. मात्रा का प्रति एकड़ में 120 से 150 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

धान का खैरा रोग : यह बीमारी जस्ता की कमी के कारण होती है। इसके लगने पर पौधे की निचली पत्तियां पीली पड़ना शुरू हो जाती हैं और बाद में पत्तियों पर कत्थई रंग के अनियमित धब्बे उभरने लगते हैं। रोग की उग्र अवस्था में पौधे की पत्तियां पीली पड़कर सूखने लगती हैं। कल्ले कम निकलते हैं और पौधों की बढ़वार रुक जाती है।

रोग प्रबंधन: 1.धान की फसल में यह बीमारी न लगे उसके लिए 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ की दर से रोपाई से पहले खेत की तैयारी के समय डालना चाहिए। 2.बीमारी लगने के बाद इसकी रोकथाम के लिए 2 किलोग्राम जिंक सल्फेट और 1 किलोग्राम चूना 250 से 300 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ में छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 10 दिन के बाद फिर से स्प्रे करें।

आभासी कंड रोग या ध्वज कंड रोग या हल्दी रोग: यह रोग क्लेविसेप्स ओराइजी नामक फफूंद से फैलता है। इस रोग के लक्षण पौधों की बालियों में केवल दानों पर ही दिखाई देते हैं। रोगजनक के विकसित हो जाने के कारण बाली में कहीं कहीं बिखरे हुए दाने बड़े मखमल के समान चिकने हरे समूह में बदल जाते हैं, जो अनियमित रूप में गोल अंडाकार होते हैं। इनका रंग बाहरी ओर नारंगी पीला और मध्य में लगभग सफेद होता है, इस रोग से बाली में कुछ ही दाने प्रभावित होते हैं।

समन्वित रोग प्रबंधन: 1. सदैव बीज उपचार करके ही बुवाई करनी चाहिए 2. खेत को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए। 3. खेत की तैयारी के वक्त खेत की सफाई कर उसकी गहरी जुताई करके तेज़ धूप लगने के लिए खुला छोड़ देंना चाहिए। 4. फसल में रोग नियंत्रण हेतु बायोवेल का जैविक कवकनाशी बायो ट्रूरूपर की 500 मिली. मात्रा का प्रति एकड़ में 120 से 150 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

धान में लगने वाले प्रमुख कीट एवं उनके नियंत्रण के उपाय क्या क्या है इसकी पूरी जानकारी यहाँ मिलेगा। किसान भाइयों, धान की खेती को नुकसान पहुंचाने वाले में से कीटों की भूमिका बहुत अधिक है। अगर समय रहते इनका नियंत्रण नहीं किया जाय तब पूरी फसल ही बर्बाद हो सकती है। ज्यादातर किसान धान की फसल में लगने वाले कीट के बारे में नहीं जानते। इससे इसके रोकथाम हेतु जरुरी उपाय भी नहीं कर पाते। जब कीट फसल को नुकसान पहुंचाते है तब इनके नियंत्रण कैसे करते है, इसकी पर्याप्त जानकारी नहीं होने से काफी नुकसान हो जाता है।

दीमक: यह एक सामाजिक कीट है तथा कालोनी बनाकर रहते हैं। यह कालोनी में लगभग 90 प्रतिशत श्रमिक, 2-3 प्रतिशत सैनिक, एक रानी व एक राजा होते हैं। श्रमिक पीलापन लिये हुए सफेद रंग के पंखहीन होते है जो उग रहे बीज, पौधों की जड़ों को खाकर क्षति पहुँचाते हैं।

जड़ की सूड़ी: इस कीट की गिडार उबले हुए चावल के समान सफेद रंग की होती है। सूड़ियाँ जड़ के मध्य में रहकर हानि पहुँचाती है जिसके फलस्वरूप पौधे पीले पड़ जाते हैं।

नई कीट (गाल मिज): इस कीट की सूड़ी गोभ के अन्दर मुख्य तने को प्रभावित कर प्याज के तने के आकार की रचना बना देती है, जिसे सिल्वर शूट या ओनियन शूट कहते हैं। ऐसे ग्रसित पौधों में बाली नहीं बनती है।

पत्ती लपेटक कीट: इस कीट की सूड़ियाँ प्रारम्भ में पीले रंग की तथा बाद में हरे रंग की हो जाती हैं, जो पत्तियों को लम्बाई में मोड़कर अन्दर से उसके हरे भाग को खुरच कर खाती हैं।

हिस्पा: इस कीट के गिडार पत्तियों में सुरंग बनाकर हरे भाग को खाते हैं, जिससे पत्तियों पर फफोले जैसी आकृति बन जाती है।प्रौढ़ कीट पत्तियों के हरे भाग को खुरच कर खाते हैं।

बंका कीट: इस कीट की सूड़ियाँ पत्तियों को अपने शरीर के बराबर काटकर खोल बना लेती हैं तथा उसी के अन्दर रहकर दूसरे पत्तियों से चिपककर उसके हरे भाग को खुरचकर खाती हैं।

तना बेधक: इस कीट की मादा पत्तियों पर समूह में अंडा देती है। अंडों से सूड़ियां निकलकर तनों में घुसकर मुख्य सूट को क्षति पहुँचाती हैं, जिससे बढ़वार की स्थिति में मृतगोभ तथा बालियां आने पर सफेद बाली दिखाई देती हैं।

हरा फुदका: इस कीट के प्रौढ़ हरे रंग के होते हैं तथा इनके ऊपरी पंखों के दोनों किनारों पर काले बिन्दु पाये जाते हैं। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही पत्तियों से रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं, जिससे प्रसित पत्तियां पहले पीली व बाद में कत्थई रंग की होकर नोक से नीचे की तरफ सूखने लगती हैं।

भूरा फुदका: इस कीट के प्रौढ भूरे रंग के पंखयुक्त तथा शिशु पंखहीन भूरे रंग के होते हैं। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनो ही पत्तियों एवं किल्लों के मध्य रस चूस कर छति पहुँचाते हैं, जिससे प्रकोप के प्रारम्भ में गोलाई में पौधे काले होकर सूखने लगते हैं, जिसे 'हापर बर्न' भी कहते हैं।

सफेद पीठ वाला फुदका: इस कीट के प्रौढ़ कालापन लिये हुए भूरे रंग के तथा पीले शरीर वाले होते हैं। इनके पंखों के जोड़कर सफेद पट्टी होती है। शिशु सफेद रंग के पंखहीन होते हैं तथा इनके उदर पर सफेद एवं काले धब्बे पाये जाते हैं। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनो ही पत्तियों एवं किल्लों के मध्य रस चूसते हैं, जिससे पौधे पीले पड़कर सूख जाते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

बासमती धान का बकानी रोग धान की एक उभरती समस्या

उमारा रहमानी शोध छात्रा (पादप रोग विज्ञान विभाग) सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मोदीपुरम मेरठ (उ.प्र.)

विशेष यादव शोध छात्र (कीट विज्ञान विभाग) चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार, (हरियाणा)

मोहम्मद सलमान शोध छात्र (कीट विज्ञान विभाग) सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मोदीपुरम मेरठ (उ.प्र.)

धान विश्वभर में उगाई जाने वाली एक मुख्य खाद्यान फसल है। संसार के लगभग 1641 मिलियन हैक्टेयर पर इसका उत्पादन किया जाता है। अकेले एशिया महाद्वीप में दुनिया का लगभग 90 प्रतिशत धान उगाया जाता है। भारत की विश्व के कुल धान उत्पादन में 22.5 प्रतिशत हिस्सेदारी हैं। भारत में धान का उत्पादन करने वाले प्रमुख राज्य पश्चिम बंगाल, उ.प्र., पंजाब, आन्ध्रप्रदेश, हरियाणा है।धान का सेवन गेहूँ के बाद दूसरे नम्बर पर किया जाता है।धान की बासमती प्रजातियों का प्रयोग दुनियाभर में खाने के लिए किया जाता है। भारत, बासमती धान उगाने में प्रथम स्थान रखता है।भारत में उगाया गया बासमती धान मुख्यतः सऊदी अरब, ईरान, स्पेन, फांस, एशिया, यू0एस0ए0, जर्मनी, ऑस्ट्रेलिया व कुवैत आदि देशों में निर्यात किया जाता है। धान की निर्यात किये जाने वाली किस्मों में बासमती धान का प्रमुख स्थान है। भारत से बासमती धान के कुल उत्पादन का लगभग 2/3 भाग निर्यात किया जाता है। बासमती धान की देश विदेश में लगातार बढ़ती मांग को देखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि धान के उत्पादन को बढाया जाये। ऐसे में जरुरी है कि धान में लग ने वाले विभिन्न रोग व कीटों का नियन्त्रण जो कि लगभग 20% तक उत्पादन को कमकर देते हैं। धान में लगने वाले रोगों में धान का बकानी रोग जिसको धान का मुर्ख रोग के नाम से भी जाना जाता है बासमती धान उत्पादन में एक मुख्य समस्या के रूप में उभर रहा है। धान का बकानी रोग धान में पहले कम देखा जाता था तथा इसके ज्यादा लक्षण धान में प्रकट नहीं होते थे लेकिन जैसे जैसे बासमती धान का क्षेत्रफल बढ़ रहा है वैसे-वैसे ही धान के लगने वाला बकानी रोग भी बढ़ता जा रहा है। धान की PB-1121 प्रजाति इस रोग सेयसित होने वाली मुख्य प्रजाति है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में जो कि बासमती धान उत्पादन में अग्रणीय है यह रोग एक मुख्य समस्या के रूप में उभर रहा है।

लक्षण

बकानी रोग के लक्षण धान की नर्सरी से ही प्रारम्भ हो जाता है तथा फसल को परिपक्वता तक इस के लक्षण नजरआते रहते हैं। बकानी रोग से ग्रसित धान के पौधों को आसानी से पहचाना जा सकता है। इस रोग के निम्नल क्षण फसल पर प्रकट होते है इस रोग से ग्रसित पौधों की लम्बाई समान्य पौधों की अपेक्षा लम्बाई में बढ़े हुए पतले व हल्के पीले रंग के नजर आते हैं। कभी-कभी इस रोग से ग्रसित पौधे स्वस्थ पौधों की अपेक्षा तीन गुने तक लम्बे हो जाते हैं। ऐसे पौधों को दूर से ही देखा जा सकता है।

- जो पौधे लम्बाई में बढ़ जाते हैं वे शीघ्र ही सूख जाते हैं तथा इस तरह उस गुच्छे के पौधे सभी धीरे-धीरे सूखने लगते हैं।
- रोग से ग्रसित पौधों की गाठों से जड़ें निकल ने लगती है जो कि इस रोग से ग्रसित होने का ही एक लक्षण है ऐसा समान्य पौधों में नहीं देखा जाता है।
- रोग से ग्रसित पौधों के निचले हिस्से पर (विशेषतयां ग्रसित पौधों की गांठों पर) फफूंद की सफेद रंग की वृद्धि को भी आसानी से देखा जा सकता है जो कि इस रोग का मुख्य लक्षण हैं।
- रोग से ग्रसित पौधों पर सामान्यतः बालियां नहीं बनती है लेकिन संक्रमण यदि देर से होता है तो बनी बालियों में दाने नहीं बनते और रोग ग्रसित बालियों सफेद रंग की दिखाई देती है

रोगकारक

धान का बकानी रोग एक फफूंदपयूजेरियम मोनीलीफोरमी के द्वारा होता है। यह एक सफेद रंग की फफूँद है। इस फफूंद को सुक्ष्मदर्शी से देखने पर यह पाया गया है कि यह दो तरह के कोनिडिया (बीजाणु) दीर्घ कोनिडिया व लघुकोनिडिया बनाती है। दीर्घ कोनिडिया आकार मे बड़े जब कि लघुकोनिडिया आकार में छोटे व अण्डाकार होते हैं।

रोगचक्र

यह रोग मुख्यतः बीज जनित रोग है। रोग कारक के बीजाणु धान के बीजों से चिपक जाते है जो कि अगले वर्ष रोग फैलाने में मुख्य भूमि का निभाते हैं जब कि खेत में छूटे हुए पौधे पर भी रोग कारक फसल की अनुपस्थिति में बना रह सकता है व रोग फैला सकता है। ऐसा देखा गया है कि जो किसान पिछले फसलके बीज (जिस खेत में रोग के लक्षण देखें गये थे) या बिना फफूंदी नाशक के उपचारित बाद का इस्तेमाल नर्सरी डालने के लिए करते हैं उन किसानों के खेत में यह रोग ज्यादा लगता है। इस रोग का प्रकोप तापमान बढ़ने के अनुरूप होता है अर्थात जैसे-जैसे तापमान बढ़ता जाता है बकानी रोग के लक्षण ज्यादा प्रकट होते हैं।

रोग का नियंत्रण

- धान की रोग मुख्यत संक्रमित बीजों से ही फैलता है इस रोग के नियन्त्रण का सबसे अच्छा तरीका धान के बीजों का उपचार करना है। धान की नर्सरी डालने से पहले धान को निम्न फफूंदनाशी से उपचारित करके बोना चाहिए
- कारबेन्डाजिम 0.2% से बीज उपचार (2 ग्राम / किलोबीज)।
- मैन्कोजेब 02-03 प्रतिशत घोल से बीज उपचार (2-3 ग्राम/लीटर पानी)।
- धान के बीजों की बुवाई से पहले किसी जैविक नियन्त्रक जैसे ट्राइकोडर्मा स्यूडोमोनास फ्लूरोसेन्स कल्चर से उपचारित करके भी रोग को कम किया जा सकता है। (10 ग्राम कल्वर पाऊडर/एक किग्रा बीज)
- रोपाई से पूर्व नर्सरी को ट्राइकोडर्मा एवं स्यूडोमोनास के घोल से का उपचार करके लगाने से भी रोग को काफी हद तक रोका जा सकता है।
- यदि खेत में रोग से ग्रसित पौधे अधिक नजर आते है तो खेत में खड़ी फसल पर कारबेन्डाजिम फफूँदनाशक 0.2% का छिड़काव करके भी इस रोग के फैलने को कम किया जा सकता है।
- उर्वरकों का संतुलित रूप से प्रयोग किया जाये एवं खेत में जिंक, लोहा आदि तत्वों से युक्त उर्वर कोको भी डाला जायें क्योंकि ये तत्व पौधों में रोग सहनशीलता बढ़ाते है। जिस खेत में बकानी रोग से ग्रसित पौधे अधिक नजर आते है तो बेहतर होगा कि ऐसा फसल का बीज अगली फसल की भारी ना करें।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

खेत की मेड़ पर सागौन का वृक्षारोपण

इद्रेश कुमार (शोध छात्र)
डॉ. एस. के. वर्मा (विभागाध्यक्ष)
अभिषेक प्रताप सिंह (शोध छात्र)
कृषि वानिकी विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

परिचय

सागवान को इमारती लकड़ियों का राजा कहा जाता है। जो बरबनेसी परिवार से संबंध रखता है। इसका वैज्ञानिक नाम टेक्टोना ग्रैंडिस है। एक पेड़ बहुत लंबा होता है और इसकी लकड़ी अच्छी गुणवत्ता वाली होती है। यही वजह है कि देश विदेश में इसकी अच्छी मांग है। एक आंकड़े के अनुसार देश में तक़रीबन 180 करोड़ क्यूबिक फीट सागवान की लकड़ी की जरूरत प्रति वर्ष होती है, किन्तु प्रति वर्ष 9 करोड़ क्यूबिक फ़ीट की पूर्ति हो पा रही है इस हिसाब से वर्तमान समय में केवल 5% इसकी लकड़ी की पूर्ती हो पा रही है। सागवान का बाजार अभी भी 95% तक खाली है। सागवान की खेती में कम रिस्क और अधिक कमाई है, जिससे किसान भाई इसकी खेत की मेड़ पर सागौन का पौधारोपण कर अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

सागवान की खेती के लिए उपयुक्त मिट्टी जलवायु और तापमान

सागवान के पौधों को उगाने के लिए किसी खास तरह की मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती है, इसके पौधों को दोमट मिट्टी में आसानी से ऊगा सकते हैं। किन्तु इसकी खेती के लिए जल-भराव वाली भूमि नहीं होनी चाहिए। जल-भराव की स्थिति में इसके पौधों में रोग लगने का खतरा बढ़ जाता है। इसकी खेती में भूमि का P.H. मान 6.5 से 7.5 के मध्य होना चाहिए।

सागवान की उन्नत किस्में

सागवान की कई उन्नत किस्में मौजूद है, जिन्हे ऊगा कर अच्छी कमाई भी जा रही है। पैदावार के मामले में यह सभी किस्में सामान्य होती है, इन्हे अलग-अलग जलवायु के हिसाब से उगाया जाता है।

सागवान की कुछ प्रमुख किस्में

दक्षिणी और मध्य अमेरिका सागवान, पश्चिमी अफ्रीकी सागवान, अदिलाबाद सागवान, नीलांबर (मालाबार) सागवान, गोदावरी सागवान और कोन्नी सागवान इस प्रकार है। रोपाई के लिए 12-15 महीने के नए पौधों का प्रयोग करें।

खेत की मेड़ पर सागौन के पेड़ लगाने के लिए खेत की तैयारी

खेत की मेड़ पर सागौन का पेड़ लगाने के लिए गर्मियों के मौसम में अपने खेत के चारो ओर 8 से 10 फीट की दूरी पर गड्ढे की खुदाई करके छोड़ देनी चाहिए. जिससे पौधों की जड़ों को हानि पहुचाने वाले सभी हनिकारक कीट नष्ट हो जाएँ. इसके बाद जून-जुलाई के महीनों में बारिश के समय प्रत्येक गड्ढे में अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद डाल दें. सागवान के पौधों को अधिक उर्वरक की जरूरत होती है। इसलिए इसके पौधों की रोपाई करने से एक माह पहले तक़रीबन 15 Kg पुरानी गोबर की खाद के साथ 500 gm N.P.K. की मात्रा को मिट्टी में मिलाकर छोड़ दें। इसके पौधों को अच्छे से वृद्धि करने के लिए अधिक मात्रा में फोस्फोरस, पोटैशियम, कैल्सियम और नाइट्रोजन की जरूरत होती है। कैल्सियम की पूर्ती के लिए कम्पोस्ट खाद का भी इस्तेमाल किया जा सकता है। तैयार किये गए गड्ढो में खाद की इस मात्रा को मिट्टी के साथ मिलाकर गड्ढो में पौधों को लगाने के दौरान भर दें। पौधों को लगाने के बाद उस पर पानी से सिंचाई कर दें। इससे मिट्टी ठीक तरह से बैठ जाएगी, और पौधे अच्छे से पोषक तत्वों को प्राप्त कर सकेंगे। इस गड्ढो को पौध रोपाई के एक माह पहले तैयार किया जाता है।

सागौन के इमारती लकड़ी का उपयोग

इसकी लकड़ी हल्की और मजबूत होती है. इसकी खेती किसानों के लिए बहुत फायदेमंद साबित होती है. सागौन के इमारती लकड़ी का उपयोग पलंग बनाने, कुर्सी बनाने, घरों में दरवाजा और खिड़की बनाने, रेल के डिब्बे बनाने, हवाई जहाज बनाने, दुकानों में काउंटर बनाने इत्यादि कार्यों में सागौन के इमारती लकड़ी का उपयोग किया जाता है. इनकी लकड़ी से बनाई गई चीजें सालों-साल चलती हैं.

सागौन के पेड़ में लागत

यदि आप खेत की मेड़ पर सागौन के पेड़ लगाते हैं तो आपको एक हाइब्रिड सागौन के पेड़ की कीमत 80 से 100 रुपये में मिल जायेंगे. और अगर 1 खेत की मेड पर 120 पेड़ लागत हैं तो 100 रुपये प्रति पेड़ के हिसाब से 12 हजार रुपये आपकी लागत आएगी. अब अगर एक एकड़ खेत की मेड़ पर सागौन के पेड़ की लागत की बात करें तो इसमें आपकी कोई अलग से लागत लगने वाली नहीं है क्योंकि जब आप अपने फसलों को खाद और पानी देंगे तो उसी से इस सागौन के पौधों का भी विकास होगा. इसमें आपको केवल समय-समय पर सागौन की फालतू शाखाओं की छंटाई करनी होगी.

खेत की मेड़ पर सागवान की खेती से लाभ

सागौन की खेती में मेहनत बहुत ही कम और कमाई बहुत अधिक होती है. यदि आप सागौन की खेती के साथ खेतीबाड़ी भी करना चाहते हैं तो अपने खेत के चारो ओर 8 से 10 फीट की दूरी पर सागवान के पेड़ को जून-जुलाई के महीनों में लगायें. इस विधि से सागवान का पेड लगाने से आपको पौधों की अधिक देखरेख नहीं करनी पड़ेगी. और आप जो खाद तथा पानी अपनी फसलों को देंगे उसी से सागवान के पौधे की ग्रोथ भी होती रहेगी. इस प्रकार अगर आप अपने खेत के चारों तरफ किनारों पर खेत की मेड़ पर सागौन का पेड़ लगाते हैं तो 1 एकड़ प्लांट के चारो और लगभग 100 से 120 सागौन का पेड़ लगा सकते हैं.

खेत के चारो ओर खेत की मेड़ पर सागवान का पेड लगाने से किसान को न तो अलग से खरपतवार नियंत्रण करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है और न ही सिंचाई और खाद तथा उर्वरक देने की आवश्यकता होती है. क्योंकि आप जब भी अपनी फसलों से खरपतवार निकालेंगे तो उसी समय सागवान के पौधे की भी खरपतवार नियंत्रण हो जाएगी. इसी तरह इसके पौधे को अलग से खाद और पानी देने की आवश्यकता भी नहीं होगी. आमतौर पर सागौन के पेड़ की कीमत की बात करें तो तैयार होने के बाद प्रति पेड़ लम्बाई और मोटाई के हिसाब से 25 हजार से 40 हजार रुपये तक बिकती है. विशेषज्ञों के अनुसार अगर किसान एक एकड़ खेत में हाइब्रिड सागौन की खेती करते हैं तो लगभग 500 सागवान के पौधे लगते हैं. और जब ये पौधे कटाई के लिए तैयार होते हैं तो इससे जो कमाई होती है वह करोड़ों में मुनाफा देती है.सागवान की खेती सबसे ज्यादा लाभदायक होती है क्योंकि इसकी भारत के साथ साथ विदेशों में भी भारी मांग है। एक 14 वर्ष का सागवान का वृक्ष 10-15 घन फीट की लकड़ी प्रदान करता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

मिर्च की वैज्ञानिक खेती, रोग तथा कीट प्रबंधन

हिमांशु सिंह, अजीत सिंह सब्जी विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

हरीश कुमार मौर्या, रूबी लता सब्जी विज्ञान विभाग, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

जयश्री सिंह सब्जी विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय बाँदा (उ.प्र.)

परिचयः सब्जियों में मिर्च का पूरे विश्व में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। । यह मसालों में बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। इसका उपयोग हम हरी मिर्च खाने के रूप में, अचार, चटनी तथा सूखी मिर्च को हम पाउडर के रूप में मसालों में प्रयोग करते हैं। इसकी खेती हम रबी, खरीफ और जायद तीनों ऋतुओं में कर सकते हैं। इसमें मुख्य रूप से प्रायः विटामिन A (870 IU/100 g), विटामिन B (0.55 mg/100 gm), विटामिन C (321 mg/100 gm) पाया जाता है जो कि हमारे स्वास्थ के लिए बहुत ही आवश्यक है। मिर्च में तीखापन अधिक होता है जो कि खाद्य पदार्थों का स्वाद बढ़ाने में अत्यधिक उपयोग होता है। मिर्च की खेती आधुनिक तरीके एवं वैज्ञानिक विधि से की जाय तो इससे बहुत अधिक लाभ कमाया जा सकता है। मिर्च में तीखापन कैप्साइसिन नामक रसायन के कारण होता है तथा मिर्च का हरा रंग क्लोरोफिल तथा पकने पर लाल रंग कैप्सैन्थिन के कारण पाया जाता है।

मिर्च की खेती के लिए उचित जलवायु

मिर्च की खेती के लिए गर्म तथा आर्द्र जलवायु अत्यन्त उपयुक्त होती है। इसकी खेती प्रायः सभी रबी, खरीफ, जायद तीनों ऋतुओं में होती है। इसकी उन्नति खेती के लिए उचित जलवायु होना अति आवश्यक होता है। मिर्च की उन्नतिशील बढ़वार और फूल तथा फल लगने के लिए लगभग 20-30° C तापमान बहुत ही उपयुक्त होता है। अत्यधिक कम तथा अत्यधिक अधिक तापमान उचित उत्पादन के लिए लाभप्रद नहीं होता है। 40° C पर फूल तथा फल दोनों गिरने लगते हैं तथा फूल और फल की संख्या कम हो जाती हैं। मिर्च की खेती लगभग 100 सेमी. तक वर्षा वाले क्षेत्रों में आसानी से उगाया जा सकता है।

उपयुक्त मिट्टी तथा खेत की तैयारी करना

मिर्च को लगभग सभी प्रकार की भूमियों पर उगाया जा सकता है लेकिन इसकी उन्नतिशील खेती के लिए बलुई दोमट या दोमट मिट्टी अत्यधिक उपयुक्त होती है और साथ-साथ जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। मृदा में जैविक तथा कार्बनिक पदार्थों की उचित मात्रा होनी चाहिए। खेत को तैयार करने के लिए सर्वप्रथम 3-4 बार कल्टीवेटर से जुताई करनी चाहिए तथा उसके बाद रोटोवेटर से जुताई करनी चाहिए। जुताई करने के उपरान्त खेत को समतल करने के लिए पाटा लगा देना चाहिए जिससे कि खेत समतल हो जाये।

बीज एवं बीजदर तथा बुवाई का उचित समय

मिर्च की खेती के लिए हमें उन्नतिशील बीज का प्रयोग करना

चाहिए। मिर्च की खेती के लिए हमे प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए। मिर्च की एक हेक्टेयर खेती के लिए हमें 1-1.5 किग्रा. बीज का प्रयोग करना चाहिए तथा 200-250 g/ha हाइब्रिड बीज का प्रयोग करना चाहिए। मिर्च को नर्सरी में बोने का उचित समय मध्य जून से मध्य जुलाई है। महाराष्ट्र और आन्ध्र प्रदेश में बीज को लेने के उचित समय मई के अन्तिम सप्ताह से लेकर मध्य जुलाई तक का समय उपयुक्त होता है।

मिर्च की उन्नतिशील प्रजातियाड्ड

मिर्च की अच्छी उपज उगाने के लिए हमें उन्नतिशील प्रजातियों का प्रयोग करना चाहिए जिससे कि उत्पादन अधिक हो और किसान को अत्यधिक लाभ मिल सके। मिर्च की उन्नतिशील प्रजातिया इस प्रकार हैं . पूसा ज्वाला, पूसा सदाबहार, पन्त सी-1, पंजाब लाल, जी0-2, जी0-3, जी0-4 (भाग्यलक्ष्मी), आन्ध्र ज्योति जी.-5, सी.ओ.-3, अर्का सुफल, अर्का लोहित, अर्का श्वेता, अर्का मेघना, अर्का हरिता, सी.एच.-1, 2, 3, काशी सुर्ख, काशी अगेती, काशी तेज, काशी अर्ली, कोंकण कीर्ति, पी.के.एम-1, के.-1, के.-2, फूले ज्योति, फूले मुक्ता, हिसार शक्ति, हिसार विजय, पंजाब लाल, पंजाब सूर्ख, के.टी.-19।

नर्सरी तैयार करना एवं उसकी देखभाल

सामान्यतः हमें नर्सरी तैयार करने के लिए 2 मीटर लम्बा तथा 1 मीटर चैड़े आकार का बेड़ तैयार करना चाहिए तथा बेड की सामान्यतः ऊंचाई खेत से लगभग 15-20 सेमी. होनी चाहिए। हमें बीज को नर्सरी में बोने से पहले थीरम, कैप्टान या सेरेसान 2 ग्राम/किग्रा. से उपचारित कर लेना चाहिए। बीज को नर्सरी के बेड पर उचित मात्रा में गिराकर खुरपी की सहायता से 1-2 सेमी. गहराई पर बुवाई कर देनी चाहिए। नर्सरी की देखभाल ठीक तरीके से करना चाहिए। समय-समय पर फव्वारे के माध्यम से पानी देते रहना चाहिए। हमें ज्यादा तापमान होने पर नर्सरी में बीज को बोने के बाद उसको धान के पुआल या जूट के बोरे से ढ़क देना चाहिए जिससे की नमी बनी रहे और साथ-साथ वायुवीय आवागमन भी ठीक प्रकार से हो। जल निकास की भी उचित व्यवस्था होनी चाहिए। हमें 1 हेक्टेयर के लिए लगभग 100 मी02 भूमि नर्सरी के लिए तैयार करनी चाहिए। नर्सरी में बीज बोने के लगभग 4-5 सप्ताह के मध्य जब नर्सरी के पौधे रोपण के लिए तैयार हो जाये तो उनको रोपण कर देना चाहिए। 4-8 सप्ताह के मिर्च के बिचड़ों की रोपाई समतल खेत में अथवा मेढ़ों पर किया जा सकता है। रोपाई के पूर्व नर्सरी में पौधो की सिंचाई 15 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए। रोपने के लिए उखाड़ने के एक दिन पूर्व नर्सरी की क्यारियों मे सिंचाई करनी चाहिए। ऐसा करने से जड़ नहीं टूटते। रोपाई हमेशा शाम में अथवा धूप कम रहने या नहीं रहने पर करें। रोपाई के पूर्व व बाद में थालों में पाने दे दें। हमें पंक्ति से पंक्ति तथा पौधे से पौधे की दूरी सामान्यतः 75×60 सेमी. रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

मिर्च की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए मृदा में उचित मात्रा में जीवांश तथा कार्बनिक पदार्थों का होना अति आवश्यक होता है। हम कार्बनिक खाद् के रूप में गोबर की सड़ी हुई खाद 15-20 टन/हेक्टेयर या कम्पोस्ट खाद का उपयोग करते हैं जिससे कि मृदा में जीवांश या कार्बनिक पदार्थों की मात्रा बनी रहे। उर्वरक के रूप में हमें नाइट्रोजन 90 किग्रा./हेक्टेयर, फास्फोरस 80 किग्रा./हेक्टेयर, पोटैशियम 75 किग्रा./हेक्टेयर तथा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व का उचित उपयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा पौधरोपण के समय ही खेत में डाल देनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण एवं निराई-गुड़ाई

हमें समय-समय पर मिर्च की निराई-गुड़ाई करते रहना चाहिए जिससे कि खरपतवार का नियंत्रण हो सके। व्यवसायिक खेती में खरपतवार नियंत्रण के लिए हमें रसायन का प्रयोग करना चाहिए। खरपतवार नियंत्रण के लिए हमें पेन्डिमेथलीन या फ्लूक्लोरोलिन लगभग 1 लीटर/हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई का उचित प्रबन्धन करना

किसान भाइयों को अच्छी उत्पादन प्राप्त करने के लिए समय-समय पर सिंचाई करते रहना चाहिए। शीतकालीन मौसम के मिर्च के खेती में सिंचाई की आवश्यकता कम होती है। गर्मी के मौसम में 4-5 दिन तथा सर्दी के मौसम में 8-10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। फूल निकलने और फल बनने के समय सिंचाई बहुत जरूरी है। कभी भी खेत या नर्सरी में पानी खड़ा ना होने दें। इससे फंगस पैदा होने का खतरा बढ़ जाता है।

फलों की तुड़ाई

हरी मिर्च हेतु तुड़ाई पूर्णतः तैयार होने के बाद लाल मिर्च होने के पूर्व हरी अवस्था में ही करते हैं। यह प्रायः रोपाई से 30 वें दिन से आरंभ हो जाता है। हरी मिर्च सप्ताह में दो बार तोड़ते हैं। शुरू में कच्चे फलों की तुड़ाई सिर्फ आमदनी में इजाफा ही नहीं बल्कि पौधों के विकास के साथ उपज भी बढ़ाता है। सूखे लाल मिर्च हेतु तुड़ाई हरे से लाल रंग होने पर प्रायः रोपाई से साढ़े तीन महीनें बाद करते है। तुड़ाई के उपरान्त इन्हें धूप में सुखा लेते हैं। कच्चा फल सूखने में 10-15 दिन समय लगता है। फिर इन्हें सूखे डब्बों में भंडारित कर लेते हैं। तोड़ाई प्रायः दो महीना चलता है और कुल तोड़ाई सूखे मिर्च हेतु छह बार होता है।

उपज

असिंचित फसल (सूखी मिर्च) 5 से 10 क्विंटल/हे. तथा सिंचित क्षेत्र की फसल से (सूखी मिर्च) 15 से 25 क्विंटल/हे. औसतन उपज प्राप्त होती है। हरी मिर्च की औसत उपज 60 से 150 क्विंटल/हे. ।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

अदरक की खेती

ज्ञान श्री कौशल पीएच.डी, शोध छात्र, वानिकी (वन-संवर्धन और कृषि वानिकी), सैम हिगिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

मोहम्मद वामिक पीएच.डी. शोध छात्र (सब्जी विज्ञान विभाग), सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

परिचयः भारत में अदरक को अलग-अलग भाषाओ में भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है, जैसे :- बंगाली में आदा, मराठी में अले, कन्नड़ में अल्ला के अलावा भी इसे अनेक भाषाओ में कई नामों से जानते है। हमारे देश में अदरक की खेती को उत्तर और दक्षिण भारत के राज्यों में अधिक मात्रा उगाया जाता है। भारत को 'मसालों की जादुई भूमि' माना जाता है। अदरक (ज़िंगिबर ऑफिसिनेल रोस्को) सबसे पहले ज्ञात प्राच्य मसाला है, जो ज़िंगिबेरासी परिवार से संबंधित है। हालाँकि पूरा पौधा ताज़गी भरा सुगंधित होता है, फिर भी इस फसल के भूमिगत प्रकंदों को मसाले के रूप में महत्व दिया जाता है। चीन, भारत, नेपाल और थाईलैंड दुनिया में अदरक के प्रमुख उत्पादक हैं। अदरक का इस्तेमाल विशेषकर खाने में मसाले के तौर पर किया जाता है, इसके अलावा मुख्य रूप से इसे चाय बनाने, अचार बनाने तथा अनेक प्रकार के व्यंजनों में खुशबू लाने के लिए इस्तेमाल में लाते है। अदरक को सुखाकर उसे सोंठ के रूप में भी उपयोग में लाते है, इसके अलावा इसे अनेक प्रकार के रोगो पथरी, खांसी, सर्दी-जुकाम, पीलिया और पेट के कई रोगो के लिए भी लाभकारी माना जाता है।

मिट्टीः अदरक की खेती के लिए उचित जीवाश्म और कार्बनिक प्रदार्थ युक्त मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसके साथ ही भूमि जल निकासी वाली होनी चाहिए। अदरक की खेती के लिए भूमि का pH मान तक़रीबन 6 होना चाहिए।

जलवायुः अदरक की फ़सल के लिए उष्णकटिबंधीय और शीतोष्ण कटिबंध जलवायु की आवश्यकता होती है। गर्मियों का मौसम अदरक की फसल के लिए अधिक उपयुक्त होता है, क्योकि गर्मियों के मौसम में इसके कंद अच्छे से विकास करते हैं। इसकी फसल को समुद्र तल से 1500 मीटर की ऊंचाई पर करना चाहिए। अदरक के पौधों को अंकुरित होने के लिए 20 से 25 डिग्री तापमान की आवश्यकता होती है, तथा कंदो को पकने के दौरान 30 से 35 डिग्री तापमान जरूरी होता है।

अदरक की उन्नत किस्में: गुणवत्ता और पैदावार के हिसाब से अदरक की उन्नत किस्मो को दो श्रेणियों में बांटा गया है,जिसमे जगह और अधिक उत्पादन के लिए कई संकर और देशी किस्मों को उगाया जाता है, जिनकी जानकारी इस प्रकार है-

आईआईएसआर वरदाः इस किस्म के पौधे कंदो की रोपाई के 200 दिन बाद पैदावार देना आरम्भ कर देते है। अदरक की इस किस्म से 4.5 प्रतिशत रेशों की मात्रा प्राप्त हो जाती है। इसमें प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 22 टन की पैदावार प्राप्त हो जाती है।

सुप्रभाः सुप्रभा किस्म के पौधों में ओलि ओरिसिन की 8 प्रतिशत मात्रा पाई जाती है। यह संकर किस्म 230 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसमें निकलने वाले रेशों की मात्रा अधिक पाई जाती है,जो प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 17 टन की पैदावार देते हैं। इसके अलावा भी हिमगिरी और आई आई एस

आर महिमा ऐसी संकर किस्में है, जिन्हे अधिक पैदावार के लिए उगाया जाता है।

खेत की जुताईः अदरक के खेत में कंदो की रोपाई से पहले खेत को अच्छी तरह से तैयार कर लेना चाहिए। इसके लिए खेत की गहरी जुताई करवा दे। जुताई के बाद खेत को कुछ समय के लिए ऐसे ही खुला छोड़ दे,जिससे खेत की मिट्टी में अच्छी तरह से धूप लग जाएगी। इसके बाद खेत में पानी लगा कर छोड़ देना चाहिए। पानी लगाने के बाद जब खेत की मिट्टी ऊपर से सूखी दिखाई देने लगे तब उसकी रोटावेटर लगा कर जुताई करवा दे, इससे खेत की मिट्टी भुरभुरी हो जाएगी। मिट्टी के भुरभुरा होने के पश्चात खेत में पाटा लगा कर जुताई कर खेत को समतल कर दे, इससे खेत में अच्छी जल-निकासी हो जाएगी।

उर्वरक की मात्राः अदरक के पौधों की रोपाई को कंदो के रूप में किया जाता है। इसलिए खेत को उचित मात्रा में उर्वरक की आवश्यकता होती है। खेत की मिट्टी को पर्याप्त मात्रा में खाद देने के लिए खेत की मिट्टी की जांच कर लेनी चाहिए,जिससे खेत की मिट्टी के अनुसार उससे उर्वरक की मात्रा दी जा सके। सबसे पहले आपको खेत की जुताई के समय 10 से 15 गाड़ी पुरानी गोबर की खाद को प्रति हेक्टेयर के हिसाब से देना चाहिए। इसके बाद खेत में जुताई कर इस खाद को मिट्टी में अच्छे से मिला दे। इसके अतिरिक्त खेत की आखरी जुताई के समय एन.पी.के. की मात्रा का छिड़काव खेत की मिट्टी में करना चाहिए। यदि खेत की मिट्टी में जिंक की मात्रा कम पाई जाती है, तो एक हेक्टेयर के खेत में 25 KG जिंक की मात्रा को छिड़क देना चाहिए। इसके बाद बीज रोपाई के लगभग 40 दिन बाद सिंचाई के साथ 20 KG नाइट्रोजन की मात्रा दी जाती है।

रोपाईः अदरक के बीजो की रोपाई को कंद के रूप में किया जाता है। कंदो की रोपाई से पहले खेत में मेड को तैयार कर लिया जाता है। खेत में मेड़ो को तैयार करते समय प्रत्येक मेड़ के बीच में एक से सवा फ़ीट की दूरी अवश्य रखे, तथा बीजो को 15 सेंटीमीटर की दूरी और 5 ष्टरूकी गहराई में लगाया जाता है। अदरक के पौधों को अधिक धूप की जरूरत होती है, इसलिए इसकी खेती को छायादार जगह में नहीं करना चाहिए। भारत के उत्तरी भाग में अदरक के बीजो की रोपाई के लिए अप्रैल माह को उपयुक्त माना जाता है, वही उत्तर भारत में इसके बीजो की रोपाई मई के महीने में की जाती है। इसके अलावा इसे मई और जून के महीने में भी लगा सकते है। एक हेक्टेयर के खेत में तक़रीबन 1,40,000 कंदो की आवश्यकता होती है,जो कि लगभग 25 क्विंटल के आस-पास होते है। इसके बीजो की कीमत काफी अधिक होती है, इसलिए इसके बीजो को खरीदते समय उन्हें अच्छी तरह से देख ले कि कही कंद ख़राब तो नहीं है। बीजो को खेत में लगाने से पहले उन्हें प्लान्टो माइसिन या स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का घोल बना कर उससे उपचारित कर लेना चाहिए। इससे पौधों में जीवाणु जनित रोग नहीं देखने को मिलते है।

पौधों की सिंचाईः अदरक की फसल को अधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है,लेकिन इसकी प्रारंभिक सिंचाई को बीज रोपाई के 30 दिनों के अंदर कर देना चाहिए। इसके बाद 15 से 20 दिन के अंतराल में पौधों को पानी देना चाहिए। बारिश के मौसम में केवल जरूरत पड़ने पर सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रणः अदरक के पौधे भूमि की सतह पर रहकर ही पोषक तत्वों को ग्रहण करते हैं। इसलिए इसके पौधों को खरपतवार पर नियंत्रण की अधिक आवश्यकता होती है। खेत में खरपतवार नियंत्रण के लिए प्राकृतिक विधि निराई-गुड़ाई का इस्तेमाल किया जाता है। अदरक के खेत की पहली गुड़ाई को बीजो की रोपाई के एक महीने बाद करना चाहिए। अदरक के बीजो को अधिक गहराई में नहीं लगाया जाता है, इसलिए खरपतवार की गुड़ाई अधिक गहराई से नहीं करनी चाहिए। इसके खेत में 3 से 4 गुड़ाई की आवश्यकता होती है। पहली गुड़ाई के बाद 25 दिन अंतराल में बाकी की गुड़ाई को करना होता है।

तना बेधक कीट रोगः इस किस्म का रोग कीट के रूप में देखने को मिलता है, जिसका लार्वा पौधे के भीतरी तने को खाकर उसे पूरी तरह से नष्ट कर देता है। इस रोग के आक्रमण से पौधों को बचाने के लिए मैलाथियान की उचित मात्रा का छिड़काव 20 दिन के अंतराल में 2 से 3 बार करना होता है।

पर्ण चित्ती रोगः इस रोग का लक्षण पौधों की पत्तियों पर दिखाई देता है। यह रोग पौधों की पत्तिया पर आक्रमण करता है, जिससे उसकी पत्तियों पर धब्बे दिखाई देने लगते है। इसके बाद यह रोग धीरे-धीरे पूरी पत्ती पर फ़ैल जाता है, जिससे पौधा प्रकाश संश्लेषण नहीं कर पाता है, और वह पूरी तरह से नष्ट हो जाता है। रामकृष्णन ने पहली बार इस बीमारी की सूचना आंध्र प्रदेश के गोदावरी जिले और केरल के मालाबार क्षेत्र में दी थी।

रोकथामः पौधों पर 2 ग्राम गंधक की मात्रा को एक लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। इसके अलावा भी कुछ ऐसे रोग है, जो पौधों को हानि पंहुचा कर पैदावार को प्रभावित करते है, जैसे :- राइजोम शल्क, मृदु विगलन, जड़ बेधक आदि।

अदरक की खुदाईः अदरक के पौधों को तैयार होने के लिए 8 महीने का समय लग जाता है। जब पौधे की पत्तियाँ पीले रंग की दिखाई देने लगे तब अदरक की खुदाई कर लेनी चाहिए। इसके बाद कंदो को पानी में डालकर अच्छे से धोकर छिलको को निकाल देना चाहिए। इन कंदो को अच्छी तरह से धूप में सूखा लिया जाता है। धूप में ठीक से सुखाने के बाद इन्हे भंडारित कर बाजार में बेचने के लिए भेज देना चाहिए।

पैदावारः एक हेक्टेयर के खेत में 15 से 20 टन अदरक की फसल प्राप्त हो जाती है। दुनिया में अदरक का कुल उत्पादन 1683 हजार टन है और कुल क्षेत्रफल 310.43 हजार हेक्टेयर है। भारत दुनिया में अदरक का अग्रणी उत्पादक और निर्यातक है। भारत में सालाना 385.33 हजार टन अदरक का उत्पादन होता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

गेहूँ तथा जौ की फसल में लगने वाले रोग एवं प्रबंधन

गजेन्द्र प्रताप पादप रोग विज्ञान विभाग चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

विपिन वर्मा पादप रोग विज्ञान विभाग चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

नैमिष कुमार पादप रोग विज्ञान विभाग चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

ऋषभ गुप्ता अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्यौगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ. प्र.)

परिचय: गेहूं दुनिया में खाद्य और पोषण सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, गेहूं की केंद्रीयता भारत में भी राष्ट्रीय खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करती है। इसलिए, प्रमुख खाद्य फसलों में भी, गेहूं भारत में पोषण सुरक्षा में सबसे अधिक योगदान देता है। इस बीच, गेहूं का सर्वकालिक उच्च उत्पादन (2017-18 के दौरान 99.7 मिलियन टन) न केवल खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करता है, बल्कि मूल्यवर्धन के लिए पर्याप्त गुंजाइश भी प्रदान करता है और निर्यात अन्य देशों को अत्यावश्यकता में समर्थन देता है।

गेहूँ के रोग

साधारण नाम	कारण जीव	अल्टरनेट होस्ट
काला/ तना सडन	पक्सिनिया ग्रैमिनिस f.sp. tritici	बर्बेरिस वल्गरिस
भूरा/ लीफ रस्ट	पक्सिनिया रिकंडियाटा f.sp. tritici	थैलिक्ट्रम पॉलीगोनम
पीला/ धारीदार ज़ंग	पी. स्ट्रिफोर्मिस	ब्रोमस ज्यूपोनिकस

प्रबंधन: केवल नवीनतम जंग प्रतिरोधी किस्में उगाएं जैसेः करण नरेंद्र (DBW222), करण वंदना (DBW 187), WB2, DBW93, आदि (IIWBR द्वारा जारी किस्में)। रोग के लक्षण प्रकट होते ही प्रोपीकोनाजोल 25 ई.सी. फुहार

लूज़ स्मट: उस्टिलागो नूडा f.sp. tritici

लक्षण : रोगग्रस्त पौधों की बालियां स्वस्थ पौधों की तुलना में ध्वज पत्ती से जल्दी निकलती हैं। सभी स्पाइकलेट प्रभावित और पतले चांदी की झिल्ली से ढके बीजाणुओं के काले पाउडर द्रव्यमान में परिवर्तित हो जाते हैं जो मेजबान पत्ती से प्रभावित कान निकलते ही फट जाते हैं। जैतूनी भूरे काले बीजाणु आसानी से उड़ जाते हैं और नंगी राखियां पीछे रह जाती हैं।

प्रबंध: यह बाहरी और आंतरिक बीज जनित रोग है, गर्म जल उपचार (जेन्सेन उपचार): बीजों को 54 डिग्री सेल्सियस पर 4-6 घंटे हेतु पानी में भिगो दें। इसे सुखाकर बीज रक्षक से उपचारित करें।

सोलर ट्रीटमेंट/ सन एक्सपोजर (लूथरा का ट्रीटमेंट): गैल्वेनाइज्ड आयरन शीट्स पर।प्रणालीगत कवकनाशी कार्बोक्सिन, वीटावैक्स 2 ग्राम/ किलो बीज या कार्बोक्सिन + कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम/ किलो बीज के साथ बीज उपचार।

बुवाई के लिए प्रतिरोधक किस्मों का प्रयोग करें जैसेः PV-18, WG-307, **Hd**-450, कल्याण सोना आदि।

कर्नेल बंट: नियोवोसिया इंडिका

लक्षण: खड़ी फसल में इस रोग का पता लगाना बहुत मुश्किल होता है, इसका पता मड़ाई के बाद ही लगता है। रोगग्रस्त दाने आंशिक रूप से या पूरी तरह से पेरिकार्प से घिरे काले पाउडर द्रव्यमान में बदल जाते हैं और बाद में पेरिकार्प को तोड़कर काले पाउडर को उजागर करते हैं। संक्रमण आमतौर पर अनियमित व्यवस्था के साथ स्पाइक में कुछ दानों तक ही सीमित होता है।

प्रबंध: कॉपर कार्बोनेट या थीरम 3 ग्रा. प्रति किलो बीज से बीजोपचार करें। या वीटावैक्स और थिरम के संयोजन के साथ बहुत प्रभावी है।

सहिष्णु किस्मों का प्रयोग: WL-1502, HD-2281 एवं प्रतिरोधी किस्मोंः HD-2329, HD-20 एवं HD-29, एवं प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें। चना और मसूर के साथ इंटरक्रॉपिंग। बालियां निकलने के बाद 50% गेहूं में 0.1% घोल (प्रोपीकोनाजोल 25 ईसी या टेबुकोनाजोल 25 ईसी) का छिड़काव करें।

पर्ण झुलसा: अल्टरनेरिया एसपी.

लक्षण: पत्तियों पर 1 से 2 मिमी के छोटे, गहरे भूरे रंग के धब्बे और धीरे- धीरे पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं। अनुकूल वातावरण में संक्रमित पत्तियाँ झुलस जाती हैं तथा दानों का आकार सिकुड़ जाता है तथा दानों का रंग हल्का भूरा हो जाता है।

प्रबंध: क्षेत्र के लिए स्वीकृत नवीनतम जंग सहिष्णु लताओं को ही उगाएं। एक किस्म को एक से अधिक क्षेत्रों में न लगाएं। खेतों का निरीक्षण करें और पेड़ों के आसपास उगाई जाने वाली फसलों पर अधिक ध्यान दें। रोग के लक्षण प्रकट होते ही प्रोपीकोनाजोल 25 ई.सी. या टेबुकोनाज़ोल 25 ईसी। तथा 0.1% घोल बनाकर छिड़काव करें।

गेहूं के कीट

दीमक: Odontotermis obesi और Microtermes obesi (F: Termitidae; आर्डरः आइसोप्टेरा)

क्षति की प्रकृति: चूंकि मिट्टी में प्यूपा बनता है, दीमक के कार्यकर्ता जड़ों को खाते हैं और पहले तने के हिस्से। इससे पौधे सूखने लगते हैं। वे पौधों की छाल पर भोजन करते हैं।

प्रबंधन: टर्मिटोरिया को खोदकर नष्ट कर दें। CS2 मिथाइल ब्रोमाइड/ CS2 + क्लोरोफॉर्म का प्रयोग करें क्लोरपाइरीफॉस 2L/ हे. का प्रयोग करें।

आर्मीवर्म: मैथिम्ना सेपरेटा (फैमिलीः नोक्टुइडे; ऑर्डरः लेपिडोप्टेरा)।

नुकसान की प्रकृति: प्राथमिक लक्षण पौधों का झड़ना है। लार्वा पत्तियों पर और बैचों में अंडनिक्षेपण के रूप में पत्तियों को खाता है, किनारों से मध्यशिरा तक चबाता है, या अनाज के पौधों के सिर पर। भारी संक्रमण बहुत विनाशकारी हो सकता है; लार्वा पौधे पर चढ़ सकते हैं और सिर के ठीक नीचे गर्दन को काट सकते हैं। सेना का कीड़ा सुबह और शाम के समय भोजन करता है क्योंकि यह सूरज की रोशनी से शर्माता है।

प्रबंधन: प्रकाश और फेरोमोन ट्रैप का उपयोग। खाइयों की खुदाई और मिथाइल पैराथियान 2डी @ 20 किग्रा/ हे. की दर से झाड़ना।

पिंक बोरर: सेसेमिया इनफेरेंस (फैमिलीः नोक्टुइडे; ऑर्डरः लेपिडोप्टेरा)

नुकसान की प्रकृति: मृत दिलः अंडे से निकलने वाला युवा लार्वा, तने में छेद कर देता है, जिसके परिणामस्वरूप फसलों के प्रारंभिक चरण में केंद्रीय शूट की मृत्यु हो जाती है। खाली सफेद ईयर हेड्स का बनना।

प्रबंधन: हाइबरनेटिंग लार्वा चरणों को मारने के लिए फसल की कटाई के बाद ठूंठों को हटाना और नष्ट करना। प्रभावित टहनियों/ डेड हार्ट्स को हटाना और उन्हें जलाना। घटना का पता चलने के तुरंत बाद 0.2% कार्बोरिल का छिड़काव करें।

तेला: एरीथ्रोन्यूरा जैना; टायफ्लोसाइबा मैकुलिफ्रोन्स और अमरासाका एसपीपी, फैमिलीः सीकाडेलिडे; आर्डरः हेमिप्टेरा

क्षति की प्रकृति: निम्फ और वयस्क दोनों ही पत्तियों की निचली सतह से कोशिका रस चूसते हैं। इनके खाने से पत्तियों पर सफेद या पीले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। गंभीर संक्रमण की स्थिति में पत्तियां चांदी जैसी सफेद और सूखी हो जाती हैं।

माहू: साइटोबियन अवेने (फैमिलीः एफिडिडे; गणः हेमिप्टेरा) माहू viviparously और पार्थेनोजेनेटिक रूप से प्रजनन करें।

क्षति की प्रकृति: निम्फ और वयस्क दोनों ही पत्तियों और कोमल टहनियों से कोशिका रस चूसते हैं और पौधे की जीवन शक्ति को क्षीण करते हैं। पौधे से रस चूसने के अलावा, वे शहद का स्राव भी करते हैं जो प्रकाश संश्लेषण को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाले काले सूटी मोल्ड को आकर्षित करते हैं। गंभीर संक्रमण के मामले में पूरे पौधे को कालापन दिखाने वाले कीट द्वारा कवर किया जा सकता है।

प्रबंधन: (जैसिड्स और एफिड्स दोनों): 200-250 ग्राम a.i./ha डाइमेथोएट या ऑक्सीडेमेटन मिथाइल का छिड़काव करें। घटना की सूचना मिलते ही कार्बेरिल 10डी 20 किग्रा/ हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

जौ के रोग

ढकी हुई कंडुआ: उस्टिलागो होर्डेई

लक्षण: बिखरे हुए सिर। सभी बालियां और दाने संक्रमित हो जाते हैं। काले समूहित बीजाणु द्रव्यमान (टीलियोस्पोर्स) द्वारा प्रतिस्थापित अनाज एक सख्त मलाईदार त्वचा (पेरिडियम) से ढका होता है जो थ्रेशिंग तक बना रहता है। अनुपचारित भूखंडों की फसल की मिट्टी में कठोर बीजाणु से ढके हुए कंकड़ बहुत आम हैं। पेड़ी की फसल में रोग का प्रकोप अधिक होता है। बाहरी बीज जनित रोग।

प्रबंधन: प्रमाणित कंडुआ मुक्त बीज की खरीद की जानी चाहिए। प्रतिरोधी किस्मेंः के 12, सी.एन.- 294, सी 84। बीजों का गर्म पानी से उपचार। एग्रोसन जीएन @ 2.5 ग्राम/ किलो बीज के साथ बीज ड्रेसिंग। बुवाई के समय थीरम + बाविस्टिन या वीटावैक्स ञ्च 2.5 ग्राम प्रति किग्रा या 1 ग्राम रैक्सिल / किग्रा बीज या टेबुकोनाजोल ञ्च 1 ग्राम / किग्रा बीज के 1:1 मिश्रण से बीज उपचार करें।

लूज़ स्मट: कारक जीवः उस्टिलागो ट्रिटिकी

लक्षण: काला चूर्णयुक्त पिंड युक्त मुरझाया हुआ सिर। प्रभावित कान आमतौर पर स्वस्थ कानों से पहले निकलते हैं और सभी दाने गहरे भूरे रंग के टीलियोस्पोर्स के द्रव्यमान से बदल जाते हैं। बीजाणु शुरू में एक मोटी झिल्ली द्वारा ढीले होते हैं जो जल्द ही बीजाणुओं को अन्य सिर पर छोड़ देते हैं। अंत में, केवल नंगे डंठल रह जाते हैं जहां कभी बीजाणु हुआ करते थे। रोग आंतरिक रूप से बीज जनित रोगजनक के कारण होता है और केवल फूल आने के समय ही प्रकट होता है। नुकसान 100 फीसदी है।

प्रबंधन: बीज को चार घंटे पानी में भिगोकर 10-12 घंटे धूप में रखें। इसके बाद बीजों को सूखे स्थान पर रख दें। खेत में, मुरझाई बालियों को इकट्ठा करें और उन्हें खेत के बाहर जला दें। वीटावैक्स या बाविस्टिन @ 2 ग्राम/ किलो बीज के साथ बीज उपचार।

ख़स्ता फफूंदी: विसर्प ग्रैमिनिस वर; होर्डेई

लक्षण: पत्ती की दोनों सतहों पर कपास जैसी वृद्धि। लक्षण आमतौर पर पहली बार टिलरिंग चरण में देखे जाते हैं लेकिन रोग आमतौर पर स्पाइक उभरने से आगे नहीं रहता है। इन धब्बों की ऊपरी सतह पर हरितहीन धब्बे दिखाई देते हैं। जैसे- जैसे रोग बढ़ता है, ये सफेद सूती धब्बे फलन निकायों (क्लिस्टोथेसिया) के विकास के कारण हल्के भूरे- भूरे रंग के हो जाते हैं। संक्रमित पौधे धीमी वृद्धि दिखाते हैं।

प्रबंधन: इस बीमारी के इलाज के लिए प्रभावी जैविक कवकनाशी में चूना- सल्फर, सल्फर, नीम का तेल और पोटेशियम बाइकार्बोनेट शामिल हैं। कुछ किसानों के अनुसार बेकिंग सोडा का प्रयोग काफी प्रभावी देखा गया है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

तकनीकी की कृषि की ओर बढ़ते कदम

दीपराज वर्मा सस्य विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ. प्र.)

ऋषभ गुप्ता अनुवांशिकी एवं पादप प्रजननं विभाग आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या

गजेन्द्र प्रताप पादप रोग विज्ञान विभाग चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ. प्र.)

हरिकान्त यादव अनुवांशिकी एवं पादप प्रजननं विभाग, गोविन्द वल्लभ पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, (उत्तराखंड)

आधुनिक समय में, कृषि क्षेत्र में तकनीकों का प्रयोग बड़े पैमाने पर बदल गया है और इससे उत्पादन में महत्वपूर्ण बदलाव आया है। तकनीकों के अनुप्रयोग से कृषि क्षेत्र में निम्नलिखित क्षेत्रों में सुधार हो रहा है-

जल संसाधन प्रबंधन

जल की महत्वपूर्ण भूमिका के कारण, तकनीकों का प्रयोग कृषि में स्मार्ट जल प्रबंधन के लिए हो रहा है। सेंसर्स, जल स्त्रोत प्रबंधन सॉफ्टवेयर, और स्वचालित सिंचाई सिस्टम के द्वारा जल का सही उपयोग हो रहा है जिससे पानी की बचत हो रही है और उत्पादन में वृद्धि हो रही है।

जैविक खेती

जैविक खेती तकनीकी उन्नति का एक प्रमुख हिस्सा है जो उर्वरकों के स्थान पर जैविक तत्वों का प्रयोग करती है। इससे मिट्टी की गुणवत्ता बनी रहती है, प्रदूषण कम होता है और उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार होता है।

गेहूँ विकसन और जीनोमिक्स

जीनोमिक्स के अनुप्रयोग से उन्नत जातियों की खेती की जा रही है, जो उच्च उत्पादन और प्रतिरोधकता प्रदान कर सकती है। गेहूँविकसन से बीजों की उपयुक्तता बढ़ती है और प्रकृति के साथ मेल खाते हैं।

ड्रोन्स और उच्च तकनीकी नक्सलन

ड्रोन्स के सहायता से खेतों की सतत मॉनिटरिंग की जा सकती है, जिससे बीमारियों और कीटों की पहचान और नियंत्रण हो सकता है। उच्च तकनीकी नक्सलन के द्वारा भूमि की गुणवत्ता और उपज की भरपूर जानकारी मिलती है।

स्वच्छ ऊर्जा का उपयोग

तकनीकों का प्रयोग बायोगैस प्लांट्स और सौर ऊर्जा के उपयोग में भी हो रहा है। यह सुरक्षित और स्वच्छ ऊर्जा की आपूर्ति सुनिश्चित करता है और कृषि क्षेत्र को विकसित करने में मदद करता है।

डिजिटल मार्केटप्लेस्स और विपणन

डिजिटल मार्केटप्लेस्स के माध्यम से किसान अपने उत्पादों को आसानी से विपणित कर सकते हैं और उचित मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

तकनीकों के इन अनुप्रयोगों से आधुनिक कृषि में उत्पादन में वृद्धि, प्रदूषण कमी, जल संचयन, और किसानों के जीवन में सुधार हो रहा है। तकनीकी उन्नति से हम समृद्धि और सामाजिक उन्नति की दिशा में कदम बढ़ा सकते हैं। पूरी दुनिया में कृषि क्षेत्र में तकनीकी उन्नति का प्रयास बढ़ता जा रहा है। तकनीकी कृषि के माध्यम से हम सुनिश्चित कर सकते हैं कि खाद्य फसलों की उत्पादन को बढ़ावा दिया जा सके ताकि आने वाले समय में जनसंख्या की वृद्धि को संतुलित किया जा सके।

कृषि में तकनीकी उन्नति की आवश्यकता

आधुनिक समय में, जनसंख्या की वृद्धि के साथ ही खाद्य आवश्यकताओं में वृद्धि हुई है। इसका मतलब है कि हमें उत्पादन में वृद्धि करने के नए तरीकों की तलाश होनी चाहिए, जिनमें तकनीकी उन्नति शामिल हो सकती है।

अद्यतन जलवायु जानकारी का उपयोग

तकनीकी कृषि में, वर्तमान और भविष्य में के जलवायु जानकारी का सही उपयोग किया जा सकता है। यह सहायक हो सकता है बीज बोने की समय, पानी देने की अवधि, और उर्वरक की मात्रा का निर्धारण करने में।

स्वच्छता की महत्वपूर्णता

तकनीकी कृषि में स्वच्छता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। स्वच्छता न होने से फसलों पर कीटों और रोगों का प्रसार हो सकता है, जिससे उत्पादन में कमी हो सकती है।

कृषि में नई तकनीकों का प्रयोग

तकनीकी कृषि क्षेत्र में नई तकनीकों का प्रयोग करके उत्पादन को बढ़ावा दिया जा सकता है। ये तकनीकें जैविक खेती, सुखा संरक्षण, और सही तरीके से खेती करने के लिए ज्यादा सहायक हो सकती हैं।

अनुशासन और प्रशिक्षण

तकनीकी कृषि के लिए अनुशासन और प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। किसानों को नई तकनीकों का सही तरीके से उपयोग कैसे करना है, इसके बारे में जागरूक किया जाना चाहिए।

कृषि में डिजिटलीकरण का प्रयोग

डिजिटल तकनीकों का कृषि में प्रयोग करके खेती की प्रबंधन को सुगम और सहयोगी बनाया जा सकता है। अनुभागों की स्थिति, जलस्तर, और मौसम की जानकारी को समय-समय पर मॉनिटर करने से उत्पादन में सुधार हो सकता है।

संसाधनों का उचित प्रबंधन

कृषि में तकनीकी उन्नति के साथ, संसाधनों के उचित प्रबंधन की भी जरूरत होती है। जल, मिट्टी, और ऊर्वरक की सही मात्रा और समय पर प्रदान करने से उत्पादन में वृद्धि हो सकती है।

जैविक खेती की प्रोत्साहना

जैविक खेती तकनीकी खेती का हिस्सा बन चुकी है जो प्रदूषण मुक्त और स्वास्थ्यपूर्ण खाद्य उत्पादन की ओर एक महत्वपूर्ण कदम है।

समुदायिक सहयोग

तकनीकी कृषि के विकास में समुदायों का सहयोग भी महत्वपूर्ण है। ज्यादातर किसान समुदायें साथ मिलकर तकनीकी ज्ञान और संसाधनों को साझा कर सकती हैं।

सामाजिक प्रभाव

तकनीकी कृषि से न केवल उत्पादन में वृद्धि हो सकती है, बल्कि किसानों के जीवन में भी सकारात्मक प्रभाव डाल सकती है। यह उन्हें आर्थिक रूप से सुदृढ़ करने का भी माध्यम बना सकती है। तकनीकी कृषि की दिशाएँ में वृद्धि करने से हम सुनिश्चित कर सकते हैं कि भविष्य में खाद्य सुरक्षा और कृषि क्षेत्र में सामाजिक उन्नति हो। यह हमारे किसानों के जीवन को भी बेहतर बना सकता है और साथ ही वायुमंडलीय प्रदूषण जैसी समस्याओं का समाधान भी प्रदान कर सकता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

उत्पाद की मूल्य श्रृंखला के माध्यम से किसानों का आर्थिक विकास

दीप चंद निषाद (शोध छात्र) सस्य विज्ञान, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर (उ.प्र.)

अंकित कुमार तिवारी कृषि अर्थशास्त्र विभाग , आचार्य नरेंद्र देव कृषि विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या (उ.प्र.)

कृषि वाणिज्यिक सामग्रियाँ वैश्विक अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, बिलियनों लोगों के लिए पोषण, कच्चा माल और आजीविकाएँ प्रदान करती हैं। इन सामग्रियों के यात्रा का सफर खेत से तक एक पेचीदा प्रक्रिया के रूप में होता है, जिसमें विभिन्न चरण श्रृंखला के अंत में मौजूदा उत्पाद में मूल्य योगदान करते हैं। आइए मुख्य कृषि वाणिज्यिक सामग्रियों की मूल्य श्रृंखला के प्रमुख घटकों में खुद में डूब जाते हैं।

उत्पादन

मूल्य श्रृंखला का पहला चरण स्रोत पर शुरू होता है - खेत। उत्पादक फसलों का विकास करते हैं और पशुपालन करते हैं, आधुनिक कृषि प्राक्रियाओं, प्रौद्योगिकियों और निर्वाण पद्धतियों का उपयोग करते हैं। इस चरण में फसल का चयन, बोना, सिंचाई, कीट प्रबंधन और पशुपालन से संबंधित निर्णय शामिल होते हैं। जीनेटिक्स और जैव प्रौद्योगिकी में उन्नतियाँ भी उत्पादन चरण को परिवर्तित कर दी हैं, जिससे उच्च उत्पन्नता और सुधारित फसल विशेषताएँ प्राप्त होती हैं।

कटाई और पोस्ट-कटाई संचालन

फसलें परिपक्व होने पर, वे कटाई की जाती हैं और पोस्ट-कटाई संचालन के लिए भेजी जाती हैं। यह चरण सामग्रियों की गुणवत्ता और रखरखाव की देखभाल को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है। समर्पित तकनीकों का उपयोग सॉर्टिंग, ग्रेडिंग, सफाई

और पैकेजिंग कमी को कम करने के लिए किया जाता है, ताकि कीड़ा-मकोड़ की नुकसान, क्षति या बिगड़ाव की घातकता कम हो।

प्रसंस्करण और पैकेजिंग

पोस्ट-कटाई संचालन के बाद, सामग्रियाँ प्रसंस्कृत की जाती हैं ताकि उन्हें बाजार-तैयार उत्पादों में बदला जा सके। इस चरण में मिलिंग, ग्राइंडिंग, कैनिंग और रिफाइनिंग जैसी गतिविधियाँ शामिल हैं। पैकेजिंग भी उत्पादों की प्राप्ति के दौरान सुरक्षा सुनिश्चित करता है और उपभोक्ता के आकर्षण को बढ़ावा देता है। कंपनियाँ अक्सर उत्पादों की अवधि को बढ़ाने और पर्यावरण पर प्रभाव कम करने के लिए नवाचारिक पैकेजिंग समाधानों में निवेश करती हैं।

4. वितरण और परिवहन- दक्ष परिवहन प्रणालियाँ उत्पादकों को उपभोक्ताओं से जोड़ती हैं, अक्सर सड़क, रेल, समुद्र और हवाई नेटवर्क का संयोजन करके। परिवहन चरण उत्पादों की आखरी लागत, उनकी ताजगी और उपलब्धता पर प्रभाव डालता है। ठंडी श्रृंखला लॉजिस्टिक्स, जो फल, सब्जियाँ और डेयरी उत्पादों जैसी आपदाप्रवृत्ति वाली वस्तुओं के लिए एक तापमान नियंत्रित वातावरण बनाए रखने का शामिल है, महत्वपूर्ण है।

बाजार पहुंच और व्यापार

वाणिज्यिक सामग्रियाँ अक्सर अंतरराष्ट्रीय सीमाएँ पार करती हैं, जिससे वैश्विक व्यापार श्रृंखला का महत्वपूर्ण पहलू होता है। सरकारें, व्यापार समझौते, शुल्क और विनियमन ढांचे कृषि वाणिज्यिक वस्तुओं की गतिशीलता को प्रभावित करते हैं। बाजार पहुंच उत्पादकों को एक विस्तारित ग्राहक आधार तक पहुंचाने के लिए अवसर प्रदान कर सकती है, लेकिन इससे उन्हें मूल्य उतार-चढ़ाव और अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का सामना भी करना पड़ता है।

खुदरा और उपभोक्ता खपत

खुदरा स्तर पर, सामग्रियाँ सुपरमार्केट, किसान बाजार, रेस्तरां और अन्य बाजारों के माध्यम से उपभोक्ताओं के लिए उपलब्ध होती हैं। गुणवत्ता, मूल्य और पर्यावरण सुखदायकता की उपभोक्ता प्राथमिकताओं को अधिष्ठित करने के लिए उपभोक्ताओं की पसंद के मामूल पैमानों के बारे में बड़ी व्यापारिक सोच रही है। हाल के सालों में, नैतिक उत्पादन, जैविक उत्पादन और ट्रेसेबिलिटी के संबंध में उपभोक्ता की अपेक्षाओं को समझने और उन्हें पूरा करने के बारे में बढ़ती चिंता हो रही है।

कचरा प्रबंधन और पर्यावरण संरक्षण

मूल्य श्रृंखला का अंतिम चरण अपशिष्ट प्रबंधन और पर्यावरण संरक्षण प्रयासों को शामिल करता है। उपभोक्ता के बाद की अपशिष्ट को रीसाइक्लिंग, कम्पोस्टिंग और कुशल पैकेजिंग डिज़ाइन के माध्यम से कम किया जाना महत्वपूर्ण है। साथ ही, सुस्ती अवलोकन, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन की कमी और जल संसाधनों की संरक्षा, मूल्य श्रृंखला के पर्यावरणिक प्रभाव को बढ़ाते हैं।

अनुसंधान और नवाचार

मूल्य श्रृंखला के दौरान लगातार अनुसंधान और नवाचार दुरुपयोग, पैदावार, गुणवत्ता और पर्यावरण सुखदायकता में सुधार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसमें सूखा सहिष्णु फसलों के विकास, नए प्रसंस्करण तकनीकों की खोज, पारंपरिक उर्वरकों और कीटनाशकों के विकल्प की खोज शामिल है।

मुख्य कृषि वाणिज्यिक सामग्रियों की मूल्य श्रृंखला एक पेचीदा स्थायीकरण है, जिसमें छोटे स्तर के किसान से बड़े स्तर की विश्वव्यापी कॉर्पोरेट तक और स्थानीय उपभोक्ता से वैश्विक व्यापारिक तक कई स्तर के कई सितारों का मिलन होता है। प्रत्येक चरण उत्पाद के मूल्य में योगदान करता है, निश्चित करता है कि उसका सफर खेत से तक जितना कुशल और प्रभावी हो सके। खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण सुरक्षा और परिवर्तित उपभोक्ता पसंदों की चिंता के समय में, इस मूल्य श्रृंखला को समझना और अनुकूलित करना एक प्रतिरोधी और उत्पादक कृषि क्षेत्र सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

फसल स्वास्थ्य : सुरक्षित कीटनाशकों का उपयोग और पर्यावरण के अनुकूल विकल्प

दीपक कुमार कनिष्ठ शोध सहायक
चन्द्र कान्त, रजनीश पाल
उमारा रहमानी
शोध छात्र, सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और पारिस्थितिकी तंत्र संतुलन बनाए रखने के लिए फसल स्वास्थ्य आवश्यक है। कीटनाशकों का उपयोग आमतौर पर फसलों को कीटों, बीमारियों और खरपतवारों से बचाने के लिए किया जाता है, लेकिन उनका उपयोग मानव स्वास्थ्य, गैर-लक्षित जीवों और पर्यावरण के लिए जोखिम पैदा कर सकता है। इन चिंताओं को दूर करने के लिए सुरक्षित कीटनाशक उपयोग प्रथाओं और पर्यावरण-अनुकूल विकल्पों को आधुनिक कृषि में प्रमुखता मिली है।

सुरक्षित कीटनाशक उपयोग:

एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम): आई पी एम एक समग्र दृष्टिकोण है जो कीटनाशकों के उपयोग को कम करते हुए कीटों के प्रबंधन के लिए विभिन्न रणनीतियों को जोड़ता है। इसमें कीटों की आबादी की निगरानी करना, प्राकृतिक शिकारियों का उपयोग करना, फसल चक्र, प्रतिरोधी फसल किस्मों और आवश्यक होने पर लक्षित कीटनाशकों का उपयोग शामिल है। यह दृष्टिकोण रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता को कम करता है।

चयनात्मक कीटनाशक: व्यापक-स्पेक्ट्रम कीटनाशकों का उपयोग करने के बजाय जो लाभकारी कीड़ों को नुकसान पहुंचा सकते हैं, किसानों को चयनात्मक कीटनाशकों का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जो विशिष्ट कीटों को लक्षित करते हैं। यह दृष्टिकोण गैर-लक्षित जीवों को होने वाले नुकसान को कम करता है और समग्र कीटनाशक भार को कम करता है।

परिशुद्ध कृषि: परिशुद्ध कृषि प्रौद्योगिकियां किसानों को केवल वहीं कीटनाशकों का उपयोग करने की अनुमति देती हैं जहां उनकी आवश्यकता होती है। इससे कीटनाशकों की बर्बादी कम होती है, पर्यावरणीय प्रभाव कम होता है और लागत बचती है।

अनुप्रयोग दिशानिर्देशों का पालन: अनुशंसित कीटनाशक अनुप्रयोग दरों, समय और विधियों का पालन करना महत्वपूर्ण है। कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग या दुरुपयोग से भोजन, मिट्टी और पानी में अवशेष मिल सकते हैं, जिससे मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए खतरा पैदा हो सकता है।

पर्यावरण-अनुकूल विकल्प

जैविक नियंत्रण: कीटों की आबादी को नियंत्रित करने के लिए लाभकारी कीड़े, नेमाटोड और सूक्ष्मजीवों को पर्यावरण में लाया जा सकता है। उदाहरण के लिए एफिड्स को नियंत्रित करने के लिए लेडीबग्स को छोड़ा जा सकता है, और परजीवी ततैया कैटरपिलर कीटों को नियंत्रित कर सकती हैं। यह दृष्टिकोण रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता को कम करता है।

जैव कीटनाशक: जैव कीटनाशक प्राकृतिक रूप से प्राप्त पदार्थ हैं जो कीटों को नियंत्रित करते हैं। इनमें माइक्रोबियल कीटनाशक (बैक्टीरिया, कवक) पौधे से जुड़े संरक्षक (पी आई पी) और जैव रासायनिक कीटनाशक (फेरोमोन, नीम का तेल) शामिल हैं। जैव कीटनाशक आमतौर पर मनुष्यों, जानवरों और लाभकारी कीड़ों के लिए कम विषैले होते हैं।

फसल चक्र और पॉलीकल्चर: फसलों को घुमाने और एक ही खेत में विविध फसलें लगाने से कीट जीवन चक्र बाधित हो सकता है और कीटों की आबादी का निर्माण कम हो सकता है। पॉलीकल्चर प्रणालियाँ प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र की नकल करती हैं, जिससे वे कीटों के प्रकोप के प्रति कम संवेदनशील हो जाती हैं।

प्रतिरोधी फसल किस्में: ऐसी फसल किस्मों का विकास और रोपण करना जो प्राकृतिक रूप से विशिष्ट कीटों या बीमारियों के प्रति प्रतिरोधी हों, रासायनिक हस्तक्षेप की आवश्यकता को कम कर सकती हैं।

ट्रैप फसलें: कुछ फसलें कीटों के लिए आकर्षक होती हैं और कीटों को उनसे दूर रखने के लिए उन्हें मुख्य फसलों के आसपास लगाया जा सकता है। यह व्यापक कीटनाशकों के उपयोग के बिना मुख्य फसल की रक्षा करने में मदद करता है।

सांस्कृतिक प्रथाएँ: उचित सिंचाई, स्वच्छता और रोपण दूरी जैसी सांस्कृतिक प्रथाओं को लागू करने से कीटों हेतु प्रतिकूल परिस्थितियाँ पैदा हो सकती हैं, जिससे उनका प्रभाव कम हो सकता है।

जैविक खेती

जैविक खेती एक समग्र दृष्टिकोण है जो मिट्टी की उर्वरता और फसल स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए प्राकृतिक प्रक्रियाओं और संसाधनों के उपयोग पर जोर देती है। जैविक किसान सिंथेटिक कीटनाशकों और उर्वरकों से बचते हैं, इसके बजाय उन प्रथाओं पर ध्यान केंद्रित करते हैं जो मिट्टी की संरचना, जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र के लचीलेपन को बढ़ाते हैं। इस दृष्टिकोण में कीटों को नियंत्रित करने के लिए खाद बनाना, कवर क्रॉपिंग और प्राकृतिक शिकारियों का उपयोग करने जैसी तकनीकें शामिल हैं।

कृषि पारिस्थितिकी

कृषि पारिस्थितिकी एक विज्ञान-आधारित दृष्टिकोण है जो पारिस्थितिक सिद्धांतों को कृषि प्रथाओं में एकीकृत करता है। यह अधिक टिकाऊ और उत्पादक कृषि प्रणाली बनाने के लिए प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र को समझने और बढ़ाने के महत्व पर जोर देता है। प्राकृतिक प्रक्रियाओं के साथ काम करके, कृषि पारिस्थितिकी का लक्ष्य कीटनाशकों जैसे बाहरी इनपुट की आवश्यकता को कम करना है, साथ ही मिट्टी के स्वास्थ्य, जल संरक्षण और जैव विविधता को भी बढ़ावा देना है।

जेनेटिक इंजीनियरिंग

विवादास्पद होते हुए भी, जेनेटिक इंजीनियरिंग (जी ई) में कीटों और रोगों के प्रति अंतर्निहित प्रतिरोध वाली फसल की किस्में बनाने की क्षमता है। फसलों में विशिष्ट जीन डालकर, वैज्ञानिक कीट प्रतिरोध या वायरस सहनशीलता जैसे लक्षण प्रदान कर सकते हैं। इससे रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता कम हो सकती है और पर्यावरणीय प्रभाव कम हो सकता है। हालाँकि इस क्षेत्र में संभावित जोखिमों का सावधानीपूर्वक विनियमन और विचार आवश्यक है।

शिक्षा और प्रशिक्षण

कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग के संभावित खतरों और पर्यावरण-अनुकूल विकल्पों के लाभों के बारे में किसानों के बीच जागरूकता बढ़ाना महत्वपूर्ण है। एकीकृत कीट प्रबंधन जैविक खेती तकनीकों और अन्य टिकाऊ प्रथाओं पर शिक्षा और प्रशिक्षण प्रदान करना किसानों को सूचित निर्णय लेने के लिए सशक्त बनाता है जो फसल स्वास्थ्य और पर्यावरण कल्याण दोनों को प्राथमिकता देते हैं।

सरकारी नीतियां और विनियम

सरकारें नीतियों और विनियमों के माध्यम से कृषि पद्धतियों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। पर्यावरण-अनुकूल विकल्पों के उपयोग को बढ़ावा और प्रोत्साहन देकर और कीटनाशकों के उपयोग के लिए सख्त दिशानिर्देशों को लागू करके सरकारें सुरक्षित प्रथाओं को अपनाने को प्रोत्साहित कर सकती हैं और हानिकारक प्रथाओं को हतोत्साहित कर सकती हैं।

अनुसंधान और नवाचार

प्रभावी और टिकाऊ समाधान विकसित करने के लिए पर्यावरण-अनुकूल विकल्पों, उन्नत कीट-प्रतिरोधी फसल किस्मों और नवीन कृषि प्रौद्योगिकियों पर निरंतर शोध आवश्यक है। शोधकर्ताओं, किसानों और नीति निर्माताओं के बीच सहयोग पर्यावरणीय प्रभाव को कम करते हुए फसल स्वास्थ्य को बढ़ाने के लिए नई रणनीतियों के विकास को बढ़ावा दे सकता है।

निष्कर्ष: टिकाऊ कृषि के लिए कीटनाशकों के सुरक्षित उपयोग और पर्यावरण-अनुकूल विकल्पों के माध्यम से फसल स्वास्थ्य को बढ़ावा देना महत्वपूर्ण है। एकीकृत कीट प्रबंधन रणनीतियों को अपनाकर और पर्यावरण के अनुकूल प्रथाओं को शामिल करके किसान मानव स्वास्थ्य, गैर-लक्षित जीवों और पारिस्थितिकी तंत्र की सुरक्षा करते हुए कीटों का प्रभावी ढंग से प्रबंधन कर सकते हैं। नीति निर्माता, शोधकर्ता और कृषि विस्तार सेवाएँ कृषि प्रणालियों के दीर्घकालिक स्वास्थ्य और उत्पादकता को सुनिश्चित करने के लिए सूचना प्रसारित करने और इन प्रथाओं को अपनाने का समर्थन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

आधुनिक खाद्य प्रसंस्करण उद्योग के विकास में रोबोटों का योगदान

डॉ. बालाजी विक्रम (सहायक प्राध्यापक) बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

डॉ. प्रिया अवस्थी (प्राध्यापक) बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय बांदा (उ.प्र.)

भारत में जनसँख्या के बढ़ने के वजह से सबको खाद्य सामग्री उपलब्ध कराना एक चुनौती प्रतीत हो रही थी जिससे समाधान के लिए अनेकों प्रकार के खाद्य प्रसंस्करण उद्योग का तेजी से विस्तार हुआ है। भारत की कृषि उत्पादन तंत्र तो काफी मजबूत है, लेकिन कृषि उत्पादों की बड़ी मात्रा की बर्बादी भी बहुतायत में देखि जा सकती है, फल और सब्जियों का प्रसंस्करण अब भी केवल 4 से 6~ होता है, दूध में लगभग 35: और मांस में 21: और मुर्गी उत्पादों में 6: के लगभग ही है। भारत में खाद्य उद्योग अधिकांशतः छोटे उद्यमिता के तहत होता है, और यहाँ पुरानी मशीनों का मानव हस्तक्षेप द्वारा संचालन किया जाता है। खाद्य प्रसंस्करण और पैकेजिंग क्षेत्र में रोबोटों का महत्वपूर्ण उपयोग होता है। यह खाद्य उत्पादों के साथ हैंडलिंग से लेकर बोतलों, ट्रे, कार्टन और अन्य खाद्य और पेय प्राधिकरणों तक के काम को समाहित करता है। वास्तव में, रोबोट अपने कार्यों को मानवों की तुलना में अधिक सटीकता और परिशुद्धता के साथ पूरा करने में सक्षम हैं, और उनका काम मानवों की तुलना में कम समय लगता है। भारत में स्व-संचालित मशीनें (रोबोट) का उपयोग करने से खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि हो सकती है। इसके लिए रोबोट को ऐसे डिजाइन और कॉन्फिगर करने की आवश्यकता है कि वह मैनुअल संचालन वाले कर्मियों के साथ सुरक्षा के उच्च स्तर के साथ बहुत करीब से काम कर सके। लगभग हर मामले में व्यावसायिक समाधानों में एकीकरण की संभावना होती है, लेकिन खाद्य प्रसंस्करण में अभियांत्रिकी में अब भी उपयोग के अवसर हैं। मांस, मछली और मुर्गी जैसे खाद्य पदार्थों का बड़ा हिस्सा खाया जाता है, लेकिन उनका स्वतरू अटोमेटिक तरीकों में उत्पादन अब भी मुश्किल है। इसके पीछे मुख्य समस्याएँ उत्पादों की असमानता और लचीलता, सफाई, गुणवत्ता और उपभोक्ता सुरक्षा की चिंताएं होती हैं। खाद्य उत्पादन में मैन्युअल प्रक्रियाएँ बढ़ती कठिनाइयों के कारण रोबोटिक समाधान आकर्षक हैं। मांस प्रोडक्शन में रोबोटिक और ऑटोमेशन के विकास को प्रोत्साहित करने वाले कुछ प्रमुख प्रेरणाएं में उत्पाद के साथ मानव संपर्क को कम करना और खतरनाक काम की बजाय सुरक्षित रखने की बात है। उत्पादन नियंत्रण और उत्पादन में संघटन, साथ ही उच्च उत्पादकता के कारण रोबोटों का उपयोग इस क्षेत्र में जोखिमेदार होता है।

खाद्य उत्पादन उद्योग अधिकांश देशों में उद्यमिता के क्षेत्रों में से एक है और यह सभी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं में एक महत्वपूर्ण रणनीतिक घटक है।

खाद्य उद्योग में रोबोटों का उपयोग करने के लाभ: खाद्य प्रसंस्करण में रोबोटों का उपयोग करने के फायदे कल्पना से परे प्रतीत होते हैं। रोबोट मानव कर्मचारियों की तुलना में नियमित परिणाम तेज़ी से प्रस्तुत कर सकते हैं। स्वास्थ्य और सुरक्षा से संबंधित चिंताएँ भी रोकी जा सकती हैं। खाद्य उत्पादन में रोबोट अतिरिक्त लाभ भी प्रदान करते हैं। जैसे:

भोजन की गुणवत्ता में सुधार: रोबोटों द्वारा जो उच्च तापमान जैसी कठिन परिस्थितियों का सामना करने के लिए निर्मित किए जा सकते हैं। रोबोट खासकर के डिज़ाइनिंग या चिकन डीबोनिंग जैसे दोहरावी कार्यों में प्रशिक्षण या बीच में आराम की आवश्यकता के बिना उच्च प्रतिफल देने के द्वारा उत्पादन लागत को कम करने में मदद कर सकते हैं।

उत्पाद संरूपता को बढ़ावा देना: खाद्य रोबोटों का उपयोग करके अपशिष्ट बचत होती है और कटाई जैसे माप को अधिक संरूपित बनाने से कुल उत्पादकता में सुधार होता है। रोबोटों की कार्यप्रणाली को देखते हुए ये उम्मीद है कि उन्हें निर्माताओं को 3 प्रतिशत की सुधार मिलेगी जहाँ सटीक कटाई से संक्रमित मांस और लेबल लगे आइटम्स के बीच अंतर हो सकता है।

कार्यान्वयन में वृद्धि करना: रोबोट वे सुधार कर सकते हैं जिन्हें मनुष्य के कार्य करने के तरीके द्वारा नहीं किया जा सकता है। रोबोट न केवल पर्यावरण को शुद्ध करने को प्रोत्साहित करते हैं, बल्कि यह उत्पादन प्रक्रिया के दौरान अधिक सटीक गणना करता है, जिससे एक प्रदूषित पैकेज की पार्दर्शिता और निगरानी भी पुरे सटीकता से हो जाती है।

कर्मचारी सुरक्षा में सुधार: रोबोट काटने वाले और खतरनाक उपकरण का उपयोग करके कामकाजी की आवश्यकता को दूर कर सकते हैं और कार्यस्थल को अधिक सुरक्षित बना सकते हैं।

उत्पादकता में सुधार: जब कर्मचारियों की कमी होती है या जहाँ कर्मचारियों को अक्सर बोर होने या थक जाने की भावना होती है या तो कोई असहज वातावरण होता है उस इस्थिति में रोबोटों को बार-बार और शारीरिक रूप से कठिन कार्यों को कराने में उपयोग किया जा सकता है जो कर्मचारियों को पूरा करने में बहुत कठिन होता है।

अधिक सुविधा: अपने बदलते जीवन को नया आयाम देने के लिए ग्राहक छोटे छोटे, अधिक सुविधाजनक पैकेजिंग की तलाश में रहते हैं, वहीँ देखा जाये तो खाद्य निर्माताओं का मानना है की वो एक बड़े आकार का पैकेट बनाये जिससेव उनका लगत खर्च कम किया जा सके, इसके लिए रोबोट द्वारा एक ही जगह पर अनेक डिजाईन के छोटे बड़े आकर के पैकेट बनाए जा सकते हैं और लेबल के लिए मिश्रित या अनेक आदेश साथ में ही छापा जा सकता है और उसको आशानी के विभिन्न स्थानों पर बेचा जा सकता है। रोबोटों का वर्गीकरण कई विशेषताओं के आधार पर किया जाता है, जैसे कि वे स्थिर रहकर कार्य करते हैं या फिर वो एक जगह से दूसरी जगह तक गतिशील भी हैं, उनका डिजाईन औद्योगिक, सेवा या अन्य प्रकार के कार्य के लिए हैं। रोबोट अक्सर उनके गतिविधियों या यान्त्रिक व्यवस्था के आधार पर वर्गीकृत किए जाते हैं।

खाद्य उद्योग में उपयुक्त सबसे आम प्रकार के रोबोट हैं:

चुनना और रखना: खाद्य संबंधित श्रेणी वर्तमान में एक बड़े बदलाव की ओर रुख कर रही है जिसमें रोबोटों का उपयोग पारंपरिक खाद्य उद्योग प्रक्रियाओं को बदलने के लिए हो रहा है। इस श्रेणी में खाद्य उत्पादों को चुनने और रखने के लिए उपयोग किए जाने वाले रोबोट और भोजन तैयारी के लिए उपयोग किए जाने वाले रोबोट शामिल हैं। स्वच्छता नियमों के अनुसार, रोबोट के भागों को जो खाद्य से संपर्क में आते हैं, वे जंग प्रूफ, धुलने योग्य और अत्यधिक तापमान, उच्च आर्द्रता, मिट्टी की वस्तुओं, और मैकेनिकल तनाव के प्रति प्रतिरोधी होते हैं। इसके अलावा, कटाई घटकों को मुलायम समान कोनों के साथ होते हैं तथा संबंधित उपकरणों की सफाई के लिए संयुक्त-मुक्त डिजाइन होता है। इसका प्राथमिक उपयोग उच्च-क्षमता वाली उत्पाद संग्रहण, चयन और स्थितिकरण, साथ ही अन्य संबंधित प्रक्रियाओं में होता है।

पैलेटाइजिंग रोबोट: दूसरी श्रेणी में खाद्य व्यवसाय में पैकिंग और पैलेटाइजिंग (बड़े आकर के लोहे आदि के बक्से) के लादने और उतारने जैसे कार्य शामिल हैं। इन रोबोटों का उपयोग बिस्कुट, पेय, पास्ता, मिठाई और अन्य रसोईघर की वस्तुओं की पैलेटाइज करने में होता है जो सुव्यवस्थित तरीके से राखी जाती हैं। उदाहरण के लिए, एक विकसित विधि से प्रति घंटे 200 बैगों की उत्पादन की जा सकती है, जिनका वजन 20 किलोग्राम प्रति बैग होता है। उन कंपनियों ने जिन्होंने पैलेटाइजिंग के लिए रोबोटिक तरीकों का उपयोग किया है, प्रक्रिया से लकड़ी की पैलेटों का पूरी तरह से उपयोग बंद कर दिया है, जिससे उन्हें शिपिंग कंटेनरों की अधिकतम क्षमता का उपयोग करने की अनुमति मिलती है, इस रोबोटिक उपयोग की एक और लाभ बैग के क्षति को समाप्त करना है। पैलेट प्रबंधन भी विशिष्ट सॉफ्टवेयर और टूलिंग द्वारा रोबोट सेलों के अंदर प्रबंधित किया जाता है। इस विनिमय सेंसर्स का उपयोग करके, यह व्यक्तिगत पैलेटों की तय मानक की ऊंचाई की पहचान करता है, साथ ही पैलेट में डिब्बों और कार्टनों की दिशा की पहचान करता है, जिससे वह डिब्बों और पैलेट दोनों का सही दिशा में संचालन भी कर सकता है।

पैकेजिंग और लेबलिंग रोबोट: ये रोबोट खाद्य पैकेजिंग और लेबलिंग में विशेषज्ञ हैं। लेबलिंग और पैकेजिंग अनुप्रयोगों के लिए प्रसिद्ध है। रैप लेबलर पैक्स को नियत स्थान तक लाते हैं जबकि लेबल पैक्स भाग के चारों ओर लपेटा जाता है। ये रोबोट खाद्य तैयारी और हैंडलिंग के लिए है, और ग्रिपर खाद्य से सीधे संपर्क में आता है, इसलिए इसे धोने योग्य बनाया गया है। ये भोजन तैयारी रोबोट सिमुलेशन सॉफ्टवेयर के साथ उपलब्ध हैं, जैसे कि डेल्टा रोबोट।

उत्पादन निरीक्षण और परीक्षण: उत्पाद निरीक्षण और परीक्षण के लिए विशेष रूप से डिजाइन किए गए रोबोटों का उपयोग करना सामान्य प्रक्रिया है। एक सामान्य रूप रोबोट के द्वारा निरीक्षण और लेबलिंग के उपरांत आइटम पैकेजिंग के लिए तैयार हो जाता है। निरीक्षण आमतौर पर तब किया जाता है जब अंतिम उत्पाद की आवश्यक गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए कई कैमरों का उपयोग किया जाता है, जैसे कि भाग पर लेबल की निरीक्षण। अनुपयुक्त घटक को खारिज कर दिया जाता है और उन्हें पुनः जांच के लिए भेजा जाता है, जबकि पूरे भागों को कन्वेयर बेल्ट के माध्यम से बाजार में पहुँचाया जाता है। पैकेज में आइटम की उपस्थिति की भी जांच और परीक्षण की जाती है और गुणवत्ता नियंत्रण सुनिश्चित करने के लिए एक कैमरा का उपयोग किया जाता है।

खाना पकाने वाले रोबोट: ये रोबोट सीधे खाना पकाने के लिए उपयुक्त होते हैं। शेफ रोबोट्स कठिन और खतरनाक स्थितियों में उपयोग के लिए उपयुक्त होते हैंए जैसे कि 800 एतापमान की पिज़्ज़ा ओवन के सामने काम करना। ये रोबोट देखने में भी काफी आकर्षक होते हैं। जब उन्हें मेहमानों के सामने एक साफ और सुसज्जित हैंडलिंग प्रदान करते हैं। ये रोबोट अपने साथ काम कर रहे मानव ऑपरेटर को उनके हाथों को जलाने से बचाता है यदि उन्होंने गरम प्लेटों को अकस्मात रूप से छू लिया हो। कई फ़ास्ट फ़ूड रेस्तरां जैसे कि पिज़्ज़ा हट और मैकडॉनल्ड्स पूरी तरह से रोबोटीकृत खाद्य निर्माण की प्रस्तावना करने का प्रयास कर रहे हैंए जहाँ कुछ ही लोग मुख्य रूप से रोबोट्स की देखभाल करते हैं जो खाद्य तैयारी में काम करते हैं ताकि खाद्य की गुणवत्ता और समय पर वितरण सुनिश्चित हो।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

आम के शारीरिक विकार: कारण और उसका प्रबंधन

अवधेश कुमार, प्रभात कुमार
दिव्यांश मिश्रा, अभिषेक प्रताप सिंह
सुजीत कुमार पटेल, इमरान अली
(शोध छात्र) आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

फलों में कई शारीरिक विकार सभी उत्पादक क्षेत्रों में आम की गुणवत्ता और भंडारण जीवन दोनों को प्रभावित करते हैं। आम में आम की पैदावार में गिरावट के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं, फिर भी शारीरिक विकार अधिक विनाशकारी और महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। परिणामस्वरूप, आम उत्पादकों का आम के बगीचों में विश्वास और रुचि कम हो रही है और वे अपनी खेती की पद्धतियों को आम से अन्य फसलों की ओर स्थानांतरित करने का प्रयास कर रहे हैं।

शारीरिक विकार फलों के आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण भाग या फलों की उपज और गुणवत्ता में योगदान देने वाले अन्य भागों में किसी भी प्रकार की असामान्यता को शारीरिक विकार कहा जाता है।

शारीरिक विकारों के कारण

सूक्ष्म पोषक तत्व की कमी
तापमान में अचानक उतार-चढ़ाव
ख़राब मिट्टी की स्थिति
खेती के दौरान नमी की अनुचित उपलब्धता।

वैकल्पिक असर

आम में वैकल्पिक फलन एक बहुत गंभीर और पुरानी समस्या है।

यह एक वर्ष में भारी फसल का उत्पादन या अगले वर्ष में बहुत कम फसल का उत्पादन है।

दक्षिण भारतीय किस्मों में नियमित पैदावार होती है।

उत्तर भारत में वैकल्पिक वाहक किस्में विशेष रूप से लंगड़ा, चौसा, हैं।

कारण

किस्मों में अंतर. विकास की आदत. फसल का बोझ. सांस्कृतिक प्रथाएं। लिंग अनुपात। कीट-पतंग और रोग.

उपाय

1. हर साल फूलों को प्रेरित करने वाले एथिलीन रिलीजिंग कंपाउंड, एथेफॉन का उपयोग करें।
2. 0.1% यूरिया के साथ एथेफॉन 200पीपीएम की सांद्रता वर्ष भर नियमित रूप से फूल आने को प्रेरित करने में प्रभावी पाई गई।
3. आम्रपाली" जैसी नियमित फल देने वाली किस्मों को उगाना

आम की विकृति

1.वानस्पतिक विकृति नर्सरी (अंकुरित पौधों) में अधिक प्रचलित है। 2.पुष्प विकृति

कारण

कवक- फ्यूसेरियम मोनिलिफ़ॉर्मे सबग्लूटिनंस इस विकार से अत्यधिक जुड़ा हुआ है।

उपाय

NAA के 200 पीपीएम का दो बार छिड़काव करें, यानी अक्टूबर के पहले सप्ताह में और फिर नवंबर के पहले सप्ताह में।

झुमका या क्लस्टरिंग

इसकी विशेषता पुष्पगुच्छ की नोक पर अधिक संख्या में संगमरमर के आकार के फलों का जमना है। फलों का रंग गहरा हरा रहता है। इनका आकार अनिषेचित फलों जैसा होता है। ये फलक आकार में वृद्धि किए बिना पुष्पगुच्छ से जुड़े रहते हैं

कारण

अक्टूबर और नवंबर के दौरान 100 पीपीएम एनएए स्प्रे पुष्पक्रम के विकास का ध्यान रखेंगे। फूल आने के दौरान कीटनाशकों के छिड़काव से बचना चाहिए।

स्पंजी ऊतक

यह एक शारीरिक विकार है जो आम तौर पर आम की अल्फांसो किस्म को प्रभावित करता है। चीमा और धानी ने सबसे पहले 1934 में आम में स्पंजी ऊतकों का अवलोकन किया था। जो पकने के दौरान फल के मेसोकार्प में हवा की जेब के साथ या उसके बिना गैर-खाद्य, खट्टा, पीला और स्पंज जैसे पैच के विकास की विशेषता है

कारण

ऐसा इसलिए होता है क्योंकि फल पकने की अवस्था के दौरान पकने वाले एंजाइम उच्च तापमान, संवहनीय गर्मी के कारण निष्क्रिय हो जाते हैं

कटाई के बाद फलों को सूर्य की रोशनी में रखना

उपाय

3/4 परिपक्वता अवस्था पर फलों की तुड़ाई

काली पॉली-एथिलीन गीली घास का उपयोग

रत्ना, अर्का पुनीत और अर्का अरुणा आदि प्रतिरोधी किस्में उगाएं

ब्लैक टिप

यह एक शारीरिक विकार है जो ईंट-भट्ठे की चिमनी से निकलने वाली जहरीली गैसों के कारण होता है। ईंट-भट्ठे के पास स्थित बगीचों में यह एक गंभीर समस्या है। सबसे पहले फल के दूरस्थ सिरे पर एक छोटा सा एटिओलेटेड क्षेत्र विकसित होता है,

कारण

यह विकार मुख्य रूप से ईंट भट्टों के आसपास स्थित बगीचों में पाया गया है। कार्बन डाइऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड और एथिलीन जैसी गैसें जो ईंट भट्ठे के धुएं का निर्माण करती हैं, फलों की बढ़ती हुई नोक को नुकसान पहुंचाती हैं और ब्लैक टिप के लक्षणों को जन्म देती हैं।

उपाय

0.6% बोरेक्स का तीन बार छिड़काव करें, फूल आने से पहले, फूल आने के दौरान और फिर फल लगने के बाद। ईंट भट्टों से पूर्व से पश्चिम में कम से कम 1.6 किमी और उत्तर से दक्षिण दिशा में 0.8 किमी दूर बगीचों की स्थापना और चिमनी की ऊंचाई कम से कम 15-18 मीटर तक बढ़ाना इस बीमारी के निवारक उपाय हो सकते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

चौलाई की खेती

आर्यन सविता (रिसर्च स्कोलर)
दीपक कुमार (रिसर्च स्कोलर)
उद्यानिकी विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी (उ.प्र.)

सामान्य विवरण

चौलाई भारत में गर्मी एवं बरसात की प्रमुख हरी शारक वाली सब्जी है। इसकी पत्तियों तथा कोमल रसीली राखाये मच पत्ती वाली शाक की तरह सब्जी बनाने में काम आती है। ये प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, लोहा, कैल्शियम, विटामिन-ए तथा सी का प्रभुत्व स्त्रोत है। ये सभी किस्मे रक्त को साफ करती हैं। चॉलाई की कुछ प्रजातियों के साथ साथ दानों के लिए भी उगाते है।

वानस्पतिक नाम

ऐमरेन्थस प्रजाति **"Amoranthus Sp"** कुल-ऐमरेन्थेसी

उत्पति एवं इतिहास

चौलाई कई प्रकार की होती है। इनमें ऐमस्थस की गेन्जेटिकम, मेगोस्टेनस, पेनीकृलेटान तथा एगस्फोलियान प्रजातियो का उद्भव भारत तथा चीन क्षेत्र से हुआ है। अन्य प्रजातियां उतरी अमेरिका, मध्य अमेरिका, मैक्सिको, दक्षिण अमेरिका मानी जाती है।

उपयोग

शाक भाजी बनाने में, रस निकालने में, विटामिन ए तथा सी की प्रचुरता, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, आयरन, कैल्शियम आदि की प्राप्त।

वनस्पतिक वर्णन

चौलाई ऐमरेन्धेसी कुल का पौधा है। तथा इसकी सभी प्रजातियां एमरेस्थान देश में आती है। सभी प्रजातियों में पौधों की उचाई, आकार प्रकार पत्तियों के रंग रूप, शाखाओं तथा कांटों एवं कटाई के बाद पुनः बढ़ने की क्षमता आदि गुणों में विविधता मिलती है।

जैसे-ऐमरेन्यस टिलटस-छोटी चौलाई, ऐमरेस्थान डाइकलर-बड़ी चौलाई ऐमरेस्थान कॉडेटान-राज जीरा

* छोटी चौलाई के पौधे बने होते हैं। बड़ी चौलाई के पौधे 30-100 सेमी0 ऊचे होते है। पत्ती भपेदाहत बड़ी होती है। राज जीरा के पौधे 20 सेमी0 तक ऊंचे होते हैं। ये सभी प्रजाति भारत में मुख्यता पायी जाती है।

जलवायु

यह नम एवं उष्ण जलवायु का शाक है। अतः

भारत के मैदानी भागों में इसे गर्मी एवं बरसात में उगाते हैं। शीतोष्ण जलवायु में इस की खेती गर्मी में होती है। कार्मिकी दृष्टि से यह कार्बन-4 पौधा समूह में आता है।

मृदा

इसकी खेती सभी प्रकार की मृदा में की जाती है। जीवाशयुक्त दोमट वलुई मिट्टी सर्वोत्तम होती है। खेत में जल निकास का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिए।

मृदा का पीएच मान 6-7.5 होना चाहिए। कुछ किसमों को पीएच 10 वाली मृदा में सफलतापूर्वक उगाते हैं। खेत की 2-3 बार जुताई कर देनी चाहिये।

बुवाई

उत्तर भारत के मैदानी भागों में गर्मी की फसल के लिए इसकी बुवाई फरवरी-मार्च में करते हैं। जबकि बरसाती फसल के लिए बुवाई जून-जुलाई मे करते हैं। दक्षिण भारत में इसकी बुवाई साल भर होती है। प्रायः वीज चैरान खेत में बिखेर कर बोते हैं।

दूरी-बीजों को चौरान क्यारियों में 20-30 सेमी0 की दूरी पर पक्तियों में बोना चाहिए।

बीज दर-2-3 किग्रा. हेक्टेयर। बीज छोटे होने के कारण इसे रेत में मिला कर वोना चाहिए।

नर्सरी बनाकर बोना

कुछ लोग वीज को पहले पौधशाला में बोते हैं। फिर मकरण के 3-4 सप्ताह बाद पौधो को 10 सेमी0 की दूरी पर प्रतिरोपित कर देते हैं।

खाद एवं उर्वरक

सामान्य रूप से उत्पादक इसके लिए खाद एवं उर्वरक का प्रयोग कम ही करते हैं। प्रायः यह पूर्ववर्ती फसल द्वारा मिट्टी में छोड़े गए अवरोणों से ही अपना पोषक तत्व प्राप्त कर लेती हैं। चौलाई अनुपजाऊ भूमि से भी पोषक तत्व प्राप्त करने में सक्षम होती है। गोवर की खाद 20-30 टन प्रति हेक्टेयर खेत में डालें।

नाइट्रोजन

27 किमी0/घण्टा, फास्फोरस-27 किग्रा0/घण्टा, पोटाश-54 किग्रा./घण्टा

नाइट्रोजन को 3 बराबर भागों में बांट कर देते हैं। पहलीवार बुआई के एक माह के बाद फिर पहली एवं दूसरी कटाई के बाद ताप ड्रेसिंग के रूप में देते हैं।

सिंचाई

भारी मिट्टी में बुवाई के समय पर्याप्त नमी होनी चाहिए हल्की मिट्टी में बुवाई के बाद तुरन्त सिंचाई कर सकते हैं। गर्मी के दिनों में 4-5 दिन के अन्तर पर सिंचाई करें।

कटाई

बुवाई या प्रतिरोपण के 3-4 सप्ताह बाद इनकी पहली कटाई करते हैं। बाद में छोटी चौलाई में 3-4 सप्ताह के अन्तर पर और बड़ी चौलाई में 10 दिन के अन्तर पर कटाई करते हैं। एक फसल में 8-10 बार कटाई प्राप्त हो जाती है।

निराई गुड़ाई

समय समय पर भावत्पक निराई एवं गुड़ाई कार्य अधिक सुविधापूर्वक होता है।

उपज

हरी पत्तियों की औसत उपज 74 से 94 क्विंटल/हेक्टेयर है। इनका भण्डारण सम्भव नहीं होता है। तथा साधारण अवस्था में कुछ घंटों तक ही इसे रख सकते हैं।

उन्नत किस्में

बड़ी चौलाई-यह ऐमरेन्यरन ड्राइकलर की किस्म है। इसके पौधे लम्बे तथा तने मोटे हैं। पत्तियां बड़ी, मोटी तथा कोमल होती है। ये किस्म गर्मी एवं बरसात दोनों मौसम के लिए अत्यन्त उपयुक्त है। गर्मी के प्रारम्भ में बोने पर बरसात के अन्त तक कटाई आसानी से मिलती रहती है।

छोटी चौलाई

यह ऐम्प्रियास ब्लरिटम की किस्म है। पौधे बॉने होते हैं तथा पत्तियॉ छोटी छोटी होती है। इसका तना पतला होता है। कटाई के बाद शीघ्र ही पुनः घटि हो जाती है। यह गर्मी के लिए अत्यन्त उपयुक्त किस्म है।

वीजोत्पादन

यह एक परम्परागित फसल है। अतः दो किस्मों के बीज के लिए 600 मीटर तथा प्रमाणित वीज के लिए 500 मीटर का बिलगन अन्तर रखना चाहिए। भारत के मैदानी भागों में वीज का उत्पादन आसानी से किया जाता है। वीज प्राप्ति के लिए बाद की 2-3 कटाई नही लेते हैं। पत्तियों के पीले पड़ जाने पर पौधों को जड़ से उखाड़ दिया जाता है। इन्हें धूप में सूखा कर डण्डों से पीटते हैं। किस्म के अनुसार एक हेक्टेयर से 200 किग्रा. बीज की प्राप्ति होती है। बड़ी चौलाई के वीज की उपज कुछ आर्थिक होती है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

कुट्टू (BUCKWHEAT) के महत्व मानव आहार में

अजीत पांडे M.SC.Ag (Agronomy)
Bundelkhand University Jhansi (U.P.)
प्रशांत सिंह, रामस्वरूप चौधरी
M.Sc. Ag (Agronomy)

परिचय

- कुट्टू (Buckwheat) की कटाई 6000 ईसा पूर्व से की जाती रही है! जैसा कि आप सभी को पता होना चाहिए की कुट्टू (Buckwheat) अनाज दक्षिण पूर्व एशिया से फैला और पारंपरिक पूर्वी यूरोपीय व्यंजनों का मुख्य आधार बन गया।
- Botanical name: fagopyrum esculentum
- Origin: China
- Family: Polygonaceae.
- कुट्टू (Buckwheat) को फॉल्स सीरियल्स और pseudocereals के रूप में भी जाना जाता है।
- कुट्टू (Buckwheat) एक पौधा है जो अपनी जैसी संरचना केलिए उगाया जाता है।
- यह फल का बीज है न की घास की फसल है जिसके वजह से इसे व्रत आदि में भी उपयोग किया जाता है।
- भारत में कुट्टू को कुट्टू का आटा भी कहा जाता है (जिसे व्रत में खाया जाता है)

कुट्टू (Buckwheat) के महत्व

- आपको पता होना चाहिए की कुट्टू में 13.25 ग्राम प्रोटीन होता है।
- कुट्टू के बीज का आकार त्रिकोणीय होता है,इस कारण से इसे कुट्टू या बीच गेहूं के नाम से जाना जाता है।
- भारत में कुट्टू **(Buckwheat)** मुख्य रूप से हिमालय क्षेत्र में उगता है।
- कुट्टू (Buckwheat) एक वर्ष आधारित फसल है।
- कुट्टू में कोई ग्लूटेन नहीं होता है इसलिए इसे सिलिएक रोग या ग्लूटेन एलर्जी वाले लोगों द्वारा खाया जा सकता है।
- कुट्टू **(Buckwheat)** एक **achene** प्रकार का होता है।
- कुट्टू **(Buckwheat)** एक प्रकार का C 3 और दिन तटस्थ पौधा है।
- कुट्टू **(Buckwheat)** की पतियां और फूल रूटीन के व्यावसायिक स्रोत है।
- कुट्टू में पाए जाने वाले रूटीन एक ग्लैकोसाइड है जिसका उपयोग उच्च रक्तचाप को कम करने में के आलावा रक्तस्राव की जांच करने वाली दवा में किया जाता है।
- कुट्टू का बुआई का समय जून-जुलाई होता है।
- कुट्टू का बीज का परीक्षण का वजन 32 ग्राम है।
- वैरायटी: टोक्यो
- अन्य : चौलाई
- चेनोपोडियम

कुट्टू (Buckwheat) का उपयोग

- पुलाव और नाश्ते के दलिया में अच्छा काम करता है!
- भुने हुए अनाज के दानों को क्रोटन या ग्रेनोला के रूप में उपयोग किया जाता है!
- कुट्टू के आटे का उपयोग सोबा नूडल्स , पैनकेक और पेस्ट्री में किया जाता है।
- यह ग्लूटेन मुक्त भी है।
- खाना पकाने से पहले अनाज को अक्सर अंडे (या अन्य वसा) के साथ लेपित किया जाता है।

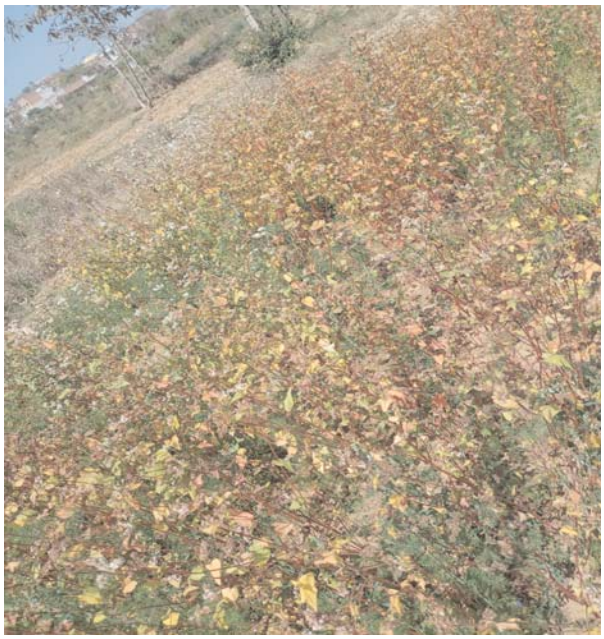

फायदे

- कुट्टू (Buckwheat) में पोषक तत्व बहुत अच्छे होते है, क्योंकि पके हुए अनाज में 92 किलो कैलोरी कार्बोहाइड्रेट, 71.5ग्राम आहार फाइबर्स,10 ग्राम वसा, 3.4 ग्राम प्रोटीन, 13.25 ग्राम रेबोफ्लेबिन (B 2), 35% (दैनिक मूल्य),47% नैसिन (B 3),पेंटोथेनिक होता है! एसिड (B 5) 25%, या 16त्न विटामिन B 6, कैल्शियम 2%, आयरन 17त्न, मैग्नीशियम 65%, 62% मैंगनीज, फास्फोरस 50%, पोटेशियम 10%, सोडियम 6% ,या जिंक 25% होता है।
- मानव आहार के लिए कुट्टू बहुत अधिक महत्वपूर्ण है!
- क्योंकि 100 ग्राम कुट्टू में 343 किलो कैलोरी होता है ,यह कार्बोहाइड्रेट,आहार फैबर्स वसा और प्रोटीन का अच्छा स्रोत है और रायबोफलेबिन, नियासिन, पैटोथेनिक एसिड और विटामिन B 6 आदि भी पाया जाता है!

कुट्टू के स्वास्थ लाभ

- कुट्टू (Buckwheat) के उत्पाद का उपयोग से हृदय रोगों के जोखिम को कम करता हैं और पोस्ट थ्रोंबोटिक सिंड्रोम,शिरापरक अप्रयाप्तता या एंडोथेलियल डिसफंक्शन और मधुमेह के जोखिम के भी कम करने में उपयोगी होता है!
- अवगुण/नुकसान
- कुट्टू (Buckwheat) के आटे का अधिक उपयोग त्वचा को एलर्जी का कारण बन सकता है!
- कुट्टू (Buckwheat) के अधिक सेवन करने से हमारे शरीर में सूजन आ जाती या फिर शरीर की त्वचा पर दाने भी दिखाई देते है।
- कुट्टू (Buckwheat) के आटा एक महीने के बाद नष्ट हो जाता है और ज्यादा पुराना आटा हमारे शरीर के अंदर फ़ूड पॉयजन या गैस का कारण बनता है।

कुट्टू के उपयोग के विभिन्न कारण और प्रभाव

- कुट्टू पोषक तत्वों के अच्छे स्रोतों के कारण हमारे आहार को पूरा करने में मदद करता है।
- यह विभिन्न बीमारियों के जोखिम को कम करने में मदद करता है। जैसे हृदय रोग, मधुमेह आदि
- यह हमारे शरीर के वजन को कम करने और हमारे शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए आटे का प्रभाव डालता है जो कि आपको देखने को मिलेगा।

निष्कर्ष

- कुट्टू के पौधा की खेती आमतौर पर भी एशिया में की जाती है और इसका उपयोग विभिन पाक उद्देश्यों के लिए किया जाता है। विशेष रूप से नूडल्स नाश्ते के भोजन और कुछ पेय पदार्थों में। कुट्टू एक अत्यंत पोस्टिक साबुत अनाज है जिसे कई लोग सुपर फूड मानते हैं।
- कुट्टू स्वास्थ के लिए भी सहायक होता है।

स्वास्थ लाभ के लिए

- कुट्टू (Buckwheat) हृदय स्वास्थ में सुधार कर सकता है।
- वजन घटाने को बढ़ावा दे सकता है और मधुमेह जैसी बीमारी को कम करने में मदद कर सकता है।
- यह प्रोटीन फाइबर्स और ऊर्जा का अच्छा स्त्रोत है।
- इसमें ग्लूटेन नहीं होता है। इसलिए सिलियक रोग या ग्लूटेन इनफ्लोरेंस वाले लोगों के लिए इसका आटा उत्कृष्ट आहार विकल्प है। सूडोसरेल्स अनाज है क्योंकि इसमें अनाज के समान कई गुड होते है लेकिन अधिकांश अन्य अनाजों की तरह घास से नहीं आता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

ई-फसल आधारित स्मार्ट खेती, (ई-सीबीएसएफ): बेहतर उपज के लिए कैसे उपयोग करें

सूरज अवस्थी (कृषि प्रसार) कृषि विभाग, इंटीग्रल विश्वविद्यालय लखनऊ (उ.प्र.)

नदीम खान (सस्य विज्ञान) कृषि विभाग, इंटीग्रल विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

डॉ. मुबीन (पादप कार्यिकी विज्ञान) मोहम्मद अली जौहर विश्वविद्यालय रामपुर

मोहम्मद मुईद (सस्य विज्ञान) कृषि विभाग, इंटीग्रल विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

धीर प्रताप (सस्य विज्ञान) कृषि विभाग, इंटीग्रल विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

सुनील कुमार (कृषि प्रसार) कृषि विभाग, इंटीग्रल विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

परिचय

इसे 2014 में आईसीएआर-सीटीसीआरआई, तिरुवनंतपुरम, केरल के प्रधान वैज्ञानिक डॉ. संतोष मिथरा द्वारा विकसित किया गया था। यह उपकरण उपज अंतर को कम करने के उद्देश्य से खेत की फसलों की नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम और पानी की आवश्यकताओं की गणना करता है। यह केंद्रीय कंद फसल अनुसंधान संस्थान, तिरुवनंतपुरम, केरल में ई-फसल-आधारित स्मार्ट फर्टिगेशन सुविधा , किसानों को पारंपरिक फ्लेमिंग विधियों की तुलना में अधिक उपज प्राप्त करने में सक्षम बनाने के लिए स्मार्ट सेवाएं प्रदान करने के महत्व पर केंद्रित है। ई-फसल आधारित स्मार्ट फार्मिंग (ई-सीबीएसएफ) एक इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) उपकरण है, जो उपज को संभावित स्तर तक बढ़ाने के लिए वास्तविक समय में फसल-विशिष्ट कृषि-सलाहकार सेवाएं प्रदान करता है। और जो हमारी फसल की पैदावार को बढ़ावा देता है. ई-फसल आधारित स्मार्ट फार्मिंग (ई-सीबीएसएफ) एक इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) उपकरण है, जो अपने वैज्ञानिक तकनीकी से मौसम और मिट्टी की स्थिति का जायजा करता है और उसमें सही और उचित फसल पैदा करने की जानकारी मुहैया कराता है. इस तकनीक को आईसीएआर-सीटीसीआरआई, तिरुवनंतपुरम के प्रधान वैज्ञानिक डॉ. संतोष मिथरा द्वारा विकसित किया गया था. इस उपकरण के माध्यम से खेती में अच्छी उपज पैदा करने और खेत की फसलों की नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम और पानी जैसी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है.

कृषि क्षेत्र में इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) क्या है?

इंटरनेट ऑफ थिंग्स, या (आईओटी) परस्पर संबंधित उपकरणों का एक नेटवर्क है जो अन्य (आईओटी) उपकरणों और क्लाउड के साथ डेटा को जोड़ता और आदान-प्रदान करता है। (आईओटी) डिवाइस आमतौर पर सेंसर और सॉफ्टवेयर जैसी तकनीक से जुड़े होते हैं और इसमें मैकेनिकल और डिजिटल मशीनें और उपभोक्ता वस्तुएं शामिल हो सकती हैं। स्मार्ट फार्मिंग एक उच्च तकनीक और टिकाऊ तरीके से कृषि और भोजन उगाने की प्रभावी प्रणाली है। यह कृषि में जुड़े उपकरणों और नवीन तकनीकों को एक साथ लागू करने का एक अनुप्रयोग है। स्मार्ट खेती मुख्य रूप से इंटरनेट ऑफ थिंग्स

पर निर्भर करती है जिससे किसानों और उत्पादकों के शारीरिक श्रम की आवश्यकता समाप्त हो जाती है और इस प्रकार हर संभव तरीके से उत्पादकता में वृद्धि होती है। कृषि पर निर्भर हाल की कृषि प्रवृत्तियों के साथ, इंटरनेट ऑफ थिंग्स ने पानी के कुशल उपयोग, इनपुट के अनुकूलन जैसे कई अन्य और बड़े लाभ लाए हैं। जिससे भारी लाभ और कितना फर्क पड़ा जो हाल के दिनों में एक क्रांतिकारी कृषि बन गया है। इंटरनेट ऑफ थिंग्स आधारित स्मार्ट खेती वास्तविक समय में क्षेत्र की निगरानी करके संपूर्ण कृषि प्रणाली में सुधार करती है। सेंसर और इंटरकनेक्टिविटी की मदद से, कृषि में इंटरनेट ऑफ थिंग्स ने न केवल किसानों का समय बचाया है, बल्कि पानी और बिजली जैसे संसाधनों के अनावश्यक उपयोग को भी कम किया है। यह नमी, तापमान, मिट्टी आदि जैसे विभिन्न कारकों को नियंत्रण में रखता है और एक क्रिस्टल स्पष्ट वास्तविक समय अवलोकन देता है। तेजी से, विभिन्न उद्योगों में संगठन अधिक कुशलता से काम करने, बेहतर ग्राहक सेवा प्रदान करने, निर्णय लेने में सुधार करने और व्यवसाय के मूल्य को बढ़ाने के लिए (आईओटी) का उपयोग कर रहे हैं।

उद्देश्य

- इंटरनेट ऑफ थिंग्स की अवधारणा को समझने के लिए।
- कृषि में इंटरनेट ऑफ थिंग्स के अनुप्रयोगों को जानना।
- भारतीय कृषि परिदृश्य में इंटरनेट ऑफ थिंग्स को लागू करने की बाधाओं पर चर्चा करना।
- कृषि में इंटरनेट ऑफ थिंग्स से संबंधित केस स्टडी की समीक्षा करना।

कृषि में इंटरनेट ऑफ थिंग्स के अनुप्रयोग

- मिट्टी की नमी और तापमान की निगरानी
- पानी, उर्वरक, कीटनाशकों आदि जैसे आदानों का कुशल उपयोग। द्य उत्पादन की कम लागत
- नियंत्रित सिंचाई द्य कनेक्टेड ग्रीनहाउस और अस्तबल द्य पशुधन निगरानी द्य कीट निगरानी
- भंडारण की निगरानी द्य कृषि उत्पादों पर नजर रखना द्य अवैध कटाई की रोकथाम
- मोबाइल मनी ट्रांसफर

ई-फसल आधारित स्मार्ट खेती के लाभ

इस युग में कृषि में प्रौद्योगिकी की बहुत जरुरत होती है. यह तकनीक प्रदूषण कम कर सकती है और जलवायु को स्वस्थ भी बनाए रखने में मदद करती है. इसकी मदद से सही समय पर पौधों की वृद्धि के साथ उसका फर्टिगेशन कर उर्वरक और पानी की सही मात्रा प्रदान की जा सकती है. यह तरीका पारंपरिक खेती की तुलना में बहुत ही फायदेमंद है. प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों और सीमित संसाधनों में उत्पादकता बढ़ाने के लिए ई-क्रॉप सबसे उपयुक्त तकनीक है

ई-सीबीएसएफ के उपयोग का तरीका

यह ई-क्रॉप फर्टिगेशन तकनीक अपनी एआई तकनीक से माध्यम से आवश्यकताओं को टेक्स्ट संदेश के माध्यम से स्मार्ट फर्टिगेशन सिस्टम को भेजता है. सिस्टम संदेशों को डिकोड करता है और संदेश में मात्रा के अनुसार संबंधित कंटेनर से नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम और पानी को पौधों को प्रदान करता है. फिर यह इन सभी तत्वों को मिश्रण कक्ष में भेजता है, जहां पोषक तत्वों को पानी के साथ मिलाया जाता है और ड्रिप स्प्रिंकलर के माध्यम से फसलों तक पहुंचाया जाता है. इस तकनीक का सबसे अच्छा फायदा यह है कि इसे आप मोबाइल उपकरण के माध्यम से दुनिया के किसी जगह से भी संचालित कर सकते हैं. इस तकनीक को कसावा, शकरकंद और केले जैसी तमाम फसलों पर उपयोग किया जा सकता है. यह पारंपरिक खेती की तुलना में 50त्न अधिक उपज देता है. इस तकनीक को उपयुक्त फसल मॉडल को एकीकृत करके इस तकनीक को अन्य क्षेत्रीय फसलों के लिए अपनाया जा सकता है।

भारतीय कृषि परिदृश्य में इंटरनेट ऑफ थिंग्स को लागू करने में बाधाएं

- छोटी, बिखरी हुई भूमि जोत द्य प्रौद्योगिकियों की जटिलता, मापनीयता और वहनीयता
- गोपनीयता और सुरक्षा संबंधी चिंताएं
- इंटरनेट कनेक्टिविटी और उपलब्धता
- उपभोक्ताओं के बीच उपकरणों और प्रणालियों के बारे में कम जागरूकता द्य निवेश और उद्यम पूंजी कोष की कमी द्य पर्यावरणीय प्रभाव
- मानव नैतिक निर्णय लेने को प्रभावित करता है।

इंटरनेट ऑफ थिंग्स खेती में विस्तार कर्मियों की भूमिका

- जागरूकता सृजन गतिविधियाँ।
- सेंसर के उपयोग, डेटा के विश्लेषण और निर्णय लेने पर कौशल प्रशिक्षण। ■ नवाचारों का परिचय।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

लौकी : उपयोग और प्रसंस्करण के साथ मूल्यवर्धित उत्पादों की महत्वपूर्ण सम्प्रेषणा

शुभम गंगवार, रोहित कुमार, शंकर राजपूत
पी.एच.डी. शोधार्थी फसलोत्तर प्रौद्योगिकी विभाग
बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय बांदा (उ.प्र.)

प्रस्तावना

पौष्टिक भोजन की पहचान भारतीय सभ्यता की सबसे महत्वपूर्ण धारा में से एक है। इसमें विभिन्न प्रकार की सब्जियां और फलों का विशेष महत्व है जो हमारे शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करते हैं। इन्हीं में से एक है 'लौकी', जिसे गर्मियों के मौसम में खासकर पसंद किया जाता है। यह स्वास्थ्यवर्धक गुणों से भरपूर होता है और इसके प्रसंस्करण से कई मूल्यवर्धित उत्पाद बनाए जाते हैं। इस लेख में, हम लौकी के उपयोग, प्रसंस्करण और मूल्यवर्धित उत्पादों की बात करेंगे।

लौकी के उपयोग

लौकी का वैज्ञानिक नाम ''लागेनेरिया सिक्राटिवा'' है और यह गर्मियों के मौसम में पाया जाता है। यह एक हल्की, सुगन्धित और स्वादिष्ट सब्जी होती है जो पौष्टिकता से भरपूर है। लौकी में जल, पोटैशियम, कैल्शियम, विटामिन सी, विटामिन बी6 और फोलिक एसिड जैसे महत्वपूर्ण पोषक तत्व पाए जाते हैं। यह गर्मियों में ताजगी और ऊर्जा प्रदान करने में मदद करता है और त्वचा को भी स्वस्थ रखने में सहायक होता है। लौकी को ताजे रूप में सलाद बनाकर, रेस्टोरेंट्स में सब्जी की तरह या सूप के रूप में आसानी से खाया जा सकता है। इसके अलावा, लौकी की सब्जी, कोफ्ता, हलवा, चिप्स और अचार जैसे विभिन्न व्यंजन बनाए जाते हैं।

लौकी के स्वास्थ्य लाभ

लौकी एक पौष्टिक और स्वादिष्ट सब्जी है जिसमें कई स्वास्थ्य लाभ छिपे होते हैं। यह विटामिन सी का अच्छा स्रोत होता है जो हमारे शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूती प्रदान करने में मदद करता है। इसमें अच्छी मात्रा में फाइबर होता है जो पाचन को सहायक होता है और अपच की समस्या से राहत दिलाता है। लौकी में थायमिन, नियासिन और विटामिन बी6 भी पाए जाते हैं जो न्यूरोलॉजिकल और कार्डियोवैस्कुलर स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करते हैं। यह मधुमेह के नियंत्रण में भी सहायक हो सकती है और वजन को भी नियंत्रित करने में सहायक होती है क्योंकि यह कम कैलोरी में भरपूर होती है। इसके अलावा, लौकी के सेवन से हमारे बालों, त्वचा और आँखों की सेहत में भी सुधार होती है।

लौकी का प्रसंस्करण

लौकी का प्रसंस्करण उसके विभिन्न प्रकार के उत्पाद बनाने के लिए किया जाता है। यह सुनिश्चित करने में मदद करता है कि इसके पोषण संरचना को सुरक्षित रखा जा सके और उसकी दर्जनों अवधियाँ बढ़ जाती हैं।

लौकी का कद्दूकसः

लौकी को छोटे छोटे टुकड़ों में कद्दूकस करके इसका सब्जी बनाई जा सकती है। इसमें टमाटर, प्याज, धनिया पत्ती, हरी मिर्च और मसाले डालकर तैयार किया जाता है। यह खासतर साथ में चपाती या रोटी के साथ खाया जाता है।

लौकी के कोफ्ते

लौकी के कोफ्ते एक प्रसिद्ध उपयोग हैं जिन्हें बनाने के लिए लौकी को छोटे टुकड़ों में कद्दूकस करके मिलाया जाता है। इसमें ब्रेड क्रम्ब्स, उबले हुए आलू, नमकीन, मसाले आदि डालकर गोलीबढ़ के कोफ्ते बनाए जाते हैं जो ग्रेवी में डालकर परोसे जाते हैं।

लौकी का हलवा

लौकी का हलवा एक मिठाई के रूप में बनाया जाता है और यह विशेषतः त्योहारों जैसे दिवाली पर पसंद किया जाता है। लौकी को ताजे रूप में कद्दूकस करके इसमें दूध, चीनी, घी और खास्ता मिलाकर बनाया जाता है।

लौकी की चिप्स

लौकी की चिप्स भी एक स्वादिष्ट और स्वस्थ उपाय होता है लौकी का उपयोग करके। इसके लिए लौकी को पत्तों की तरह पतले टुकड़ों में कटा जाता है और उन्हें तेल में तलकर मसाले या नमक लगाकर खाया जा सकता है।

लौकी के मूल्यवर्धित उत्पाद

लौकी का प्रसंस्करण मूल्यवर्धित उत्पादों के निर्माण के लिए भी किया जाता है जो कि आजकल लोगों की मांग को पूरा करते हैं। यह न केवल उपभोक्ताओं को विविधता प्रदान करता है बल्कि किसानों को भी अधिक मुनाफा दिलाता है।

लौकी का जूस

लौकी का जूस एक पौष्टिक पेय होता है जिसमें विटामिन, मिनरल्स और ऊर्जा होती है। यह ताजगी और ऊर्जा प्रदान करने के लिए अच्छा होता है और गर्मियों में ठंडे जूस की तरह पिया जा सकता है।

लौकी की खीर

लौकी की खीर एक पौष्टिक मिठाई होती है जिसमें लौकी को दूध, चीनी और मेवों के साथ गरम करके बनाया जाता है। यह खासकर स्वतंत्रता दिवस जैसे त्योहारों पर बनाई जाती है।

लौकी की मरम्मिट

लौकी की मरम्मिट एक अद्वितीय और स्वादिष्ट उत्पाद है जो ब्रेड, चपाती, दही या परांठे के साथ सेव किया जा सकता है। इसमें लौकी को चीनी और मसाले के साथ पकाकर बनाया जाता है।

लौकी के पापड

लौकी के पपड़ एक लोकप्रिय व्रत के उपवास में खाये जाने वाले उत्पाद होते हैं। यह लौकी के रस को बर्तन में डालकर उसकी परत को सुखाया जाता है और उसे सूखे में बदलने के बाद पत्तों की तरह काटकर तैयार किया जाता है।

निष्कर्षण

लौकी एक ऐसी सब्जी है जिसमें पौष्टिकता और स्वाद समृद्ध होता है और जिसके प्रसंस्करण से विभिन्न मूल्य-वर्धित उत्पाद बनाए जा सकते हैं। यह स्वास्थ्यवर्धक तत्वों से भरपूर होने के साथ-साथ विभिन्न व्यंजनों में भी उपयोग किया जाता है। इसका सही तरीके से प्रसंस्करण करके हम उसके सभी लाभों का आनंद उठा सकते हैं और इसकी मदद से अनेक स्वादिष्ट और पौष्टिक व्यंजन तैयार कर सकते हैं।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

भारत में दलहनी फसलों की मूल्य श्रृंखला: चुनौतियां एवं संभावनाएं

उमा साह, जितेन्द्र ओझा
विक्रांत सिंह, विकास कुमार मौर्या
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर (उ.प्र.)

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ कृषि पारिस्थितिकी के अनकूल विभिन्न फसलों व खाद्य पदार्थों का उत्पादन किया जाता है। उत्पादन पश्चात, इनके वितरण एवं उपभोग हेतु उत्पाद को अंतिम उपभोक्ता तक पहुंचाया जाता है। उत्पादक द्वारा अंतिम उपभोक्ता तक खाद्य उत्पादों और सेवाओं को कुशल तरीकों से आपूर्ति सुनिश्चित करने में विभिन्न चरण, जिसमें उत्पादन, वितरण तथा उपभोक्ता द्वारा उत्पाद की प्राप्ति शामिल होते हैं जिन्हें सम्मिलित रूप से मूल्य श्रृंखला कहते हैं।

वर्ष 2021-22 में भारत के 28.83 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र पर दलहनी फसलों की खेती की गयी तथा कुल दलहन उत्पादन 25.72 मिलियन टन प्राप्त किया गया। देश में दलहनी फसलों में चना, अरहर, मसूर, मटर, उर्द तथा मूंग आदि दलहनी फसलों की खेती मुख्य रूप से की जाती है। मध्य प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र एवं उत्तर प्रदेश राज्य देश में प्रमुख दलहन उत्पादक राज्य हैं। दलहनी फसलों का सेवन भारत के शाकाहारी वर्ग के लोगों द्वारा प्रोटीन के मुख्य स्रोत के रूप में किया जाता है। देश में कुल दलहन क्षेत्र का लगभग 56 प्रतिशत क्षेत्र तथा कुल उत्पादन का 83 प्रतिशत उत्पादन वर्षा आधारित क्षेत्रों में होता है। दलहनी फसलों को सीमित संसाधन परिस्थितियों में पसंदीदा फसलों के रूप में उगाया जाता है। देश में दलहनी फसलों के उत्पादन से अंतिम उपभोगता द्वारा दालों के उपभोग के मध्य एक विस्तृत मूल्य श्रृंखला व्याप्त है जिसमे उत्पादक, आपूर्तिकर्ताओं, वितरकों, भागीदारों तथा हितधारकों द्वारा मूल्य निर्माण की प्रक्रिया के लिए जिम्मेदार हैढ्ढ कृषक, आदान आपूर्तिकर्ता, शोधकर्ता, आढ़तिया, थोक व्यापारी, कमीशन एजेंट, खुदरा विक्रेता, प्रोसेसर, मिलर्स आदि बाजार हितधारक मूल्य श्रृंखला में मुख्य भूमिका निभाते हैं।

देश में दलहनी फसलों की मूल्य श्रृंखला में राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली में कार्यरत दलहनी फसलों की उत्पादकता बढ़ाने में योगदान दे रहे कृषि वैज्ञानिक भी शामिल हैं। कृषि वैज्ञानिकों द्वारा 500 से अधिक क्षेत्र विशिष्ट उन्नत दलहन प्रजातियों का विकास किया गया है साथ ही देश में दलहनी फसलों की उन्नत गुणवत्तायुक्त बीजों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए 150 दलहन बीज हब केंद्रों की स्थापना की गई है। इसके साथ-साथ देश में दलहनी फसलों की उन्नत उत्पादन तकनीकों पर प्रति वर्ष लगभग 34000 अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों का भी आयोजन किया जा रहा है। भारत सरकार द्वारा सार्वजानिक वितरण प्रणाली, दलहनी फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य में वृद्धि तथा मूल्य स्थिरता योजना का दलहन उत्पादन में सकारात्मक प्रभाव देखा जा सकता है। देश के दलहन उत्पादकों को प्रोत्साहित करने के लिए आयात-निर्यात नीति में भी समय-समय पर संशोधन किया जाता है। उपरोक्त प्रयासों के परिणामस्वरुप वर्ष 2014-15 में दलहन उत्पादन (लगभग 35%) 17.15 मीट्रिक टन से बढ़कर वर्ष 2021-22 में 25.72 मिलियन टन दर्ज की गयी है जो दलहनी फसलों के उत्पादन द्वारा आत्मनिर्भरता की दिशा में सफल कदम को प्रदर्शित करती है।

दलहनी फसलों में व्याप्त विपणन श्रंखला व मूल्य श्रृंखला में चुनौतियां: दलहनी फसलों की विपणन श्रंखला में कृषक अपने उत्पाद को मुख्य रूप से ग्रामीण व्यापारियों, आढ़तियों, स्थानीय बाजार के आढ़तियों तथा थोक विक्रेताओं को बेचते है। यह कृषक इसके विपरीत, बड़े किसान आपने उत्पाद को बेचने के लिए बड़े बाजारों को प्राथमिकता देते हैं। दलहनी फसलों का बाजार मूल्य, धान्य फसलों की तुलना में अधिक होता है, लेकिन कम उपज के कारण कृषक को दलहनी फसलों से सीमित लाभ प्राप्त होता हैं। उत्पाद का उचित मूल्य न मिलना, लागत की तुलना में कम लाभ, बाजार भाव अस्थिरता, उत्पादकों का बड़ी मंडियों व बाजारों तक सीमित पहुंच, दलहन उत्पादकों के लिए उपज बेचने के लिए सीमित विकल्प आदि भारतीय कृषि बाजारों में दलहन किसानो के लिए प्रमुख समस्या है।

देश में दलहनी फसलों की खेती साधारणता सीमित संसाधनों में की जाती है जिनमें उर्वरकों, कीटनाशी रसायनों, खरपतवारनाशी, सिचाई आदि आदानों का सीमित प्रयोग सामिल्लित है। दलहनी फसलों की विभिन्न जैविक व अजैविक तनावों के कारण अनिश्चित पैदावार, के कारण कृषकों द्वारा अन्य फसलों की तुलना में कम संसाधन व भूमि आवंटित करते हैं। दलहनी फसलों की विपणन श्रंखला में कृषकों और उपभोक्ताओं के मध्य, आढ़तिया, थोक व्यापारी, कमीशन एजेंट, प्रोसेसर और खुदरा विक्रेता आदि बिचौलिए मध्यस्ता करते हैं। इस श्रृंखला में मूल्य संवर्धन के परिपेक्ष में दलहन प्रसंस्करण की व्यवस्था प्रायः उत्पादन क्षेत्रों से दूर शहरों में स्थित होती है और अधिक कीमत मांगती है।

देश में दलहनी फसलों की विपणन श्रृंखला में उच्च विपणन लागत और सीमांत लाभ का कारण कम विपणन दक्षता है। उदारण के लिए एक शोध के अनुसार, पंजाब में हरी मटर के विपणन में शामिल बिचौलियों की संख्या के आधार पर विभिन्न विपणन श्रृंखलों में उपभोक्ता रुपये में उत्पादकों की हिस्सेदारी 55.32 से 64.57 प्रतिशत देखी गयी थी। इसी तरह विभिन्न विपणन श्रृंखलाओं में विपणन दक्षता 1.24 से 1.82 के मध्य देखी गयी। विपणन श्रृंखलाएं जिनमें उत्पादक व उपभोगता सीधे रूप से जुड़ते हैं उनमें विपणन दक्षता अधिक होती है। इसके विपरीत अधिक संख्या में हितधारकों की उपस्थिति इन श्रृंखलाओं की दक्षता में कमी का कारण बनती है। देश में उन्नत दलहन उत्पादन तकनीकों को सीमित स्तर पर ही दलहन उत्पादक द्वारा अंगीकृत किया गया है। परिणाम स्वरुप अधिकांश दलहनी फसलों में, संभावित उपज और वास्तविक उपज के बीच वृहद अंतर मौजूद है। विभिन्न उत्पादन परिस्थितियों में राष्ट्रीय औसत की तुलना में दलहनी फसलों की राज्यस्तर की पैदावार कम है। साथ ही गुणवत्ता युक्त बीजों की अनुपलब्धता तथा आवारा जानवरों द्वारा फसलों को नुकसान आदि भी दलहनी फसलों की उत्पादकता पर नकारात्मक प्रभाव के कारण हैं।

बाजार की सीमित जानकारी और जमाखोरी देश में दलहनी फसलों की पूरी मूल्य श्रृंखला को प्रभावित करते हैं। कृषक सामान्यतः बाजार भाव की जानकारी व्यक्तिगत या फोन के माध्यम से या साथी कृषकों से प्राप्त करते हैं जो बाजार में पहुंचते हैं। साथ ही विस्तार शिक्षा संबंधी बाधाएं जिनमें विशेष रूप से, कीटनाशक डीलरों आदि पर विस्तार प्रणाली की बहुलता, पोषक तत्व प्रबंधन, रोग और कीट प्रबंधन पर पर्याप्त सलाहकार सेवाएं का आभाव, विश्वसनीय बाजार सूचना प्रणाली का अभाव आदि देश में दलहन विपणन प्रणाली के बाधाकारक अवयव हैं। दलहन उत्पादन क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर दलहन प्रसंस्करण इकाइयों की अनुपलब्धता के साथ-साथ क्षेत्र के लिए उपयुक्त प्रजातियों की अनुपलब्धता, भंडारण सुविधाओं की कमी, अविश्वसनीय बाजार सूचना प्रणाली, प्रसंस्करण के लिए कच्चे माल की अनुपलब्धता, बिजली की कमी, बाजार की कीमतों में उतार-चढ़ाव और उच्च मंडी शुल्क इत्यादि महत्वपूर्ण दलहन उत्पादन को प्रभावित करने वाले कारक हैं। मूल्य श्रृंखला में सम्मिलित बिचौलिये मूल्य श्रृंखला के चरणों और हितधारकों के बीच समन्वयन के कारण उनको लाभ अधिक मिलता है।

दलहनी फसलों की प्रभावी मूल्य श्रंखला के लिए रणनीति: दलहनी फसलों की मूल्य श्रृंखला प्रभावी बनाने के लिए दलहन उत्पादकों और प्रसंस्करणकर्ताओं के मध्य मजबूत संबंध आवश्यक है। दलहनी फसलों के कुशल वितरण और मंडियों में कच्चे उत्पाद की कुशल खरीद के लिए प्रसंस्करणकर्ता स्वयं का खुदरा स्टोर खोल सकते है जो अंततः ग्राहकों की लागत में कमी ला सकता है। सहकारी समितियों या कृषक संगठनों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में दलहन प्रसंस्करण केंद्रों (दाल मिलों) की स्थापना से दलहन मूल्य श्रृंखला में व्याप्त बिचौलियों की संख्या सीमित हो सकती है जिससे दलहन उत्पादकों के लिए सीमांत लाभ में बढ़ोत्तरी की जा सकेगी। दूसरी ओर ग्रामीण स्तर पर प्रसंस्करण केन्द्रों की स्थापना विपणन मूल्य को भी सीमित कर सकती है और ग्रामीण स्तर पर रोजगार के अवसर प्रदान कर सकती है।

भारत में अधिकांश दालें मुख्यतः खुले रूप में बेची जाती हैं, जबकि शहरी खपत का लगभग 10-20 प्रतिशत और ग्रामीण खपत का एक नगण्य हिस्सा पैकेज्ड रूप में बेचा जता है। भारत में दलहन का व्यापार असंगठित क्षेत्र द्वारा किया जाता है। कृषि वस्तुओं की मूल्य श्रृंखला के विकास में विनियमित बाजारों की सकारात्मक भूमिका रही इसलिए देश में दालों की मूल्य श्रृंखला को मजबूत करने के लिए उत्पादन केंद्रों और उसके आसपास बाजार के बुनियादी ढांचे जैसे भंडारण, ऋण और प्रसंस्करण सुविधाओं में सुधार आवश्यक है। संगठित उत्पादक समूह जैसे कृषक उत्पादक संघ बनाकर उत्पादन करने तथा उत्पादन के अतिरिक्त प्रसंस्करण, संचयन तथा विपणन आदि कार्यों के निष्पादन से उत्पादक अधिकतम सीमांत लाभ लेने में समर्थ होगा। साथ ही मूल्य श्रृंखला में अन्य हितधारकों के न होने के कारण श्रृंखला की दक्षता भी अधिकतम होगी। मूल्य श्रृंखला में उत्पादक व उपभोगता के बीच विभिन्न हितधारक होते हैं जो उत्पादक के लाभ को कम करते हैं। उत्पादक व उपभोगता के बीच परस्पर सीधे सम्बन्ध मूल्य श्रृंखला की दक्षता को बढ़ते हैं जो श्रृंखला में अन्य हितधारकों की उपस्थिती न होने से उत्पादक को मिलने सीमांत लाभ को अधिकतम करते हैं।

उपसंहार: भारत में दलहन की खेती मुख्य रूप से सीमित संसाधन वाली परिस्थितियों में की जाती है, जिसमें कृषकों द्वारा उन्नत उत्पादन तकनीकों का सीमित उपयोग किया जाता है। नीतिगत समर्थन के साथ अनुसंधान और विस्तार प्रणाली के संयुक्त प्रयासों से हाल के दिनों में देश में दलहन उत्पादन में वृद्धि दर्ज हुई है। देश में दलहनी फसलों के उत्पादन से अंतिम उपभोगता द्वारा दलहनी फसलों के उपभोग के मध्य लम्बी मूल्य श्रृंखला देखी जाती है जिसमें विभिन्न आपूर्तिकर्ताओं, वितरकों, भागीदारों तथा हितधारकों द्वारा मूल्य निर्माण की प्रक्रिया को भी समझा जा सकता है। लंबी श्रृंखला, उच्च विपणन लागत व उत्पादकों के कुल लाभ में सीमित हिस्सेदारी के लिए जिम्मेदार है। कृषकों द्वारा उन्नत दलहन उत्पादन तकनीक को अपनाने में कमी और उपज अंतर, उपलब्ध उत्पादन संसाधनों का निम्न आवंटन, बुनियादी सुविधाओं की अनुपलब्धता व बाजार की जानकारी का अभाव, कम विपणन दक्षता आदि दलहन मूल्य श्रृंखला को कम प्रभावी बनाने वाले कारक हैं। अतः दलहन मूल्य श्रृंखला को अनुसंधान व उपयुक्त रणनीति, उत्पादकों और बाजारों के बीच पारस्परिक संबंधों के साथ-साथ उत्पादक व उपभोगता के बीच सीधे सम्बन्ध को बढावा, बाज़ार नवाचार, संगठित एवं बहुआयामी उत्पादक आदि को प्रभावी बनाकर, सुदृढ़ किया जा सकता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

फलों और सब्जियों में कटाई उपरांत रोग प्रबंधन

कैलाश पटेल विद्यावाचस्पति, पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

डॉ. अर्जुन लाल यादव सहायक आचार्य, पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

राहुल जाखड़ विद्यावाचस्पति, शस्य विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, श्री गंगानगर, (राजस्थान)

खाद्य और कृषि संगठन के आंकड़ों के अनुसार, 2019 में कुल खाद्य हानि में फलों और सब्जियों की हिस्सेदारी 21.6% थी, जो खाद्य समूहों में दूसरे स्थान पर है। रोगजनक सूक्ष्मजीवों के कारण होने वाली कटाई के बाद की बीमारियाँ फलों और सब्जियों के नुकसान का प्रमुख कारण हैं। सब्जियों और फलों की फसलों की भोजन और पोषण में महत्वपूर्ण भूमिका होती है और मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखती है। वैश्विक सब्जी उत्पादन में 16% (191.77 मीट्रिक टन) हिस्सेदारी के साथ भारत दुनिया में सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। प्रत्येक वर्ष, फसल कटाई के बाद (40-60%) सब्जियों की फसलों को खेतों में खराब होने वाली प्रकृति (15-20 प्रतिशत), पैकेजिंग और भंडारण (15-20%) और परिवहन (30-40%) के कारण नुकसान होता है। सब्जियों और फलों के रोगजनकों की बेहतर समझ और सब्जियों और फलों की कटाई के बाद खराब होने के सुरक्षित प्रबंधन के निर्माण के लिए कटाई के बाद की सब्जी और फलों के रोगजनकों (रोगों) की रूपरेखा, पहचान और निदान आवश्यक है। बागवानी उत्पादों को कटाई के बाद के रोगजनकों द्वारा खराब कर दिया जाता है और माइकोटॉक्सिन के उत्पादन और अन्य संभावित मानव स्वास्थ्य जोखिमों के कारण उन्हें मानव उपभोग और बाजार के लिए अनुपयुक्त बना देता है।

उद्यानिकी फसलों के कटाई उपरांत रोगों का आर्थिक एवं स्वास्थ्य पर प्रभाव: कटाई के बाद के रोग सब्जियों और फलों के गुणात्मक और मात्रात्मक नुकसान का कारण बनते हैं और संभावित स्वास्थ्य जोखिमों के कारण उन्हें मानव उपभोग के लिए अनुपयुक्त बना देते हैं। काली, सफेद और पीली कवक से प्राप्त कार्सिनोजेनिक मायकोटॉक्सिन और म्यूटाजेनिक सेकेंडरी मेटाबोलाइट्स के कारण बड़ी संख्या में कटाई के बाद के रोग होते हैं। कटाई के बाद की बीमारी के कारण होने वाली हानियां कटाई से लेकर खपत तक उपज के प्रबंधन के दौरान हो सकती हैं। प्राथमिक और द्वितीयक कृषि पद्धतियां भी महत्वपूर्ण हैं और कटाई, पैकेजिंग और परिवहन जैसी लागतों को कटाई के बाद की बर्बादी के परिणामस्वरूप खोई हुई उपज के मूल्य का आकलन करते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए। ताजी सब्जियां और कुछ फल जल्दी खराब होने वाले होते हैं और इनकी शेल्फ लाइफ अपेक्षाकृत कम होती है। ताजी सब्जियां और कुछ फल जीवित, सांस लेने वाले ऊतक होते हैं जो कटाई के तुरंत बाद जीर्ण होना शुरू कर देते हैं। उनमें ज्यादातर पानी होता है, जिसमें अधिकांश में 90-95 प्रतिशत नमी होती है। सब्जियों और फलों की जल्दी खराब होने वाली प्रकृति के कारण, कटाई के बाद के प्रबंधन के लिए विशेष कौशल की आवश्यकता होती है। एस्परगिलस फ्लेवस एक मृतोपजीवी मिट्टी में रहने वाला कवक है जो कटाई के बाद की सब्जियों और फलों को संक्रमित करता है और दुनिया के उष्णकटिबंधीय, उपोष्णकटिबंधीय और समशीतोष्ण भौगोलिक क्षेत्रों में कार्सिनोजेनिक द्वितीयक मेटाबोलाइट एफ्लाटॉक्सिन का उत्पादन करता है। यह दूषित भोजन और फीड की खपत के कारण और आक्रामक वृद्धि (एस्परगिलोसिस के कारण) के कारण पशु और मानव रोग (एफ्लैटॉक्सिकोसिस औरध्या यकृत कैंसर का कारण बनता है) का कारण बनता है, जो अक्सर उन मनुष्यों के लिए घातक होता है जो प्रतिरक्षा में अक्षम होते हैं।

बागवानी फसलों में फसलोत्तर हानियों की चुनौतियां: कटाई के बाद की अच्छी प्रबंधन प्रथाओं का उपयोग जो अच्छी तकनीकों द्वारा समर्थित हैं और कटाई के बाद की प्रणालियों में सुधार से सब्जियों और फलों की गुणवत्ता बनी रहेगी और मात्रात्मक नुकसान कम होगा। बागवानी फसलों में नुकसान (1) सही कटाई सूचकांक के बारे में कम जानकारीय इस प्रकार, काटी गई फलियों का एक बड़ा हिस्सा आमतौर पर अधिक परिपक्व होता है (2) खराब हैंडलिंग प्रथाएं, जैसे कि थोक पैकेजिंग और परिवहन के लिए प्लास्टिक की बोरियों का उपयोग जिसके परिणामस्वरूप यांत्रिक क्षति होती है जो रोग पैदा करने वाले जीवों के लिए प्रवेश बिंदु के रूप में कार्य करती है जिससे फली सड़ जाती है (3) खराब परिवहन पद्धतियां जैसे बिना ढके ट्रकों का उपयोग, इस प्रकार उत्पाद को सीधे सूर्य की रोशनी और उच्च तापमान के संपर्क में लाना (4) कम तापमान वाली भंडारण सुविधाओं और परिवहन प्रणालियों की अनुपस्थिति, और (5)खुदरा बाजारों में वितरण के दौरान खराब हैंडलिंग प्रथाएं।

कटाई उपरांत रोगों के कारण: सामान्य तौर पर, कटाई के बाद के रोग और सब्जियों के नुकसान कवक और बैक्टीरिया द्वारा उकसाए जाते हैं। पोस्टहार्टवेस्ट बीमारियों को अक्सर संक्रमण के आधार पर ष्मौनष् या ष्अव्यक्तष् के रूप में वर्गीकृत किया जाता है, जहां रोगजनक खेत में फसल से पहले संक्रमित होता है। मौन संक्रमणों से उत्पन्न होने वाले पोस्टहार्टवेस्ट रोगों के उदाहरणों में कोलेटोट्रिचम एसपीपी के कारण होने वाली विभिन्न सब्जियों और फलों के एन्थ्रेक्नोज शामिल हैं। और बोट्रीटीस सिनेरिया के कारण होने वाला ग्रे मोल्ड रोट। कुछ रोगजनक सब्जियों और फलों को तोड़ने के बाद भण्डारण और परिवहन के दौरान संक्रमित करते हैं, जिसे फसल कटाई के बाद का संक्रमण कहा जाता है। कटाई के बाद खराब होने का प्रबंधन एक बहुत ही मुश्किल काम होता जा रहा है क्योंकि खाद्य सुरक्षा के लिए उपभोक्ता चिंता के साथ उपलब्ध कीटनाशकोंध्रसायनों में तेजी से गिरावट आ रही है।

कटाई के बाद के कवक रोग: कटाई के दौरान और बाद में शुरू होने वाले घाव के संक्रमण से उत्पन्न होने वाली आम पोस्ट हार्वेस्ट बीमारियों में नीली और हरी मोल्ड (पेनिसिलियम एसपीपी) और ट्रांजिट रोट (राइजोपस स्टोलोनिफर) शामिल हैं। एनामॉर्फिक पोस्ट हार्वेस्ट रोगजनकों के महत्वपूर्ण कवक जनन में पेनिसिलियम, एस्परगिलस, जियोट्रिचम, बोट्राइटिस, फुसैरियम, अल्टरनेरिया, कोलेटोट्रिचम, फोमोप्सिस, राइजोक्टोनिया, स्क्लेरोटियम और स्क्लेरोटिनिया शामिल हैं। कटाई के बाद की सब्जियों का सबसे महत्वपूर्ण पैथोसिस्टम ग्रे मोल्ड (बोट्रीटिस एसपीपी), सफेद मोल्ड और पानी की नरम सड़न (स्क्लेरोटिनिया एसपीपी), कॉटनी लीक (पायथियम एसपीपी) और स्क्लेरोटियम रोट (स्क्लेरोटियम रॉल्फसी) हैं।

कटाई के बाद के जीवाणु रोग: पौधे रोगजनक जीवाणु आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण सब्जियों और फलों की कटाई के बाद की बीमारियों का कारण बनते हैं। शीर्ष दस जेनेरा से संबंधित जीवाणु की विभिन्न प्रजातियां जैसे-स्यूडोमोनासय, रालस्टोनियाय, एग्रोबैक्टीरियमय, जैंथोमोनास, इरविनियाय, जायलेलाय, डिकेया, पेक्टोबैक्टीरियम इतियादि विनाशकारी पौधे रोगजनक हैं। वे सीधे पौधे के ऊतकों में प्रवेश करने में असमर्थ होते हैं हालाँकि, वे घावों या प्राकृतिक पौधों के उद्घाटन के माध्यम से प्रवेश करते हैं। उत्पाद की छंटाई और तुड़ाई जैसे कार्यों के दौरान कीड़ों और औजारों के कारण घाव हो सकते हैं। जीवाणु केवल अधिक सक्रिय हो जाते हैं और कारक अनुकूल होने पर संक्रमण का कारण बनते हैं। संक्रमण के लिए अनुकूल कारक उच्च आर्द्रता, भीड़भाड़, खराब वायु परिसंचरण, अधिक पानी देने, कम पानी देने, या अनियमित पानी देने, खराब मिट्टी के स्वास्थ्य, और कमी या अतिरिक्त पोषक तत्वों के कारण पौधे का तनाव है। मुक्त नमी और मध्यम तापमान उपलब्ध होने पर जीवाणु तेजी से गुणा करते हैं।

कटाई उपरांत रोग प्रबंधन: कटाई के बाद की बीमारियों के प्रबंधन के लिए, विभिन्न विधियों का विकास किया गया है, जिन्हें मोटे तौर पर तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है। भौतिक (कम तापमान भंडारण, गर्मी उपचार, चुंबकीय क्षेत्र और विकिरण), रासायनिक (कटाई से पहले और बाद में रासायनिक उपचार), और जैविक (उपयोग करके) प्राकृतिक पौधों के उत्पाद या विरोधी सूक्ष्मजीव)। हालांकि, कटाई के बाद की बीमारियों और माइकोटॉक्सिन संदूषण को नियंत्रित करने के नए और कुशल तरीकों का पता लगाने के साथ-साथ उत्पादन में सफलतापूर्वक लागू किए गए तरीकों के अंतर्निहित तंत्र को उजागर करने की तत्काल आवश्यकता है।

रासायनिक नियंत्रण: सब्जियों और फलों में कटाई के बाद के रोग के प्रबंधन के लिए आमतौर पर रासायनिक कवकनाशी का उपयोग किया जाता है। फफूंदनाशकों को उपज पर डिप्स, स्प्रे, फ्यूमिगेंट्स, ट्रीटेड रैप्स और बॉक्स लाइनर्स या वैक्स और कोटिंग्स के रूप में लगाया जाता है। आम तौर पर डिप या स्प्रे विधि के रूप में उपयोग किए जाने वाले कवकनाशी बेंजिमिडाजोल्स (जैसे बेनोमिल और थियाबेंडाजोल) एन्थ्रेक्नोज के खिलाफ होते हैं, और ट्राइजोल्स (जैसे प्रोक्लोराज और इमाजलिल) और फ्यूमिगेंट्स, जैसे कि सल्फर डाइऑक्साइड, ग्रे मोल्ड के नियंत्रण के लिए उपयोग किया जाता है, जिसका उपयोग कटाई के बाद रोग नियंत्रण के लिए किया जाता है।

दिनेश शिवहरे Mob. : 98263-55396
मध्य प्रदेश का पहला
श्री दयाल बन्धु केन्द्र
(हिनौतिया वालों की दुकान)
सभी प्रकार की कीटनाशक दवाईयां, जिन्क एवं बीज आदि के थोक एवं खेरीज विक्रेता
गायत्री मंदिर के पास, जवाहर गंज, डबरा जिला ग्वालियर (म.प्र.)
E-mail : shridayalbandhu@gmail.com, dineshshivhare66yahoo.com

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

कृषि के एकरूपता में समान वाणिज्यिक कोड

आशीष कुमार (सहायक प्रोफेसर)
सुधीर कुमार (विभागाध्यक्ष) विधि विभाग
श्रीधर विश्वविद्यालय चिड़ावा-पिलानी रोड झुंझुनू (राजस्थान)

यूनिफ़ॉर्म कमर्शियल कोड (यूसीसी) कानूनों का एक व्यापक सेट है जो विभिन्न वाणिज्यिक लेनदेन को नियंत्रित करता है, जो संयुक्त राज्य भर में व्यापार लेनदेन के लिए एक मानकीकृत कानूनी ढांचा प्रदान करता है। जबकि यूसीसी मुख्य रूप से वस्तुओं की बिक्री और अन्य वाणिज्यिक गतिविधियों को संबोधित करता है, इसके सिद्धांत कृषि क्षेत्र पर भी लागू होते हैं, जो अर्थव्यवस्था और खाद्य उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

कृषि लेनदेन में फसलों, पशुधन, उपकरण और संबंधित उत्पादों की बिक्री और खरीद सहित गतिविधियों की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल है। माल की बिक्री, अनुबंध, वारंटी और उपचार से संबंधित यूसीसी के प्रावधान इन कृषि लेनदेन के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक हैं। सुसंगत नियम और दिशानिर्देश स्थापित करके, यूसीसी कृषि वाणिज्य में शामिल पक्षों के बीच निष्पक्ष और कुशल बातचीत सुनिश्चित करने में मदद करता है। यूसीसी कृषि लेनदेन में स्पष्टता और पूर्वानुमान को बढ़ावा देता है, जिससे सहज बातचीत, समझौते और विवाद समाधान की सुविधा मिलती है। यह उत्पाद की गुणवत्ता, वितरण, भुगतान की शर्तें और दोषों के लिए दायित्व जैसे मुद्दों को संबोधित करते हुए खरीदारों और विक्रेताओं दोनों के लिए सुरक्षा उपाय प्रदान करता है। यह ढांचा पार्टियों को कृषि उद्योग की स्थिरता और विकास में योगदान करते हुए पारदर्शी और पारस्परिक रूप से लाभप्रद व्यवस्था में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित करता है।

कृषि के लिए समान वाणिज्यिक संहिता के गुण

कृषि क्षेत्र में यूनिफ़ॉर्म कमर्शियल कोड (यूसीसी) का अनुप्रयोग कई गुण और लाभ प्रदान करता है जो कुशल और निष्पक्ष वाणिज्यिक लेनदेन में योगदान करते हैं। कृषि गतिविधियों के लिए यूसीसी की कुछ प्रमुख खूबियाँ इस प्रकार हैं:

संगति और पूर्वानुमेयता: यूसीसी राज्यों में एक समान कानूनी ढांचा प्रदान करता है, कृषि लेनदेन के लिए सुसंगत नियमों और प्रथाओं को बढ़ावा देता है। यह स्थिरता सीमा पार या बहु-राज्य कृषि लेनदेन में शामिल पक्षों के लिए अनिश्चितता और भ्रम को कम करती है।

दक्षता: अनुबंध निर्माण, प्रदर्शन और उपचार के लिए मानकीकृत नियम स्थापित करके, यूसीसी कृषि लेनदेन को सुव्यवस्थित करता है। पार्टियाँ अधिक आसानी से बातचीत कर सकती हैं और समझौतों पर अमल कर सकती हैं, जिससे समय और संसाधनों की बचत होती है।

स्पष्ट संविदात्मक शर्तें: वारंटी और दायित्वों पर यूसीसी के प्रावधान यह सुनिश्चित करते हैं कि कृषि अनुबंध की शर्तें स्पष्ट रूप से परिभाषित हैं। यह स्पष्टता गलतफहमी और विवादों को रोकने में मदद करती है, जिससे खरीदारों और विक्रेताओं दोनों को लाभ होता है।

पार्टियों की सुरक्षा: यूसीसी कृषि लेनदेन में खरीदारों और विक्रेताओं दोनों के हितों की रक्षा करता है। यह अनुबंध के उल्लंघनों के लिए उपाय प्रदान करता है और यह सुनिश्चित करता है कि विवादों या गैर-प्रदर्शन के मामले में पार्टियों के पास कानूनी सहारा हो।

लचीलापन: यूसीसी के सिद्धांतों को कृषि लेनदेन की एक विस्तृत श्रृंखला पर लागू किया जा सकता है, जिसमें फसलों, पशुधन, उपकरण और कृषि उत्पादों की बिक्री जैसे व्यापार के विभिन्न रूपों को समायोजित किया जा सकता है।

अनुकूलनशीलता: यूसीसी विकसित हो रही कृषि पद्धतियों और प्रौद्योगिकियों को अपना सकता है। चूंकि उद्योग सटीक खेती और टिकाऊ प्रथाओं जैसे नवाचारों को एकीकृत करता है, यूसीसी का लचीला ढांचा इन परिवर्तनों को समायोजित कर सकता है।

वित्तपोषण की सुविधा: कृषि वित्तपोषण में अक्सर फसल या उपकरण जैसी संपत्तियों को संपार्श्विक बनाना शामिल होता है। सुरक्षित लेनदेन पर यूसीसी के नियम सुरक्षा हितों को बनाने और लागू करने के लिए एक स्पष्ट संरचना प्रदान करते हैं, जिससे किसानों के लिए ऋण सुरक्षित करना आसान हो जाता है।

उपभोक्ता विश्वास: उत्पाद वारंटी और गुणवत्ता मानकों पर यूसीसी के प्रावधान कृषि उत्पादों में उपभोक्ता विश्वास को बढ़ाते हैं। यह खाद्य सुरक्षा और उपभोक्ता संरक्षण के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक है।

कानूनी मिसाल: यूसीसी के पास कानूनी मिसाल और व्याख्या का एक लंबा इतिहास है, जो कृषि लेनदेन में विवादों को हल करने के लिए एक अच्छी तरह से स्थापित आधार प्रदान करता है। यह स्थिरता प्रभावी विवाद समाधान में योगदान देती है।

कम लेनदेन लागत: यूसीसी के मानकीकृत नियम और प्रथाएं पार्टियों के लिए लेनदेन के हर पहलू पर शुरू से बातचीत करने की आवश्यकता को कम करती हैं। इससे लेन-देन लागत कम होती है और सौदा करना अधिक कुशल होता है।

बाजारों तक पहुंच: यूसीसी के तहत एक मानकीकृत कानूनी ढांचा कृषि उत्पादों की व्यापक बाजारों तक पहुंच को सुविधाजनक बना सकता है, राज्य की सीमाओं के भीतर और बाहर व्यापार और आर्थिक विकास को बढ़ावा दे सकता है। कुल मिलाकर, कृषि क्षेत्र में यूसीसी को अपनाने और लागू करने से वाणिज्यिक लेनदेन में पारदर्शिता, दक्षता और निष्पक्षता को बढ़ावा मिलता है। इसके स्थापित सिद्धांत कृषि व्यापार के लिए एक स्थिर वातावरण को बढ़ावा देने और क्षेत्र की वृद्धि और स्थिरता में योगदान करने में मदद करते हैं

कृषि के लिए समान वाणिज्यिक संहिता के दोष: जबकि यूनिफ़ॉर्म कमर्शियल कोड (यूसीसी) कृषि क्षेत्र सहित वाणिज्यिक लेनदेन के लिए कई लाभ प्रदान करता है, इसके आवेदन में संभावित कमियां या सीमाएं भी हैं। यहां विचार करने योग्य कुछ अवगुण हैं।

जटिलता: यूसीसी कई अनुच्छेदों और प्रावधानों के साथ कानून का एक व्यापक निकाय है। इसकी जटिलता कृषि उद्योग में व्यक्तियों, विशेष रूप से छोटे किसानों या व्यवसायों हेतु कानूनी सहायता के बिना इसकी जटिलताओं को पूरी तरह से समझना और नेविगेट करना चुनौतीपूर्ण बना सकती है।

सीमित अनुकूलन: यूसीसी एक मानकीकृत ढांचा प्रदान करता है, लेकिन यह हमेशा कृषि लेनदेन के अनूठे पहलुओं को ध्यान में नहीं रख सकता है। कृषि में विशेष प्रथाएं शामिल हैं, जैसे कि फसल चक्र और पशुधन देखभाल, जिसके लिए अधिक अनुरूप कानूनी व्यवस्था की आवश्यकता हो सकती है जिसे यूसीसी द्वारा पूरी तरह से संबोधित नहीं किया गया है।

क्षेत्र-विशिष्ट विनियमों का अभाव: कृषि लेनदेन में अक्सर खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण मानकों और भूमि उपयोग से संबंधित विशिष्ट नियम शामिल होते हैं। यूसीसी इन क्षेत्र-विशिष्ट चिंताओं को व्यापक रूप से संबोधित नहीं कर सकता है, जिससे कानूनी कवरेज में संभावित अंतराल हो सकता है।

विभिन्न राज्यों द्वारा अपनाया जाना: जबकि अधिकांश अमेरिकी राज्यों ने यूसीसी को अपनाया है, राज्य स्तर पर इसे कैसे लागू किया जाता है या इसकी व्याख्या कैसे की जाती है, इसमें भिन्नताएं हो सकती हैं। इससे अंतर-राज्य कृषि लेनदेन में विसंगतियां और अनिश्चितता पैदा हो सकती है।

स्थिरता पर सीमित जोर: वाणिज्यिक लेनदेन पर यूसीसी का ध्यान स्थिरता और पर्यावरणीय विचारों को पर्याप्त रूप से संबोधित नहीं कर सकता है जो आधुनिक कृषि में तेजी से महत्वपूर्ण हो रहे हैं। सतत कृषि पद्धतियों और पर्यावरणीय प्रबंधन को यूसीसी प्रावधानों में पूरी तरह से एकीकृत नहीं किया जा सकता है।

मुकदमेबाजी लागत: यूसीसी द्वारा शासित कृषि लेनदेन से उत्पन्न होने वाले विवादों के कारण कानूनी कार्यवाही हो सकती है, जिसके परिणामस्वरूप इसमें शामिल पक्षों के लिए लागत और समय की देरी हो सकती है। कानूनी प्रक्रिया बोझिल हो सकती है, खासकर छोटे कृषि व्यवसायों के लिए।

किसानों के लिए अपर्याप्त सुरक्षा: जबकि यूसीसी में वारंटी और उपचार के प्रावधान शामिल हैं, यह उन मामलों में किसानों के लिए पर्याप्त सुरक्षा प्रदान नहीं कर सकता है जहां उनके नियंत्रण से परे कारक, जैसे मौसम की घटनाएं या बाजार में उतार-चढ़ाव, अनुबंध संबंधी दायित्वों को पूरा करने की उनकी क्षमता को प्रभावित करते हैं।

पारंपरिक प्रथाओं के साथ असंगति: कुछ कृषि लेनदेन में पारंपरिक या प्रथागत प्रथाएं शामिल हो सकती हैं जो यूसीसी आवश्यकताओं के साथ पूरी तरह से मेल नहीं खाती हैं, जिससे संभावित संघर्ष या गलतफहमी हो सकती है।

कृषि परिदृश्य बदलना: यूसीसी को कृषि प्रौद्योगिकी, प्रथाओं और व्यवसाय मॉडल में तेजी से बदलाव लाने के लिए संघर्ष करना पड़ सकता है। जैसे-जैसे कृषि विकसित होती है, उभरते रुझानों के लिए यूसीसी की प्रयोज्यता कम प्रभावी हो सकती है।

सीमित पहुंच: जबकि कानूनी पेशेवर यूसीसी पर मार्गदर्शन प्रदान कर सकते हैं, उनकी सेवाओं तक पहुंच कुछ कृषि प्रतिभागियों के लिए चुनौतीपूर्ण या महंगी हो सकती है, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में या सीमित संसाधनों वाले लोगों के लिए।

जय शीतला खाद बीज भण्डार
उच्च क्वालिटी के बीज, कीटनाशक दवाईयां
एवं खाद के थोक व खेरीज विक्रेता
विवेक सिंह (लोहगढ़ वाले)
मोबाइल : 9425116760, 7000820097
आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के पास, जवाहरगंज, डबरा, जिला-ग्वालियर

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in

कृषि क्षेत्र में ड्रोन तकनीक

राजकमल डागर, सुमित्रा देवी बम्बोरिया
केविके, मौलासर, कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर

शान्ति देवी बम्बोरिया कृषि शोध वैज्ञानिक,
भारतीय मक्का अनुसंधान संस्थालन, लुधियाना

दुनिया भर में कृषि क्षेत्र में ड्रोन और आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस का उपयोग बढ़ रहा है। भारत में भी सरकार इस तकनीक को कृषि क्षेत्र में लागू करने को बढ़ावा दे रही है, जिससे बेहतर उत्पादन और किसानों की आय में वृद्धि हो। कृषि ड्रोन एक आधुनिक उपकरण है जो किसानों की बहुत मदद कर सकता है। ड्रोन से बड़े क्षेत्रफल में कीटनाशक, खाद या दवा का छिड़काव कम समय में किया जा सकता है। इससे न सिर्फ खर्च कम होगा, बल्कि समय भी बचेगा। यह खेतों में कीटों को सही समय पर नियंत्रित कर सकेगा।

क्या है ड्रोन तकनीक: ड्रोन एक मानव रहित विमान (यूएवी) है, जो मूल रूप से एक उड़ने वाला रोबोट है। यह भी सॉफ्टवेयर-नियंत्रित सिस्टम से उड़ान भर सकता है। यह बैटरी आधारित ऊर्जा पर काम करता है। नियंत्रक से इसे उड़ाया और नियंत्रित किया जाता है। इस पर अंतिम उपयोग के आधार पर कई तरह के उपकरण जैसे कि कैमरा, कीटनाशक छिड़काव यंत्र आदि भी लगे होते हैं। ड्रोन तकनीक निरंतर बदल रही है। आज, ड्रोन खेती, राहत और बचाव कार्यों, मौसम की निगरानी और भविष्यवाणी, यातायात की निगरानी और फोटोग्राफी में भी उपयोग होते हैं। जीपीएस और आनबोर्ड सेंसर ड्रोन तकनीक का हिस्सा हैं। आधुनिक ड्रोन दो ग्लोबल नेविगेशन सैटेलाइट सिस्टम (जीएनएसएस) के साथ जुड़े हुए हैं। इसमें ग्लोनास और जीपीएस शामिल हैं। ये ड्रोन जीएनएसएस और नान-सैटेलाइट मोड में भी उड़ान भर सकते हैं। ड्रोन नेविगेशन को रडार की निगरानी में सटीक बनाने में मदद मिलती है।

कृषि क्षेत्र में ड्रोन तकनीक का उपयोग: कृषि ड्रोन तकनीक में पिछले कुछ वर्षों में काफी सुधार हुआ है। अब किसान भी ड्रोन तकनीक का लाभ समझने लगे हैं। कृषि क्षेत्र में ड्रोन आमतौर पर मैपिंग, सर्वेक्षण और उर्वरकों व कीटनाशक छिड़काव में प्रयोग किए जाते हैं। कृषि ड्रोन वास्तव में दूसरे ड्रोन से अलग नहीं हैं। इस छोटे मानव रहित विमान (UAV) को खेतों में उपयोग किया जा सकता है। हालाँकि, बहुत से ड्रोन अब सिर्फ कृषि में काम करने के लिए बनाए जा रहे हैं। ड्रोन प्रौद्योगिकी पारंपरिक कृषि पद्धतियों को तीव्रता के साथ बदल रही है और उन्हें निम्नानुसार पूरा कर रही है-

फसलों की बीमारियों, पोषक तत्वों की कमी और कीटों/खरपतवार की उपस्थिति का पता लगानाः व्यक्तिगत रूप से फसलों के स्वास्थ्य की देखभाल करना मुश्किल और बहुत समय लेने वाला हो सकता है। ड्रोन से खेत को नियर-इन्फ्रारेड (NIR), मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर या सामान्यीकृत अंतर वनस्पति सूचकांक (NDVI) सेंसर से चित्रित किया जाता है। इन मानचित्रों में अंकित विभिन्न रंगों का विश्लेषण फसल के स्वास्थ्य, खरपतवार की उपस्थिति, बीमारी के प्रकोप और कीटों के संक्रमण का पता लगाता है। कुछ नए ड्रोनों में स्वचालित सॉफ्टवेयर में भी इस विश्लेषण को स्वचालित रूप से करने की क्षमता है। कृषि ड्रोन आरजीबी और मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर का उपयोग करके खरपतवार, संक्रमण और कीटों से प्रभावित क्षेत्रों का पता लगा सकते हैं। डाटा के अनुसार, संक्रमण को नियंत्रित करने के लिए सही मात्रा में रसायन का उपयोग करके खर्च को कम कर सकते हैं।

कीटनाशक और उर्वरकों का सटीक छिड़काव: पारंपरिक ट्रैक्टर की तुलना में ड्रोन खेतों को स्कैन करके कीटनाशक और उर्वरक का बहुत तेजी और बेहतर ढंग से छिड़काव कर सकता है और फसलों और विभिन्न क्षेत्रों में सही मात्रा की तुरंत गणना कर सकता है। इससे मृदा का स्वास्थ्य भी सही बना रहता है और इन रसायनों के अनियंत्रित प्रयोग पर भी रोक लगाई जाती है। विलक्षण कीटों के आक्रमण, जैसे टिड्डियों के झुंड, को दूर करने के लिए ड्रोन का इस्तेमाल करना एक तत्काल, प्रभावी और उपयोगी उपाय हो सकता है। मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर और आरजीबी सेंसर समस्याग्रस्त क्षेत्रों को सटीक रूप से पहचान और उपचार कर सकते हैं। ड्रोन से हवाई छिड़काव पांच गुना तेज होता है।

मृदा विश्लेषण: किसानों को अपने खेत की मिट्टी की स्थिति के बारे में ड्रोन सर्वेक्षण से जानकारी मिलती है। मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर के माध्यम से मिटटी में पोषक तत्वों की उपस्थिति, नाइट्रोजन लेवल की जांच और भूमि में मौजूद तत्वों का सटीक 3 डी मैपिंग बनाया जा सकता है। 3 डी मैपिंग के माध्यम से किसान खेत की मिट्टी की स्थिति को सटीक रूप से देख सकते हैं। यदि पोषक तत्वों की कमी हो रही है तो उनकी पूर्ति की जा सकती है।

फसल स्वास्थ्य की निगरानी: ना केवल वर्षा, बाढ़, सूखा या दैवीय आपदा से ही फसलें बर्बाद होती हैं बल्कि कीट और बीमारी के प्रकोप से भी काफी नुकसान होता है। ड्रोन कैमरा उन्हीं फसलों को चिन्हित करेगा जो बीमार हैं या किसी कीट से पीड़ित हैं। मल्टीस्पेक्ट्रल इमेज बनाने में इसकी मदद से फसल को समय पर बचाने में मदद मिलती है। इसके बाद लगातार निगरानी से फसलों को बचाया जा सकता है।

फसल नुकसान का आकलन और दस्तावेजीकरण: कृषि ड्रोन को आरजीबी सेंसर और मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर के साथ जोड़कर किसान खेती में होने वाले नुकसान और बीमा दावों का सटीक आकलन और दस्तावेजीकरण भी कर सकता है। ड्रोन सर्वेक्षण करना बहुत सरल है। कृषि ड्रोन स्वचालित रूप से ऑनबोर्ड सेंसर और अंतर्निर्मित कैमरे का उपयोग करके चित्र लेता है। प्रत्येक चित्र लेने के बाद, ड्रोन जीपीएस का उपयोग करके उस स्थान को चित्र में अंकित करता है। इस प्रकार, डिजिटल रूप में चित्रित दस्तावेजीकरण ड्रोन में उपस्थित मेमोरी कार्ड में जमा होता है।

बंजर भूमि या बड़े क्षेत्र में बीजों का रोपण: बंजर या दुर्गम जमीन पर बीजारोपण करना मुश्किल, खर्चीला और समय नष्ट करने वाला होता है। कृषि ड्रोन, सेंसर तकनीक और इंटेलिजेंट सिस्टम इसे बहुत सरल बनाते हैं। रोपण प्रणाली से लैस ड्रोन बीज को सीधे मिट्टी में लगा सकते हैं। ड्रोन सीड पॉड्स को मिट्टी में सीधा फायर करके यह काम करता है। एक दिन में कुछ ड्रोन लगभग एक लाख बीज बो सकते हैं। कृषि वानिकी में भी लाभ मिलता है।

सिंचाई निगरानी: ड्रोन की मदद से बड़े क्षेत्रों में सिंचाई की निगरानी की जा सकती है। यह बहुत शुष्क क्षेत्रों या जल भराव की समस्या को हाइपरस्पेक्ट्रल, थर्मल या मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर से पहचान सकता है। यह फसलों में वाष्पीकरण, फसल वाष्पोत्सर्जन और वनस्पति सूचकांक की गणना करता है, जिससे सिंचाई की सटीक योजना बनाई जा सकती है। इससे उपलब्ध जल का सर्वोत्तम उपयोग किया जा सकता है। ड्रोन सर्वेक्षण फसलों की जल ग्रहण क्षमता को बढ़ा सकता है। साथ ही, सिंचाई के दौरान हो सकने वाले रिसाव का पता लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, किसान समय-लैप्स फोटोग्राफी का उपयोग करके पता लगा सकते हैं कि उनकी फसल का कौन-सा हिस्सा पर्याप्त रूप से सिंचित नहीं है।

पशुधन ट्रैकिंग: ड्रोन सर्वेक्षण के माध्यम से किसान न केवल अपनी फसलों पर नजर रख सकते हैं, बल्कि अपने मवेशियों को भी देख सकते हैं। थर्मल सेंसर तकनीक से खोए हुए जानवर खोजे जा सकते हैं।

कृषि में ड्रोन तकनीक के लाभ: ड्रोन सटीक डाटा प्रक्रियाओं का उपयोग करके सर्वेक्षण करता है, जिससे किसानों को तेज और सटीक निर्णय लेने में मदद मिलती है। साथ ही, समय और संसाधन बर्बाद होने से बचाया जा सकता है कृषि क्षेत्र में ड्रोन का उपयोग बढ़ावा देने की घोषणा से खेती पहले की तुलना में सरल हो जाएगी। यह भी कृषि क्षेत्र को भविष्य के लिए सज्जित करेगा। इससे किसानों को वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी और डाटा का उपयोग करना आसान हो जाएगा। साथ ही, वे खेती के नवीनतम तरीकों को जान सकेंगे। ड्रोन को मिट्टी की गुणवत्ता का विश्लेषण करने या बड़े क्षेत्रों में कीटनाशकों का छिड़काव करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। कृषि क्षेत्र में ड्रोन के उपयोग से कई फायदे हो सकते हैं:

उत्पादन वृद्धि: किसान ड्रोन तकनीक से फसल उत्पादन की क्षमता में वृद्धि हो सकती है, जिसमें व्यापक सिंचाई योजना, फसल स्वास्थ्य की पर्याप्त निगरानी, मिट्टी के स्वास्थ्य की सटीक जानकारी और पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति तीव्र अनुकूलन शामिल हैं। भविष्य की फसल योजनाओं को नियमित जानकारी से बदलकर अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इससे कीटनाशकों के छिड़काव, मिट्टी की गुणवत्ता, फसल स्वास्थ्य की निगरानी आदि में मदद मिल सकती है।

अधिक सुरक्षित किसान: इस तकनीक से किसान दुर्गम क्षेत्रों, पहाड़ी इलाकों और अधिक क्षेत्रफल की भूमि की प्रभावी देख-रेख कर सकते हैं। यह फसलों को जहरीले कीटनाशकों से अधिक सुरक्षित बनाता है। इससे कम कीटनाशक के प्रयोग से अधिक जमीन को आच्छादित किया जा सकता है, जिससे मृदा प्रदूषण कम होता है।

संसाधनों का इष्टतम उपयोग: कृषि ड्रोन किसानों को पानी, बीज, उर्वरक और कीटनाशक का सर्वोत्तम उपयोग करने में सक्षम बनाता है। एक खेत के सभी क्षेत्रों को एक जैसा उपचार देने की बजाय आवश्यकता अनुसार उपचार देने से संसाधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है। किसान खेत का सख्ती से निरीक्षण करके समस्याओं (जैसे संक्रमित फसलें, अस्वस्थ फसलें, मिट्टी में नमी का स्तर) पर ध्यान दे सकता है और आवश्यक स्थानीय परिचार कर सकता है।

बीमा का दावा करने में उपयोगी: किसान ड्रोन का उपयोग करके फसल में हुए किसी भी नुकसान का आकलन कर सकता है और प्रमाण दोनों जुटा सकता है, जिससे वह बीमा कंपनी को नुकसान की भरपाई का दावा कर सकता है। किसी भी व्यक्ति को जीपीएस पर आधारित सटीक और विश्वसनीय जानकारी को झुठलाना आसान नहीं है।

कृषि में ड्रोन तकनीक की सीमायें

अधिक कीमतें - ड्रोन महंगे होते हैं और कई किसानों के पास इस तकनीक में निवेश करने जितने वित्तीय संसाधन नहीं होते हैं। एक ड्रोन की कीमत रु. 10 लाख से रु. 12 लाख के बीच होती है। एक साधारण किसान इसका खर्च नहीं उठा पाएगा।

नौकरी खोने का डर: कई किसान चिंतित हैं कि ड्रोन तकनीक को अपनाने से नौकरी चली जाएगी, क्योंकि खेत पर शारीरिक श्रम करने के लिए कम श्रमिकों की आवश्यकता होगी।

ज्ञान और प्रशिक्षण की कमी: किसानों के पास ड्रोन को प्रभावी ढंग से संचालित करने के लिए आवश्यक ज्ञान या प्रशिक्षण नहीं हो सकता है। इससे उनके लिए इस तकनीक को अपनाना मुश्किल हो सकता है, क्योंकि वे इसका उपयोग करने की अपनी क्षमता में आश्वस्त नहीं हो सकते हैं।

- ड्रोन को संचालित करने के लिए कुशल एवं तकनीकी व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। • उच्च गुणवत्ता के डाटा पाने के लिए कुछ महंगे उपकरणों की जरूरत होती है, जिससे ड्रोंस की प्रारंभिक लागत ज्यादा होती है। • हवाई क्षेत्र में हस्तक्षेप • कनेक्टिविटी समस्या • मौसम पर निर्भरता

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

प्राकृतिक रंग: ग्रामीण परिक्षेत्र में आय स्त्रोत के नए आयाम

अंशुल शर्मा शोध अध्येता, सस्य विज्ञान, राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

गरिमा टाक शोध अध्येता, कीट विज्ञान, कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर (राजस्थान)

डॉ. पीयूष चौधरी सहायक आचार्य, बीएन विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

रोहिताश्व शर्मा शोध अध्येता, उद्यानिकी विज्ञान, राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

आज के रासायनिक युग में हम आज भी प्रकृति से जुड़े हुए है। इसका कारण है प्रकृति में निहित स्त्रोतों पर मानव की निर्भरता। आज हम पर्यावरण प्रदूषण की बात करते है साथ ही हानिकारक रासायनिक रंगों का खुलकर प्रयोग करते हैं। स्वार्थ्य पर रंगों का प्रतिकूल असर ना पड़े इसके लिये आवश्यक है प्राकृतिक रंगों का प्रयोग।

जीवन के हर पहलू से रंग जुड़े है तथा ये रंग हमें प्राकृतिक स्त्रोतों से आसानी से प्राप्त हो जाते है। पेड़-पौधो के फूल, पत्तियाँ, तना, छाल, जड़ आदि प्राकृतिक रंगों के भंडार है। ये स्त्रोत हमारे आस-पास खासकर ग्रामीण परिवेश में आसानी से मिल जाते है। ग्रामीण महिलाएं इन्हें आसानी से एकत्रित कर सकती है। वर्तमान युग में प्राकृतिक रंगों की ओर बढ़ते हुए रूझान के कारण इन प्राकृतिक रंगों की काफी मांग रहती है। अतः ग्रामीण महिलाएं इस कार्य को एक लघु उद्योग के रूप में अपना सकती है। यह अतिरिक्त आय उपार्जन का एक ऐसा साधन है जिसकी प्रारम्भिक लागत व रखरखाव खर्च न्यूनतम है।

प्राकृतिक रंगों के स्त्रोत

हमारे आसपास के वातावरण पहाड़ी क्षेत्र, खेत-खलिहान, सड़कों के किनारे कई ऐसे वृक्ष व झाड़ियाँ पाई जाती है जिनके जड़, तना, छाल, फूल आदि प्राकृतिक रंगों के स्त्रोत होते हैं। इनमें से कुछ निम्न हैं-

- **फूल**- गेंदा, पलाश, गुलाब, अमलताश, गुलमोहर आदि।
- **फल**- अनार, हल्दी, मेथीदाना, प्याज के छिलके।
- **पत्तियां**- रतनजोत, पुदीना, मेहन्दी
- **छाल** - बबूल, अर्जुन, कीकर, अखरोठ
- **गोंद**-खाखरा

इस प्रकार प्रत्येक रंगाई स्त्रोत भिन्न-भिन्न प्रकार का रंग देते हैं जैसे रतनजोत की पत्तियाँ हरा रंग, गेंदे के फूल पीला रंग, प्याज के छिलके गुलाबी रंग आदि।

रंगाई पाऊडर का निर्माण

फूल, पत्तियाँ, छाल, आदि को इनके विशिष्ट मौसम जब ये पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं, एकत्रित किया जाता है। ग्रामीण महिलाओं को चाहिये कि वे उन फूल पत्तियों को इकट्ठा करें जो पककर पेड़ से गिर जाते है। पेड़ की छाल जो उखड़ रही हो उसे काम में लिया जा सकता है। इनके प्राकृतिक रंग को बनाए रखने के लिये इन्हें छाया में सुखाया जाता है। पर्याप्त सूखने पर इनसे अपशिष्ट पदार्थ अलग कर लिये जाते हैं। छाल तथा जड़ को छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़कर सुखाया जाता है। अब इन्हें पीस लिया जाता है तथा हवारहित सूखे डिब्बों में भर लिया जाता है।

पैकिंग

ग्रामीण महिलाएँ इस रंगाई पाऊडर के 50 ग्राम, 100 ग्राम व 250 ग्राम के पैकेट बनाकर बेच सकती है। साथ ही इन रंगाई पाऊडर को पानी में उबालकर, छानकर, रंगाई घोल भी बना सकती हैं, जिसे उबालकर गाढ़ा करके रखा जा सकता है। इसे 50 मिली, 100 मिली व 250 मिली के डिब्बों में भकर बेचने के लिये तैयार किया जा सकता है।

प्राकृतिक रंगीय पदार्थो के उपयोग

प्राकृतिक रंगों की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए इन रंगों का उपयोग कागज निर्माण उद्योग, वस्त्र रंगाई, हर्बल गुलाल बनाने, छपाई, खाद्य परिरक्षण एवं श्रृंगार प्रसाधन उद्योग में किया जाता है। हस्त निर्मित कागज निर्माण, अनेक प्रकार के आकर्षक व संस्ते फोल्डर, फाइल कवर तथा पेपर बेग बनाने में प्राकृतिक रंग उपयोग में आते हैं अतः ग्रामीण महिलाएँ अपने उत्पाद को इन उद्योगों में बेच सकती हैं तथा आय उपार्जन कर आत्मनिर्भर बन सकती है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

वैज्ञानिक विधि से पशु पोषण प्रबन्धन

देवी लाल किकरालियाँ विद्यावाचस्पति छात्र, शस्य विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

डॉ. निर्मल सिंह दहिया आचार्य, पशुधन उत्पादन एवं प्रबंधन विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

डॉ. उमा नाथ शुक्ल सह आचार्य, शस्य विज्ञान विभाग, कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर

मरू क्षेत्र में पशुपालन व्यवसाय को कृषि की नींव एवं रीड की हड्डी माना जाता है क्योंकि प्रकृति ने हमारे पशुपालकों को बहुत अच्छी नस्ल के पशु जैसे कि गाय, भैंस, भेड़, बकरी एवं ऊंट वरदान के रूप में दिये हैं। यहां पर पशुओं की संख्या भी बहुत ज्यादा है। परन्तु हमारा पशुधन उत्पादन, बढ़वार, प्रजनन एवं कृषि कार्य में पिछड़े रहता है क्योंकि इन समस्याओं का मूल कारण कुपोषण है। जिसकी वजह से पशु कमजोर, अस्वस्थ, बांझ तथा क्षमता से बहुत कम उत्पादन जैसी अनेक समस्याओं के कारण लाभ की बजाय हानि प्रदान करते हैं। पशुपालन में आई कुल लागत का लगभग 70% खर्च उनके आहार पर होता है। इसलिए डेयरी व्यवसाय की सफलता दुधारू पशुओं की उत्पादन क्षमता तथा उनके आहार पर आये खर्च पर निर्भर करती है। यदि कम खर्चे में सस्ता, संतुलित एवं पौष्टिक आहार उपलब्ध करवाया जावे तो इस व्यवसाय से अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

पशुआहार का वर्गीकरण: पशु आहार का वर्गीकरण उसमें पाये जाने वाले तत्वों के आधार पर किया जाता है। मुख्य रूप से इसमें रेशेदार चारा एवं दाना मिश्रण आते हैं जो निम्नलिखित है-

खाद्य पदार्थ (आहार)

रेशेदार चारा

सूखा चारा	हरा चारा
1. सूखी घास	1. चारागाह
2. भूसा एवं पुआल आदि	2. हरा चारा
3. कडवी	3. साईलेज
4. हे	

सान्द्र आहार (दाना मिश्रण)

शक्तिपूरक	प्रत्यामिनपूरक
1. दाने व खली	1. वनस्पति उत्पन्न
2. मिलों के अतिरिक्त	2. जैविक स्त्रोत
3. मूल जड़े	3. समुद्री स्त्रोत
4. हे	

रेशेदार चारा: इसमें सूखे/हरे चारों में कई तरह की घास जैसे नेपियर, सेवन, धानम, हाथी घास, दीनानाथ घास, दूब घास आदि। गेहूं का भूसा, धान का पुआल, मक्का व ज्वार आदि की कड़वी भी सम्मिलित है। वर्गीकरण के आधार पर जिन भोज्य पदार्थों में 18 प्रतिशत से अधिक रेशा होता है वे प्रायः रेशेदार चारा में आते है।

दाना मिश्रण (सान्द्र): प्रोटीन के आधार पर इनका वर्गीकरण करते हैं। जिन भोज्यों में 18 प्रतिशत प्रोटीन होती है वे प्रत्यामिनपूरक तथा 18 प्रतिशत से कम प्रोटीन वाले ऊर्जा प्रदायक दाने कहलाते है। इनके कुल पाचक पदार्थों की मात्रा ज्यादा होती है। फलस्वरूप प्रोटीन, चर्बी, कार्बोहाइड्रेट पशुओं को अधिक प्राप्त होते है। दाना

मिश्रण में मुख्यतः दाना, खली एवं चोकर, चुन्नी इत्यादि का समावेश होता है। इनको प्रमुख भागों में बांटा जा सकता है-

ऊर्जा प्रदायक दाने

(अ) अनाज के दाने: जैसे गेहूं, चावल, मक्का, जौ, ज्वार, जई तथा कन्दमूल (गाजर, आलू इत्यादि)

(ब) अतिरिक्त उत्पाद (बाई-प्रोजेक्ट): चोकर, चुन्नी एवं छिलका, भूसी, चावल की पालिश व शीरा आदि।

प्रोटीन पौष्टिक तत्व वाले दाने

(अ) वनस्पति स्त्रोत वाले जैसे मूंगफली की खली, विनीले की खली, नारियल की खली, सरसों की खली, सोयाबीन की खली, दिल की खली, कपास की खली इत्यादि आते है। (ब) जैविक स्त्रोत वाले जैसे मांस का चूर्ण, मछली का चूर्ण, रक्त चूर्ण, सूखा स्पेटा पाऊडर, पंखों का चूर्ण अस्थि चूर्ण आदि।

अच्छे आहार के गुण:

■ पशु आहार, सस्ता, स्वादिष्ट व पौष्टिक होना चाहिए। ■ इसमें कई प्रकार के दलहनी व गैर दलहनी पदार्थों का समावेश होना चाहिए। ■ यह सडा या गला नहीं होना चाहिए। ■ आहार के अवयव बारह महीने आसानी से मिलने वाले होने चाहिए। ■ यह पचने में आसान तथा अधिक मात्रा वाले रेशेदार पदार्थ होने चाहिए।

संतुलित आहार: ऐसा वारे बांटे का मिश्रण जो पशु के शरीर भार में वृद्धि एव उत्पादन की आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए सभी पौष्टिक तत्व जैसे कार्बोज, प्रोटीन, वसा, खनिज, लवण, विटामिन व पानी की उचित मात्रा में उपलब्ध कराते हैं।

संतुलित आहार के लाभ ■ शीघ्र शरीर वृद्धि एवं परिपक्वता ■ नियमित प्रजनन ■ क्षमता के अनुरूप उत्पादन ■ अच्छी कार्यक्षमता ■ रोग प्रतिरोधक क्षमता

पशुहार का वर्गीकरण: आहार को चारे व बांटे के रूप में मुख्यतः दो भागों में बांटा जाता है और मोटे तौर पर कुल आहार का दो तिहाई भाग चारे के रूप में व एक तिहाई भाग दाने-बांटे के रूप में दिया जाना चाहिए अथवा एक पशु को शारीरिक भार का 2.5 प्रतिशत सूखा चारा या 10 प्रतिशत हरा चारा तथा उत्पादन अनुसार दाना बांटा दिया जाना चाहिए।

चारा कैसे देवें: हमारे क्षेत्र में पशुपालक प्रायः सस्ता व निम्न श्रेणी का चारा जैसे तूड़ी या कड़वी खिलाते हैं परन्तु वैज्ञानिकों के अनुसार इसमें पौष्टिक तत्त्व नहीं के बराबर होते हैं। जिससे उत्पादन में कमी, बांझपन, अंधापन, गर्भपात, कमजोरी जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अतः भविष्य में ऐसे चारे को यूरिया व गुड़ से उपचारित करके खिलावें। इसके लिए 1 किलो यूरिया, 5 किलो गुड़, 2 किलो नमक व 1 किलो खनिज लवण को 10 किलो पानी में घोल कर बनाकर 100 किलो सस्ते चारे में बराबर मात्रा में छिनकर अच्छी से मिलाकर सुखा लेवें तथा नियमित रूप से जुगाली करने वाले व्यस्क पशुओं को खिलाना चाहिए।

घास चारा: बरसात के दिनों में खरीफ मौसम की अधिक, उपजाऊ एवं अधिक बढ़ने वाली पौष्टिक घास जैसे सेवन, भूरट, धामन आदि की अधिकता के कारण पशुआहार में इनका समुचित उपयोग नहीं हो पाता है। अतः ऐसी परिस्थिति में हरी घास को अग्रिम समय में परिपक्व होने से पहले पुष्पन या दुधिया अवस्था काटकर अच्छी तरह से सुखा लेवे तथा हरी घास की अनुपस्थिति में पौष्टिक चारे के रूप में खिलानी चाहिए। परन्तु ध्यान रखें कि इसमें 15 प्रतिशत से अधिक नमी न रहे तथा कुट्टी कर उन्नत ठाण में खिलावें।

हरा चारा: पशु को स्वस्थ रखने एवं उत्पादन बढ़ाने में हरे चारे का महत्वपूर्ण योगदान होता है इसकी पर्याप्त मात्रा खिलाने से उत्पादन लागत कम हो जाती है परन्तु सिंचित क्षेत्र में सिर्फ 5 प्रतिशत भूमि पर हरा चारा लगाया जा रहा है। जबकि कम से कम 20 प्रतिशत भूमि पर लगया जाना चाहिए। जिससे यहां पशु से पूरा लाभ उठाया जा सके। सर्दियों में रिजका या बरसीम, जई के साथ तथा गर्मियों में ग्वार या चंवला, चरी के साथ मिलकार संतुलित हरा चारा लगाकर लगभग 1000 से 1500 क्विंटल प्रति हैक्टेयर प्रति वर्ष प्राप्त किया जा सकता है। हरे चारे में करीब 13 से 14 प्रतिशत प्रोटीन एवं 80 प्रतिशत नमी होती है। यह इतना पौष्टिक होता है कि इसमें 5 7 लीटर दूध बिना बांटा खिलाये लिया जा सकता है। परन्तु हमेशा ध्यान रखें कि हरे चारे के साथ सूखा चारा मिलाकर खिलावें ।

दाना या बांटा: पशु आहार का दूसरा भाग दाना या बांटा वह भोज्य पदार्थ है जिसमें कच्चे रेशे की मात्रा बहुत कम एवं पौष्टिक तत्वों की मात्रा भरपूर होती है। इसके साथ-साथ इसकी पाचनशीलता अधिक होती है। अतः सामान्य अवस्था में पशुओं को आवश्यकतानुसार रोजाना बांटा अवश्य खिलाना चाहिए और बांटे के मिश्रण में अनाज के अवयव, तिलहन की खल, दालों की चूरी, चापड़, दालों छिलका एवं गुड़ का समावेश होना जरूरी है।

दाना या बांटे के मिश्रण 100 किलो-

अवयव	साधारण श्रेणी (14-16%)	उच्च श्रेणी (18-20%)
तिलहन खल	20 किलो	28 किलो
अनाज दलिया	40 किलो	40 किलो
चापड़	20 किलो	20 किलो
चावल पालिस	18 किलो	-
चना छिलका	-	10 किलो
नमक व खनिज लवण	2 किलो	2 किलो

दाना या बांटा का निर्धारण

बछड़े-बछड़िया	1.5 किलो/दिन
दूधारू पश	1.0 किलो/2.5 लीटर दूध
गर्भकाल अंतिम दो माह में	2.5 किलो/दिन
सांड	2.5 किलो / दिन
बैल हल्का कार्य	1.5 किलो / दिन
बैल भारी कार्य	3.0 किलो / दिन

साधारण उत्पादन या कार्य के लिए साधारण श्रेणी का बांटा तथा अधिक उत्पादन या अधिक कार्य के लिए उच्च श्रेणी के बांटे का उपयोग करें। इस प्रकार वैज्ञानिक पोषण द्वारा पशुपालक अपने पशुधन से अधिक लाभ कमा सकते है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

गुलाब प्रसंस्करण

गरिमा टाक शोध अध्येता, कीट विज्ञान, कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर (राजस्थान)

अंशुल शर्मा शोध अध्येता, सस्य विज्ञान, राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

के.बी. शुक्ला अधिष्ठाता, श्रीनाथजी कृषि महाविद्यालय, नाथद्वारा

पीयूष प्रसाद जानी आचार्य, श्रीनाथजी कृषि महाविद्यालय, नाथद्वारा

प्रद्युम्न सिंह वैज्ञानिक, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

गुलाब एक बहुवर्षीय, झाड़ीदार, कंटीला, पुष्पीय पौधा है जिसमें बहुत सुंदर सुगंधित फूल लगते हैं। इसकी 100 से अधिक जातियां हैं जिनमें से अधिकांश एशियाई मूल की हैं। जबकि कुछ जातियों के मूल प्रदेश यूरोप, उत्तरी अमेरिका तथा उत्तरी पश्चिमी अफ्रीका भी है। भारत सरकार ने 12 फरवरी को 'गुलाब-दिवस' घोषित किया है। गुलाब का फूल कोमलता और सुंदरता के लिये प्रसिद्ध है।

गुलाब प्रकृति की सबसे खूबसूरत रचनाओं में से एक है और इसे फूलों की रानी के रूप में सार्वभौमिक रूप से प्रशंसित किया गया है। अपनी सुंदरता के लिए प्रशंसित होने के अलावा, गुलाब का उपयोग पूजा, माला, गुलदस्ते, कटे हुए फूल, संरक्षित और सजावट आदि में किया जाता है। विविध विकास की आदत, उत्कृष्ट आकार, आकार और रूप में भिन्नता, आकर्षक रंग, रमणीय सुगंध और कई किस्मों के कारण , गुलाब को व्यापक स्वीकार्यता प्राप्त हुई है। गुलाब के कटे तथा ढीले फूलों का जीवन बहुत छोटा होता है। अधिकता की स्थिति में किसानों को लाभकारी मूल्य नहीं मिल पाता है। इन परिस्थितियों में मूल्यवर्धन रास्ता है। मूल्यवर्धन किसी कच्चे उत्पाद की कटाई और

अंतिम उत्पाद की बिक्री के बीच किसी भी समय उसके मूल्य को बढ़ाने के लिए उठाया गया कदम है। यह प्रसंस्करण द्वारा परिवर्तनों के माध्यम से किसी उत्पाद के मूल्य में वृद्धि है। किसी भी उत्पाद को मूल्य वर्धित माना जा सकता है यदि वह किसान द्वारा उगाया गया हो और श्रम और रचनात्मकता द्वारा मूल्य में वृद्धि की गई हो। उपभोक्ता कच्चे उत्पादों की तुलना में मूल्यवर्धित उत्पादों के लिए अधिक भुगतान करने को तैयार हैं।

गुलाब जल, गुलाब इत्र, गुलरोगन, गुलकंद, गुलाब की सूखी पंखुड़ियाँ और गुलाब का तेल अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय बाजार के लिए गुलाब के व्यावसायिक उत्पाद हैं। गुलाब के कूल्हे विटामिन सी के महत्वपूर्ण स्रोतों में से एक हैं। गुलाब जल का उपयोग आंखों की समस्याओं में, पंखुड़ियों का तंत्रिका संबंधी विकारों में या मस्तिष्क की थकान दूर करने के लिए चाय बनाने में किया जाता है।

गुलाब की खेती विश्व के विभिन्न भागों में व्यावसायिक उद्देश्य से की जाती है। गुलाब की पंखुड़ियों से आवश्यक तेल निकालने के लिए गुलाब की खेती भी की जाती है। इस उद्देश्य के लिए रोज़ा डेमस्केना, आर. बोर्बोनियाना, आर. सेंटीफोलिया जैसे सुगंधित गुलाबों का उपयोग किया जाता है। आवश्यक तेल और अन्य मूल्य वर्धित उत्पादों के निष्कर्षण के लिए आर. डैमासेना की खेती राजस्थान के अजमेर, पुष्कर और हल्दीघाटी क्षेत्रों और उत्तर प्रदेश के कन्नौज और अलीगढ़ में बड़े पैमाने पर की जाती है।

गुलाब के कुछ प्रसंस्कृत उत्पाद

गुलाब का शर्बत

विधि

- गुलाब की पत्तियों को उनके दुगने वजन के पानी में 24 घण्टों के लिए भीगोएँ।
- भीगोने के बाद इन्हें अच्छे से हाथों से मसल दें।
- फिर 5 मिनट के लिए गैस पर गरम करें
- अब मसलिन के कपड़े की सहायता से इसे छान लें।
- छने हुए तरल पदार्थ को लें (1 लीटर) उसमें 8 किलो चीनी मिलाएं और अच्छे से गरम करें।
- 50° ब्रीक्स आने के बाद गरम करना बन्द कर दें।
- इसमें 100 ग्राम सिट्रिक ऐसिड मिलाएं और ऊपर आए हुए झाग को
- अब ठण्डा हाने के बाद रंग (लाल) और फ्लेवर (गुलाब का) मिलाएँ।
- छान कर बोतलों में संरक्षित करें।

गुलाब का फ्लेर्वड दूध

विधि

- सर्वप्रथम दूध को 75-80° सेल्सियस तापमान तक गरम करें, बर्तन पर चिपकने ना दें इसलिए लगातार हिलाते रहें।
- गरम होने के तत्पश्चात् उसे लगातार हिलाते हुए ही ठण्डा करें।
- ठण्डा होने के बाद इसमें रंग और गुलाब का ऐसेंस डाल कर अच्छे से मिलाएँ।
- अब कांच की बोतलों में सील करें और 5-6 डिग्री सेल्सियस तापमान पर भण्डारण करें।

गुलकन्द

विधि

- गलाब की पत्तियों को अच्छी तरह से धो लें।
- गुलाब की पत्तियों अच्छे से हाथों से मसल लें।
- अब एक कांच की बर्नी में थोड़ी गुलाब की पत्तियाँ डालें उसके ऊपर शक्कर डालें, इस तरह से सारी गुलाब की पत्तियां और शक्कर को परत दर परत बिछा दें।
- इस बर्नी को 7-8 दिन तक धूप में रख दें और रोज एक बार मिलाएँ।
- इसे धूप में तब तक रखें जब तक के गुलाब की पत्तियां शक्कर में गल न जाएं।
- अब इसका भण्डारण करें।

गुलाब की लस्सी

विधि

- सर्वप्रथम शक्कर की चाश्नी बना लें। 200 ग्राम शक्कर में 100 मि.ली. पानी डाल कर चाश्नी बनाएँ।
- दही को अच्छी तरह फैंट लें।
- चाश्नी को ठण्डा करने के बाद इसमें दही को अच्छी तरह से मिलाएं।
- अब रंग और गुलाब का ऐसेंस डालें।
- गिलासों में सील करके 5 डिग्री तापमान पर भण्डारण करें।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

कॉर्डिसेप्स मिलिटेरिस: मशरूम की खेती की संपूर्ण जानकारी

प्रदीप सिंह शेखावत विद्यावाचस्पति छात्र
पादप रोग विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानंद
राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

दीपेन्द्र सिंह शेखावत विद्यावाचस्पति छात्र
पादप रोग विज्ञान विभाग, राजस्थान
एग्रीकल्चरल रिसर्च इंस्टीट्यूट दुर्गापुरा, जयपुर

सुधीर प्रताप सिंह एमएससी, कीट विज्ञान
सैम हिगिनबॉटम यूनिवर्सिटी ऑफ़ एग्रीकल्चर
टेक्नोलॉजी एंड साइंसेज, प्रयागराज (उ.प्र.)

"कॉर्डिसेप्स मिलिटेरिस" एक प्रकार की छोटे कीड़े की जड़ी होती है जिसे आयुर्वेदिक और चीनी चिकित्सा में औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह कीड़ा अकेले कार्य नहीं करता, बल्कि यह अपने प्राणी में परासितिक रहकर उसके शरीर के अंदर घुस जाता है और उसके शरीर की ऊतकों को नष्ट कर देता है। कॉर्डिसेप्स मिलिटेरिस, जिसे आमतौर पर कॉर्डिसेप्स के नाम से भी जाना जाता है, एक खाद्य मशरूम है प्राकृतिक वातावरण में कीड़ों पर उगता है कॉर्डिसेपिन चिकित्सीय क्षमता वाला कॉर्डिसेप्स मशरूम का प्रमुख घटक है। कीड़े प्रकृति में पोषक तत्वों या कॉर्डिसेप्स के प्रत्यक्ष स्रोत हैं। इसलिए, कॉर्डिसेप्स की स्थिति अनुकूलित है सब्सट्रेट के रूप में छह खाद्य कीड़ों का उपयोग करके कुशल कॉर्डिसेपिन उत्पादन के लिए खेती का पता लगाया गया। कॉर्डिसेपिन की सबसे अधिक उपज किसके द्वारा उत्पादित की गई थी? अल्लोमिरिना डाइचोटोमा पर खेती और बॉम्बेक्स मोरिपुपे पर खेती 34 गुना थी। कीड़ों के घटकों में वसा की मात्रा महत्वपूर्ण पाई गई ओलिक एसिड सामग्री और कॉर्डिसेपिन उत्पादन के बीच। ट्रांसक्रिप्शनल सीएनएस1 और सीएनएस2 के स्तर, कॉर्डिसेपिन जैवसंश्लेषण में शामिल जीन थे परीक्षण किए गए अन्य कीड़ों की तुलना में ए. डाइचोटोमा पर उगाए गए कॉर्डिसेप्स में अधिक। सबस्ट्रेट्स में ओलिक एसिड मिलाने से कॉर्डिसेपिन का उत्पादन बढ़ गया सीएनएस1 और सीएनएस2 के ट्रांसक्रिप्शनल स्तरों के साथ। मशरूम का उपयोग पूरी दुनिया में महत्वपूर्ण खाद्य सामग्री के रूप में व्यापक रूप से किया जाता रहा है। विशिष्ट सुगंध और बनावट वाले कई प्रकार मशरूम हैं, जो बहुत ध्यान आकर्षित करते हैं। कम कैलोरी और विभिन्नता के कारण इन्हें स्वस्थ भोजन माना जाता है पॉलीसेकेराइड, फेनोलिक्स और ट्राइटरपीनोइड जैसे लाभकारी तत्व कॉर्डिसेप्स को प्रतिरक्षा प्रणाली को उत्तेजित करने और चयापचय समस्याओं का इलाज करने के लिए जाना जाता है। यह एंटी-इंफ्लेमेटरी, एंटीऑक्सीडेंट, एंटी-एजिंग, एंटीकैंसर, एंटीबैक्टीरियल और एंटी-थकान गतिविधि बढ़ाने के लिए जाना जाता है। न्यूक्लियोसाइड्स, चक्रीय पेप्टाइड्स, स्टेरोल्स, फ्लेवोनोइड्स, एल्कलॉइड्स, और पॉलीसेकेराइड को कॉर्डिसेप्स के घटक के रूप में बताया गया है उनमें से, कॉर्डिसेपिन, एक न्यूक्लियोसाइड एनालॉग, एक प्रमुख सक्रिय घटक माना जाता है। अपनी

चिकित्सीय क्षमता के कारण इसने बहुत ध्यान आकर्षित किया है तदनुसार, कॉर्डिसेपिन के जैवसंश्लेषण मार्ग की बड़े पैमाने पर जांच की गई है कॉर्डिसेपिन को मुख्य रूप से संश्लेषित किया गया था सीएनएस2 द्वारा उत्प्रेरित एडेनोसिन या इसके 2%,3% चक्रीय मोनोफॉस्फेट (2%,3%-सीएमपी) से 3%-एएमपी का डिफॉस्फोराइलेशन, जिसके बाद सीएनएस1 द्वारा ऑक्सीडोरोडक्शन प्रतिक्रियाएं हुईं। कीड़े सभी जीवित जीवों के लगभग आधे का प्रतिनिधित्व करते हैं और हैं अत्यंत विविध. कीड़े फायदेमंद और हानिकारक दोनों होते हैं प्रकृतिक वातावरण। हालाँकि वे इसमें एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं पौधों की वृद्धि, कुछ कीट अनाज और पौधों को खाकर नुकसान पहुंचाते हैं पत्तियों सहित भाग. इसी के अनुरूप ध्यान केन्द्रित किया गया है प्राकृतिक पुनर्चक्रण के लिए कीड़ों के अनुप्रयोग पर शोध संसाधनों और नए विकल्प के रूप में कीड़ों का उपयोग। कॉर्डिसेप्स को पारंपरिक रूप से जंगल में एकत्र किया जाता है, लेकिन इसे सुरक्षित करना बहुत दुर्लभ और कठिन है। इन सीमाओं के कारण, विभिन्न तरीकों का उपयोग करके कॉर्डिसेप्स उत्पादन पर अध्ययन लंबे समय से किया जा रहा है चूंकि कॉर्डिसेप्स को संस्कृति में उगाया जा सकता है, इसलिए इसकी सुरक्षा के लिए इसकी खेती का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है आपूर्ति। इसके अलावा, विभिन्न अध्ययनों ने सांस्कृतिक स्थितियों को अनुकूलित करने का प्रयास किया है प्रत्येक कीट में पोषक तत्वों की एक अलग संरचना होती है, जो कॉर्डिसेप्स की वृद्धि और कॉर्डिसेपिन की सामग्री को प्रभावित करेगी। इसलिए, हमने कॉर्डिसेपिन उत्पादन पर विभिन्न कीड़ों के प्रभाव का पता लगाया। वर्तमान में, बॉम्बेक्स मोरी (रेशमकीट प्यूपा), टेनेब्रियो मोलिटर (मीलवर्म), ग्रिलस बिमाकुलैटस (क्रिकेट), कैलीफेरा एसपी। (टिड्डे), अल्लोमिरिना डाइचोटोमा (बीटल), और प्रोटेटिया कोरिया में ब्रेविटार्सिस (लार्वा) को खाद्य उपयोग के लिए अनुमति दी गई है।

कॉर्डिसेप्स मिलिटेरिस का प्रयोग विभिन्न आयुर्वेदिक और चीनी चिकित्सा में विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं के उपचार के लिए किया जाता है, जैसे कि-

- शक्ति और ऊर्जा बढ़ाने के लिए
- इम्यून सिस्टम को मजबूत करने के लिए
- कृमि इंफेक्शन का इलाज करने के लिए
- स्थायिता और वृद्धि के लिए
- मानसिक स्वास्थ्य को सुधारने के लिए

कॉर्डिसेप्स मिलिटेरिस की परंपरागत उपयोगिता और आधुनिक शोध में उसके संभावित लाभों की व्यापक छवि है, लेकिन विशेष उपयोग और खासियत के बारे में आधिक जानकारी के लिए आपको एक आयुर्वेदिक चिकित्सक या औषधि विशेषज्ञ से परामर्श करना चाहिए।

कॉर्डिसेप्स (Cordyceps) की उत्पादन हेतु निम्नलिखित आम चरणों का पालन किया जा सकता है-

सब्सट्रेट तैयारी: सबसे पहले, कॉर्डिसेप्स की खेती के लिए एक उपयुक्त सब्सट्रेट (आहार) की तैयारी करें। आमतौर पर सबस्ट्रेट के रूप में दलहन, चावल, जूट, या अन्य पौधों की खाद्य कीड़ों का उपयोग किया जाता है।

स्पॉन का प्रयोग: कॉर्डिसेप्स स्पॉन (कीड़ों की अंडाणु या बूट) का प्रयोग करके सब्स्ट्रेट को इनोक्युलेट करें। स्पॉन कॉर्डिसेप्स के माइसेलियम की उपलब्धि के लिए उपयोग होता है।

इंक्युबेशन: स्पॉन को सब्स्ट्रेट में मिश्रित करें और उचित मात्रा में उपलब्धि करने के लिए इंक्युबेशन अवस्था में रखें। माइसेलियम द्वारा सब्स्ट्रेट की उपलब्धि की जाएगी।

फ्रूटिंग के लिए माहौल तैयार करें: इंक्युबेशन पूर्ण होने पर, फ्रूटिंग (फूलने और फलने) के लिए उचित माहौल को तैयार करें। यह माहौल उचित तापमान, आरामदायक हाइड्रेशन और शुद्ध वायु मात्रा प्रदान करता है।

फलन और हर्वेस्टिंग: मुख्य चरण में, कीड़े के शरीर के ऊपर की ओर फूल बनने लगेंगे। यह फूल मुख्यतः लाल रंग के होते हैं। इन्हें सबस्ट्रेट से अलग करने के लिए हल्का ट्विस्ट करें या काटें।

उपलब्धियों का पुनरावलोकन: कॉर्डिसेप्स आमतौर पर कई बार उपलब्धियाँ (फलने की प्रक्रिया) प्रदान करते हैं। पहले उपलब्धि के बाद, सब्स्ट्रेट को पुनर्नमीत करें और पुनः फ्रूटिंग की शर्तों का पालन करने के लिए उपयोग करें। कॉर्डिसेप्स की व्यापारिक खेती में सफलता प्राप्त करने के लिए, आपको उपयुक्त विचार की जरूरत होती है, जैसे कि सबस्ट्रेट की तैयारी, स्पॉन स्रोत, फरूटिंग की शर्तें, और बाजार की मांग आदि। कृपया ध्यान दें कि यह सिर्फ एक उपलब्धि है और विस्तृत विचार और संभावित उपायों के लिए आपको पेशेवर मानव संसाधन से परामर्श करना चाहिए।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

नर्सरी उगाने के लिए संरक्षित संरचनाओं एवं विभिन्न मीडिया में नर्सरी की स्थापना

शुभम जीनगर (स्नातकोत्तर छात्र)
डॉ. बृज गोपाल छीपा (सहआचार्य)
पीयूषा शर्मा (स्नातकोत्तर छात्रा) उद्यान विज्ञान, राजस्थान कृषि महाविद्यालय उदयपुर

नर्सरी एक ऐसा स्थान है जहाँ गहन देखभाल से बेहतर अंकुरण और विकास के लिए छोटे और महंगे बीजों के पौधे उगाए जाते हैं, जहाँ पौधों को प्रयोग करने योग्य आकार में उगाया जाता है तथा सब्जियों की पौध उगाने या संभालने के लिए (जब तक वे अधिक स्थायी रोपण के लिए तैयार नहीं हो जाते) उपयोग में लिया जाता हैं।

नर्सरी की योजना

स्थान का चयन

स्थान का चयन नर्सरी की मूलभूत आवश्यकता है। एक ऐसा स्थान जहाँ पर अनेक पौधों की नर्सरी को तैयार किया जा सकता है। एक उत्तम स्थान के निम्नगुण होते हैं मिट्टी की उत्तम स्थिति ए एक आवास के पासए पर्याप्तधूप एजल स्रोत के पास जल निकासी की उचित सुविधा एअच्छी परिवहन सुविधा

मिट्टी का चयन

- महीन बनावट, अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी उपजाऊ, बेहतर बीज अंकुरण और अंकुर वृद्धि के लिए उत्कृष्ट माध्यम के साथ कार्बनिक पदार्थों से भरपूर
- नर्सरी क्यारी के लिए बलुई दोमट से दोमट मिट्टी आदर्श होती है, भारी मिट्टी होने की स्थिति में बेहतर पौध वृद्धि के लिए मोटी रेत डालें
- सब्जी की फसल की पौध उगाने के लिए मिट्टी ,लवणीय, अत्यधिक अम्लीय और क्षारीय मिट्टी से बचें।
- थोड़ी अम्लीय से तटस्थ मिट्टी (पी.एच. मान 6.7) अंकुर उगाने के लिए अच्छी होती है।

संरक्षित नर्सरी

बीजों को संरक्षित संरचनाए विभिन्न प्राकृतिक खतरों से सुरक्षा प्रदान करती है।

पॉलीथिन बैग नर्सरी

- पॉलीथिन बैग अधिकांशतः खीरे के लिए, बीज प्रसार और स्वस्थ बुवाई के लिए किया जाता है।
- 100-200 गेज की मोटाई के पॉलीथिन बैग का प्रयोग करना चाहिए।
- पॉलीथिन की थैलियों में मिट्टी और सड़ी हुई देशी खाद का मिश्रण समान अनुपात में भरना चाहिए।
- बिजाई से पहले बीजों को 12-24 घंटे के लिए पानी में भिगो दें और फिर प्रत्येक बोरी में 1-2 बीज बो दें।
- बैगों को संरक्षित संरचनाओं में रखें।
- अंकुर 21-25 दिनों के बाद 2-3 सच्ची पत्ती अवस्था में रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं।
- सबसे पहले पॉलीथीन की थैलियों को ध्यान से हटा दें, देखें कि मिट्टी का गोला टूटा नहीं है और फिर मिट्टी के गोले को मुख्य खेत के गड्ढे में लगा दें।

प्लगट्रे (प्रो ट्रे) नर्सरी

- प्रो-ट्रे नर्सरी गुणवत्तापूर्ण सब्जी बीज उत्पादन के लिए एक

आगामी तकनीक है, जहाँ छाया नेट के तहत्रोपण का उत्पादन किया जाता है।
- इस तरह के अंकुरों का अंकुरण बेहतर होता है, स्वस्थ दिखाई देते हैं और कीटों और बीमारियों से सुरक्षित रहते हैं और 25-30 दिनों के भीतर अच्छी तरह से विकसित जड़ प्रणाली का निर्माण करते हैं।
- छाया जाल संरचना में प्रवेश करने वाले कीटों के कारण वायरस को रोकेंगे
- प्रो-ट्रे रोपाई में जड़ की क्षति को कम करते हैं, आधार पर अतिरिक्त जल प्रतिधारण को कम करते हैं।
- मीडिया जो वजन में हल्का है, उत्कृष्ट अंकुरण और विकास को बढ़ावा देगा।
- संरचना की ऊंचाई 3 मीटर होनी चाहिए जबकि लंबाई और चौड़ाई नर्सरी की आवश्यकता पर निर्भर करती है।
- प्रो-ट्रे उथले प्लग होते हैं जिनमें अंकुरण माध्यम गर्म रहता है औ बेहतर वातन प्रदान करता है। बीज को सीधे प्लग में बोया जाता है ।इस तरह के प्रो-ट्रे में निराई और पतलापन आसानी से किया जाता है।
- प्रति ट्रे प्लग 48-98 प्रति ट्रे से भिन्न होता है। इसकी जड़ों को नुकसान पहुंचाए बिना अंकुर को हटाने की सुविधा के लिए ट्रे नरम प्लास्टिक से बने होते हैं।
- टमाटर की पौध के लिए 98 सेल ट्रे जो 54 सेमी 27 सेमी और 4 सेमी गहरी होती हैं, आमतौर पर उपयोग की जाती हैं।ट्रे का जीवन ट्रे की हैंडलिंगऔर गुणवत्ता पर निर्भर करता है।

प्रो-ट्रे में अंकुर उगाने की तकनीक

- प्रो-ट्रे को बढ़ते मीडिया (कोको-पीट) से भरा जाना है।
- बीज बोने के लिए प्रो-ट्रे के सेल के केंद्र में उंगली की नोक के साथ एक छोटा अवसाद (0.5 सेमी) बनाया जाना है।
- प्रति कोशिका एक बीज बोया जाना हैऔर उसके बाद बीज को माध्यम से ढकना है
- 30-40 प्रतिशत नमी वाली कोको-पीट बुवाई के तुरंत बाद सिंचाई से बचने और बेहतर अंकुरण और पौधे की स्थिति प्राप्त करने केलिए अच्छा है।
- बुवाई बाद, फसल और बीज के अंकुरण के आधार पर 10 ट्रे को 3-6 दिनों तक एक के ऊपर एक रखा जा सकता है ।
- अंकुरण तक नमी की खपत सुनिश्चित करने के लिए पूरे ढेर को पॉलिथीन शीट से ढक दिया जाना चाहिए।
- अंकुरण से बचने के लिए एक बारअंकुरण शुरू होने के बाद स्टैक ट्रे को फैला दिया जाता है ।

सामान्य मौसम के लिए पॉलीटनल नर्सरी

- बीजों को 3.0 मीटर लंबी, 1.5 मीटर चौड़ी और 1.0 मीटर की केंद्रीय ऊंचाई के गढ़े हुए सुरंगों से ढके नर्सरी बेड में बोया जाता है।
- अर्धवृत्ताकार संरचना 75 प्रतिशत संप्रेषण के साथ यूवी पॉलिथीन शीट (20 माइक्रोन) से ढकी है।
- एक बार बीज बोने, बीजों को ढकने और खेत की क्षमता के अनुसार सिंचाई करने के बाद, क्यारी को सुरंग से ढक दिया जा सकता है।
- यदि नर्सरी को भीषण सर्दियों में उगाया जाता है, तो दोनों सिरों को भी ढका जा सकता है।

हाई-टेक सब्जी बीज उत्पादन तकनीक

- मात्रा के आधार पर क्रमशः 3:1:1 के अनुपात में प्लास्टिक प्रो-ट्रे में मिट्टी रहित कल्चर मीडिया जैसे कोकोपीट, वर्मीक्यूलाइट और पेर्लाइट का उपयोग करके नियंत्रित या आंशिक रूप से नियंत्रित स्थिति में सीडलिंग का उत्पादन किया जाता है।
- नर्सरी प्रबंधन और पौधों के पोषक तत्वों की आपूर्ति एक विशेष और थकाऊ काम है क्योंकि इन मिट्टी रहित मीडिया में कोई पोषक तत्व नहीं होता है।
- मिट्टी रहित माध्यमों में पोषक तत्वों के अनुप्रयोग में एकरूपता बनाए रखने के लिए सूक्ष्म छिड़काव के माध्यम से सप्ताह में एक बार एन पी के (1:1:1) 140 पीपीएम के रूप में पोषक तत्वों को लागू किया जाता है।

सिंचाई

- नर्सरी क्यारियों में सिंचाई करना या गमलों में पानी देना एक महत्वपूर्ण कार्य है।
- गमले में लगे पौधों के लिए हाथ से सिंचाई की जाती है और क्यारियों के लिए होज पाइप से कम दबाव वाली सिंचाई की जाती है। भारी सिंचाई से बचना चाहिए

पोषक तत्व प्रबंधन

- अंकुरण के 8-18 दिन बाद एनपीके 19:19:19 2 ग्राम प्रतिलीटर बूम स्प्रे से करना चाहिए
- अंकुरण के 15-20 दिन बाद कैल्शियम नाइट्रेट और एमजीएसओ 4 1: 1 ग्राम प्रतिलीटर बूमस्प्रे से करना चाहिए

बिक्री प्रबंधन

सामान्य तौर पर नर्सरी पौधों की मुख्य मांग बरसात के मौसम में होती है।नर्सरी पौधों की बिक्री के लिए एक उचित रणनीति का पालन किया जाना चाहिए। इसके लिए स्थानीय दैनिक समाचार पत्रों में विज्ञापन, पोस्ट हैंडबिल, कैटलॉग और कमीशन एजेंटों की नियुक्ति का पालन किया जा सकता है ।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

मानव जीवन में फलों का महत्व

सोनम मीणा भा.कृ.अनु.प.-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान (बेंगलुरु) (कर्नाटक)

राजेश कुमार मीणा उद्यान विभाग, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय) लखनऊ (उ.प्र.)

मानव जीवन में फलों का महत्व विशेष रूप से होता है. यह मानव जीवन के स्वास्थ्य और उचित वृद्धि के लिए अत्यंत आवश्यक है. इससे मनुष्यों को जल, शर्करा, प्रोटीन, खनिज तत्व, वसा, विटामिन, रेशा तथा अन्य स्वास्थ्यप्रद पदार्थ प्राप्त होते है. शरीर को स्वस्थ रखने के लिए प्रतिदिन 100 ग्राम फलों के सेवन की जरूरत होती है. लेकिन देश में प्रति व्यक्ति 60 ग्राम फल का उपयोग होता है. जो कि संस्तुति मात्रा से काफी कम है. तथा इसका सेवन भी उत्पादन एवं मौसम तक सीमित है. अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि इसकी महत्ता और पौष्टिकता गुणों को आम लोगों की जानकारी में ले जाय.

फलों का महत्व

1. फलों का नियमित सेवन मानव शरीर के स्वास्थ्य संचालन तथा उचित वृध्दि के लिए आवश्यक होता है.
2. संतुलित भोजन के रूप में फलों का नियमित सेवन करना चाहिए. ये हमें बलशाली व स्वस्थ बनाते है.
3. हमें प्रतिदिन 100 ग्राम फलों का सेवन करना चाहिए. जो हमारे शरीर को स्वस्थ रखने के लिए जरूरी है.
4. फला हार हमारी पाचन प्रणाली के लिए भी स्वाभाविक और स्वास्थकारी है.
5. फलों में प्राकृतिक रेशा प्रचुर मात्रा में होने के कारण उदार रोगों की संभावना काफी घट जाती है.
6. फलों में कार्बोहाइड्रेट की प्रचुर मात्रा पायी जाती है. इसके साथ ही इसमें शर्करा, प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज भी होते है.
7. फल, जल के भी अच्छे स्रोत होते है.
8. इनमें एंटीऑक्सीडेंट, प्रोटीन, वसा, खाद्य रेशा, आर्गेनिक एसिड, एंजाइम इत्यादि पाए जाते है.

ताजे फलों में उपलब्ध मुख्य खनिज तत्व

फ़ॉस्फोरस तत्व: यह कैल्शियम के साथ मिलकर हड्डियाँ और दांतो और मांसपेशियो को मजबूत बनाता है. कार्बोहाइड्रेट, वसा व प्रोटीन के पाचन में सहायक होते है. यह प्रमुख रूप से केला, कैथ, रसभरी, अनार, एवोकेन्डो, पैशन फल आदि में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है.

लोहा: यह शरीर की रुधिर कणिकाओं में पाए जाने वाले हीमोग्लोबिन का मुख्य अवयव है. यह शरीर में कार्यरत अनेक एंजाइमों में उपस्थित रहता है. इसकी कमी से शरीर में खून की कमी ही जाती है. जिससे मनुष्य रोगी व कमजोर हो जाता है. यह अमरूद, केला, कच्चा आम, शहतूत, सेब, अन्ना नास, आंवला, बेर, नींबू, आदि फलों में प्रमुख रूप से पाया जाता है.

सोडियम: यह शरीर के ऊतकों व तंत्रिका तंत्र के विकास में सहायक होता है. इसकी कमी से रक्तचाप पर असर पड़ता है. यह सेब, केला, लीची, जामुन, पपीता, अनानास, अनार, अमरूद आदि फलों में पाया जाता है.

मैग्नीशियम: कैल्सियम व फ़ॉस्फोरस के पाचन के अलावा कई एंजाइमों की क्रियाओं में इसकी उपस्थिति अनिवार्य है. तंत्रिका तंत्र व मांसपेशियों के उचित संचालन में भी इसका विशिष्ट स्थान है. इसकी कमी से मधुमेह और आंतों की बीमारी हो जाती है. यह प्रमुख से आलूबुखारा, केला, अंगूर आदि फलों में पाया जाता है.

सल्फर: यह मांसपेशियों और हड्डियों के विकास के लिए आवश्यक अमीनों एसिड और प्रोटीन बनाता है. तथा जहरीले पदार्थों के दुष्प्रभाव को ख़त्म कर देता है. यह कटहल, रसभरी, तरबूज आदि में प्रमुख रूप से पाया जाता है.

कॉपर: यह लोहे के अवशोषण और लोहे से सम्बंधित क्रियाओं में भाग लेता है. कई एंजाइमों की क्रियाओं में इसकी उपस्थिति आवश्यक है. तंत्रिका तंत्र में तांबा मुख्य रूप से उपस्थित रहता है. यह मुख्य रूप से सेब, अनार, पपीता, रसभरी, नाशपाती, शरीफा, संतरा, नींबू, केला आदि फलों में पाया जाता है.

क्लोरीन: यह शरीर में अम्ल और क्षार का संतुलन बनाता है. तथा पाचन तंत्र में हाइड्रोक्लोरिक आलम के निर्माण में सहायता करता है. यह खुबानी, अनानास, और स्ट्राबेरी आदि फलों में पाया जाता है.

पोटेशियम: यह प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट के पाचन में सहायक होता है. और यह क्षारीयता एवं अम्लता का संतुलन बनाये रखने में भी सहायता करता है. इसकी कमी से फेफड़ों की बीमारी हो जाती है. यह मुख्य रूप से कटहल, केला, अंगूर, खुबानी और अमरूद जैसे फलों में पाया जाता है.

ताजे फलों में उपलब्ध मुख्य विटामिन

विटामिन ए: यह वृद्धि तथा प्रजनन क्रियाओं के लिए आवश्यक होता है. इसकी कमी से ठण्ड, इन्फ्लुन्जा, आँख का रोग, रतौंधी तथा चर्म रोग हो जाता है. यह मुख्य रूप से आम, पपीता, केला, अमरूद, रसभरी, फालसा, कटहल, अनानास, आदि फलों में पाया जाता है.

विटामिन बी 1: इसकी कमी होने पर बेरी-बेरी नामक रोग हो जाता है. त्वचा की स्पर्श शक्ति का ह्रास, लकवा तथा हृदय सम्बन्धी असमानताएं हो जाती है. यह मुख्य रूप से सेब, केला, संतरा, आलू बुखारा, आम, पपीता आदि में पाया जाता है.

विटामिन बी 2: इसकी कमी से शरीर में बहुत सी असमानताएं जैसे शरीर का भार कम होना, गले का खराब, मुंह के कोनों का फटना, आँखों की नसें उभर आना और आँखों का किरकिराना आदि. यह मुख्य रूप से बेल, पपीता, कैथा, लीची आदि फलों में पाया जाता है.

विटामिन बी 6: यह कार्बोहाइड्रेट, वसा व एमीनों अम्ल के पाचन में सहायक होता है. इसकी कमी से अतिसार, बालों का गिरना, त्वचा का खुरदरी होना और मांसपेशियों का कमजोर होना आदि विकार उत्पन्न होते है. यह मुख्य रूप से खुबानी, नींबू, केला और अंजीर में पाया जाता है।

विटामिन बी 12: यह लाल रुधिर कणिकाओं के निर्माण में सहायक होता है. तथा इसकी कमी से लाल रुधिर कणिकाओं की कमी हो जाती है. तथा एनीमिया हो जाता है. यह आड़ू, केला, अमरूद, नींबू, चेरी आदि फलों में मुख्य रूप से पाया जाता है.

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

पशुपालन के बेहतर उपाय

डॉ. राकेश आहूजा, डॉ. देवेश ठाकुर
डॉ. मनोज शर्मा (सहायक प्राध्यापक)
डॉ. संजय कुमार खुराना (विभागाध्यक्ष)
पशु चिकित्सा एवं पशु पालन प्रसार शिक्षा विभाग, डॉ. जी. सी. नेगी पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान महाविद्यालय, चौधरी सरवन कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर-176062, हिमाचल प्रदेश

प्रस्तावना: पशुधन क्षेत्र वैश्विक खाद्य प्रणाली का एक स्तंभ है। गरीबी उन्मूलन, खाद्य सुरक्षा और कृषि विकास में पशुपालन, महत्वपूर्ण योगदान देता है। एक कृषि प्रधान देश के रूप भारत, विश्व में एक बड़ी पशुधन आबादी के साथ सबसे ऊपर है। भारतीय कृषि, कुल सकल घरेलु उत्पाद में 14% योगदान देती हैं और इस योगदान का भी 29% अकेले पशुपालन क्षेत्र से है। टिकाऊ खाद्य प्रणालियों में पशुधन क्षेत्र एक प्रमुख भूमिका निभाता है- उदाहरण के लिए, खाद जो की प्राकृतिक उर्वरक का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है, जबकि भारवाहक के रूप में उपयोग किए जाने वाले पशुधन कम मशीनीकरण वाले क्षेत्रों में उत्पादकता को बनाये रखने या बढ़ावा देने में मदद करते हैं। प्रतिकूल वातावरण वाले क्षेत्रों में, पशुधन अक्सर प्राकृतिक संसाधनों को स्थायी रूप से भोजन व रेशे में परिवर्तित कर सकने वाला तथा स्थानीय समुदायों के लिए कार्यशक्ति के रूप में उपलब्ध एकमात्र जरिया होता है। पशुपालन, टिकाऊ कृषि का एक महत्वपूर्ण घटक है। पर्यावरण के दीर्घकालिक स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए आवश्यक पशु उत्पाद प्रदान कर वैश्विक खाद्य उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हालाँकि, पशुपालन का अभ्यास चुनौतियों और बाधाओं से भरा हुआ है। इन चुनौतियों का समाधान करके और स्थायी प्रथाओं को लागू करके, हम कृषि और पर्यावरण प्रबंधन के बीच अधिक सामंजस्य स्थापित कर सकते है। इस आलेख में इन्ही चुनौतियों के समाधान और स्थायी प्रथाओं को लागू करने संबंधी उपायों की चर्चा विस्तार में की गयी है।

पशुपालन से जुड़ी विषमताओं व उनके निराकरण संबंधी उपाय

सतत कृषि में पशुपालन को अपनाने में मदद कर सकने वाले कई प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष, संभव उपाय हैं। इनमे से कुछ उपाय नीचे दिए गए हैं:-

1. **कुशल भूमि उपयोग:** बेहतर तरीके से भूमि का उपयोग करके सतत पशुपालन के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है, जिसमे घूर्णी चराई, चरागाह आधारित प्रणालियों का उपयोग करना और पशु और फसल कृषि को एकीकृत करना शामिल है। ये दृष्टिकोण मृदा के स्वास्थ्य को सुधारने, पर्यावरणीय दुष्प्रभावों को कम करने और पशुकल्याण में सुधार करने में मदद कर सकते हैं।

2. **जल संरक्षण:** सतत पशुपालन का दृष्टिकोण कुशल जल प्रबंधन प्रथाओं को बढ़ावा देता है, जैसे कि पानी कि बर्बादी को कम करना, पानी की बचत करने वाली तकनीकों का उपयोग करना और सिंचाई प्रणालियों का अनुकूलन करना। वर्षा जल का संग्रह और उपयोग भी एक स्थायी जल प्रबंधन समाधान हो सकता है।

3. **अपशिष्ट प्रबंधन:** सतत पशुपालन प्रथाएं पर्यावरणीय दुष्प्रभावों को कम करने के लिए पशु अपशिष्ट के उचित निपटान को बढ़ावा देती है। इस उपाय को अपशिष्ट उपचार प्रणालियों के उपयोग, खाद बनाने और कचरे को उर्वरक के रूप में उपयोग करके फलीभूत किया जा सकता है ।

4. **वैकल्पिक फीड स्त्रोत:** सतत पशुपालन प्रथाएं स्थानीय रूप से प्राप्त, कम लागत वाले और वैकल्पिक फीड स्त्रोतों जैसे चारा, घास और फसल अवशेषों के उपयोग को बढ़ावा देती है। यह उपाय संसाधन-गहन पशु आहार की आवश्यकता को कम करता है और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाता है।

5. **आनुवंशिक विविधता:** पशुधन आबादी में आनुवंशिक विविधता को बढ़ावा देने के लिए, दुर्लभ और स्वदेशी नस्लों के संरक्षण, उनके उत्पादन संबंधी आनुवांशिक लक्षणों के वैज्ञानिक विकास, उच्च उत्पादक व रोग प्रतिरोधी नस्लों के साथ सीमित व संभावित संकरण आदि बिंदुओं पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। चयनात्मक प्रजनन कार्यक्रमों को बढ़ावा देकर इस उद्देश्य की प्राप्ति की जा सकती है।

6. **पशु-स्वास्थ्य और पशुकल्याण:** उचित पोषण, प्रति पशु आवश्यक पर्याप्त स्थान की उपलब्धता और एंटीबायोटिक्स-हॉर्मोन के उपयोग को सीमित करके अच्छा पशु स्वास्थ्य सुनिश्चित किया जा सकता है। पशुपालन प्रथाएं जो प्राकृतिक व्यवहार को बढ़ावा देती हैं और पर्यावरण संवर्धन प्रदान करती हैं, वे भी पशु कल्याण में सुधार करने में मदद कर सकती हैं।

7. **बाज़ार की मांग और उपभोक्ता प्राथमिकताएं:** सैद्धांतिक रूप से देखा जाय तो उपभोक्ताओं के बीच आर्गेनिक पशुपालन से उत्पादित उत्पादों की महत्वता के बारे में जागरूकता और शिक्षा बढ़ाने से उत्पादों की मांग पैदा करने में मदद मिल सकती है। एक प्रीमियम उत्पाद के रूप में आर्गेनिक पशु उत्पादों की बिक्री भी बाजार की मांग को बढ़ाने मं मदद कर सकता है और उत्पादकों को आर्गेनिक पशुपालन प्रथाओं को अपनाने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है।

8. **ज्ञान और सूचना:** सतत पशुपालन प्रथाओं के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए समय-समय शैक्षणिक व प्रशिक्षण कार्यक्रमों को आयोजित व कार्यान्वित करने की आवश्यकता है। सर्वोत्तम प्रथाओं और सफलता की कहानियों को सुचारु रूप से व समय से जरूरतमंद किसानों तक पहुंचाने के लिए किसान-से-किसान ज्ञान विनिमय नेटवर्क स्थापित किया जाना चाहिए।

9. **वित्तीय क्षमता:** सतत पशुपालन प्रथाओं में निवेश के मार्ग को सरल बनाने के लिए विशेष रूप से डिज़ाइन किए गए माइक्रो फायनेंस की स्थापना या ऋण कार्यक्रमों को आयोजित किये जाने की आवश्यकता है। सतत कृषि पहलों का समर्थन करने वाले अनुकूलित वित्तीय समाधान विकसित करने के लिए किसानों और वित्तीय संस्थानों के बीच सहयोग को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। आमजन, पशुओं, पर्यावरण व अंततः पूरे विश्व के स्वास्थ्य सम्मत समाधानों को लागू करने के लिए नीति-निर्माताओं, उत्पादकों, शोधकर्ताओं और उपभोक्ताओं के बीच समन्वय व सहयोग की आवश्यकता है।

निष्कर्ष: सतत कृषि में पशुपालन विभिन्न बाधाओं और चुनौतियों का सामना करता है। हालाँकि, इन सभी बाधाओं से निबटने के उचित उपाय उपलब्ध है। इन उपायों को पशुपालन प्रथाओं में एकीकृत करके, हम एक अधिक टिकाऊ प्रणाली की दिशा में काम कर सकते है जो पर्यावरण, सामाजिक और आर्थिक विचारों को संतुलित करती है। सतत पशुपालन न केवल ग्रह के स्वास्थ्य को बनाये रखने में मदद करता है बल्कि पशुओं का कल्याण भी सुनिश्चित करता है और उपभोक्ताओं की जरूरतों और प्राथमिकताओं का समर्थन करता है।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885
मै. माँ उर्वरक केन्द्र

अमित राय
रसायनिक एवं जैविक खाद बीज एवं दवाई के विक्रेता

पताः भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

कीटनाशकों और प्राथमिक चिकित्सा के कारण होने वाले खतरे

विशेष यादव शोध छात्र (कीट विज्ञान विभाग) चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार (हरियाणा)

मोहम्मद सलमान शोध छात्र (कीट विज्ञान विभाग) सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय मोदीपुरम मेरठ

राजनंदनी सिंह शोध छात्रा (कीट विज्ञान विभाग) चंद्रशेखर आजाद कृषि वि.वि. कानपुर

उमारा रहमानी शोध छात्रा (पादप रोग विज्ञान विभाग)

अनम खान शोध छात्रा (कीट विज्ञान विभाग) सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि. मोदीपुरम मेरठ

कीटनाशकों के निर्माण, सूत्रीकरण, अनुप्रयोग और उपचारित उत्पादों के उपभोग के दौरान मनुष्यों पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव को जोखिम कहा जाता है।

कीटनाशकों द्वारा खतरों का समय

- निर्माण और गठन के समय कीटनाशकों से खतरा होता है
- कीटनाशक के प्रयोग के समय कीटनाशकों से खतरा होता है
- उपचारित उत्पादों की खपत के समय कीटनाशकों द्वारा खतरा होता है

कीटनाशकों द्वारा हुए कुछ खतरों के उदाहरण

- केरल में, 1953 में, पैराथियोन विषाक्तता के कारण 108 लोगों की मृत्यु हो गई थी
- भोपाल में 1984 में 'भोपाल गैस ट्रेडी' जहां मिथाइल आइसोसाइनेट (MIC) नामक गैस (कार्बेरिल के निर्माण में शामिल एक मध्यवर्ती) लीक हो जाने से 5000 लोगों की मृत्यु हुई थी और 50,000 लोग विकलांग हो गए थे। पूरी तरह से 2,00,000 व्यक्ति प्रभावित हुए थे। उत्तरजीवियों द्वारा म्यूटाजेनिक और कारिनोजेनिक प्रभाव जैसे दीर्घकालिक प्रभाव महसूस किए जाते हैं।
- महाराष्ट्र में कपास उगाने वाले क्षेत्रों में अंधेपन, कैंसर, लीवर और तंत्रिका तंत्र की बीमारियों के मामले जहां कीटनाशकों का अधिक मात्रा में उपयोग किया जाता है

कीटनाशकों का सुरक्षित संचालन

कीटनाशकों का भंडारण

- भंडार गृह आबादी वाले क्षेत्रों, कुओं, घरेलू पानी से दूर होना चाहिए
- सभी कीटनाशकों को उनके मूल लेबल वाले कंटेनरों में कसकर बंद करके रखा जाना चाहिए • बच्चों की पहुंच से दूर रखें • आग की लपटों से दूर रखें

व्यक्तिगत सुरक्षा के उपकरण

- सुरक्षात्मक कपड़े पहने जो त्वचा की रक्षा के लिए हाथ, पैर, नाक और सिर को कवर करते हैं।
- हाथों और पैरों की रक्षा के लिए दस्ताने और जूते पहने
- बालों, आंखों और नाक की सुरक्षा के लिए हेलमेट, चस्मा और फेसमास्क पहने
- सांस द्वारा लेने वाली धूल, धुंध और वाष्प से बचने के लिए रेस्पिरेटर पहने

कीटनाशकों का प्रयोग करते समय निम्न बिंदुओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए

कीटनाशकों के सुरक्षित संचालन हेतु उचित कीटनाशक का चयन करना चाहिए और कीटनाशक को मिलाते समय और छिड़काव करते समय निम्न लिखित सावधानियां बरतनी चाहिए-

कीटनाशक का चयन

कीटनाशक का चयन कीट के प्रकार पर निर्भर करता है-

कीटनाशक का छिड़काव करने से पहले निम्नलिखित सावधानियाँ बरतनी चाहिए

- लेबल और लीफलेट को ध्यान से पढ़ें।
- कीटनाशकों की आवश्यक मात्रा की गणना करें।
- हैंडलिन से पहले सुरक्षात्मक कपड़े और उपकरण पहनें
- स्पिलेज से बचें और अच्छी तरह हवादार में स्प्रे तरल तैयार करें।
- मिलाते समय पीठ पर हवा की दिशा में खड़े रहें
- मिलाते समय खाना, पीना या धूम्रपान न करें।
- उपयोग के तुरंत बाद कंटेनरों को मिट्टी के नीचे दबा दे

कीटनाशक का छिड़काव के दौरान निम्नलिखित सावधानियां बरतनी चाहिए- • सुरक्षात्मक कपड़े और उपकरण पहनें। • छिड़काव हवा की दिशा में करना चाहिए।

- सही कवरेज लागू करें।
- किसी भी स्प्रे के लिए उपयोग करने से पहले स्प्रे उपकरण की जांच करें
- छिड़काव के बाद स्प्रे टैंक को पूरी तरह से खाली कर दें
- स्प्रे नोज़ल को नीचे न करें, स्प्रे नोजल को मुंह से न चूसें या मुँह पर न लगाएं

कीटनाशक के छिड़काव के बाद निम्न लिखित सावधानियाँ बरतनी चाहिए-

- छिड़काव के बाद स्प्रे टैंक को पूरी तरह से खाली कर दें।
- दूषित घोल को तालाबों, कुओं या तालाब में बहाने से बचें
- उपयोग के तुरंत बाद स्प्रे उपकरण को साफ करें।
- सुरक्षात्मक कपड़े और पैर को कीटाणुरहित करें
- हाथों को साबुन के पानी से अच्छी तरह धोएं, अधिमानतः स्नान करें।
- कंटेनरों को गड्ढे में डालकर निस्तारित करें।
- छिड़काव किए गए क्षेत्र को चिह्नित किया जाना चाहिए और अनधिकृत प्रवेश को रोका जाना चाहिए

प्राथमिक चिकित्सा

- संदिग्ध विषाक्तता के मामले में तुरंत चिकित्सक को बुलाएं, डॉक्टर को बुलाने से पहले प्राथमिक उपचार किसी भी व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है

अगरजहर निगल लिया है तो

- उल्टी के दौरान सिर नीचे की ओर होना चाहिए
- विषाक्तता के चार घंटे के भीतर पेट की सामग्री को बहार निकाल देना चाहिए
- सुखदायक प्रभाव देने हेतु या तो अंडे को पानी, जिलेटिन, मक्खन, क्रीम, दूध, मैश किए हुए आलू के साथ दें
- निकोटीन विषाक्तता के मामले में, कॉफी या कड़क चाय दें

त्वचा संदूषण

- दूषित कपड़े निकाल देना चाहिए
- साबुन और पानी से अच्छी तरह धो लें सांस द्वारा

साँस के द्वारा मुंह में विष चले जाने पर

- तंग कपड़े निकालने के बाद व्यक्ति को हवादार जगह पर ले जाना चाहिए • छाती पर बार-बार दबाव डालने से बचें
- डॉक्टर की सलाह के अनुसार दवा खिलाएं

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

हरियाणा की पारंपरिक वेशभूषा

डॉ. नीलम सैनी, डॉ. मोना वर्मा
इंदिरा चक्रवर्ती गृह विज्ञान महाविद्यालय

पिंकी सोढ़ी चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

प्राचीन समय में हरियाणा राज्य के लोगों का पहनावा बहुत ही सीधा-साधा एवं बहुत ही सरल था। यहां के लोगों का पहनावा काफी लुभावना था परन्तु आज समय के साथ-साथ लोगों का पहनावा भी काफी हद तक बदल गया है। कुछ ही जगहों पर पारंपरिक तरीके का पहनावा पहना जाता है। हरियाणा के प्राचीन समय की वेश-भूषा और पहनावा लोग समय के साथ-साथ भूलते जा रहे हैं। परन्तु हरियाणा में रहकर हमें कुछ हद तक हमारी परंपरागत पोशाक की जानकारी होनी चाहिए और हमें साथ ही साथ अपने रीति-रिवाज के (हिसाब) अनुसार पहनावे को अपनाना भी चाहिए।

हरियाणा के लोगों का पहनावा प्राचीन समय में बहुत ही मनमोहक था जिसे हम आधुनिक समय में धीरे-धीरे खोते जा रहे हैं। पुरुषों एवं महिलाओं की पोशाक काफी रंगीन है जो उनकी संस्कृति परंपरा और जीवन शैली को व्यक्त करती है।

हरियाणा के कुछ विशेष परिधान एवं आभूषण की जानकारी इस प्रकार हैः-

पुरूषों का पहनावा

हरियाणा में पुरूषों का परंपरागत पोशाक धोती एवं कुर्ता है। जो कि कपड़े का एक काफी लंबा टुकड़ा होता है। जिसको कमर के चारों तरफ लपेटकर इस्तेमाल किया जाता है। ज्यादातर लोग/पुरूष सफेद रंग ही धोती का इस्तेमाल करते है। कुर्ता भी सफेद रंग का ही पहनते हैं। हरियाणा में पुरुष का सफेद रंग की धोती एवं कुर्ता पहनना उनके ऊंचे ओधे को दर्शाता है जिसे पुरुष शादियों में पहनना काफी पसंद करते हैं।

पुरुषों की वेशभूषा

- **साफा** – पगड़ी
- **खंडवा** – खंडवा भी पगड़ी की ही तरह होता है
- **पगड़ी** – मारवाड़ी पगड़ी
- **पाग** – राजपूती रूप में बड़ी पगड़ी
- **लोई** – चादर
- **खेस** – गर्म कंबल, पुरूषों के ओढ़ने के लिए
- **कमरी** – कमर तक पहने जाने वाली आस्तीन
- पुरुषों की पहने जाने वाले पारंपरिक आभूषण कढला, मुरकी एवं पतरी हैं।

महिलाओं की पोशाक

अब महिलाओं की बात करें तो महिलाओं का पहनावा भी बहुत खूब है। महिलाएं घाघरा, कुर्ती एवं ओढनी पहनती हैं। कुर्ती लंबी एवं कॉलर वाली होती है जिसकी बाजू भी लंबी होती है। महिलाओं की कुर्ती भी ज्यादातर सफेद होती है जो कि घाघरे के साथ पहनी जाती है। घाघरा को दामन नाम से जाना जाता है जो कि काफी भारी एवं कई मीटर कपड़े से बना होता है। दामन के नीचे अलग से कपड़ा जोड़ा होता है। जिसे मगजी कहते हैं। महिलाएं घाघरे के साथ ओढ़ने के लिए ओढ़नी का इस्तेमाल करती हैं जो कि ज्यादातर लाल रंग की होती है जिस पर लेस, गोटा लगा होता हैं।

महिलाओं की वेशभूषा

- **दामन** – सूती कपड़े का घाघरा
- **बोरड़ा** – खद्दर का फूल छपा घाघरा
- **लैह** – नीले कपड़े पर पीले पात की कढ़ाई
- **खारा** – नीले-लाल रंगों के धागों से निर्मित

बिना कली वाला घाघरा

- **चांदतारा** – चांद व तारे की छपाई का घाघरा
- **कमीज** – कालर वाला कमीज
- **ओढ़ना** – गोटा लगी ओढ़नी
- **पीलिया** – लाल किनारों के बीच पीला रंग

वाली ओढ़नी

- **चुंदड़ी** – रंग-बिरंगी ओढ़नी

महिलाओं के पारंपरिक आभूषण

- **गले के आभूषण**–हंसली, हंसला, माला, हार, गुलबंद, जंजीर, कढ़ी, गलश्री
- **हाथ के आभूषण**–चूड़ियां, अंगूठी, पोहची, बाजूबंद, हथफूल, आरसी, कड़ीनेपरी, टेवरा, कंडुला, टड़ा, छन्न
- **चेहरे व सिर के आभूषण**–फूट, कांटा, नथनी, लैग, सिंगार-पट्टी, बोरला, टीका, बाली, गजरा, बुजनी, कोटा, छाज, पुरली
- **पांव के आभूषण**–कड़ी, झाझण, पाजेब, पाती, ताली, छैल कड़े, गजरिया, बांकड़े
- **कमर के आभूषण**–तागड़ी

इन सब आभूषणों से एक आभूषण और भी है जोकि हरियाणा की महिलाओं के लिए सबसे महत्वपूर्ण है वो है पल्लू। महिलाएं ओढ़ने से अपने मुंह को ढकती है जिसे घूंघट भी कहते है। ओढ़ने के ऊपर एक चांदी का चांद भी लगाया जाता है जो कि लड़की के घर/मायके वाले, लड़की के लड़का होने पर देते हैं।

ये है हरियाणा के महिलाओं एवं पुरूषों की प्राचीन वैश-भूषा। जोकि बहुत ही अलग एवं सुंदर है। अतः हमें अपनी परंपरागत वेशभूषा को अपनाना एवं जानना चाहिए।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

बच्चों व महिलाओं में कुपोषण की समस्या पौष्टिक थाली एक संभावित समाधान

नीलम कुमारी (पीएचडी छात्रा)

डॉ. पूनम यादव (जिला विस्तार विशेषज्ञ, गृह विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़ मानव विकास और परिवार अध्ययन विभाग, चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

हमारे देश में कुपोषण की समस्या एक चिंता का विषय है। अपर्याप्त और असंतुलित भोजन अधिकांश बीमारियों का मुख्य कारण है लेकिन यदि हम जन सामान्य को इस ओर जागरूक करें तो यह समस्या दूर हो जाने की संभावना है। हम जानते हैं कि अच्छे स्वास्थ्य के लिए भोजन आवश्यक है। हमारे शरीर में विभिन्न कार्यों को करने के लिए ऊर्जा भोजन से प्राप्त होती है। भोजन से शिशुओं, बच्चों व किशोरों के और गर्भवती मां की कोख में पल रहे शिशु के शरीर का विकास होता है। जरा एक बच्चे के शरीर के आकार की तुलना एक व्यक्ति के शरीर के आकार से कीजिये। शरीर की विभिन्न कोशिकाओं की दिन प्रतिदिन होने वाली टूट-फूट को ठीक करने के लिए भी भोजन आवश्यक है, इसके अलावा यह विभिन्न रोगों से शरीर की रक्षा करता है और शरीर के विभिन्न अंगों को अपना अपना कार्य करने योग्य बनाता है। उम्र और शारीरिक स्थिति के अनुसार सही आहार के लिए चयन बुद्धिमानी से इस प्रकार करें-■ अपनी आयु, लिंग, शारीरिक स्थिति और सक्रियता के अनुसार विविध प्रकार के खाद्य पदार्थों का उपयुक्त मात्रा में चयन करें। ■ अनाज, दालों तथा ताजी सब्जियों का संयोजन कर उपयोग करें। ■ कैलोरी अथवा शक्ति के अंतर को मिटाने के लिए गुड अथवा शक्कर तथा वनस्पति तेलों को सम्मिलित करें। ■ प्रचुर मात्रा में ताजी साग - सब्जियां और फल खाना पसंद करें। ■ पशु मूल के खाद्य पदार्थों जैसे दूध, अंडे तथा मांस को आहार में विशेषकर गर्भवती या धात्री (दूध पिलाने वाली) माताओं तथा बच्चों के आहार में सम्मिलित जरूर करें। ■ व्यसक लोगों को कम चिकनाई वाले किंतु प्रोटीन से भरपूर खाद्य पदार्थों जैसे चर्बी रहित मास, मछलियां, दाले तथा मक्खन निकाला हुआ दूध का चयन करना चाहिए।

पोषक तत्वों की सुरक्षा - क्यों और कैसे: अज्ञानतावश गृहणियां कई बार पौष्टिक भोजन को भी कुपोषक बना देती हैं क्योंकि उन्हें पोषक तत्वों की सुरक्षा का ज्ञान नहीं होता। अतः गृहणियां को भोजन का सही ढंग से चुनाव करने के बाद उसे पकाते समय निम्न बातों का ध्यान रखना जरूरी है- ■ सब्जियों को हमेशा काटने से पूर्व अच्छी तरह धोएं अन्यथा काटने के बाद धोने से उनके विटामिन व खनिज लवण नष्ट हो जाते हैं। ■ सब्जियों को हमेशा बड़े-बड़े टुकड़ों में काटना चाहिए। ■ सब्जियों व फलों में विटामिन तथा खनिज लवण छिलकों के ठीक नीचे जमा होते हैं इसलिए जहां तक संभव हो इन्हें छिलके सहित पकाएं। ■ भोजन को अधिक देर तक न पकाये, भोजन पकाते समय उबले हुए पानी का प्रयोग करें। ■ भोजन को बार-बार गर्म न करें ऐसा करने से पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं। ■ भोजन पकाते समय खाने के सोडे का प्रयोग नहीं करना चाहिए इससे भोजन में पाए जाने वाले विटामिन काफी मात्रा में नष्ट हो जाते है। ■ लोहे के बर्तनों में भोजन पकाने से भोजन में लोहे की मात्रा बढ़ जाती है इसलिए भोजन को लोहे के बर्तनों में पकाएं। ■ दाल व चावल को बार-बार रगड़ कर न धोए केवल एक दो बार पानी से धोए ताकि उनकी पौष्टिकता बनी रहे। ■ आटे को बिना छाने यानी चोकर सहित ही इस्तेमाल करें क्योंकि चौकर में बहुत से विटामिन व खनिज लवण होते हैं। ■ अंकुरित खाद्य पदार्थों के उपयोग को प्रोत्साहित करें। ■ अधिक तेल या घी में तलने भूनने की अपेक्षा प्रेशर कुकर या भाप में पकाना अधिक अच्छा होता है। ■ बचे हुए तेलों का बार-बार प्रयोग न करें। ■ जीवन शक्ति के लिए मौसमी फलों और सब्जियों का भरपूर प्रयोग करें ■ दैनिक आहार में 300 ग्राम सब्जी प्रतिदिन प्रत्येक व्यक्ति को खाने की सिफारिश की गई है जिसमें 100 ग्रा. पत्तेदार सब्जियां 100 ग्रा. जड़ एवं कंद तथा 100 ग्रा. अन्य सब्जियों होनी चाहिए। ■ अपने भोजन में कच्ची सब्जियां सलाद के रूप में सम्मिलित करें लेकिन खाने से पहले उन्हें अच्छी तरह धोना न भूले। ■ मूली, गाजर, टमाटर, आम और पपीता जैसे पीले नारंगी तथा लाल रंग वाले फल ज्यादा पौष्टिक होते हैं। ■ आधा नींबू खुराक की गुणवत्ता को बढ़ा देता है इसे लेने से शरीर लौह तत्वों को बेहतर ढंग से ग्रहण कर लेता है। ■ मूली गाजर चुकंदर आदि सब्जियों के पत्तों को फेंके नहीं उनका प्रयोग भुजिया, दाल, चपाती आदि बनाने या सलाद के रूप में खाने में प्रयोग करें। ■ हर रोज फलों का सेवन करने से रक्तचाप मधुमेह और हृदय रोग होने की आशंका कम होती है। ■ नमक का कम प्रयोग करें। ■ बचपन से ही भोजन में अतिरिक्त नमक छिड़क कर खाना कम कर दें। ■ कम नमक वाले खाद्य पदार्थ खाने का स्वाद विकसित करें। ■ पापड़, अचार, चटनी, केचप, नमकीन, बिस्किट, चिप्स जैसे परिरक्षित तथा संसाधित खाद्य पदार्थ का सेवन कम से कम करें। ■ पर्याप्त मात्रा में पोटेशियम पूरक फल-सब्जियां भरपूर मात्रा में लें। ■ हमेशा आयोडीन युक्त नमक या डबल फोर्टीफ़िएड नमक का इस्तेमाल करें।

संतुलित आहार को किस प्रकार से नियोजित करें

तिरंगा थाली-हमें कई प्रकार के आहारों की आवश्यकता होती है जिससे शरीर हेतु सभी आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति हो जाए। भारतीय झंडे के तीन केसरिया, सफेद और हरा रंगों के आधार पर तिरंगी थाली को याद रखना एक आसान उपाय है। भारतीय झंडे के इन तीन रंगों पर आधारित आहारों को अपने प्रत्येक भोजन, विशेषकर सुबह और दोपहर के भोजन में शामिल करने का प्रयास करें।

केसरिया - नारंगी फल और सब्जियां, **सफेद** - कार्बोहाइड्रेट युक्त खाद्य पदार्थ जैसे अनाज, चावल और डेयरी उत्पाद, **हरा** - हरी सब्जियां, फल विशेषकर हरी पत्तेदार सब्जियां

ऊर्जा प्रदान करने वाले खाद्य पदार्थ

(ऊर्जावान तथा सक्रिय बने रहने में सहायक)-चावल, गेहूं, अनाज जैसे ज्वार, बाजरा, आलू, गुड़, चीनी, तेल, घी आदि।

शारीरिक वृद्धि में सहायक खाद्य पदार्थ

(बच्चों के शारीरिक विकास वृद्धि में सहायक)-दालें, फलियां, मटर, चना, सोयाबीन, मूंगफली, बींस, दूध, अंडे तथा मांस आदि।

रक्षात्मक खाद्य पदार्थ

(संक्रमण तथा रोगों से लड़ने में सहायक)-हरी पत्तेदार सब्जियां जैसे पालक, मेथी, बथुआ,पुदीना, सरसों का साग, अमलतास की पत्तियां, लौकी, कद्दू तथा फल जैसे गाजर, अमरुद, सेब और खट्टे फल जैसे संतरा, करौंदा, पपीता, नींबू आदि।

(याद रखें): ■ ऊर्जा के मुख्य स्रोत के रूप में अनाज खाए जाने चाहिए लेकिन सिर्फ इनका ही सेवन करना काफी नहीं होता। ■ इनके साथ-साथ दालों, अंडे, दूध तथा मांस आदि का भी सेवन किया जाना चाहिए ताकि प्रोटीन के स्तर में सुधार लाया जा सके। ■ वसायुक्त पदार्थ जैसे घी तथा मक्खन आदि का प्रचुर मात्रा में सेवन करें। ■ रोजाना के आहार में दो-तीन तरह की सब्जियों का सेवन करें। ■ दिन में कम से कम एक आहार में हरी पत्तेदार सब्जियों का सेवन अवश्य करें। ■ आयोडीन युक्त नमक का सेवन बेहद आवश्यक है। ■ लौह तत्वों के अवशोषण को घटाने तथा बढ़ाने के लिए हमारे भोजन में कुछ निश्चित खाद्य पदार्थ आवश्यक है। इन्हें एन्हान्सर या इन्हींबीटर्स कहा जाता है। कुछ एन्हान्सर और इन्हींबीटर्स निम्न है।

एन्हान्सर: *मांस, पोल्ट्री, मछली तथा समुद्री खाद्य पदार्थों में पाए जाने वाले लौह तत्व होते हैं * एस्कॉर्बिक एसिड (विटामिन सी) जो फलों, फलों के रस, आलू तथा कुछ अन्य कंद फलों, कुछ अन्य सब्जियों जैसे हरी पत्तेदार सब्जियों, फूलगोभी और बंद गोभी में होता है * खमीर युक्त व अंकुरित आहार

इन्हींबीटर्स *अनाज की भूसी, अनाज के दाने, अच्छी तरह से छाना हुआ आटा, फलियां, मेवे तथा बीज * चाय, कॉफी कोको कुछ आम विशिष्ट मसालों के जड़ी-बूटियों के अर्क (उदाहरण के लिए-अजवाइन) * कैल्शियम, विशेषकर दूध तथा दुग्ध उत्पादकों में मिठाइयों, पैक किए गए तथा संसाधित खाद्य पदार्थों, जंक (फास्ट) फूड, शीतल पेय पदार्थों का सेवन न करें। इनमें कैलोरी अत्यधिक मात्रा में तथा पोषक तत्व कम मात्रा में होते हैं। इनके अत्याधिक सेवन से वजन, रक्तचाप में वृद्धि, मधुमेह आदि के साथ-साथ शरीर में विटामिंस तथा खनिज पदार्थों की कमी भी हो जाती है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

ढींगरी मशरूम पोषण व औषधीय गुणों से परिपूर्ण

आदित्य, डॉ. नीरज कृषि और पर्यावरण विज्ञान विभाग, राष्ट्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी उद्यमशीलता एवं प्रबंधन संस्थान (निफ्टेम-के), सोनीपत (हरियाणा)

प्रो. (डॉ.) जे.एन. भाटिया सेवानिवृत्त प्रधान वैज्ञानिक (प्लांट पैथोलॉजी), सी.सी.एस. एच.ए.यू. हिसार, हरियाणा

प्रस्तावना: मशरूम खाद्य संगठनों के लिए अपार स्वाद के लिए पहचाने जाते हैं, लेकिन उनकी औषधीय गुणों को भी पहचाना और विभिन्न पारंपरिक उपचार पद्धतियों में उपयोग किया जाता है। हाल ही में वैज्ञानिक शोध ने मशरूम की औषधीय संपत्तियों को खोल दिया है, जिससे मानव स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव प्रकट होता है। ढींगरी मशरूम में भरपूर मात्रा में फाइबर, प्रोटीन, विटामिन और मिनरल्स होते हैं। ये कोलेस्ट्रॉल को कम करने, हृदय और पाचन तंत्र को स्वस्थ रखने, इम्यूनिटी को बढ़ाने और कैंसर से बचाने में मदद करते हैं। ऑयस्टर मशरूम को कच्चा, उबला हुआ, भुना हुआ या तला हुआ खाया जा सकता है। ये स्वादिष्ट और बहुमुखी होते हैं, और कई तरह से इन्हे अपनी डाइट में शामिल किया जा सकता हैं। इस विस्तृत लेख में, हम ढींगरी मशरूम की औषधीय गुणों के बारे में जानेंगे, जिनमें इनकी अद्भुत योगदानों को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाएगा।

प्रतिरोधक प्रभाव: ढींगरी मशरूम को इसके प्रतिरोधक प्रभाव के लिए जाना जाता है। ये छोटे-छोटे पॉलिसैकराइड्स, जैसे कि बीटा-ग्लुकान, को शामिल करते हैं जो शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को सक्षम बनाते हैं, इससे शरीर संक्रमणों से लड़ने की क्षमता बढ़ती है और कुछ बीमारियों के जोखिम को कम कर सकती है।

एंटी-इन्फ्लेमेटरी प्रभाव: पुरानी सूजन को कई स्वास्थ्य समस्याओं, जैसे कि हृदय रोग, मधुमेह और कैंसर से जोड़ा जाता है। औषधीय मशरूम, जैसे कि धड़कन के लिए मशरूम (लायंस माने) और टर्की टेल, में एंटी-इन्फ्लेमेटरी गुण पाए जाते हैं। इनमें स्वास्थ्य संबंधी सूजन से राहत पाने हेतु प्रो-इन्फ्लेमेटरी एंजाइम और साइटोकाइंस को रोकने वाले बायोएक्टिव कम्पाउंड्स मौजूद होते हैं, जो संभवतः सूजन संबंधी बीमारियों के लक्षणों को कम कर सकते हैं।

एंटीऑक्सीडेंट क्षमता: ढींगरी मशरूम एंटीऑक्सीडेंट्स से भरपूर होते हैं, जैसे कि इरगोथिओनिन और सेलेनियम, जो शरीर में हानिकारक मुक्त रेडिकल्स को नष्ट करने में मदद करते हैं। यह एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि कोशिकाओं को ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस से बचाती है, न्यूरोडेजेनरेटिव विकार और कैंसर जैसी पुरानी बीमारियों के जोखिम को कम करती है।

हृदय स्वास्थ्य: कुछ मशरूम प्रजातियां हृदय स्वास्थ्य पर प्रभाव डालने वाली गुणों का धारण करती हैं। उदाहरण के लिए, ढींगरी मशरूम में लोवास्टैटिन नामक एक यौगिक होती है, जिसे कोलेस्टेरॉल को कम करने के लिए जाना जाता है। इसके अलावा, पोर्सीनी जैसे पोटैशियम युक्तता वाले मशरूम स्वस्थ रक्तचाप स्तर बनाए रखने में सहायक हो सकते हैं।

कैंसर के खिलाफ योगदान: मशरूम के कैंसर के खिलाफ औषधीय गुणों को बढ़ावा मिला है, जिसे शोधकर्ताओं द्वारा बहुत ध्यान आकर्षित हुआ है। ढींगरी, अगरिकस, कोरडिसेप्स और मैटाके जैसे मशरूम प्रजातियां मशरूम में उपस्थित तत्वों के कारण कैंसर को रोकने और प्रतिरोधक प्रणाली को संशोधित करने जैसे कार्यों में सक्षम होती हैं। उनके बायोएक्टिव कम्पाउंड्स, जैसे कि पॉलिसैकराइड्स और ट्राइटर्पेनॉयड्स, नयी कैंसर चिकित्साओं के विकास में संकेत देते हैं।

स्नायु संरक्षण क्षमता: कुछ मशरूम में स्नायु संरक्षण क्षमता पायी जाती है, जिसका कारण मशरूम में पाए जाने वाले बायोएक्टिव कम्पाउंड्स हैं जो मस्तिष्क स्वास्थ्य का समर्थन करते हैं। खासकर, धड़कन के लिए मशरूम लायंस माने मशरूम न्यूरोन ग्रोथ फैक्टर उत्पादन को उत्तेजित करने की क्षमता के कारण महत्वपूर्ण होता है, जो न्यूरॉन की वृद्धि और अस्तित्व को बढ़ावा देने में मदद करता है। इसलिए, यह मस्तिष्क वाली बीमारियों जैसे कि अल्जाइमर और पार्किंसन की शोध में रुचि का विषय है।

प्रतिजीवी और प्रतिवायरल गतिविधियाँ: मशरूम को हानिकारक कीटाणुओं के खिलाफ लड़ने के लिए प्राकृतिक उपचार के रूप में प्रयोग किया गया है। ढींगरी, रेशी और मैटाके जैसी कई मशरूम प्रजातियां एंटीवायरल गतिविधि रखती हैं जो कई प्रकार के वायरसों, जैसे कि ह्यूमन इम्यूनोडेफिसिएंसी वायरस, के खिलाफ प्रभावी हो सकती हैं।

संक्षेप में कहें तो, ढींगरी मशरूम की औषधीय गुणों की सूची लंबी है और इनका मानव स्वास्थ्य पर अद्भुत प्रभाव हो सकता है। इनके पोषण समग्री, प्रतिरोधक प्रभाव, एंटी-इन्फ्लेमेटरी गुण, हृदय स्वास्थ्य पर प्रभाव, कैंसर से लड़ने की क्षमता, स्नायु संरक्षण और प्रतिजीवी गतिविधियाँ शीतकी मशरूम को एक महत्वपूर्ण औषधीय संपत्ति बनाती हैं। इसलिए, इसे प्राकृतिक उपचार के रूप में अधिक से अधिक मान्यता मिलनी चाहिए और इसके औषधीय उपयोग को विस्तारित करने के लिए वैज्ञानिक अध्ययन को बढ़ावा देना चाहिए। ऑयस्टर मशरूम भारत में एक बहुत ही लोकप्रिय और मांग में मशरूम है। यह स्वादिष्ट और पौष्टिक होने के साथ-साथ कम लागत में उगाया जा सकता है। इसलिए, यह किसानों के लिए एक बहुत ही लाभदायक फसल है। ऑयस्टर मशरूम की खेती से किसानों को अच्छी आय होती है और इससे भारतीय अर्थव्यवस्था को भी बढ़ावा मिलता है।

ढींगरी मशरूम की विश्व प्रसिद्ध प्रजाति

प्लुरोटस फ्लोरिडा

प्लुरोटस साजोर-काजू

प्लुरोटस एरिंजि

प्लुरोटस ओस्टरैटस

प्लुरोटस कॉर्नुकोपिया

प्लुरोटस दजामोर

हिप्सीजाइगस अल्मैरियस

ढींगरी मशरूम के औषधीय गुण

आरोग्यिक लाभ	ढींगरी मशरूम के फायदे
प्रोटीन की उच्च मात्रा	शरीर के विकास और निर्माण के लिए प्रोटीन की आवश्यकता को पूरा करते हैं।
विटामिन डी	हड्डियों को मजबूती देने में मदद करता है और कैल्शियम अवशोषण को बढ़ावा देता है।
एंटीऑक्सिडेंट	शरीर को विषाणुओं और रेडिकल्स से बचाने में मदद करते हैं।
इम्यून सिस्टम को स्थायीकरण	शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूती प्रदान करने में मदद करते हैं।
रक्त शर्करा का नियंत्रण	मधुमेह के प्रबंधन में सहायक होते हैं और रक्त शर्करा को नियंत्रित करने में मदद करते हैं।
हृदय स्वास्थ्य का समर्थन	निम्नलिखित चरणों में हृदय स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद कर सकते हैं: कोलेस्ट्रॉल स्तर कम करना, रक्तचाप को नियंत्रित करना, और संयमित खानपान प्रणाली को प्रोत्साहित करना।
आंखों के स्वास्थ्य का समर्थन	ऑस्टर मशरूम में पाए जाने वाले विटामिन ए की उच्च मात्रा आंखों के स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने में मदद कर सकती है।
प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा देता है	संक्रमण से लड़ने और बीमारियों से बचाने में मदद करता है।
वजन घटाने में सहायक	कैलोरी में कम और फाइबर में अधिक होने के कारण वजन घटाने में मदद करता है।
पाचन में सुधार	पाचन तंत्र को स्वस्थ रखता है और कब्ज से राहत देता है।
हड्डियों को मजबूत बनाता है	कैल्शियम और फास्फोरस का एक अच्छा स्रोत है, जो हड्डियों के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं।
त्वचा को स्वस्थ रखता है	एंटीऑक्सीडेंट गुणों के कारण त्वचा को स्वस्थ और चमकदार रखता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

दलहनी फसलों में विभिन्न जीवाणुजन्य रोगों की पहचान

अनिल कुमार केविके यमुनानगर (हरियाणा)
राजेश कथवाल क्षेत्रीय अनुसंधान स्टेशन, बुडिया
मोनिका जांगड़ा,ममता खेपड वानिकी विभाग चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार
प्रीति वर्मा पौध रोग विभाग चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार।

फैबेसी या लेग्यूमिनेसी परिवार की दालें आवश्यक अमीनो एसिड में उच्च हैं। ये प्रोटीन का सबसे सस्ता और आसानी से उपलब्ध स्रोत हैं। शरीर के समुचित कार्य के लिए मनुष्य को पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन और आवश्यक अमीनो एसिड की आवश्यकता होती है। मांस, मछली, प्रोटीन, पेय और भोजन की खुराक सहित विविध आहार की एक विस्तृत श्रृंखला विकसित देशों में आसानी से उपलब्ध है, लेकिन कम प्रति व्यक्ति आय वाले विकासशील देश इन सभी वस्तुओं को वहन नहीं कर सकते हैं। उन्हें अपना पोषण मूल्य फलीदार फसलों से मिलता है। हालाँकि, विकासशील देशों में दालों को कई जैविक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इनका उत्पादन कम होता है क्योंकि इनकी किस्में कम उन्नत होती हैं।

विभिन्न प्रकार के जीवाणु, कवक और वायरल रोग दलहनी फसलों को महत्वपूर्ण नुकसान पहुंचाते हैं, जिससे प्रति इकाई क्षेत्र में फसल उत्पादन में भारी कमी आती है। चना (ब्लाइट, फ्यूजेरियम विल्ट, जड़ सड़न), हरा और काला चना (पत्ती क्रिंकल वायरस, मूंग पीला मोज़ेक वायरस, मूंगबीन फाइलोडी रोग, सर्कोस्पोरा पत्ती धब्बा, पाउडरी मिल्ड्यू), मसूर (एस्कोकाइटा ब्लाइट, स्टेम्फिलियम ब्लाइट, एन्थ्रेक्नोज, बोट्रीटीस ग्रे) फफूंदी, मसूर रतुआ), और सोयाबीन प्रमुख दलहन फसल रोग हैं (चारकोल सड़न, सफेद फफूंदी, लुइसियाना, जड़ सड़न, सेप्टोरिया ग्लाइसीन, स्क्लेरोटियम रॉल्फ्सी, काली जड़ सड़न)। महत्वपूर्ण जीवाणु जनित रोग हैं: फलियों का सामान्य झुलसा रोग, हेलो झुलसा रोग और मटर का जीवाणुजन्य पत्ती झुलसा रोग। इन बीमारियों को नियंत्रित करने के लिए कई भौतिक और जैविक तरीकों का उपयोग किया जा सकता है जो लागत में कम हैं और पर्यावरण के लिए सुरक्षित हैं।

दालों के महत्वपूर्ण जीवाणुजन्य रोग

फलियों का सामान्य झुलसा रोग:

कारण जीव: ज़ैंथोमोनस कैम्पेस्ट्रिस पी.वी. फेज़ियोली

यह रोग आमतौर पर खरीफ मौसम में मूंग और उड़द पर आक्रमण करता है

लक्षण: * इस रोग की विशेषता पत्ती की सतह पर कई भूरे, सूखे, उभरे हुए धब्बे होते हैं। * दाग पहले सतही विस्फोट के रूप में दिखाई देता है और धीरे-धीरे ऊतकों पर आक्रमण करता है और कठोर या खुरदुरा दिखाई देता है। * रोग गंभीर होने पर धब्बे आपस में जुड़ जाते हैं और पत्तियाँ पीली होकर समय से पहले गिर जाती हैं। * पत्तियों की निचली सतह उभरे हुए धब्बों के बनने के कारण लाल रंग की दिखाई देती है।

रोग चक्र और अनुकूल परिस्थितियां

* जीवाणु बीज जनित होता है और बारहमासी लताओं में उगता है। * बारिश की फुहारें रोग के विकास और प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। * गर्म, बरसाती और गीला मौसम अनुकूल है।

प्रबंधन:

* मूंग की प्रतिरोधी किस्में (आशा, मुस्कान, बसंती) और उर्द की (H04-06) उगाएं। * मलबे और ठूंठ का विनाश। * बीजों को 500 पीपीएम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन घोल में 30 मिनट तक भिगोएँ। बुआई से पहले 12 दिनों के अंतराल पर प्रति लीटर 3 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के साथ स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के दो छिड़काव की सिफारिश की जाती है।

हेलो ब्लाइट

कारण जीव: स्यूडोमोनास सिरिंज पी.वी. फेज़ियोलिकोला

लक्षण

* हेलो ब्लाइट के कारण पत्तियों पर पानी से लथपथ छोटे-छोटे धब्बे पड़ जाते हैं। ये धब्बे धीरे-धीरे गहरे भूरे रंग में बदल जाते हैं और एक विस्तृत हरे-पीले प्रभामंडल से घिरे होते हैं। * सामान्य झुलसा के विपरीत नेक्रोटिक धब्बे छोटे रहते हैं। पत्ते के लक्षणों के समान, हेलो ब्लाइट के कारण वनस्पति फलियों पर पानी से लथपथ धब्बे पड़ जाते हैं। इससे फली के टांके पर धारियाँ भी बन जाती हैं। * यदि फली पर घाव गंभीर हो जाते हैं, तो यह फली की दीवारों में घुस सकते हैं या फली के टांके में फैल सकते हैं, जिससे बीज झुर्रीदार और बदरंग हो जाते हैं।

रोग चक्र

* बीज इनोकुलम का एक स्रोत है और रोगज़नक़ पिछले वर्ष के बीजों में जीवित रहता है। * हेलो ब्लाइट का रोगज़नक़ पहले से संक्रमित बीन के मलबे, दूषित बीज, खरपतवार मेजबान या स्वयंसेवी फलियों में सर्दियों में रह सकता है। * हेलो ब्लाइट गीली पत्तियों, वर्षा, सिंचाई या संक्रमित खेतों से गुजरने वाले लोगों और जानवरों के बीच संपर्क से फैल सकता है। रोगज़नक़ पौधों की चोटों या रंध्र और हाइडैथोड जैसे पौधों के प्राकृतिक छिद्रों में प्रवेश कर सकता है। संक्रमण के 6-10 दिनों के बाद, घावों से बैक्टीरिया निकलता है जो द्वितीयक संक्रमण का कारण बनता है। * हेलो ब्लाइट का विकास अन्य सामान्य जीवाणु ब्लाइट के विपरीत ठंडे तापमान (जैसे 20-23 डिग्री सेल्सियस) द्वारा अत्यधिक अनुकूल होता है। गर्म तापमान (24 डिग्री सेल्सियस से अधिक) में, फेज़ियोलोटॉक्सिन का उत्पादन कम हो जाता है और लक्षण कम स्पष्ट हो जाते हैं।

प्रबंधन:

* शुष्क क्षेत्रों में उत्पादित और हेलो ब्लाइट से मुक्ति के लिए परीक्षण किए गए बीज का उपयोग किया जाना चाहिए।

* बोर्डो मिश्रण और स्ट्रेप्टोमाइसिन दो मुख्य पत्तेदार स्प्रे हैं जिन्होंने हेलो ब्लाइट का इलाज करते समय परिणाम दिखाए हैं। 2-4 वर्षों के लिए गैर-मेज़बान फ़सलें अपनाएँ।

* खरपतवार और स्वयंसेवी फलियों को हटा दें जो बैक्टीरिया के लिए संभावित भंडार हो सकते हैं।

मटर में जीवाणुजन्य पत्ती झुलसा रोग

कारण जीव: स्यूडोमोनास सिरिंज पी.वी. पिसी

लक्षण

* बैक्टीरियल ब्लाइट सबसे पहले पत्तियों और डंठलों पर छोटे, गहरे हरे, पानी से लथपथ धब्बों के रूप में दिखाई देता है, जो अक्सर पत्ती के आधार के पास होता है। धब्बे बड़े होकर विलीन हो जाते हैं लेकिन अक्सर शिराओं द्वारा सीमित होते हैं

* पत्तियों के धब्बे पीले और बाद में भूरे हो जाते हैं और फलियों पर कागजी धब्बे धँस जाते हैं और जमीन के स्तर के पास तने पर जैतून के भूरे रंग के धब्बे विकसित हो सकते हैं।

* ये पानी से लथपथ क्षेत्रों के रूप में शुरू होते हैं जो बाद में जैतून-हरे से गहरे भूरे रंग में बदल जाते हैं। तने के घाव आपस में जुड़ सकते हैं, जिससे तना सिकुड़ सकता है और तने के घाव ऊपर की ओर स्टीप्यूल्स और पत्तियों तक फैल सकते हैं।

* उद्भव से पहले और अंकुरण के बाद डैम्पिंग-ऑफ हो सकता है और यहां तक कि उन्नत पौधे भी मर सकते हैं।

रोग चक्र

* यह रोग बीज जनित है। * गीले मौसम के दौरान, बैक्टीरिया बारिश के छींटों और हवा से आने वाली पानी की बूंदों से संक्रमित पौधों से स्वस्थ पौधों में फैल जाते हैं। * संक्रमण पौधे के विकास के किसी भी चरण में हो सकता है। रोगज़नक़ लक्षण पैदा किए बिना पौधों की सतह पर रह सकते हैं। हालाँकि, बारिश, भारी ओस, पाला या पौधों के ऊतकों को अन्य प्रकार की क्षति के बाद लक्षण विकसित हो सकते हैं। * खेत में मटर को नुकसान पहुंचने से पौधे के ऊतकों में बैक्टीरिया का प्रवेश हो जाता है।

प्रबंधन

* शुष्क क्षेत्रों में उत्पादित स्वच्छ, प्रमाणित, रोगमुक्त बीज का उपयोग। * ठूंठ इनोकुलम का एक महत्वपूर्ण स्रोत हो सकता है। संक्रमित डंठल को गाड़कर, गांठ बनाकर या जलाकर नष्ट करें। मटर के कूड़े को मिट्टी की सतह से 10 सेमी नीचे दबाने से इनोकुलम का जीवित रहने का समय काफी कम हो जाता है। * यदि संभव हो तो उद्भव के बाद शाकनाशी स्प्रे का उपयोग कम से कम करें, क्योंकि यदि पौधे के ऊतक क्षतिग्रस्त हो जाते हैं तो जीवाणु ब्लाइट की गंभीरता बढ़ सकती है। * स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का अकेले या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के साथ संयोजन में 7 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

निष्कर्ष: मानव स्वास्थ्य और पोषण में सुधार, अच्छे पशुधन को बनाए रखने, मिट्टी की स्थिति में सुधार और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने में खाद्य फलियों की भूमिका। किसानों को आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकियों के अनुप्रयोग के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करनी चाहिए और जैविक कृषि की ओर परिवर्तन करना चाहिए। किसानों को सभी उन्नत पद्धतियों को खेत में लागू करने की आवश्यकता है ताकि सभी शोध निष्कर्षों को एकीकृत फसल प्रबंधन में बदला जा सके। कई फफूंद, वायरल और जीवाणु रोगों से फलियों की फसलें गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। प्रस्तुत लेख में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि प्रमुख दलहनी फसलों के महत्वपूर्ण जीवाणुजन्य रोगों को कुछ भौतिक एवं जैविक पद्धतियों द्वारा कुछ हद तक दूर किया जा सकता है। जलवायु परिवर्तन के अनुसार ये तनाव दिन-ब-दिन बढ़ता जाता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

महिला सम्मान बचत पत्र योजना

संगीता यादव डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय समस्तीपुर पूसा (बिहार)

परिचय

केंद्र सरकार समय-समय पर देश में महिलाओं के उत्थान के लिए कई तरह की कल्याणकारी योजनाओं की शुरुआत करती रहती है। ऐसी ही एक बचत योजना को शुरू किए जाने का ऐलान वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण जी द्वारा 1 फरवरी को 2023-24 का बजट पेश करने के दौरान की गई, जिसका नाम है महिला सम्मान बचत पत्र योजना इस योजना के तहत केवल देश की महिलाएँ ही आवेदन कर लाभ उठा सकती है।

महिला सम्मान बचत योजना क्या है?

महिला सम्मान बचत योजना केंद्र सरकार द्वारा संचालित छोटी बचत योजनाओं की तरह की एक वन टाइम सेविंग स्कीम है, जिसे शुरू करने की घोषणा वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण जी द्वारा की गई है। इस योजना के माध्यम से 2 साल के लिए जमा राशि पर 7.5 प्रतिशत निश्चित दर से ब्याज दिया जाएगा। महिला सम्मान बचत पत्र योजना के तहत जो महिलाएँ इस योजना में आवेदन करेंगी 2 लाख की बचत पर 7.5 प्रतिशत क दर्ज से ब्याज प्राप्त होगा, इससे महिलाएँ अपनी जमाकुंजी की बचत करके भविष्य में आत्मनिर्भर बन सकेंगी।

महिला सम्मान बचत पत्र योजना के लाभ एवं विशेषताएं

- केन्द्र सरकार की छोटी बचत योजनाओं की तरह महिलाओं के कल्याण हेतु महिला सम्मान सेविंग सर्टिफिकेट योजना को शुरू करने की घोषणा की गई है।
- महिला सम्मान सेविंग सर्टिफिकेट एक तरह की वन टाइम सेविंग स्कीम है।
- योजना में आवेदक एक बारी में दो लाख रूपये तक का निवेश कर सकते हैं।
- इस योजना के तहत आवेदक दो साल तक निवेश कर सकेंगे।
- योजना के अंतर्गत सरकार द्वारा घोषित की गई ब्याज की दर सालाना तौर पर 7.5 प्रतिशत है।
- महिला सम्मान बचत पत्र योजना के माध्यम से आवेदक महिला द्वारा जमा की गई राशि पर उन्हें टैक्स में सरकार द्वारा छूट दी जाएगी।

- योजना के माध्यम से सभी महिलाएँ योजना में इन्वेस्ट करके टैक्स में छूट पाने की हकदार होंगी।
- योजना के अंतर्गत 10 साल या उससे अधिक आयु की बच्ची का भी अकाउंट खोला जा सकता है।
- देश में महिलाएँ योजना के तहत बचत करके आत्मनिर्भर बन सकेंगी।

योजना में आवेदन हेतु पात्रता

- महिला सम्मान सेविंग सर्टिफिकेट योजना में आवेदन के लिए देश की सभी महिलाएँ आवेदन के पात्र होंगी।
- योजना में आवेदन के लिए 10 साल या उससे अधिक आयु की बच्ची का भी खाता खोला जा सकता है।

योजना में आवेदन हेतु आवश्यक दस्तावेज

महिला सम्मान बचत पत्र योजना के आवेदन हेतु आवेदक के पास महत्वपूर्ण दस्तावेज होने आवश्यक है, जिनकी जानकारी इस प्रकार हैं-

- आवेदक का आधार कार्ड
- पहचान प्रमाण पत्र
- पासपोर्ट साइज फोटो
- ईमेल आईडी
- फोन नंबर

महिला सम्मान बचत पत्र योजना ब्याज गणना

इस योजना के अंतर्गत आवेदक दो साल की अवधि के लिए पैसे जमा कर सकते हैं, योजना में दो साल की अवधि की दौरान 7.5 प्रतिशत ब्याज दर के हिसाब से पहले साल में 15000 रूपये का फायदा और दूसरे साल तक पैसे जमा करने पर 16125 रूपये का लाभ मिलेगा, यानी इस तरह दो साल में दो लाख रूपये के निवेश पर आपको योजना के तहत 31000 रूपये का फायदा मिलेगा।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

स्व-चालित रीपर कम बाइंडर गेहूँ, धान और अन्य तिलहन और दलहन फसलों की कटाई और बंडल बनाने के लिए उपयुक्त

निधि कुमारी विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा व जल अभियंत्रण), कृषि विज्ञान केन्द्र, तुर्की, मुजफ्फरपुर, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)

प्रभात कुमार सिंह रिसर्च एसोसिएट अनुसंधान सहायक (जलवायु अनुकूल कृषि कार्यक्रम, आर.पी.सी.ए.यू, पूसा), डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)

अंशू गंगवार विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा व जल अभियंत्रण), कृषि विज्ञान केन्द्र, परसौनी, पूर्वी चंपारण, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)

मोती लाल मीणा वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, तुर्की, मुजफ्फरपुर, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा समस्तीपुर (बिहार)

आधुनिक युग में कृषि कार्यों के लिए कृषि यंत्रों का महत्व लगातार बढ़ रहा है। आज किसानों के फसल की बुआई से कटाई तक विभिन्न प्रकार के कृषि यंत्र उपलब्ध है। रीपर कम बाइंडर मशीन से फसल काटी जाती है। इस मशीन से काम तो तेजी से होता ही है साथ ही साथ फसलों की बर्बादी भी बचती है। कई लोगों का काम यह मशीन अकेले ही कर लेती है। इस मशीन से कई वैरायटी की फसल काटी जा सकती है। रीपर मशीन खेत में लगी फसल की कटाई कर छोटे-छोटे बोझ बना कर अलग कर देता है। इसलिए इस मशीन का नाम रीपर कम बाइंडर रखा गया है। बोझ बना रहने से थ्रेसरिंग करने में आसान होता है। रीपर मशीन से किसान कम समय एवं कम लागत में फसल की कटाई कर सकते हैं। इस मशीन से गेहूँ, धान, तिलहन व दलहन फसलो की कटाई बड़े ही सुगम तरीके से की जा सकती है। इस मशीन से फसल की कटाई एवं गठरी बनाने का काम आसानी से किया जा सकता है।

रीपर बाइंडर की विशेषता

रीपर बाइंडर की सहायता से समतल खेत में जमीन में 5 सेमी0 ऊपर से फसल काटी जा सकती है जिससे भूसे का नुकसान बच जाता है। इस मशीन को एक चालक के द्वारा चलाया जाता है तथा प्रति पूल बांधी गई फसल का वजन करीब 4.5 से 6 कि.ग्रा. तक होता है। रीपर बाइंडर के प्रयोग से कम से कम प्रति एकड़ 1750 रू. की बचत की जा सकती है तथा कटाई का काम शीघ्र सम्पन्न किया जा सकता है।

स्व-चालित रीपर कम बाइंडर गेहूँ, धान और अन्य तिलहन और दलहन फसलों की कटाई और बंडल बनाने के लिए उपयुक्त है। यह 9 kW डीजल इंजन द्वारा संचालित होता है। राइडिंग टाइप सेल्फ-प्रोपेल्ड वर्टिकल कन्वेयर रीपर विंडरोवर 9 kW, सिंगल सिलिंडर, वाटर कूल्ड डीजल इंजन द्वारा संचालित होता है, जिसमें 3000 आरपीएम की रेटेड इंजन स्पीड होती है। इसमें चार न्यूमेटिक पहिये होते हैं, सामने वाले दो पहिये में कृषि चालित पैटर्न टायर होते हैं और दो स्टीयरिंग व्हील पीछे वाले औटोमोटीव टायर होते हैं। इसके अलावा इसमें क्लच, ब्रेक, स्टीयरिंग हाइड्रोलिक्स और पावर ट्रांसमिशन होते हैं और मशीन की सवारी करने के लिए एक ऑपरेटर की सीट उपलब्ध होती है। कटाई प्रणाली में फसल पंक्ति डिवाइडर, स्टार पहिए, मानक कटर पट्टी वाले कटर बार के 76.2 मिमी पिच, ऊर्ध्वाधर कन्वेयर बेल्ट और तार स्प्रिंग्स शामिल होते हैं। प्रभावी कटर बार की चौड़ाई 1.2 मीटर है। फसल पंक्ति डिवाइडर खड़ी फसल में प्रवेश करती है और स्टार पहिए फसल को बार कटर की ओर गाइड करते हैं और कट जाने के बाद फसल को

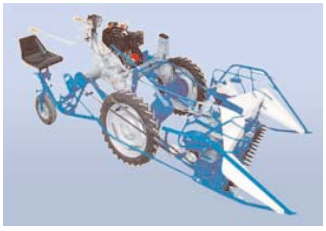

उठाने में मदद करते हैं, और इसे सही कोण पर मोड़ने से पहले, खोए हुए कन्वेयर बेल्ट द्वारा इसकी पुष्टि करते हैं। दो लग्ड पट्टियाँ कटी हुई फसल को मशीन के केन्द्र की ओर ले जाती हैं और एक प्लेटफॉर्म पर वापस ले जाती हैं जहाँ यह लगभग 5 किलो का एक बंडल बनाती है। रीपर बांधने की मशीन की कार्य क्षमता 0.3-0.4 हेक्टेयर/घंटा होता है। मशीन का वजन लगभग 450 किलोग्राम होता है।

रीपर कम बाइंडर की समस्याएँ और समायोजन

उचित क्षेत्र दक्षता और न्यूनतम अनाज हानि के लिए, सही फील्ड लेआउट और फील्ड की तैयारी सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। लगभग 1.5 मीटर चैड़ाई के एक स्वाथ को पहले ट्रैक्टर को चलाने हेतु मार्ग बनाने के लिए मैदान के चारों ओर काटने की आवश्यकता होती है। कोनों को चालू करने के दो अलग-अलग तरीके हैं। गोल मोड़ में, कोने वाले क्षेत्र को आऊटर शू और स्वाथ डिवाइडर द्वारा डंठल को बिना दबाये या रौंदे रीपर को घुमाया जाता है। ऑपरेशन शुरू होने से पहले कट की ऊँचाई और रेक के समायोजन की तरह मशीन का समायोजन किया जाता है। कटर बार को दाहिने हाथ की तरफ प्रदान किया जाता है, रीपर को क्षेत्र में दक्षिणावर्त दिशा में काम करना चाहिए। रीपर को कुछ दूरी तक चलाया जाना चाहिए और फसल -गुच्छों के आकार की जाँच की जानी चाहिए। बड़े या छोटे गुच्छा बनाने के लिए, व्यापक रेक की आवृत्ति को तदनुसार समायोजित करने की आवश्यकता होती है। गुच्छों को आसानी से गिराने की सुविधा के लिए प्लेटफार्म के डिलीवरी सिरे को जमीन से लगभग 15 सेमी ऊपर रखने के लिए सावधानी बरतनी चाहिए। ट्रैक्टर की आगे की गति को फसल और खेत की स्थिति के अनुसार सावधानी से चुना जाना चाहिए। भारतीय क्षेत्र और फसल की स्थिति के तहत आगे की गति 3 किमी/घंटा या तो सीमित है। चूंकि गुच्छों को एक तरफ रखा जाता है, इसलिए ट्रैक्टर के बाद के रन के लिए मार्ग स्वचालित रूप से साफ हो जाता है। कटी हुई फसल को बाद में मैन्युअल रूप से आवश्यक आकार के बंडलों में बांधा जाता है।

निम्न तालिका रीपर–बाइंडर के संचालन में सामान्य समस्याएं देती है जिन्हें आवश्यक समायोजन के माध्यम से दूर किया जा सकता है।

क्रम संख्या	भाग	समस्या	समायोजन
1.	रील	1. घूमता नहीं है 2. फसल का अनुचित एकत्रीकरण	1. रील बेल्ट के तनाव की जाँच करें। यह सुनिश्चित करने के लिए कि ड्राइव पुल्ली केय और बेल्ट सुरक्षित हैं हाथ से रील को घुमाएँ। 2. फसल की ऊँचाई के अनुसार ऊँचाई समायोजित करें।
2.	कटर बार	फसलों का अनुचित तरीके से कटना	1. आगे की गति कम करें 2. चाकू के वर्गों को तेज करें या खराब होने पर प्रतिस्थापित करें। 3. ड्राइव बेल्ट तनाव की जाँच करें। यदि ढीला हो, तो कस लें
3.	बाइंडिंग और बाइंडिंग तंत्र	1. टूटी या फटी सुतली 2. ढ़ीली या बिना गाँठ वाली 3. लगातार अनुपयोगी बंडल 4. सुतली काटना बेहतर	1. सुतली और साफ सुई सुराख और सरौता निकालें। फ्लाई–नट के माध्यम से टें ान प्लेट के नीचे सुतली पर तनाव कम करें। 2. वसंत लोड स्क्रू–बोल्ट की मदद से सुतली डिस्क को कसें 3. एम्मरी पेपर द्वारा स्प्रिंग टें ान और सरौता के चिकने भाग को समायोजित करें।
4.	कन्वेयर	1. बंडल का कंवेयर पर आना 2. बंडल का उचित अंतराल पर नहीं बन पाना	3. कन्वेयर रोलर पुली के ऊपर तनाव या वी–बेल्ट की जाँच करें। 4. बक्कल की सहायता से कनवास कंवेयर को कसें।
5.	बंडल आकार		ट्रिगर के तनाव को बढ़ाकर या घटाकर बंडलों के आकार को बढ़ाया या घटाया जा सकता है। इसके लिए ट्रिगर स्प्रिंग एडजस्ट किया जा सकता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

स्वस्थ धरा खेत हरा: खेती में मृदा परीक्षण का महत्व

अभिषेक गोविंद राव (तकनीकी सहायक)
राष्ट्रीय बागवानी अनुसंधान एंव विकास प्रतिष्ठान
पलझर, बौध, (उड़ीसा)

अतुल कुमार यादव (परियोजना सहायक)
वै.औ.अ.प.-केन्द्रीय औषधीय एंव सगंध पौधा
संस्थान (सीमैप), लखनऊ (उ.प्र.)

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी लगभग 70 प्रतिशत आबादी खेती पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्भर है। जब हम फसल उत्पादन करने जाते हैं तो हमें चार या पाँच अवयवों की आवश्यकता होती है जैसे भूमि, बीज, सिचाई, खाद एंव प्रबंधन।

उपरोक्त उपादानों में मृदा एक महत्वपूर्ण उपादान है। आदिम युग से ज्ञात स्त्रोतों से पता चलता है कि मानव आज से लगभग 7000 से 8000 वर्ष पूर्व से खेती करना प्रारंभ कर दिया। उस समय खेती योग्य भूमि कम तथा जनसख्याँ अधिक थी। मानव झूम खेती से लेकर कुछ समय पहले मिलवा फसल की भी खेती करता था। 1960 - 70 के दशक तक परंपरागत खेती होती। परन्तु आज के युग में जब जनसख्याँ का घनत्व बढ़ गया है तथा खेती योग्य भूमि कम हो गयी है इसलिए वैज्ञानिक ढंग से खेती करना आवश्यक हो गया है। पूर्वांचल में लगातार धान गेंहू की फसलचक्र लेने से मृदा में पोषक तत्वों का अभाव या कमी देखी जा रही है जिसकी जानकारी के अभाव में हमारे किसान भाई अनुमान के आधार पर रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग कर रहे हैं। कृषि उत्पादन के निवेशों में उर्वरकों का महत्वपूर्ण योगदान है क्योंकि यदि किसानों को खेती की लागत को कम करना है तो उसे उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग करना पड़ेगा जिससे की मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों का संतुलन भी बना रहे और साथ ही खेती की लागत में भी कमी आये और यह तभी संभव है जब हम अपने खेत की मवद की जाँच करवाकर यह जान ले की उनमें किन किन पोषक तत्वों की किस मात्रा में कमी है। वर्तमान समय में उर्वरकों की माँग एंव मूल्यों को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि फसल बोने से पूर्व उर्वरकों को दी जाने वाली मात्रा का निर्धारण कर लें और मृदा में न ही अधिक और न ही कम बल्कि संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करें और इसके लिए यह आवश्यक है की फसल बोने से पूर्व मृदा परीक्षण अवश्य करा लें।

मृदा परीक्षण क्यों ?

मृदा परीक्षण से मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा का सही सही निर्धारण हो जाता है जिससे आगामी फसल में दी जाने वाली उर्वरकों की संतुलित मात्रा की जानकारी हो जाती है इस प्रकार हमें विभिन्न फसल हेतु पोषक तत्वों की मात्रा का ज्ञान हो जाता है और साथ ही साथ मृदा सुधारक पदार्थों की मात्रा का भी ज्ञान हो जाता है।

मृदा परीक्षण कब ?

मृदा परीक्षण फसल बोने से पहले और फसल की कटाई के बाद खाली खेत की मिट्टी का ही कराना चाहिए। जब हम खेत की तैयारी करते है उसी समय खेत से मिट्टी निकालकर उसे छाँव में सुखाकर प्रयोगशाला में मृदा नमूना देकर उसकी जांच करवानी चाहिए। खाली खेत से मिट्टी निकालकर उसे छाँव में सुखाकर प्रयोगशाला में मृदा नमूना देकर उसकी जाँच करवानी चाहिए।

मृदा परीक्षण कैसे ?

मृदा परीक्षण किस प्रकार किया जाए इस बात की जानकारी किसानों के लिए अत्यंत आवश्यक है। मृदा परीक्षण के लिए जो नमूना लिया जाता है उसे सम्पूर्ण खेत का प्रतिनिधि नमूना मानकर की उसकी जाँच की जाती है मृदा नमूना सदैव सुखा, कंकड़ पत्थर रहित, घास फुश रहित और भुरभुरा एंव मात्रा में 400 ग्राम का होना चाहिए।

मृदा नमूना निम्न विधि से लेना चाहिए

1. मृदा नमूना जिस खेत से लेना हो उस खेत को मृदा की संरचना, मृदा का रंग, खेत की ढाल आदि महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखकर अलग अलग खण्डों में बाँट देना चाहिए।
2. प्रत्येक खण्ड के ऊपरी सतह को अच्छी प्रकार साफ कर एक v आकार का 15 सेमी की गहराई तक गड्ढा बना लें, फिर गड्ढे की मिट्टी को निकालकर एक तरफ से खुरपी की सहायता से ऊपर से निचे तक 2 से 3 सेमी तक मिट्टी की परत खुरच कर निकाल लें।
3. इस प्रकार एक एकड़ खेत से 5 से 6 गड्ढे से मिट्टी लेकर किसी प्लास्टिक सिट पर रखकर सब नमूनों को बारीक करके अच्छी तरह आपस में मिला लें तथा उनमें से कंकड़ पत्थर व घास फूस को निकाल लें।
4. एकत्रित मिट्टी को छाया में सुखाकर लगभग उसको 400 ग्राम तक कर लें। कम करने के लिए प्लास्टिक थैले या किसी कागज पर मिट्टी फेलाकर उसे चार भाग में बाँट ले और फिर आमने सामने के 2 भाग हटाकर शेष मिट्टी को आपस में मिला दे। इस क्रिया को तब तक दोहराए जब तक की मवद नमूना 400 ग्राम तक न हो जाए।
5. अब लिए गए 400 ग्राम के नमूने को पॉलीथीन की थैली में भरकर बाँध लेना चाहिए और पहचान के लिए एक मोटे कागज की पर्ची पर अपना सम्पूर्ण विवरण लिख कर रख दें और दूसरी पर्ची नमूने के थैले के ऊपर लगा दे जिससे की ये जानकारी हो सके की किस खेत की और किस किसान की कौन सी रिपोर्ट है।
6. पर्ची/सूचना कार्ड पर निम्न विवरण होना चाहिए -

- किसान का नाम एंव पिता का नाम • खेत का नंबर या पहचान
- ग्राम का नाम • जिले का नाम • पिछली फसल का नाम
- वर्तमान फसल का नाम

मृदा नमूना लेते समय किसानों को कुछ विशेष बातों का ध्यान रखना चाहिए-

- जहाँ तक संभव हो गीली मिट्टी का नमूना नही लेना चाहिए।
- मृदा नमूना सड़क किनारे, नाली व पेड़ के पास या खाद डाले गए स्थान से नहीं लेना चाहिए।
- जिस खेत की भूमी ऊसर हो उस खेत का नमूना अलग ढंग से लिया जाता है। ऊसर भूमि वाली खेतों की मिट्टी का नमूना 100 सेमी गहराई तक लेना चाहिए नमूना लेने के लिए भूमि की सतह पर जमी लवड़ की पपड़ी को खुरचकर अलग नमूने के तौर पर रख लें और पुनः 0 से 15 सेमी, 15 से 30 सेंमी, 30 से 60 सेंमी, 60 से 100 सेमी गहराई से अलग-अलग चार नमूने ले लें और अलग अलग थैलियों में डालकर प्रयोगशाला में भेजें।
- बागवानी वाली फसलों में मृदा नमूना 2 मीटर की गहराई तक लेनी चाहिए क्योंकि पौधों की जड़े भूमि में काफी गहराई तक जाती हैं इसके लिए 0 से 15 तक 400 ग्राम का नमूना, 15 से 45 का 400 ग्राम का नमूना और इसी प्रकार 45 से 90, 9 से 150 और 150 से 200 तक 400 ग्राम का नमूना तैयार करें। फसल की बुवाई से लगभग एक माह पहले मृदा नमूना परीक्षण के लिए प्रयोगशाला में भेज देना चाहिए।

उर्वरकों की मात्रा का निर्धारण

प्रयोगशाला में उपरोक्त विधि से लिए गए मृदा नमूने को निश्चित माप के छिद्रों वाली छलनी से छान कर परीक्षण हेतू तैयार कर के पी.एच., विद्युत चालकता, जीवांश कार्बन प्रतिशत, उपलब्ध फॉस्फेट एंव पोटाश की मात्रा का निर्धारण करते हैं। परीक्षण से प्राप्त आकड़ों को निम्न, मध्यम एंव उच्च वर्गो में सुनियोजित कर निर्धारित किया जाता है।

मृदा सुधारकों के लिए

पी. एच. मान

अम्लीय	सामान्य	क्षारीय
6.6 से कम	6.6 से 8.0 तक	8.0 से अधिक

विद्युत चालकता

सामान्य	क्रांतिक	हानिकारक
1 तक	1 से 3 तक	3 से अधिक

मृदा परीक्षण के आधार पर उपलब्ध तत्वों की श्रेणियां

श्रेणी	जीवांश कार्बन प्रतिशत	उपलब्ध फास्फोरस किग्रा/हे.	उपलब्ध पोटाश किग्रा/हे.
अतिन्यूनतम	0.0 से 0.2 तक	0.0 से 10.0 तक	0 से अधिक
न्यूनतम	0.21 से 0.50 तक	10 से 20 तक	51 से 100 तक
मध्यम	0.51 से 0.8 तक	21 से 40 तक	101 से 250 तक
उच्च	0.8 से अधिक	40 से अधिक	250 से अधिक

नोट - किसानों को उनके खेत की मिट्टी की पोषक स्थिति के बारे में जानकारी प्रदान करने के बारे में भारत सरकार ने 19 फरवरी 2015 को मृदा स्वास्थ कार्ड योजना की शुरूआत की। इस योजना को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा राजस्थान के सूरत गढ़ में शुरू किया।

इस योजना का स्लोगन था - स्वस्थ धरा खेत हरा।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

टमाटर का प्रमाणिक बीज उत्पादन

डॉ. राजेन्द्र भट्ट, आशिष तडियाल
अजय ममगाई
वी.च.सि. ग. उत्तराखंड औद्यानिकी एंव वानिकी महाविद्यालय, भरसार (उत्तराखण्ड)
डॉ. यशपाल सिंह बिष्ट
डॉ. खे. सि. गिल, अकल कृषि कालेज, इटरनल महाविद्यालय, बरु साहिब, सिरमौर (हिमाचल प्रदेश)

संक्षेप: बढ़ती जनसंख्या में वृद्धि के साथ , प्रणालीगत और गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन की आवश्यकता उत्पन्न हुई है। क्योंकी टमाटर भारत में दूसरी सबसे अधिक खपत वाली सब्जियों में से एक है, इसलिए इसके उत्पादन में वृद्धि की आवश्यकता हमेशा औघानिकि क्षेत्र की प्राथमिकता सूची में होती है। वाणिज्यिक टमाटर बीज उत्पादन के लिए तकनींकों और आवश्यकताओं को राष्ट्रीय बीज मानको द्वारा निर्धारित किया गया है और अच्छी गुणवत्ता वाले बीज उत्पादन के लिए उनका सख्ति से पालन किया जाता है। टमाटर एक स्व-परागित फसल होने के कारण उसमें संकर बीज उत्पादन के लिए हाथ से परागण करवाने की आवश्यकता पड़ती है। इसके अलावा, जलवायु परिस्थितियों, मिट्टी, अलगाव दूरी, रोपवण अनुपात और क्षेत्र निरीक्षण, महत्वपूर्ण चीजें हैं। प्रमाणन एजेंसियों द्वारा निर्धारित मापदंडों को हमेशा जांच मे रखा जाता है, और प्रमाणित होने के बाद बीज विभिन्न सार्वजनिक या नीजी बीज कंपनियों द्वारा किसानों तक पहुँचता है।

उपक्षेप: टमाटर सहीत अधिकाशं फूल वाले पौधे बीजों के माध्यम से अपने ऑफ-स्प्रिंग का उत्पादन करतें हैं । उन्हें इस पारीस्थितिकी तंत्र में मौजूद लगभग हर पौधे की एक नई शुरुआत माना जाता है। इसलिए इसकी सरंचना, भौतिक एवं रासायनिक संघटन , और तत्रं के बारे में अधिक जानने की बहुत आवश्यकता है जिसके द्वारा ये आकार में इतना छोटा होने पर भी एक पूरे नये पौधे को जन्म देता है। अच्छी गुणवत्ता वाले बीजों के सफल उत्पादन के लिये यह आवश्यक है की प्रजनकों को उस बीज से परिचित होना चाहिये जिस पर वे काम कर रहें हैं। पादप प्रजनन का प्राथमिक उद्देश्य बेहतर किस्मों का विकास करना है। इन किस्मों से लाभ तभी उठाया जा सकता है जब इन्हें बड़े पैमाने में व्यावसायिक रूप से उगाया जाए। किसानों को सही समय पर और पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराने के लिए उन्नत किस्मों के बीजों का बड़े पैमाने पर उत्पादन किया जाना चाहिए।

बीज उत्पादन-बढ़ती खेती का अवसरउच्च : गुणवत्ता वाले बीज के उत्पादन के लिए काफी तकनीकी कौशल की आवश्यकता होती है। उच्च शुद्धता औ अंकुरण आवश्यकताओं को सुनिश्चित करने के लिए कठोर आवश्कताओं को पूरा किया जाना चाहिए। इसके लिए बेहतर सांस्कृतिक प्रथाओं और अन्य विशिष्ट कार्यों की आवश्यकता है। इसलिए प्रगतिशील किसानों को ही बीज उत्पादन की जिम्मेदारी दी जाती है।

वाणिज्यिक प्रयोजन के लिए टमाटर बीजों का उत्पादन: आलू के बाद टमाटर ;सोलेनम लाइकोपर्सिकमद्ध भारत में दूसरी सबसे महत्वपूर्ण सब्जी फसल है। टमाटर परिवार सोलेनेसी और जीनस लाइकोपर्सिकॉन ;2दत्र24द्ध से संबंधित है। इसके दो प्रकार के पौधे होते हैं; 1) निश्चित प्रकार 2) अनिश्चित प्रकार । फूल पीले द्विलिंगी और चैस्मोगैमस होतें हैं और स्वपरागण को बढ़ावा देते हैं इसलिए संकर बीज उत्पादन के लिए टमाटर के लिए अनुकरण एक आवश्यक अभ्यास है । बीज क्रीम रंग के होते है और आंसू की बूंद के आकार के होते हैं । बीजों की विशेषता यह है कि उनके बीजावरण, बालों वाली संरचनाओं से ढके होते हैं। यह एक द्विबीजपत्री है और भूगर्भीय प्रकार के अंकुरण का अनुसरण करता है।

प्रक्रिया और आवश्यकताएं: बीज गुणन में दो अलग-अलग चरण शामिल हैं 1) बीज उत्पादन 2) बीज निष्कर्षण। टमाटर में बीजों का उत्पादन दो प्रकार से होता है, एक एकल किस्म से एकल जनक वाणिज्यिक बीज उत्पादन एवं संकर बीज उत्पादन। वाणिज्यिक बीज उत्पादन के लिए हस्त परागण का प्रभावित ढंग से उय्योग किया जाता है। टमाटर में बीजों के उत्पादन हेतु मूलभूत निम्नलिखित आवश्यकताएं हैं।

उपयुक्त जलवायु- टमाटर एक गर्म मौसम की फसल है और बीज उत्पवादन हेतु लगभग चार महीने की ठंढ-मुक्त अवधि की आवश्यकता होती है। बीज अंकुरण के लिए इष्टतम तापमान लगभग 16° से 29° है।

अलगाव की आवश्यकता: किस्मों को आधार बीज के लिए न्यूनतम 50 मि. और प्रमाणित बीज के लिए 25 मि. की आवश्यकता होती है। संकर बीज उत्पाद में आधार बीज के लिए न्यूनतम 200 मि. (पैतृक वशं वृद्धि) और प्रमाणित बीज के लिए 100 मि.।

बीज दर: किस्में- 300 से 400 ग्राम/हेक्टेयर और एफ1 संकर के लिए- नर पैतृक 25 ग्राम और मादा पैतृक 100 ग्राम/हेक्टेयर।

रोपण अनुपात: संकर बीज उत्पादन हेतु मादा, नर माता-पिता को सामान्य रूप के अनुपात में लगाया जाता है- 12:1 या 12:2।

संकर बीज उत्पादन के चरण

■ नर जनक को मादा जनक के पास एक अलग भूखंड में रोपित करें। फसल प्रबंधन कार्यों के लिए पंक्तियों के बीच 150 सेमी और पौधों के बीच 40 सेमी की दूरी क्यारियों में सुविधाजनक होती है। हालांकि, परागण की सुविधा के लिए, पौधों के रोपण समय को समायोजित किया जाना चाहिए। ■ फसल के दौरान नियमित रूप से खेतों का निरीक्षण करें और संदिग्ध पौधों की पहचान कर उन्हें हटा दें। ■ विपुंसन कराने से पहले सामग्रियों को जीवाणुरहित करवाना आवश्यक है। ■ चयनित कलियों को बलपूर्वक खोलने के लिए तेज-नुकीली चिमटी का उपयोग करें । सावधानी से पराग कोष को कली से बाहर निकालें, स्त्रीकेसर को छोड दें। ■ परागकण के निष्कर्षण के लिए फूल को नर जनक से इकत्रित करें। ■ पराग कोष को फूलों से हटा दें और उन्हें सिलोफ़न या पेपर बैग या प्लास्टिक के बर्तनों जैसे कंटेनर में रख दें। ■ परागकोष के कंटेनरों को 24 घटें के लिए 100 वाट के लैंप (बैग से लगभग 30 सेंमी ऊपर) के नीचें सुखाएं। सूखे पराग कोष को प्लास्टिक कप में रखें। ■ कप को एक महीन जाली वाली स्क्रीन से ढक दें और फिर इसे एक समान टाइट-फिटिंग कप से सील कर दें। कप को हिलाएं ताकि ढक्कन में पाराग इकत्रित हो जाएं। परागण के लिए पराग को एक छोटे सुविधाजनक कंटेनर में स्थानांतरित करें। ■ प्राकृतिक रूप से परागित फूलों को हटा दें और मादा पौधे के स्वयंभू-फलों को वितिसत ना होने दें ताकि संकर बीजों के मिश्रण को रोका जा सके। ■ प्रति पौधे उत्पादित संकर फलों की संख्या औसत फल पर निर्भर करती है। ■ परागित फलों को पौधे पर तब तक रखें जब तक की वे पूरी तरह से परिपक्व ना होजाएं, बेहतर होगा कि गुलाबी या लाल पके हों। इससे बीज सामान्य और पूर्ण रूप से विकसित हो सकेंगे।

कटाई और बीज उपज: बीज उत्पादन के लिए फलों को पूरी तरह से पके लाल रंग के चरणों में तोड़ा जाता है। पौधे के प्रकार/किस्म के आधार पर लगभग 250-400 किग्रा/हेक्टेयर।

बीज निष्कर्षण: टमाटर के बीज निष्कर्षण के लिए किण्वन विधि का प्रयोग सबसे अधिक मात्रा में होता हैं। इसमें पके फलों को 2 से 3 दिन तक एक कंटेनर में रखा जाता है जब तक फल नरम ना हो जाएं। उन्हें हाथ से कुचला जाता है और उनका रस निकलने नहीं दिया जाता। तापमान के आधार पर पूरे द्रव्यमान को 24 से 72 घंटे तक रखा जाता है। टमाटर का मांस उपर तैरेगा और बीज नीचे बैठ जाएगें। किण्वित द्रव्यमान को हटा दिया जाता और बीजों को छानने के बाद साफ पानी से धो कर सुखाया जाता है।

भंडारण: कैप्टान या थीरम / 2 ग्राम/किग्रा से उपचारित करने के बाद सुखाए गए बीजों को 15 महीनों के लिए नमी वाष्प प्रवेशक कंटेनरों मे संग्रहीत किया जा सकता है और 30 महीनों के लिए नमी वाष्प प्रूफ कंटेनरों मे रखा जा सकता है।

विशिष्ट आवश्यक्ताएं: भारतीय बीज अधिनियम के अंतर्गत टमाटर बीज उत्पादन हेतु निम्नलिखित क्षेत्र एवं बीज मानक निर्धारित हैं।

कारक	अधिकतम अनुमत	
	फाउंदेशन बीज	प्रमाणित बीज
	संदिग्ध पौधे 0.10	0.50
	रोगग्रस्त पौधे 0.10	0.50

बीज मानक

कारक	बीज के प्रकार		
		फाउंदेशन बीज	प्रमाणित बीज
1.	शुद्ध बीज न्यूनतम	98.00	97.00
2.	जड़ पदार्थ	2.00	2.00
3.	अन्य फसल के बीज अधिकतम	0.05	0.10
4.	खरपतवार के बीज	कोइ नहीं	कोइ नहीं
5.	अंकुरण न्यूनतम	70.00	70.00
6.	नमी की मात्रा अधिकतम	08.00	08.00

विपणन: अधिकांश सब्जियों के बीजों का विपणन प्राइवेट क्षेत्र के डीलरों के माध्यम से किया जाता है। एनएससी को छोड़कर सारे पब्लिक क्षेत्र कि बिक्री अपने स्वंय के आउटलेट के माध्यम से होती है। आइसीएआर संस्थान, एनएससी और राज्य बीज उत्पादन निगम बड़े पैमाने पर चुनिंदा सब्जी संकरों के साथ खुले परागित किस्मों से निपट रहे हैं, जबकी प्राइवेट क्षेत्र कि बीज कंपनियां सब्जी संकर बीजों से निपट रहे हैं।

बीज उत्पादन में भविष्य का दायरा और महत्व: ■ उत्पादकता बढ़ाने के लिए अच्छी गुणवत्ता वाले और प्र्याप्त मात्रा में बीजों कि आवश्यक्ता होती है। ■ यह निर्यात के अवसर भी प्रदान करता है। ■ भारत के विभिन्न क्षेत्रों में उपयुक्त बीजों की आवश्यक्ता होती है। ■ देश मे खाद्य की ज़रूरतों को पूरा करने और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए यह आवश्यक है।

निष्कर्ष: बीज कृषि उत्पादन का महत्वपूर्ण निर्धारक है । उत्पादकता बढ़ाने के लिए उय्युक्त और सस्ती किमतों पर प्र्याप्त मात्रा में गुणवत्ता बीज कि आवश्यकता होती है। गुणवत्तापूर्ण बीजों कि उपलब्धता एक बार का मामला नही है। कृषि उत्पादन और उत्पादकता में निरंतर वृद्धि के लिए आवश्यक रूप से फसलों कि नई और उन्नत किस्मों के निरंतर विकास की और किसानों को बीजों की आपूर्ति की आवश्यकता है। राष्ट्रीय बीज नीति स्पष्ट रूप से इस बात पर ज़ोर देती है कि श्यह स्पष्ट हो गया है कि भविष्य के खाद्य उत्पादन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न फसलों की बीज प्रतिस्थापन दरों को बढ़ाने के लिए, एक बड़े प्रयास की आवश्यकता होगीश् और इसके लिए गुणवत्तापूर्ण बीजों के उत्पादन में वृद्धि की ज़रूरत है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

किलमोड़ा या भारतीय बारबेरी, पर्वतीय क्षेत्रों का एक बहुउपयोगी फल

गोपाल मणि पीएचडी छात्र, उद्यानिकी (फल विज्ञान) विभाग, गोविन्द बल्लभ पंत, कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर (उत्तराखण्ड)

रजनी पंत विषय वस्तु विशेषज्ञ, (उद्यान) के.वी.के. लोहाघाट (उत्तराखण्ड)

आकांक्षा मारवाह पीएचडी छात्र, डॉ. यशवन्त सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन (हिमाचल प्रदेश)

साधारण परिचय

बार्बेरिस अरिस्टाटा, जिसे भारतीय बारबेरी, के नाम से भी जाना जाता है, बार्बेरिडेसी परिवार का और जीनस बार्बेरिस से संबंधित एक एक देशी हिमालयी झाड़ी है। जीनस बार्बेरिस में पर्णपाती सदाबहार झाड़ियों की लगभग 450-500 प्रजातियाँ शामिल हैं और यह एशिया, यूरोप और अमेरिका के समशीतोष्ण और उपोष्णकटिबंधीय जलवायू वाले क्षेत्रों में पाये जाते है। बार्बेरिस अरिस्टाटा भारत और नेपाल में हिमालय का मूल निवासी है। यह प्राकृतिक रूप से दक्षिणी भारत के नीलगिरि पर्वत और श्रीलंका में भी पाया जाता है।

बार्बेरिस अरिस्टाटा की विशेषता एक सीधी कांटेदार झाड़ी है, जिसकी ऊंचाई 2 से 3 मीटर (6.6 और 9.8 फीट) के बीच होती है। यह एक लकड़ी का पौधा है, जिसकी छाल बाहर से पीली से भूरी और अंदर से गहरी पीली दिखाई देती है। छाल तीन शाखाओं वाले कांटों से ढकी होती है, जो संशोधित पत्तियां होती हैं। पत्तियाँ पाँच से आठ के गुच्छों में व्यवस्थित होती हैं और लगभग 4.9 सेमी लंबी और 1.8 सेमी चैड़ी होती हैं। पत्तियाँ पृष्ठीय सतह पर गहरे हरे रंग की और उदर सतह पर हल्के हरे रंग की होती हैं। पत्तियाँ पिननेट शिरा विन्यास के साथ सरल होती हैं। पत्तियां बनावट में चमड़े जैसी और दांतेदार होती हैं, पत्ती के किनारे पर कई छोटे-छोटे गड्ढे होते हैं। किलमोड़ा में पुष्पन (फूल खिलना) का समय मार्च के मध्य में शुरू होता है और पूरे अप्रैल महीने तक रहता है। विकसित होने वाले पीले फूल पूर्ण और उभयलिंगी होते हैं। पूर्णतः खिले फूल का औसत व्यास 12.5 मिमी होता है। फूल एक रेसिमोस पुष्पक्रम बनाते हैं, जिसमें प्रति रेसिमीस में 11 से 16 फूल होते हैं, जो एक केंद्रीय तने के साथ व्यवस्थित होते हैं। फूल बहुदलीय होते है, जिसमें तीन बड़े और तीन छोटे बाह्यदल हैं, और बहुपंखुड़ी होती है, जिसमें कुल छह पंखुड़ियाँ हैं। पौधा रसीले, अम्लीय, खाने योग्य जामुन के गुच्छे जैसा फलता है जो चमकीले लाल रंग के तथा गहरे नीले अथवा बैंगनी रंग के होते हैं और जिनमें औषधीय गुण होते हैं। फल मई के दूसरे सप्ताह से पकना शुरू हो जाता हैं और जून के अन्त तक पकते रहते हैं। फल लगभग 7 मिमी लंबे, 4 मिमी व्यास वाले और लगभग 227 मिलीग्राम प्रति फल वजन के होते हैं। यह प्रजाति आमतौर पर हिमालय में हिमाचल प्रदेश में 600-2,700 मीटर तक की उचाँई में, पूर्व में भूटान और असम में 1500-1800 मीटर तक की उचाँई में और बिहार में पारसनाथ पहाड़ियों, मध्य प्रदेश में पचमढ़ी और राजस्थान में माउंट आबू में, दक्षिणी भारत में नीलगिरी पहाड़ियों और श्रीलंका में भी पाई जाती है। उत्तराखंड में किल्मोड़ा मुख्य रूप से पर्वतीय भागों में 800-2100 मीटर तक की उचाँई में बहुतायत रूप में पाया जाता है। जिसमें मुख्यतया टिहरी गढ़वाल, पौड़ी गढ़वाल, उत्तरकाशी, रूद्रप्रयाग, चमोली, अल्मोडा, चंपावत, देवीधुरा और लोहाघाट के पहाड़ी क्षेत्र है। बार्बेरिस अरिस्टाटा को हिन्दुस्तान में कयी अन्य नामों से भी जाना जात हैं, जैसे- हिंदी में दारुहल्दी, अंग्रेजी में इंडियन बारबेरी, तमिल में मारामंजल, बंगाली में दारुहरिद्रा, पंजाबी में दारूहल्दी, मराठी में दारुहलद, गुजराती में दारुहलधर, फारसी में दारचोबा, तेलुगु में कस् तूरीपुष् पा तथा अन्य मारा मंजल चुत्रो, सुंबल, पेड़ हल्दी इत्यादि नामों से जाना जाता है। उत्तराखंड के स्थानिय क्षेत्रों में इसे किंगोड़, किंगलोड़, पेड़ हल्दी, किंलगोड़ और किलमोड़ा अथवा किलमोरा, आदि नामों से जाना जाता हैं।

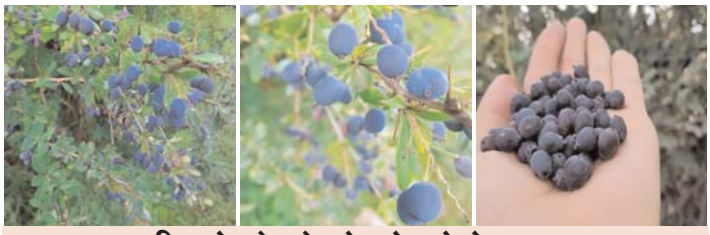

किलमोड़ा के पके हुये ताजे खाने योग्य फल

पोषण मूल्य

किलमोड़ा अत्यधिक पौष्टिक फल हैं। वे कार्बोहाइड्रेट्स, फाइबर और कई विटामिन और खनिजों से भरपूर हैं। विशेष रूप से, किलमोड़ा विटामिन सी और एंटीऑक्सिडेंट का एक उत्कृष्ट स्रोत हैं जो सेलुलर क्षति से बचाने में मदद करता हैं, जिससे हृदय रोग और कैंसर हो सकता है।

पोषण कारक	प्रति 28-ग्राम सूखे बारबेरी
कुल उर्जा	89 किलो कैलॉरी
कुल वसा	1.0 ग्राम
कुल कार्बोहाइड्रेट	18.0 ग्राम
प्रोटीन	1.0 ग्राम
रेशा	3.0 ग्राम
विटामिन सी	दैनिक मूल्य का 213 प्रतिशत
आयरन	दैनिक मूल्य का 15 प्रतिशत

इसके अलावा, बारबेरी में जिंक, मैंगनीज और तांबा भी होता है यह सभी सूक्ष्म खनिज होते हैं जो प्रतिरक्षा और रोग की रोकथाम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किलमोड़ा का चमकीला लाल रंग एंथोसायनिन के कारण होता है, जो पौधों के रंगद्रव्य हैं जो अन्य लाभों के अलावा मस्तिष्क और हृदय स्वास्थ्य को बढ़ावा देता हैं।

बार्बेरिस अरिस्टाटा (किलमोड़ा) के प्रमुख गुण एवं महत्व

भारतीय बरबेरी या किल्मोरा का उपयोग सदियों से आयुर्वेदिक दवाओं में किया जाता रहा है। किल्मोरा पौधों के फल, पत्तियां, तना, छाल, लकड़ी और जड़ों का उपयोग दवा बनाने में किया जाता है। यह पौधा जीवाणुरोधी, कवकरोधी और एंटीऑक्सीडेंट गुणों के लिए जाना जाता है और इसका उपयोग सूजन, बुखार, संक्रमण, त्वचा की समस्याओं, घावों, दस्त और कई अन्य के इलाज के लिए किया जाता है। इसके अलावा, दारू हल्दी डाई और टैनिन का भी एक अच्छा स्रोत है और इसका उपयोग कपड़ों की रंगाई और चमड़े की टैनिंग के लिए किया जाता है। यह पौधा पीले फूल और बैंगनी रंग के खाद्य फल पैदा करता है, जो रसीले और अम्लीय होते हैं और औषधीय गुणों के लिए जाने जाते हैं। किल्मोड़ा फल रसदार होता है, इसमें भरपूर मात्रा में चीनी होती है और यह विटामिन सी और अन्य पोषक तत्वों का एक समृद्ध स्रोत है। स्थानीय लोग इसे डेजसर्ट के रूप में खाते हैं।

- दारुहरिद्रा में एंटी-ग्रेन्युलोमा और एंटी-इन्फ्लैमेटरी गुण होते हैं जो सूजन को रोकने में मदद करते हैं।
- इस फल में एचबीए1सी (हीमोगलोबिन ए1सी) को कम करने की क्षमता होती है जो कि रक्त ग्लूकोज के स्तर को नियंत्रित करने के लिए महत्वपूर्ण होता है।
- यह विशेष रूप से पायरैक्सिया (शरीर के तापमान में वृद्धि) से राहत पाने में उपयोगी है। इसकी तने की छाल और जड़ की छाल को एक काढ़े के रूप में प्रयोग किया जाता है। काढ़े को 25 से 75 ग्राम की खुराक में दिन में दो या तीन बार लिया जाता है।
- किल्मोड़ा आँखों के रोगों के इलाज में अच्छे परिणाम के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह मक्खन और फिटकिरी या अफीम या चूने के रस के साथ मिलाकर आंखों और अन्य नेत्र रोगों के उपचार हेतु पलकों पर बाह्यरूप से लेपित किया जाता है।
- भारतीय बारबेरी मासिक धर्म के दौरान अत्यधिक रक्तचाप को कम करने में मददगार होता है। इसलिए मासिक धर्म के समय दर्द और ऐठन से छुटकारा पाने के लिए 13 से 25 ग्राम की खुराक को उपयोग में लिया जाता है।
- त्वचा रोगों में, यह आमतौर पर 13 से 25 ग्राम की खुराक में लिया जाता है। इसकी छाल का काढ़ा और जड़ की छाल मुहांसे, अल्सर और घावों के लिए एक शुद्धिकारक के रूप में प्रभावी होता है, क्योंकि यह घावों को जल्दी भरने में मदद करता है।
- दारुहरिद्रा में बवासीर (ब्लीडिंग पाइल्स) का उपचार करने की क्षमता होती है। बवासीर रोगी को नियमित रूप से इस जड़ी बूटी को मक्खन के साथ 40-100 मिलीग्राम मात्रा का सेवन करना चाहिए। दारुहरिद्रा के यह लाभ इसमें मौजूद एंटीआक्सीडेंट, जीवाणुरोधी, कवकरोधी और विषाणुरोधी गुणों के कारण होते हैं। ये सभी गुण बवासीर के लक्षणों को कम करने और शरीर को अन्य प्रकार के संक्रमण से बचाने में सहायक होते हैं।
- शोध के अनुसार इस जड़ी बूटी में ऐसे घटक मौजूद होते हैं जो पाचन संबंधी समस्याओं को दूर कर सकते हैं। इसके अलावा इसमें मौजूद एंटीबैक्टीरियल और एंटीमाइक्रोबियल गुण पेट में मौजूद संक्रामक जीवाणुओं के विकास और प्रभाव को कम करते हैं। जिससे दस्त अथवा पेचिश जैसी समस्याओं को रोकने में मदद मिलती है।
- किल्मोड़ा में कैंसर कोशिकाओं को रोकने और नष्ट करने की क्षमता होती है। क्योंकि यह जड़ी बूटी एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होती है। कैंसर के मरीज को नियमित रूप से किल्मोड़ा और हल्दी के मिश्रण का सेवन करना चाहिए। क्योंकि इन दोनो ही उत्पादों में कैंसर विरोधी गुण होते हैं। जो ट्यूमर के विकास को रोकने में सहायक होते हैं।
- पीलिया के उपचार में भी यह जड़ी बूटी आंशिक रूप से मददगार होती है। क्योंकि इसके उपयोग से शरीर में मौजूद विषाक्तता को दूर करने में मदद मिलती है। यह यकृत को भी विषाक्तता मुक्त रखता है और पीलिया के लक्षणों और संभावना को कम करता है।
- कान के दर्द को कम करने के लिए भी किल्मोड़ा लाभकारी होता है। इसके अलावा यह कान से होने वाले स्राव को भी नियंत्रित करता है, इत्यादि।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

करोंदा: एक अनमोल और स्वास्थ्यवर्धक फल

✍ **मनीष कुमार** (शोध छात्र)
✍ **राजेश कुमार** (शोध छात्र) उद्यान विज्ञान विभाग, जी.बी. पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय पंतनगर (उत्तराखण्ड)
✍ **सौरभ कुमार** (प्राध्यापक) कीट विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय बांदा (उ.प्र.)

शारांस: करोंदा (कैरिसा कारंड्स), एपोसायनेसी कुल का एक पौधा है और माना जाता है कि इसकी उत्पत्ति भारत में हिमालय के पास हुई थी। भारत में, इसकी खेती महाराष्ट्र, बिहार, पश्चिम बंगाल, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, गुजरात, मध्य प्रदेश, राजस्थान और पश्चिमी घाट राज्यों में की जाती है। करोंदा एक सदाबहार पर्णपाती पौधा है। इसमें घने पत्ते, कांटे और शाखाएं होने के कारण इसका उपयोग खेतों व रोड साइड में रोपण के लिए करते है। करोंदे का फल आयरन का एक प्रमुख स्रोत हैं और इसमें विटामिन ए, सी और बी कॉम्प्लेक्स, फाइबर, कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम, फॉस्फोरस, पोटेशियम, सोडियम और सल्फर जैसे खनिज तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते है। यह आयुर्वेद, यूनानी और होम्योपैथी जैसी दवाओं की विभिन्न स्वदेशी प्रणालियों में एक लोकप्रिय औषधीय पौधा है तथा इसे व्यापक रूप से पूरे भारत में ग्रामीण लोगों द्वारा एक औषधीय पौधे के रूप में भी उपयोग किया जाता है। करोंदा के सभी पौधों के भागों का उपयोग पारंपरिक रूप से विभिन्न बीमारियों को ठीक करने के लिए दवा के रूप में किया जाता है।

परिचय: प्राकृतिक संसाधनों का मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। वनस्पतियों और पौधों की अनगिनत जातियाँ और प्रजातियाँ हमारे आसपास हैं, जिनमें से कुछ मानव जीवन के लिए आवश्यक और स्वादिष्ट फल भी हैं। इसमें से एक फल है %करौंदा%, जो अपने स्वाद, गुणों और उपयोग के लिए जाना जाता है। यह फल भारत के शुष्क क्षेत्रों में ज्यादातर पाया जाता है और विभिन्न रूपों में खाया जाता है। यह फल न केवल स्वादिष्ट होता है, बल्कि इसके कई स्वास्थ्यवर्धक गुण भी होते हैं। करोंदे का वानस्पतिक नाम 'कैरीसा कारंड्स' है। यह भारत के विभिन्न शुष्क क्षेत्रों में खासकर मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, गुजरात और महाराष्ट्र में पाया जाता है। करौंदा एक मध्यम आकार का छोटा पौधा है, जिसकी ऊँचाई आमतौर पर 2-4 मीटर तक होती है। इसके पत्ते हरे रंग के छोटे व गोल आकार के होते हैं। करौंदे के फूल बहुफूली सफेद रंग के होते हैं, जो पूरे पौधे को आकर्षित करते हैं। करोंदे का फल आकार में छोटा होता है। इसके फल हरे-लाल रंग के होतें हैं और पकने पर कुछ गहरे लाल-बैगनी रंग के होते हैं। करौंदे के फल का अंदरीय सूजे हुए भाग पर बीज होते हैं। करोंदे के फल को भारत में विभिन्न-विभिन्न नामों से पुकारा जाता है, जैसे कि करोंदा, करवन्द, कारण्डा, कारोंदी, आदि।

करोंदे का पौराणिक महत्व: करोंदा, जिसे अंग्रेजी में 'Carissa' के नाम से जाना जाता है, एक छोटा झाड़ी नुमा पौधा होता है, जिसके फल स्वाद में खट्टे रसदार होते हैं। यह उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पाया जाता है, और इसका पौराणिक महत्व भारतीय साहित्य, धार्मिक संस्कृति और लोककथाओं में भी पाया जाता है। हिंदू पौराणिक कथाओं और लोककथाओं में करौंदा को विशेष महत्व दिया गया है। विभिन्न पौराणिक कथाओं के अनुसार, करौंदा का फल भगवान शिव के प्रिय फलों में से एक माना जाता है। यही नहीं, कहते हैं कि भगवान शिव ने करौंदा के पेड़ को अपने आश्रम में बसाया था। इसके अलावा, कई पौराणिक कथाएं करौंदा को भगवान विष्णु और गणेश के प्रिय फल के रूप में भी उल्लेख करती हैं। करोंदे को भारतीय लोककथाओं में भी कई महत्वपूर्ण संदर्भों में उल्लेख किया गया है। इसके फल का स्वाद थोड़ा खट्टा होने के कारण, कई कहानियों में यह फल विशेष रूप से बच्चों के लिए अत्यंत पसंदीदा होता है। एक पौराणिक कथा में, भगवान श्रीकृष्ण के बचपन में वह देखा गया था कि उन्होंने करोंदे के फलों को अपने मित्रों के साथ खाया था।

करोंदे का आयुर्वेद में महत्व: करोंदे के पौराणिक और धार्मिक महत्व के साथ-साथ इसका उपयोग आयुर्वेदिक चिकित्सा में भी किया गया है। करौंदा के फल का आयुर्वेद में भी महत्वपूर्ण स्थान है। इसे औषधीय गुणों से भरपूर माना गया है और यह कई बीमारियों के उपचार में उपयोगी सिद्ध होता है। करौंदा शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूती प्रदान करने के लिए जाना जाता है और यह विभिन्न आयुर्वेदिक औषधियों में भी उपयोग होता है। इसके फल, पत्तियाँ और बीज आयुर्वेद में औषधियों के रूप में उपयोग होते हैं। इसे गठिया, आर्थराइटिस, डायबिटीज और गैस्ट्रिक प्रॉब्लम्स आदि के इलाज में भी उपयोग किया गया है।

करोंदे के पौधे की विशेषताएं: करोंदे का पौधा एक छोटा झाड़ीनुमा वृक्ष होता है जिसकी ऊंचाई आमतौर पर 2 से 4 मीटर तक होती है। करोंदे का पौधा संकीर्ण और गहरी जड़ों वाला होता है। इसकी डालीयों पर कांटे होते हैं। करोंदे के पत्ते छोटे, चमकदार व गहरे हरे रंग के होते हैं। करोंदे के फूल छोटे, सफेद या हलके पीले रंग के होते हैं और यह आमतौर पर स्वच्छ और सुगंधित होते हैं। करोंदे के फल छोटे गोलाकार या अण्डाकार होते हैं और इनका रंग हरा, हलका पीला या भूरा होता है। इनका स्वाद खट्टा होता है। करोंदे के फल में छोटे काले-भूरे रंग के बीज होते हैं, जिनका उपयोग तेल बनाने के लिए किया जाता है। करोंदे के फल और पत्तियाँ आयुर्वेदिक और घरेलू उपचारों में प्रयुक्त होते हैं, साथ ही इसके फलों से अनेक प्रकार के पाक, मुरब्बा, जूस, अचार आदि बनाए जाते हैं। यह पौधा सबसे अधिक बरसाती मौसम (जुलाई-अगस्त) में फल देता है । करोंदा के फल में विटामिन सी, फाइबर, पोटेशियम, कैल्शियम, आयरन और अन्य कई मिनरल्स पाए जाते हैं।

करोंदे के पौधों की खेती: करोंदे की खेती भारत के विभिन्न क्षेत्रों में की जाती है। करोंदे की खेती शुष्क क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। इसकी खेती के लिए किसी विशेष प्रकार की मृदा व जलवायु की आवश्यकता नही होती है। इसकी खेती शुष्क जलवायु में आसानी से की जा सकती है। करोंदा एक बहुत ही कठोर व सूखा सहनशील पौधा है, यह उष्णकटिबंधीय तथा उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में अच्छी तरह पनपता है। हालंकि, इसकी खेती के लिए भारी वर्षा व जल भराव की स्थिति अच्छी नही होती। इसकी खेती लवणीय तथा क्षारीय मृदा में भी आसानी से की जा सकती है। करोंदा को रेतीली दोमट, लैटेराइट व जलोढ़ मिट्टी जैसी विभिन्न प्रकार की मिट्टी में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इसे उच्च तापमान (40-45°C) व 5-8 pH तक भी आसानी से उगाया जा सकता है। करोंदे के पौधों की देखभाल और प्रबंधन में कुछ ध्यान देने योग्य बातें शामिल हैं, जैसे कि समय-समय पर पौधों की कटाई-छटाई व उर्वरकों को सही मात्रा में प्रदान करना आदि।

करौंदे का उपयोग: करौंदे के फल का स्वाद खट्टा-मीठा होता है, जो खाने में काफी आकर्षक लगता है। इसके फल को सीधे खाने के साथ-साथ इसे अनेक प्रकार के खाद्य पदार्थ जैसे अचार, चटनी, जूस, शरबत आदि बनाने में भी प्रयोग किया जाता है। करोंदे का अचार बनाना भारतीय घरों में काफी पसंदीदा होता है, जिसे अक्सर खाने के साथ खाया जाता है। करौंदा फल का सेवन करने से शरीर को कई पोषणतत्व मिलते हैं। यह फल विटामिन ष्ट, विटामिन ए, विटामिन क, और फाइबर का अच्छा स्रोत होता है। इसमें विशेष रूप से विटामिन ष्ट तथा आयरन की मात्रा अधिक होती है, जिससे शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली मजबूत होती है और रोगों से लड़ने की क्षमता मिलती है।

करौंदे में पोषक तत्वों की मात्रा

क्रमांक	पोषक तत्व	मात्रा
1.	नमी (%)	87–90
2.	प्रोटीन (%)	1.1–2.25
3.	विटामिन सी (mg/100 g)	1.6–17.9
4.	आयरन (mg/100 g)	39.1
5.	कैल्शियम (mg/100 g)	21
6.	पोटैशियम (mg/100 g)	81.26
7.	फास्फोरस (mg/100 g)	38
8.	शुगर (%)	1.65–3.80
9.	कुल घुलनशील ठोस (%)	3.0–4.5
10.	कार्बोहाइड्रेट (%)	67
11.	वसा (%)	9.6

कुमार × सिंह, (1993)

करोंदे के स्वास्थ्यवर्धक गुण व औषधीय प्रयोग : करौंदे के फल को आयुर्वेदिक चिकित्सा में भी इस्तेमाल किया जाता है। इसे विभिन्न रोगों के उपचार के लिए उपयोगी माना जाता है, जैसे कि आंत में सूजन, बुखार, संक्रमण और गुर्दे की समस्याएँ आदि। करौंदा एक ऐसा फल है जिसमें स्वाद, सेहत और आकर्षण मिलते हैं। करोंदा के गुणों और पोषण से भरपूर होने के कारण, यह एक आवश्यक और स्वादिष्ट फल है, जो हमारे स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करता है। इसका उपयोग खाने के साथ-साथ विभिन्न औषधीय प्रयोगों में भी किया जाता है, जो निम्नवत हैं-

पौष्टिकता से भरपूर: करोंदे में विटामिन सी, विटामिन ए, विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स, कैल्शियम, फाइबर आदि कई पौष्टिक तत्व होते हैं, जो हमारे स्वास्थ्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं।

विटामिन सी की भरपूर मात्रा: करोंदा एक अच्छा विटामिन सी का स्रोत है, जो हमारे शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूती प्रदान करता है। यह आंखों की सेहत को बेहतर बनाने में मदद करता है और संक्रमण से लड़ने की क्षमता को बढ़ावा देता है। इसमें विटामिन ष्ट की मात्रा 1.6 - 17.9 mg/100 g पायी जाती है।

आयरन: करौंदे में आयरन की अच्छी मात्रा मिलती है, जो हमारे रक्त में हीमोग्लोबिन की गतिविधियों को सुधार करने में मदद करता है। यह खून की कमी को दूर करने में काफी हद तक सहायक होता है और शारीरिक शक्ति बढ़ाने में मदद करता है। इसमें आयरन की मात्रा 39.1 mg/100 g पायी जाती है।

फाइबर: करौंदे में फाइबर की अच्छी मात्रा होती है, जो पाचन क्रिया को सुचारु बनाए रखने में मदद करता है। यह मल मूत्र मार्ग को स्वस्थ रखने में भी सहायक होता है और कब्ज की समस्या से बचाता है।

पाचन में सुधार: करोंदे में मौजूद फाइबर हमारे पाचन क्रिया को सुधारने में मदद करता है और कब्ज से राहत दिलाता है। यह आपके वजन को नियंत्रित करने में भी मदद करता है।

हृदय स्वास्थ्य के लिए: करोंदे में पोटैशियम की मात्रा होती है, जो हृदय स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद करता है। यह रक्तचाप को नियंत्रित करने में भी मदद करता है।

ISSN-2582-5976 www.krishakbharti.in मध्य भारत कृषक भारती

स्मार्ट खेती : कृषि का भविष्य

दीपक कुमार द्विवेदी पीएच.डी. शोध छात्र, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान विभाग, सीपीजीएसएएस (केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, इंफाल), (मेघालय)

गायत्री प्रल्हाद तुरकर एम.एससी. छात्रा, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

अभिषेक तिवारी पीएच.डी. शोध छात्र, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चन्द्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

जीतेन्द्र कुमार शुक्ला पीएच.डी. शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, चन्द्रशेखर आज़ाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

सामान्य सारांश

स्मार्ट खेती कृषि के क्षेत्र में जबरदस्त बदलाव ला सकती है और काफी हद तक दक्षता, लाभप्रदता, स्थिरता, स्वास्थ्य और कल्याण में सुधार करने का एक बड़ा अवसर प्रदान करती है। यह किसानों को अचानक बदलते हुए मौसम में सही फैसला लेने में मदद करता है एवं संसाधनों को बचाने में भी मदद करता है।

परिचय

'स्मार्ट खेती' के रूप में जानी जाने वाली कृषि प्रबंधन प्रडाली का उद्देश्य कृषि उत्पादों की मात्रा और गुणवत्ता में सुधार करना है। किसान के दृष्टिकोण से, स्मार्ट खेती को बेहतर निर्णय लेने या अधिक कुशल पूर्वक प्रबंधन के रूप में किसान को अतिरिक्त मूल्य प्रदान करना चाहिए।

स्मार्ट खेती का अवयव

हाइड्रोपोनिक्स: केवल पानी में या बालू अथवा कंकड़ों के बीच नियंत्रित जलवायु में बिना मिट्टी के पौधे उगाने की तकनीक को हाइड्रोपोनिक कहते हैं। हाइड्रोपोनिक शब्द की उत्पत्ति दो ग्रीक शब्दों 'हाइड्रो' तथा 'पोनोस से मिलकर हुई है। हाइड्रो का मतलब है पानी, जबकि पोनोस का अर्थ है कार्य।

एरोपोनिक्स: एरोपोनिक्स खेती का एक पर्यावरण के अनुकूल तरीका है जिसमें जड़ें हवा में लटकी रहती हैं और पौधे बिना मिट्टी के आर्द्र वातावरण में बढ़ते हैं।

विधि: यह हाइड्रोपोनिक्स का एक प्रकार है जहाँ पौधों के बढ़ने का माध्यम और बहते पानी दोनों अनुपस्थित होते हैं।

ड्रोन, ट्रैक्टर या अन्य साधनों की तुलना में अधिक शुद्धता के साथ खेतों की जांच करता है। यह फसलों में सही मात्रा में कीटनाशक और उर्वरकों का तेजी से छिड़काव भी कर सकता है। जिससे जमीन की शुद्धता भी बनी रहती है और रसायनों के अधिक प्रयोग पर भी रोक लगती है। ड्रोन मुश्किल से 15-20 मिनट में लगभग 2.5 एकड़ (1 हे.) भूमि में कीटनाशकों/उर्वरकों का छिडकाव कर देता है। यदि सामान्य रूप से छिड़काव किया जाए तो इसके लिए दो-तीन मजदूरों की आवश्यकता होती है। जिसका खर्च 1500-2000 रूपये आ जाता है जबकि ड्रोन से छिड़काव में एक एकड़ पर अधिकतम 500 रुपये का खर्च होता है।

ऑटोनोमस ट्रैक्टर

इस ट्रैक्टर में छह कैमरे लगे हैं। इनके जरिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता का इस्तेमाल कर खुद ही चौतरफा वातावरण का अनुमान लगा लेता है और आगे का रास्ता तय कर लेता है. इसे खेत में जिस रास्ते पर डाल दिया जाए, उस पर खुद अपनी राह बना लेता है. वहीं, आस-पास की स्थितियों से तालमेल भी बिठा लेता है. यानि इस ट्रैक्टर को बार-बार निर्देश देने की आवश्यकता नहीं पड़ती है. यह खुद ही निर्धारित क्षेत्र में खेत की जुताई और बीजों की बुवाई का काम पूरा कर लेता है. अगर कोई बाधा आ जाए, तो उसे भी खुद ही हटाकर आगे बढ़ता है.

रोबोटों

रोबोट एक आभासी या यांत्रिक कृत्रिम एजेंट है व्यवहारिक रूप से, यह प्रायः एक विद्युत यांत्रिकी निकाय होता है, जिसकी दिखावट और गति ऐसी होती है की लगता है जैसे उसका अपना एक इरादा और अपना एक अभिकरण है।

किसान रोबोट के फायदे

1.अगर किसी फल के बाग की निगरानी किसान रोबोट करे तो वह फल तक गिन के बता देगा। 2.कीटनाशक का छिड़काव करेगा। 3.पशुओं को फसल खराब करने से खदेड़ेगा। 4.आस्ट्रेलिया में किसान रोबोट मशीन से खेती कर रहे हैं और इसके परिणाम प्रेरणादायक हैं। 5.खेती में मजदूरी की लागत काफी हद तक घट गई है।

ड्रोन

ड्रोन एक उड़ने वाला रोबोट होता है जिसे मनुष्य द्वारा रिमोट से नियंत्रण किया जाता है. इसका आविष्कार मनुष्य द्वारा अपने कार्यों को संपादन करने के लिए किया गया है। ड्रोन को बनाने का मुख्य मकसद, उन कामों को आसान बनाना है जो इंसानों के लिए जोखिम भरे होते हैं।

कृषि में ड्रोन का प्रयोग

कृषि ड्रोन खेती के आधुनिक उपकरणों में से एक है, जिसके इस्तेमाल से किसानों को काफी मदद मिल सकती है। ड्रोन से बड़े क्षेत्रफल में महज कुछ मिनटों में कीटनाशक, खाद या दवाओं का छिड़काव किया जा सकता है। इससे न सिर्फ लागत में कमी आएगी, बल्कि समय की बचत भी होगी। सबसे बड़ा फायदा यह होगा कि सही समय पर खेतों में कीट प्रबंधन किया जा सकेगा। यदि बड़े क्षेत्र में सिंचाई हो रही है, तो ड्रोन की मदद से निगरानी में मदद मिल सकती है। इसमें मल्टीस्पेक्ट्रल सेंसर उन क्षेत्रों की पहचान कर सकते हैं, जो बहुत शुष्क हैं। इससे किसान को पूरे क्षेत्र में बेहतर सिंचाई में सहायता मिल सकती है। ड्रोन सर्वेक्षण से फसलों की जल ग्रहण क्षमता में सुधार लाया जा सकता है। साथ ही, सिंचाई के दौरान संभावित रिसाव के बारे में भी जानकारी हासिल की जा सकती है। फसलों में बैक्टीरिया आदि के बारे में शुरुआती दौर में ही पता लगाना मुश्किल होता है, मगर कृषि ड्रोन के लिए यह आसान है। ड्रोन देख सकता है कि कौन से पौधे अलग-अलग मात्रा में ग्रीन लाइट प्रदर्शित करते हैं। ड्रोन सर्वेक्षण किसानों को उनके खेत की मिट्टी की स्थिति के बारे में जानकारी एकत्र करने की सुविधा देता है।

स्मार्ट खेती के फ़ायदे

स्मार्ट खेती प्रणाली अपशिष्ट को कम कर उत्पादकता में वृद्धि करती है। साथ ही रिमोट सेंसिंग के माध्यम से संसाधनों के कुशल प्रबंधन को सक्षम बनाती है। स्मार्ट कृषि को प्रिसिजन फार्मिंग भी कहा जाता है।

स्मार्ट खेती की चुनौतियां

स्मार्ट खेती तकनीकी तरीकों पर आधारित होती है जिसमें संगठन की आवश्यकता होती है जैसे कि सेंसर्स, डेटा एनालिटिक्स, इंटरनेट कनेक्टिविटी आदि। इन तकनीकी मुद्दों को समझना, इंटीग्रेट करना और उपयोग करना किसानों के लिए एक चुनौती हो सकती है। इंटरनेट की कमी - स्मार्ट कृषि प्रौद्योगिकियों को लागू करने के लिए, आपको एक स्थिर इंटरनेट कनेक्शन की आवश्यकता होती है। दुर्भाग्य से दुनिया के सभी क्षेत्रों में यह उपलब्ध नहीं होता है। पारंपरिक धारणाओं की अनुसरण करने और पारंपरिक खेती के तरीकों का पालन करने की धारणाएं, सेंसर्स और अन्य उपकरणों के संबंध में तकनीकी समस्याएं और कम जागरूकता। आधुनिक प्रणालियों को फाइन-ट्यून करने और उनके संचालन की विशेषताओं को जानने की आवश्यकता होती है। कुछ किसानों को पूरी तरह से स्मार्ट खेती प्रौद्योगिकियों का उपयोग करने के लाभों को समझने में आपूर्ति नहीं होती है या वे यह नहीं जानते कि इनके साथ सक्रिय रूप से कैसे काम किया जाए।

भविष्य के कार्य की दिशा

किसानों को डिजिटल प्लेटफॉर्म तक पहुंचने और डिजिटल प्रौद्योगिकियों के प्रसार और प्रचार के लिए कौशल और प्रशिक्षण प्रदान करने। सस्ती कीमतों के साथ अल्पसंख्यक और छोटे किसानों के लिए स्मार्ट खेती प्रौद्योगिकियों का विकास।

Largest and Most Successful International Agriculture Exhibiton of Chhattisgarh
International Exhibition & Conference On
Agriculture, Horticulture, Dairy & Food Processing Technology
9th
FarmTechAsia®
23 24 25 26 February 2024
Venue : Raipur, Chhattisgarh
BOOK YOUR STALL NOW!
Stall Booking Contact Details:
Mr. Pradeep Thakor
Mobile: +91 9998889578
Email: mktg@farmtechasia.com
Mr. Savan Shah
Mobile: +91 7575007740
Email: fta@farmtechasia.com
VISIT US
SCAN ME
Organisers :
BRAHMANI Events & Exhibitions Pvt. Ltd.
Colossal Communications
Media Partner :
मध्य भारत कृषक भारती
कृषक आराधना
www.farmtechasia.com

Jointly Organized by:
Govt of Rajasthan
SKNAU, Jobner
International Exhibition on Agriculture, Dairy & Horticulture Industry at Madhya Pradesh, Rajasthan & Chhattisgarh
International Exhibition & Conference On Agriculture, Horticulture, Dairy and Food Processing Related Advanced Technology
8th
FarmTechAsia
19 20 21 January 2024
Venue : Sri Karan Narendra Agriculture University, Jobner, Jaipur, Rajasthan
Shri Ashok Gehlot Chief Minister of Rajasthan
Shri Lalchand Katariya Minister of Agriculture of Rajasthan
Shri Prof. Balraj Singh Vice Chancellor, SKNAU, Jobner
AVAIL EARLY BIRD DISCOUNT AT 8TH FARMTECH ASIA, RAJASTHAN EXHIBITION
Stall size (In sq.mtr) Rate (Per sq.mtr)
9-15 INR 5000+GST
18-27 INR 4500+GST
30 and 30+ INR 4000+GST
Note: Exclusive Offer for the Exhibitors of 7th FarmTech Asia, Gwalior & 9th FarmTech Asia, Raipur: Participate with a flat rate of INR 4000/sq.mtr +GST at 8th FarmTech Asia Exhibition, Rajasthan (Min. 9sq.mtr)
(Valid till 30th September, 2023)
VISIT US
SCAN ME
BOOK YOUR STALL NOW!
Organiser :
BRAHMANI
Colossal Communications
Stall Booking Contact Details:
Mr. Pradeep Thakor Mobile: +91 9998889578
Email: mktg@farmtechasia.com
Mr. Savan Shah Mobile: +91 7575007740
Email: fta@farmtechasia.com
Brahmani Events & Exhibitions Pvt. Ltd.
1321-22, Maple Trade Center,
Near Surdhara Circle, Sal Hospital Road, Thaltej,
Ahmedabad-380054, Gujarat, India.
www.farmtechasia.com
Media Partner :
मध्य भारत कृषक भारती
कृषक आराधना

Supported by:
International Exhibition & Conference On
Agriculture, Horticulture, Dairy
& Food Processing Technology
Jointly Organized by:
RVSKVV
7th
FarmTechAsia
25 26 27 28 December, 2023
Venue: Rajmata Vijayaraje Scindia Krishi Vishwa Vidyalaya (RVSKW),
Gwalior, Madhya Pradesh
BOOK YOUR
STALL NOW!
Shri Shivraj Singh Chouhan
Hon'ble Chief Minister
Government of Madhya Pradesh
Shri Kamal Patel
Hon'ble Agriculture Minister
Government of Madhya Pradesh
Shri Premsingh Patel
Hon'ble Cabinet Minister,
Animal Husbandry, Dairy,
Social Justice and Disabled Welfare (MP)
VISIT US
SCAN ME
Organiser :
BRAHMANI Events & Exhibitions Pvt. Ltd.
Colossal Communications
Stall Booking Contact Details:
Mr. Pradeep Thakor
Mobile: +91 9998889578
Email: mktg@farmtechasia.com
Mr. Savan Shah
Mobile: +91 7575007740
Email: fta@farmtechasia.com
Media Partner :
मध्य भारत कृषक भारती
कृषक आराधना
www.farmtechasia.com

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2022-2024

R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

सितम्बर-2023

Approved by

MSME
MICRO, SMALL & MEDIUM ENTERPRISES
सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम

5th ASIA INDUSTRY Tech Expo

Asia Agri, Horti & ORGANIC EXPO

Azadi Ka Amrit Mahotsav

आत्मनिर्भर भारत

G20 भारत 2023 INDIA

INTERNATIONAL YEAR OF MILLETS 2023

20-21-22 OCTOBER 2023

Exhibition Hall, Prem Nagar Aashram, Haridwar, Uttarakhand

India's Leading Exhibition & Conference on Agriculture, Horticulture, Floriculture, Organic Farming & Technology

Last date for uploading your applications for subsidy under MSME Schemes is 01st September 2023

100% Subsidy for
Women & SC / ST Entrepreneurs

80% Subsidy for
General Category

Registered under UDYAM in MSME

उत्तर भारत में
राष्ट्रीय कृषि व उद्यानिकी
तकनीकी प्रदर्शनी

BOOK YOUR STALL

ORGANISED BY
BME
Bharti Media & Events Pvt. Ltd.

SUPPORTED BY

Media Partner :
मध्य भारत कृषक भारती
कृषक आराधना

For more information:
011-47321635, 9212271729, 9873609092
Email: organicexpouk@gmail.com, Web.: www.asiaorganicexpo.com, www.bhartimedia.co.in

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान संपादक राजू गुर्जर द्वारा सर्वोदय प्रिंटिंग प्रेस, महाडिक की गोठ, जनक हॉस्पिटल के पीछे कम्पू रोड, लश्कर-ग्वालियर से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास दीनदयाल नगर ग्वालियर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: राजू गुर्जर. मोबा. 9425101132, 94245-22090